अनुक्रमणिका/Index

01. अनुक्रमणिका /Index 01

02. क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल/सम्पादकीय सलाहकार मण्डल 06/07

03. निर्णायक मण्डल 08

04. प्रवक्ता साथी 10/11

(Science / विज्ञान)

05. Ionospheric Fof2 Variability During Low Solar Activity 12
(Devendra Kumar Warwade, Arun Kumar Gautam)

06. Identification of Various Sugar Present in the roots of plant *Lycopercion Esculentun* 17
(Sharif Khan, Dr. P.C. Choudhary, Dr. M.L. Gangwal)

07. स्वरोजगार के क्षेत्र में रेशम उत्पादन (डॉ. मीना स्वामी) 20

08. अलसी - एक औषधीय महत्व का पौधा (डॉ. राजेश बकोरिया) 24

(Home Science / गृह विज्ञान)

09. A Study Of Reproductive Health Care Awareness Among Adolescent Girls 26
(Dr. Deep Shikha Pandey)

10. मानसिक नि:शक्त शहरी, ग्रामीण एवं आदिवासी बालक एवं बालिकाओं के असामान्य कन्जेक्टीवा एवं 29
असामान्य कार्निया तथा असामान्य कन्जेक्टीवा एवं असामान्य त्वचा के मध्य सहसंबंध का अध्ययन (डॉ. मोहिनी सकरगायें)

(Commerce & Management / वाणिज्य एवं प्रबंध)

11. Study Of Customer Satisfaction Towards Restaurant In Bhopal City 31
(Special Reference To Kfc Fast Food Restaurant Chain) (Prof. Rajesh Jain)

12. "Effective Compensation Strategy; A Key to Retain Employees in the Banking Sector" 35
(Dr. Sachin Sharma, Ritika Vyas)

13. Study Of India's Trade Agreements With Other Countries In The Year 2014-15 40
(Dr. Pradeep Chaurasia)

14. Rural Distribution Strategies For Mahindra Two Wheelers : An Exploratory Study 45
(Dr. Shefali Tiwari)

15. FDI- The New Capital Formation System Under 'New Beginnings In 48
Indian Financial System' (Roshni Siddiqui)

16. Challenges And Future Prospects Of Quality Higher Education In India (Dr. Reena Gupta) 51

17. उमरिया जिले की कोयला खानों में श्रम-प्रबंध संबंधों का अध्ययन (डॉ. राजू रैदास) 54
18. पर्यावरण जागरूकता एंव आर्थिक विकास (डॉ. एन. एल. गुप्ता, जयराम बघेल)..... 57
19. वस्तु एवम् सेवा कर-ऐतिहासिक आर्थिक सुधार का माध्यम (डॉ. डी. सी. कुमरावत, शिखा कुमरावत) 60
20. म.प्र. में कृषि आधारित प्रमुख उद्योगों की आधुनिक प्रवत्तियाँ और संभावनाएँ (डॉ. पी. सी. काशिव) 62
21. नोट बंदी से कैशलेश की ओर बढ़ते कदम (डॉ. पी. पी. पाण्डेय)..... 64
22. प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना से महिलाओं को मिला सम्मान (डॉ. विजय ग्रेवाल, अंजली ओहरिया) 66

(Economics / अर्थशास्त्र)

23. Indian Rural Market - Opportunities And Challenges (Dr. Anjana Jain) 68
24. Diversification of Agriculture in India (Sujata Naik)..... 71
25. Role Of Media In Social, Mass & Economic Development (Dr. Archana Singhal) 74
26. नर्मदा जल प्रदाय का लागत-लाभ अध्ययन (खण्डवा जिले के विशेष संदर्भ में)..... 77
(मधुबाला कश्यप, डॉ. आशा साखी गुप्ता)
27. कृषि में रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग का रोजगार एवं उत्पादकता पर प्रभाव..... 80
(छ.ग. के बिलासपुर संभाग के विशेष संदर्भ में) (नोर्बेलता एक्का)
28. महिला स्वरोजगार मूलक योजनाओं का विश्लेषणात्मक अध्ययन (कमलराज सिंह उइके) 83
29. वर्तमान परिप्रेक्ष्य में महिला सशक्तिकरण (डॉ. नीलम मिश्रा) 86
30. भारत में स्वतंत्रता उपरान्त सहकारी कृषि साख का क्रमिक अध्ययन (डॉ. प्रगति जैन) 89
31. शहडोल जिले की कृषि की स्थिति, कठिनाईयां एवं सुझाव - एक अध्ययन (राजेश कुमार अहिरवार) 91
32. महात्मा गांधी (डॉ. टी. एम. खान) 93

(Political Seience / राजनीति विज्ञान)

33. छत्तीसगढ़ की राजनीति में महिलाओं का योगदान (बिनोद कुमार साहू) 94
34. महिलाओं के अधिकारों से सम्बन्धित अधिनियम - एक विश्लेषण (डॉ. मीनाक्षी पँवार) 97
35. आतंकवाद एक वैश्विक चुनौती के रूप में - एक विश्लेषण (डॉ. वसुधा आवले)..... 100
36. भारत में महिलाओं के कानूनी अधिकार दशा व दिशा (मानवाधिकार के संदर्भ में) (डॉ. प्रविता सिंह) 103
37. भारत-अमेरिका संबंध-उभरती साझेदारियां (डॉ. वीणा बरड़े) 106
38. श्री अरविन्द घोष के दार्शनिक एवं नैतिक विचारों का अध्ययन (डॉ. पी. के. चतुर्वेदी)..... 108

(History / इतिहास)

39. कच्छीवाड़ा रियासत का इतिहास (डॉ. बलराम बघेल) 109

40. माँ नर्मदा के आराधक सन्त दादा धुनीवाले (डॉ. मधुसूदन चौबे) 111

41. प्राचीन भारतीय कला में गणपति प्रतिमा निर्माण उद्भव एवं विकास (डॉ. मनीषा पाण्डेय) 113

42. संगीतज्ञ और काव्यशास्त्री संत हरिदास (डॉ. मधुसूदन चौबे) 115

(Sociology / समाजशास्त्र)

43. तीव्र आर्थिक विकास के लिए 'लेस-केश' व्यवस्था आवश्यक (प्रो. ऋचा एव. मेहता) 117

44. महिला उत्पीड़न एवं मानव अधिकार (डॉ. सुधा लाहोटी) 120

45. गुदना एक सामाजिक पक्ष-जनजातियों के संदर्भ में (डॉ. रंजीता वास्केल) 122

46. जनजाति में विवाह संस्कार (उत्तर बस्तर कांकेर हल्बा जनजाति के विशेष संदर्भ में) (डॉ. बसंत नाग) 124

47. बेटा-बेटी में तुलना- समाज का अहम मुद्दा (डॉ. साधना व्यास) 126

(Geography / भूगोल)

48. Cropping Pattern In Bilaspur District 128
(Dr. Kajal Moitra, Dr. Bimala Nonda Mondal, Sanjit Kisku)

49. Landuse And Agricultural Pattern Of Bilaspur District 132
(Dr. Kajal Moitra, Mahtab Alam, Sanjit Kisku)

(Philosophy / दर्शनशास्त्र)

50. अपोह के विकास में बौद्ध दार्शनिकों का योगदान (डॉ. अर्चना कुमारी) 135

(English Literature / अंग्रेजी साहित्य)

51. Role Of Women And Their Presentation-In The Plays Of Eugene O' Neill's 138
'The Iceman Cometh', 'Long Day's Journey Into Night' And 'A Moon For The Misbegotten'
(Dr. Harasankar Maity, Dr. G. Rajasekaran)

52. Oldman Is No Man's Land - As Also Depicted In Rohinton Mistry's, ... 141
'The Family Matters' (Dr. Manisha Joshi)

53. Rabindranath Tagore And Mohammad Iqbal As Poets Of Indian Renaissance 143
(Dr. Kehkashan Khan)

54. Critical Study Of English Literature (Dr. Rashmi Nagwanshi) 145

55. Treatment Of Nature In Tennyson's Poems (Twishampati De) 147

(Hindi Literature / हिन्दी साहित्य)

56. समकालीन हिन्दी कविता और वैचारिक चुनौतियां (डॉ. स्वामीराम बंजारे 'सरल') 149
57. जीवन यथार्थ के परिप्रेक्ष्य में मुक्तिबोध की कहानियाँ (डॉ. इला द्विवेदी) 153
58. हिन्दी के प्रारंभिक उपन्यासों में लोक तत्व - एक अध्ययन (डॉ. आई. बेक, डॉ. दीपक कुमार गुप्ता) 156
59. जीवनीपरक उपन्यासों की विकास - यात्रा (डॉ. माधुरी उपाध्याय) 159
60. मूल्य व्यवस्था के निर्माण में 'गोदान' की भूमिका (डॉ. सनकादिक लाल मिश्र) 162
61. पण्डित रामनारायण उपाध्याय के व्यंग्य (डॉ. गणेश लाल जैन) 166
62. प्रगतिवादी कविता में सौन्दर्य चेतना (डॉ. रविशंकर पटेल) 168
63. भारत, भारतीयता और संस्कृति (डॉ. रशीदा खान) 170
64. हिन्दी उपन्यास और आदिवासी विमर्श (डॉ. अंजली सिंह) 172
65. एक नाटककार का कथाकार के रूप में मूल्यांकन (जयशंकर प्रसाद की चर्चित कहानियों के विशेष संदर्भ में) 174
(डॉ. रमेश कुमार टण्डन)
66. सिद्ध एवं नाथ परंपरा - मान्यताएँ एवं वाचिक साहित्य (डॉ. सरोज जैन) 177
67. हिन्दी सिनेमा के बदलते परिदृश्य (डॉ. अमित शुक्ल) 178
68. तकनीकी क्रांति में हिन्दी भाषा के बढ़ते कदम (डॉ. वंदना चराटे) 180
69. लोक साहित्य में सामाजिकता (डॉ. एस. एस. राठौर) 182
70. समकालीन महिला कहानीकार - क्षमा शर्मा और उनका कृतित्व (डॉ. रागनी चौहान) 184
71. लोक साहित्य में संस्कृत साहित्य की सामाजिक चेतना (डॉ. मंशाराम बघेल) 186
72. व्यक्तित्व के धनी - श्रीलाल शुक्ल (पुष्पा बर्डे) 188
73. लोक जीवन के चितेरे - नागार्जुन (डॉ. रवीन्द्र कुमार सोनपुरे) 190
74. निर्गुण उपासना मिथ्याडंम्बरों पर प्रहार और मन की शुद्धता (डॉ. छविनम श्रीवास्तव) 192
75. कबीर साहित्य में मानव मूल्य (डॉ. मंजू देवी मिश्रा, डॉ. सनकादिक लाल मिश्र) 194
76. देवी नर्मदे (डॉ. गुलाब सोलंकी) 196

(Law/ विधि)

77. Judicial Governance In India (Aprajita Bhargava) 197

(Education / शिक्षा)

78. A Compare Study Between Academic Achievement And Emotional Intelligence Among 200
Government And Private Higher Secondary School's Students (Manish Rathore)

79. शैक्षिक विकास के परिपेक्ष्य में जन शिक्षा केंद्रों में जन शिक्षकों की समस्याओं की भूमिका का अध्ययन ... 203
(मन्दसौर जिले के संदर्भ) (डॉ. जयदीप महार, मनीष राठौर)

(Physical Education / शारीरिक शिक्षा)

80. Effect of basketball specific endurance circuit training on aerobic capacity and 208
performance and heart rate of Inter College male basketball players (Dr. Jogendra Singh, Manoj Kumar Singh)

81. मानव जीवन में शारीरिक शिक्षा के महत्व का अध्ययन (डॉ. कौशल कुमार मिश्रा) 212

82. योग एवं चिकित्सा (संजय कुमार) 214

(Others / अन्य)

83. भारतीय कृषि में संरचनात्मक परिवर्तन और उसकी चुनौतियाँ (डॉ. दिलीप पीपाड़ा) 217

84. भारतीय जनजातियों की आर्थिक और सामाजिक दशा का एक अध्ययन (डॉ. चक्रपाणि उपाध्याय) 220

85. भारत – नेपाल सम्बंधों की एक झलक (डॉ. अभिमन्यु सिंह चौहान) 223

86. Impact of Goods and Services Tax (GST) on Retail and Consumer Spending Patterns in 225
India (Dr. O.P Roonwal)

87. Separation and characterization of active phytoconstituents of extracts of 228
*Ziziphusnummularia*leaves and fruits by Maceration Process and Hot continuous extraction method by Soxhlet apparatus with chromatographic technique (TLC) (Dr. Pooja Bagdi, Dr. Vinita Rathore)

88. महाराजा अजीत सिंह कालीन प्रशासनिक व्यवस्था (डॉ. फिरोज मोहम्मद शेख) 232

89. भारतीय कला के प्रतिबिम्ब – बंगाल शैली और बंगाली चित्रकार (मानवाकृति अंकन के परिपेक्ष्य में) 235
(डॉ. रेखा पंचोली)

क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल अन्तर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय (Regional Editor Board- International & National)

मानद्

(01) डॉ. मनीषा ठाकुर ..... फुल्टन कॉलेज, एरिजोना स्टेट यूनिवर्सिटी, अमेरिका
(02) श्री अशोककुमार ..... एम्प्लॉयब्लिटी ऑपरेशन्स मैनेजर, एक्शन ट्रेनिंग सेन्टर लि. लन्दन, यूनाईटेड किंगडम
(03) प्रो. डॉ. सिलव्यू बिस्यू ..... वाईस डीन (वाणिज्य एवं प्रबन्ध) कृषि एवं ग्रामीण विकास महाविद्यालय, बूचारेस्ट, रोमानिया
(04) श्री खगेन्द्रप्रसाद सुबेदी..... सीनियर सॉयकोलॉजिस्ट, पब्लिक सर्विस कमीशन, सेन्ट्रल ऑफिस, अनामनगर, काठमाँडू, नेपाल
(05) प्रो. डॉ. ज्ञानचंद खिमेसरा ..... पूर्व प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.) भारत
(06) प्रो. डॉ. प्रमोद कुमार राघव..... शोध निदेशक, ज्योति विद्यापीठ महिला विश्व विद्यालय, जयपुर (राज.) भारत
(07) प्रो. डॉ. एन.एस.राव. ..... संचालक, जनार्दनराय नागर राजस्थान विद्यापीठ विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
(08) प्रो. डॉ. अनूप व्यास. ..... (पूर्व) संकायाध्यक्ष, वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्व विद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(09) प्रो. डॉ. पी.पी. पाण्डे ..... संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन), अवधेश प्रतापसिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत
(10) प्रो. डॉ. संजय भयानी. ..... अध्यक्ष, व्यवसाय प्रबंध विभाग, सौराष्ट्र विश्व विद्यालय, राजकोट (गुजरात) भारत
(11) प्रो. डॉ. प्रताप राव कदम..... अध्यक्ष, वाणिज्य, शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.) भारत
(12) प्रो. डॉ. बी.एस. झरे . ..... प्राध्यापक वाणिज्य विभाग, श्री शिवाजी महाविद्यालय, आकोला (महाराष्ट्र) भारत
(13) प्रो. डॉ. राकेश शर्मा ..... अध्यक्ष, अर्थशास्त्र विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गुड़गांव (हरियाणा) भारत
(14) प्रो. डॉ. संजय खरे..... प्राध्यापक, समाजशास्त्र विभाग, शास. स्वशासी कन्या स्नात. उत्कृष्टता महा., सागर (म.प्र.) भारत
(15) प्रो. डॉ. आर.पी. उपाध्याय..... परीक्षा नियंत्रक, शासकीय कमलाराजे कन्या स्वशासी स्नातकोत्तर महा., ग्वालियर (म.प्र.) भारत
(16) प्रो. डॉ. प्रदीप कुमार शर्मा ..... प्राध्यापक, वाणिज्य विभाग, शासकीय हमीदिया कला एवं वाणिज्य महा., भोपाल (म.प्र.) भारत
(17) प्रो. अखिलेश जाधव..... प्राध्यापक, भौतिकी, शासकीय जे. योगानन्दम् छत्तीसगढ़ महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़) भारत
(18) प्रो. डॉ. कमल जैन..... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत
(19) प्रो. डॉ.डी.एन. खड़से ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, धनवते नेशनल कॉलेज, नागपुर (महाराष्ट्र) भारत
(20) प्रो.डॉ. वन्दना जैन ..... प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(21) प्रो. डॉ. हरदयाल अहिरवार ..... प्राध्यापक, अर्थशास्त्र, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शहडोल (म.प्र.) भारत
(22) प्रो. डॉ. शारदा त्रिवेदी ..... सेवानिवृत्त प्राध्यापक, गृहविज्ञान, इंदौर (म.प्र.) भारत
(23) प्रो. डॉ. उषा श्रीवास्तव ..... अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, आचार्य इंस्टीट्यूट ऑफ ग्रेच्यूट स्टडी. सोलदेवानली, बैंगलुरू (कर्ना.) भारत
(24) प्रो. डॉ. गणेशप्रसाद दावरे ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, बड़वाह (म.प्र.) भारत
(25) प्रो. डॉ. एच.के. चौरसिया ..... प्राध्यापक, वनस्पति, टी.एन.वी. महाविद्यालय, भागलपुर (बिहार) भारत
(26) प्रो. डॉ. विवेक पटेल ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, कोतमा, जिला अनूपपुर (म.प्र.) भारत
(27) प्रो. डॉ. दिनेशकुमार चौधरी..... प्राध्यापक, वाणिज्य, राजमाता सिन्धिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत
(28) प्रो. डॉ. आर.के. गौतम ..... प्राध्यापक ,वाणिज्य, शासकीय मानकुंवर बाई कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत
(29) प्रो. डॉ. जितेन्द्र के. शर्मा ..... प्राध्यापक, वाणिज्य एवं प्रबंध, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय केन्द्र, पालवाल (हरियाणा) भारत
(30) प्रो. डॉ. गायत्री वाजपेयी..... प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय महाराजा स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत
(31) प्रो. डॉ. अविनाश शेन्द्रे..... विभागाध्यक्ष, अर्थशास्त्र, प्रगति कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, डोम्बीवली, मुम्बई (महाराष्ट्र) भारत
(32) प्रो. डॉ. जी.सी. मेहता ..... पूर्व अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(33) प्रो.डॉ. बी.एस. मक्कड़ ..... अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(34) प्रो.डॉ. पी.पी. मिश्रा ..... विभागाध्यक्ष, गणित, छत्रसाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पन्ना, (म.प्र.) भारत
(35) प्रो.डॉ. सुनील कुमार सिकरवार.... प्राध्यापक, रसायन, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत

सम्पादकीय सलाहकार मण्डल (Editorial Advisory Board, INDIA) मानद्

(01) प्रो. डॉ. नरेन्द्र श्रीवास्तव .....प्रसिद्ध वैज्ञानिक 'इसरो' बैंगलुरू (कर्नाटक) भारत

(02) प्रो. डॉ. आदित्य लूनावत .....निदेशक, स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ उच्च शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन, भोपाल (म.प्र.) भारत

(03) प्रो. डॉ. संजय जैन .....पूर्व सहायक नियंत्रक, म.प्र. व्यावसायिक परीक्षा मंडल, भोपाल (म.प्र.) भारत

(04) प्रो. डॉ.एस.के. जोशी .....प्राचार्य, शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

(05) प्रो. डॉ. जे.पी.एन. पाण्डेय .....प्राचार्य, शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत

(06) प्रो. डॉ. सुमित्रा वास्केल .....प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत

(07) प्रो. डॉ. पी.आर. चन्देलकर ....प्राचार्य, शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत

(08) प्रो. डॉ. मंगल मिश्र .....प्राचार्य, श्री क्लॉथ मार्केट, कन्या वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

(09) प्रो. डॉ.आर.के. भट्ट .....प्राचार्य, शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत

(10) प्रो. डॉ. अशोक वर्मा.....पूर्व संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत

(11) प्रो. डॉ. टी.एम. खान.....प्राचार्य, शासकीय महाविद्यालय, धामनोद, जिला-धार (म.प्र.) भारत

(12) प्रो. डॉ. राकेश ढण्ड.....संकायाध्यक्ष, विद्यार्थी कल्याण विभाग विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

(13) प्रो. डॉ. अनिल शिवानी .....अध्यक्ष, वाणिज्य एवं प्रबंध विभाग श्री अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

(14) प्रो. डॉ. पद्मसिंह पटेल.....अध्यक्ष, वाणिज्य विभाग शासकीय महाविद्यालय, महिदपुर (म.प्र.) भारत

(15) प्रो. डॉ. मंजु दुबे .....संकायाध्यक्ष (डीन), गृह विज्ञान संकाय, जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

(16) प्रो. डॉ.ए.के. चौधरी.....प्राध्यापक, मनोविज्ञान, राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

(17) प्रो. डॉ. प्रदीप सिंह राव .....प्राचार्य, शासकीय महाविद्यालय, सैलाना, जिला-रतलाम (म.प्र.) भारत

(18) प्रो. डॉ. पी.के. मिश्रा .....प्राध्यापक ,प्राणी शास्त्र, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बैतूल (म.प्र.) भारत

(19) प्रो. डॉ. के. के. श्रीवास्तव .....प्राध्यापक ,अर्थशास्त्र, विजया राजे शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

(20) प्रो.डॉ. कान्ता अलावा ..... प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान, शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

(21) प्रो. डॉ. एस. के. जैन.....प्राध्यापक ,वाणिज्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत

(22) प्रो. डॉ. किशन यादव.....एसोसिएट प्रोफेसर (राजनीति विज्ञान) शोध केन्द्र, बुन्देलखण्ड कॉलेज, झांसी (उ.प्र.) भारत

(23) प्रो. डॉ. बी.आर.नलवाया .....प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.) भारत

(24) प्रो. डॉ. नत्थरलाल गुप्ता.....अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत

(25) प्रो.डॉ. पुरुषोत्तम गौतम .....संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय,इन्दौर (म.प्र.) भारत

(26) प्रो. डॉ. एस. सी. मेहता .....प्राध्यापक एवं अध्यक्ष, शासकीय भगत सिंह स्नातकोत्तर महाविद्यालय, जावरा (म.प्र.) भारत

निर्णायक मण्डल (Referee Board) मानद्

****** विज्ञान संकाय ******

गणित:- .... (1) **प्रो. डॉ.वी.के. गुप्ता,** संचालक वैदिक गणित एवं शोध संस्थान, उज्जैन (म.प्र.)

भौतिकी:- .... (1) **प्रो. डॉ. आर.सी. दीक्षित**, शासकीय होल्कर विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(2) **प्रो.डॉ. नीरज दुबे,** शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

कम्प्यूटर विज्ञान:- .... (1) **प्रो. डॉ. उमेश कुमार सिंह,** अध्यक्ष कम्प्यूटर अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

रसायन:- .... (1) **प्रो. डॉ. मनमीत कौर मक्कड़,** शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्ज्रैन (म.प्र.)

वनस्पति:- .... (1) **प्रो. डॉ. सुचिता जैन,** राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)
(2) **प्रो.डॉ. अखिलेश आयाची,** शासकीय आदर्श विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

प्राणिकी:-....................... (1) **प्रो.डॉ. मंजुलता शर्मा,** एम.एस.जे., राजकीय महाविद्यालय, भरतपुर (राज.)
(2) **प्रो. डॉ. अमृता खत्री,** माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)

सांख्यिकी:- .... (1) **प्रो. डॉ. रमेश पण्ड्या,** शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

सैन्य विज्ञान:- .... (1) **प्रो. डॉ. कैलाश त्यागी,** शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

जीव रसायन:- .... (1) **डॉ. कंचन डींगरा,** शासकीय एम.एच. गृह विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

भूगर्भ शास्त्र:- .... (1) **प्रो. डॉ. आर.एस. रघुवंशी,** शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. सुयश कुमार,** शासकीय आदर्श महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)

चिकित्सा विज्ञान:- .... (1) **डॉ. एच.जी. वरूधकर,** आर.डी. गारड़ी मेडिकल महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

सूक्ष्म जीव विज्ञान:-........... (1) **अनुराग झँवेरी,** बायो केयर रिसर्च (आई) प्रा.लि., अहमदाबाद (गुजरात)

****** वाणिज्य संकाय ******

वाणिज्य :- .... (1) **प्रो. डॉ. पी.के. जैन,** शासकीय हमीदिया महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. शैलेन्द्र भारल ,** शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(3) **प्रो. डॉ. लक्ष्मण परवाल,** शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

****** प्रबंध एवं व्यवसाय प्रशासन संकाय ******

प्रबंध :- .... (1) **प्रो. डॉ. रामेश्वर सोनी** , अध्यक्ष अध्ययन शाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. आनन्द तिवारी ,** शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर कन्या उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

मानव संसाधन:-............... (1) **प्रो. डॉ. हरविन्दर सोनी**, पैसेफिक बिजनेस स्कूल, उदयपुर (राज.)

व्यवसाय प्रशासन:- .... (1) **प्रो. डॉ. कपिलदेव शर्मा ,** राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)

****** विधि संकाय ******

विधि:- .... (1) **प्रो. डॉ. एस.एन. शर्मा,** प्राचार्य, शासकीय माधव विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. नरेन्द्र कुमार जैन,** प्राचार्य श्री जवाहरलाल नेहरू स्नातकोत्तर विधि महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)

****** कला संकाय ******

अर्थशास्त्र:- .... (1) **प्रो. डॉ. पी.सी. रांका,** श्री सीताराम जाजू शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. जे.पी. मिश्रा,** शासकीय महाराजा स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)
(3) **प्रो. डॉ. अंजना जैन,** एम.एल.बी. शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, किला मैदान, इन्दौर (म.प्र.)

राजनीति:- .... (1) **प्रो. डॉ. रवींद्र सोहोनी,** शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. अनिल जैन,** शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(3) **प्रो. डॉ. सुलेखा मिश्रा,** मानकुंवर बाई शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

दर्शनशास्त्र:- .... (1) **प्रो. डॉ. हेमन्त नामदेव,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

समाजशास्त्र:- ..... **(1) प्रो. डॉ. एच.एल. फुलवरे,** शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. इन्दिरा बर्मन , शासकीय गृह विज्ञान महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(3) प्रो. डॉ. उमा लवानिया , शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना, जिला-सागर (म.प्र.)

हिन्दी:- ..... **(1) प्रो. डॉ. चन्दा तलेरा जैन,** अध्यक्ष अध्ययन मण्डल, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र)
(2) प्रो. डॉ. जया प्रियदर्शनी शुक्ला, वनस्थली विद्यापीठ (राज.)
(3) प्रो. डॉ. कला जोशी, श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)

अंग्रेजी:- ..... **(1) प्रो. डॉ. अजय भार्गव,** शासकीय महाविद्यालय, बड़नगर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. मंजरी अग्निहोत्री, शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)

संस्कृत:- ..... **(1) प्रो. डॉ. भावना श्रीवास्तव,** शासकीय स्वशासी महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. बालकृष्ण प्रजापति, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गंजबासौदा जिला विदिशा (म.प्र.)

इतिहास:- ..... **(1) प्रो. डॉ. नवीन गिडियन,** शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

भूगोल:- ..... **(1) प्रो. डॉ. राजेन्द्र श्रीवास्तव** शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामण्डी, जिला मंदसौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. काजल मोइत्रा , डॉ. सी वी रामन् विश्वविद्यालय, बिलासपुर (छ.ग.)

मनोविज्ञान:- ..... **(1) प्रो. डॉ. कामना वर्मा,** प्राचार्य, शासकीय राजमाता सिंधिया कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. सरोज कोठारी, शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)

चित्रकला:- ..... **(1) प्रो. डॉ. अल्पना उपाध्याय,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय उज्जैन (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. रेखा श्रीवास्तव, महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

संगीत:- ..... **(1) प्रो. डॉ. भावना ग्रोवर (कथक),** स्वामी विवेकानन्द सुभारती विश्वविद्यालय, मेरठ (उ.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. श्रीपाद अरोणकर, राजमाता सिन्धिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाडा (म.प्र.)

****** गृह विज्ञान संकाय ******

आहार एवं पोषण विज्ञान:- ... **(1) प्रो.डॉ. प्रगति देसाई,** शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. मधु गोयल, स्वामी केशवानन्द गृह विज्ञान महाविद्यालय, बीकानेर (राज.)
(3) प्रो. डॉ. संध्या वर्मा, शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

मानव विकास:- ..... **(1) प्रो. डॉ. मीनाक्षी माथुर,** अध्यक्ष, जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर (राज.)
(2) प्रो. डॉ. आभा तिवारी, अध्यक्ष अध्ययन मण्डल रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

पारिवारिक संसाधन प्रबंध:- . **(1) प्रो. डॉ. मंजु शर्मा,** माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इंदौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. नम्रता अरोरा, वनस्थली विद्यापीठ (राज.)

****** शिक्षा संकाय ******

शिक्षा..... **(1) प्रो. डॉ. मनोरमा माथुर,** महींद्रा कॉलेज ऑफ एजुकेशन, बैंगलुरू (कर्नाटक)
(2) प्रो. डॉ. एन.एम.जी. माथुर, प्राचार्य एवं डीन पेसेफिक शिक्षा महाविद्यालय, उदयपुर (राज.)
(3) प्रो. डॉ. नीना अनेजा, प्राचार्य, ए.एस. कॉलेज ऑफ एजुकेशन,खन्ना (पंजाब)
(4) प्रो. डॉ. सतीश गिल, शिव कॉलेज ऑफ एजुकेशन, तिगाँव, फरीदाबाद (हरियाणा)

****** आर्किटेक्चर संकाय ******

शारीरिक शिक्षा ..... **(1) प्रो. किरण पी. शिंदे ,** प्राचार्य, स्कूल ऑफ आर्किटेक्चर, आई.पी.एस. एकडेमी, इंदौर (म.प्र.)

****** शारीरिक शिक्षा संकाय ******

शारीरिक शिक्षा ..... **(1) प्रो. डॉ. अक्षयकुमार शुक्ला,** अध्यक्ष शारीरिक शिक्षा पेसेफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)

****** ग्रन्थालय विज्ञान संकाय ******

ग्रन्थालय विज्ञान ..... **(1) डॉ. अनिल सिरौठिया,** शासकीय महाराजा महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)

प्रवक्ता साथी (मानद्)

(01) प्रो. डॉ. देवेन्द्र सिंह राठौड़ .....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(02) प्रो. श्रीमती विजया वधवा .....शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(03) डॉ. सुरेंद्र शक्तावत .....ज्ञानोदय इंस्टीट्यूट ऑफ मेनेजमेंट एंड टेक्नोलॉजी, नीमच (म.प्र.)
(04) प्रो. डॉ. देवीलाल अहीर .....शासकीय महाविद्यालय, जावद, जिला नीमच (म.प्र.)
(05) श्री आशीष द्विवेदी .....शासकीय महाविद्यालय, मनासा, जिला नीमच (म.प्र.)
(06) प्रो. डॉ. मनोज महाजन.....शासकीय महाविद्यालय, सोनकच्छ, जिला देवास (म.प्र.)
(07) श्री उमेश शर्मा .....कृष्णा शिक्षा महाविद्यालय, जावी, जिला- नीमच (म.प्र.)
(08) प्रो. डॉ. एस.पी. पंवार .....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(09) प्रो. डॉ. पूरालाल पाटीदार .....शासकीय कन्या महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(10) प्रो. डॉ. क्षितिज पुरोहित .....जैन कला-वाणिज्य-विज्ञान महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(11) प्रो. डॉ.एन.के. पाटीदार.....शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामंडी, जिला मन्दसौर (म.प्र.)
(12) प्रो. डॉ. वाय.के. मिश्रा .....शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(13) प्रो. डॉ. सुरेश कटारिया.....शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(14) प्रो. डॉ. अभय पाठक .....शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(15) प्रो. डॉ. मालसिंह चौहान .....शासकीय महाविद्यालय, सैलाना, जिला रतलाम (म.प्र.)
(16) प्रो. डॉ. गेंदालाल चौहान.....शासकीय विक्रम महाविद्यालय, खाचरौद, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(17) प्रो. डॉ. प्रभाकर मिश्र.....शासकीय महाविद्यालय, महिदपुर, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(18) प्रो. डॉ. प्रकाश कुमार जैन .....शासकीय माधव कला वाणिज्य विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(19) प्रो. डॉ. कमला चौहान .....शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(20) प्रो. डॉ.आभा दीक्षित .....शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(21) प्रो. डॉ. पंकज माहेश्वरी.....शासकीय महाविद्यालय, तराना, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(22) प्रो. डॉ. डी.सी. राठी .....स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ, उच्च शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन, इंदौर
(23) प्रो. डॉ. अनिता गगराड़े .....शासकीय होलकर विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(24) प्रो. डॉ. संजय पंडित .....शासकीय एम.जे.बी. कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)
(25) प्रो. डॉ. रामबाबू गुप्ता .....शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(26) प्रो. डॉ. अंजना सक्सैना .....शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(27) प्रो. डॉ. सोनाली नरगुन्दे .....पत्रकारिता एवं जनसंचार अध्ययनशाला देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(28) प्रो. डॉ. भारती जोशी.....आजीवन शिक्षण विभाग देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(29) प्रो. डॉ. एम.डी. सोमानी .....शासकीय एम.जे.बी. कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)
(30) प्रो. डॉ. प्रीति भट्ट .....शासकीय एन.एस.पी. विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(31) प्रो. डॉ. संजय प्रसाद .....शासकीय महाविद्यालय, सांवेर, जिला इन्दौर (म.प्र.)
(32) प्रो. डॉ. मीना मटकर .....सुगनीदेवी कन्या महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(33) प्रो. मोहन वास्केल .....शासकीय महाविद्यालय, थांदला, जिला - झाबुआ (म.प्र.)
(34) प्रो. डॉ. नितिन सहारिया.....शासकीय महाविद्यालय, कोतमा, जिला अनूपपुर (म.प्र.)
(35) प्रो. डॉ. मंजु राजोरिया .....शासकीय कन्या महाविद्यालय, देवास (म.प्र.)
(36) प्रो. डॉ. शहजाद कुरैशी .....शासकीय नवीन कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, मूंदी, जिला खण्डवा (म.प्र.)
(37) प्रो. डॉ. शैल बाला सांधी.....महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(38) प्रो. डॉ. प्रवीण ओझा .....श्री भगवत सहाय शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(39) प्रो. डॉ.ओमप्रकाश शर्मा .....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, श्योपुर (म.प्र.)
(40) प्रो. डॉ. एस.के. श्रीवास्तव.....शासकीय विजया राजे कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(41) प्रो. डॉ. अनूप मोघे .....शासकीय कमलाराजे कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(42) प्रो. डॉ. हेमलता चौहान .....शासकीय महाविद्यालय, बड़नगर (म.प्र.)
(43) प्रो. डॉ. महेशचन्द्र गुप्ता.....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.)
(44) प्रो. डॉ. मंगला ठाकुर.....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वाह, जिला खरगोन (म.प्र.)
(45) प्रो. डॉ. के.आर. कुम्हेकर .....शासकीय महाविद्यालय, सनावद, जिला खरगोन (म.प्र.)
(46) प्रो. डॉ. आर.के. यादव.....शासकीय कन्या महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.)
(47) प्रो. डॉ. आशा साखी गुप्ता.....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.)

(48) प्रो. डॉ. बी. एस. सिसोदिया .....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)
(49) प्रो. डॉ. प्रभा पाण्डेय .....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मैहर, जिला- सतना (म.प्र.)
(50) डॉ. राजेश कुमार.....शासकीय महाविद्यालय अमरपाटन, जिला-सतना (म.प्र.)
(51) प्रो. डॉ. रावेन्द्रसिंह पटेल .....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)
(52) प्रो. डॉ. मनोहरलाल गुप्ता .....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, राजगढ़ ब्यावरा (म.प्र.)
(53) प्रो. डॉ. मधुसुदन प्रकाश.....शासकीय महाविद्यालय, गंजबासोदा, जिला-विदिशा (म.प्र.)
(54) प्रो. युवराज श्रीवास्तव.....सी.वी. रमन विश्वविद्यालय, कोटा-बिलासपुर (छ.ग.)
(55) प्रो. डॉ. सुनील वाजपेयी .....शासकीय तिलक स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कटनी (म.प्र.)
(56) प्रो. डॉ. ए.के. पाण्डे .....शासकीय कन्या महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)
(57) प्रो. डॉ. यतीन्द्र महोबे .....शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.)
(58) प्रो. डॉ. शशि प्रभा जैन .....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, आगर-मालवा (म.प्र.)
(59) प्रो. डॉ. नियाज अंसारी .....शासकीय महाविद्यालय,सिंहावल, जिला सीधी (म.प्र.)
(60) प्रो. डॉ. अर्जुनसिंह बघेल .....शासकीय महाविद्यालय, हरदा (म.प्र.)
(61) डॉ. सुरेश कुमार विमल .....शासकीय महाविद्यालय, भैंसादेही, जिला बैतूल (म.प्र.)
(62) प्रो. डॉ. अमरचन्द्र जैन .....शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(63) प्रो. डॉ. रश्मि दुबे .....शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(64) प्रो. डॉ. ए.के. जैन .....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बीना, जिला- सागर (म.प्र.)
(65) प्रो. डॉ. संध्या टिकेकर .....शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना, जिला- सागर (म.प्र.)
(66) प्रो. डॉ. राजीव शर्मा .....शासकीय नर्मदा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(67) प्रो. डॉ. रश्मि श्रीवास्तव.....शासकीय गृह विज्ञान महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(68) प्रो. डॉ. लक्ष्मीकांत चंदेला.....शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिंदवाड़ा (म.प्र.)
(69) प्रो. डॉ. बलराम सिंगोतिया .....शासकीय महाविद्यालय सौंसर, जिला-छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
(70) प्रो.डॉ. विम्मी बहल .....शासकीय महाविद्यालय, काला पीपल, जिला - शाजापुर (म.प्र.)
(71) प्रो. डॉ. अमित शुक्ल .....शासकीय ठाकुर रणमतसिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
(72) प्रो. डॉ. मीनू गजाला खान .....शासकीय महाविद्यालय, मक्सी, जिला-शाजापुर (म.प्र.)
(73) प्रो. डॉ. पल्लवी मिश्रा .....शासकीय महाविद्यालय, नई गढ़ी, जिला- रीवा (म.प्र.)
(74) प्रो. डॉ. एम.पी. शर्मा.....शासकीय महाविद्यालय, दतिया (म.प्र.)
(75) प्रो. डॉ. जया शर्मा.....शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)
(76) प्रो. डॉ. सुशील सोमवंशी .....शासकीय महाविद्यालय, नेपानगर, जिला बुरहानपुर (म.प्र.)
(77) प्रो. डॉ. इशरत खान .....शासकीय महाविद्यालय, रायसेन (म.प्र.)
(78) प्रो. डॉ. कमलेशसिंह नेगी .....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)
(79) प्रो. डॉ. भावना ठाकुर .....शासकीय महाविद्यालय रेहटी, जिला सीहोर (म.प्र.)
(80) प्रो. डॉ. केशवमणि शर्मा .....पंडित बालकृष्ण शर्मा नवीन शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शाजापुर (म.प्र.)
(81) प्रो. डॉ. रेणु राजेश.....शासकीय नेहरु अग्रणी महाविद्यालय, अशोक नगर (म.प्र.)
(82) प्रो. डॉ. अविनाश दुबे.....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.)
(83) प्रो. डॉ. वी.के. दीक्षित.....छत्रसाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पन्ना (म.प्र.)
(84) प्रो. डॉ. राम अवेधश शर्मा.....एम.जे.एस. शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भिण्ड (म.प्र.)
(85) प्रो. डॉ. मनोज कुमार अग्निहोत्री .....सरोजिनी नायडू शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(86) प्रो. डॉ. समीर कुमार शुक्ला.....शासकीय चन्द्र विजय महाविद्यालय, डिण्डोरी (म.प्र.)
(87) प्रो. अपराजीता भार्गव .....अध्यापक ,आर. डी. पब्लिक स्कूल, बैतूल (म.प्र.) भारत
(88) प्रो. डॉ. अनूप परसाई .....शासकीय जे. योगानन्दन छत्तीसगढ़ स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़)
(89) प्रो. डॉ. अनिलकुमार जैन.....वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)
(90) प्रो. डॉ. अर्चना वशिष्ठ .....राजकीय राजऋषि महाविद्यालय अलवर (राज.)
(91) प्रो. डॉ. कल्पना पारीख .....एस.एस.जी. पारीख स्नातकोत्तर कॉलेज, जयपुर (राज.)
(92) प्रो. डॉ. गजेन्द्र सिरोहा .....पेसिफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)
(93) प्रो. डॉ. कृष्णा पैन्सिया .....हरिश आंजना महाविद्यालय, छोटीसादड़ी, जिला- प्रतापगढ़ (राज.)
(94) प्रो. डॉ. प्रदीप सिंह.....केंद्रीय विश्व विद्यालय हरियाणा, महेंद्रगढ़ (हरियाणा)
(95) प्रो. डॉ. स्मृति अग्रवाल.....शोध सलाहकार, नई दिल्ली
(96) प्रो. डॉ. कविता भदौरिया .....शासकीय कन्या महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

Ionospheric Fof2 Variability During Low Solar Activity

Devendra Kumar Warwade * Arun Kumar Gautam **

Abstract - In this paper we investigate the foF2 variation during low solar activity for the solar cycle 23. The observations are taken at high latitude stations Goosebay (52^0 N) in the northern hemisphere and port Stanly (52^0 S) in the southern hemisphere for hourly, monthly and seasonal. It is observed that the Ionosphere parameters reflect variations in their activity. In the year 2008 during low solar activity the high latitude stations shows similar variations but their time intervals was change in both the stations of northern and southern hemisphere.
Key words - Ionosphere, Ionospheric indices and solar activity.

Introduction - Solar variation causes changes in space weather, weather, and climate on Earth. It causes a periodic change in the amount of irradiation from the Sun that is experienced on Earth. It is one component of solar variation, the other being aperiodic fluctuations. Evolution of magnetism on the Sun. Powered by a hydromagnetic dynamo process, driven by the inductive action of internal solar flows, the solar cycle. Hale's observations revealed that the solar cycle is a magnetic cycle with an average duration of 22 years. However, because very nearly all manifestations of the solar cycle are insensitive to magnetic polarity, it remains common usage to speak of the "11-year solar cycle".

The equatorial ionosphere variability depends on its electric field's day-to-day variability due on one hand to the wind forced field (Scherliess & Fejer 1999) and on the other hand to the penetrating electric fields (Huang et al. 2005; Nicolls et al. 2007) It is well known that the F layer depends on: (1) the sunspot solar cycle (Forbes et al. 2000; ; Rishbeth & Mendillo 2001; Pancheva et al. 2002), (2) the Sun-Earth relative position at the origin of the seasonal variation, and equinoctial maxima (Lal 1992, 1997, 1998; Rishbeth et al. 2000; Zou et al. 2000) and (3) the solar wind speed (Legrand& Simon 1989; Lotko 1989; Simon & Legrand 1989; Lal 1997, 1998. Solar wind speed and shock activity are the main sources of geomagnetic activity.. The influences of the Sun-Earth relative position, sunspot activity, solar wind speed and shock activity to classify the data, in order to understand and predict the shape of the mean diurnal variation of the F2 layer.

During the last 23-24 solar cycle, the behavior of the equatorial ionosphere was one of interesting aspects of the period. Scientists were equipped with a thorough knowledge: a lot of space missions and ground-based observatories were operated and a lot of papers about this period have been published. Their model calculations supported the general assertion that thermospheric temperatures were cooler during the last solar minimum as a consequence of an unusually low and extended minimum of the solar extreme-ultraviolet flux.

Electron concentration in the F2-region of the ionosphere is primarily due to ionization of the neutral atmosphere by the solar UV radiations. These radiations are now known to show very definitive solar cycle variations. Consequently, electron concentrations and thus, the critical frequency of the F2-region (*fo*F2) is also expected to reflect these variations. Although there were no solar UV measurements during the early years of ionospheric research, sunspots data for several decades were available and solar cycle changes in *fo*F2 were detected in the very beginning of ionospheric research (Mitra, 1952 for early works). In fact, excellent correlations between the sunspot number and the monthly mean *fo*F2 were reported and a detailed analysis of ionosonde data for several stations by Jones and Gallet (1962, 1965) and later by Rush et al. (1983, 1984) helped in generating global maps of *fo*F2 as a function of sunspot number and other geophysical parameters. Fuller-Rowell (1997) proposed that the global scale inter hemisphere-thermospheric circulation acts like a huge turbulent eddy. The effect of this "thermospheric spoon" is analogous to a conventional small scale turbulent eddy, mixing the lower atmosphere species below the turbopause. At equinox, the thermospheric prevailing circulation is weak since solar heating heats the atmosphere more uniformly. The combination of solar heating at low latitudes and Joule heating from magnetospheric sources at high latitudes leads to weak latitude pressure gradients and resultant light prevailing meridional winds.

* C.S.A. Government P. G. College, Sehore (M.P.) INDIA
** C.S.A. Government P. G. College, Sehore (M.P.) INDIA

Data and Method of Analysis - The Hourly, Monthly and Yearly variation of foF2 is obtained for the period of January 1996 to December 2008 which is a low to moderate and high solar activity period from NGDC Ionospheric Digital Database of NGDC Space Physics interactive data resource centre (http://ngdc.noaa.gov/). To represent the day to day variability the standard deviation (σ) of hourly, monthly and yearly FoF2 values from the median value (x) is determined, from which the ratio of (σ/x%) in percentage is derived for each hour of each month of observation. This forms the ionospheric parameter representing day-to-day variability of foF2. Variability parameter (σ /x%) is calculated for two stations separately for each day, month and seasons of the year. To understand the seasonal variation of foF2 more clearly, we divided the year into three seasons' winter, summer and equinox. Variability of FoF2 during quiet days and disturbed days is also compared. For this purpose five very quiet days and five very disturbed days are considered. We consider the values of solar flux (10.7cm), R, K_P and, A_P indices which are collected from World Data Centre, Kyoto Japan.

Result -

Figure 1 shows the hourly variation of foF2 during low solar activity, it is observed that the maximum variability is observed in the year 2008 during low solar activity. The variation of foF2 during low Solar activity the maximum variation is 55% at Portstanley (52^{0}S) in the morning time, which is more than the Goosebay (52^0 N) at low Solar activity. **(See in the last page)**

Figure 2 represent the monthly variation of fof2 during low solar activity in complete solar cycle. It is observed that the variability is 60% between the months April to July. During low solar activity in the year 2008, the variation at the station Goosebay (52^{0}N) is 45% in the months January and February and again rises in November and December. At the station Portstanley (52^{0}S) the variation of foF2 is 60% in the months July and August.

In the whole interval of Solar Cycle 23, monthly average shows maximum variation in the months November and December at Goosebay (52^{0}N) and Portstanley (52^{0}S) in the Southern Hemisphere shows maximum and constant variation of foF2, between the months April to July. **(See in the last page)**

Figure 3 shows the seasonal variation of foF2 during low solar activity. It is observed that the season, summer shows 40% variations in the foF2 at Portstanley (52^{0}S) and at the same time Goosebay (52^{0}N) shows slight low variation in foF2 as compared to Portstanley (52^{0}S). In winter Portstanley (52^{0}S) shows 40% variation of foF2 and Goosebay (52^{0}N) shows exact half variation of foF2 during winter. In equinox Portstanley (52^{0}S) shows 30% variation in foF2 which is slight more than the variation at Goosebay (52^{0}N). **(See in the last page)**

From **Figure 4** it is observed that during During low solar activity in 2008 the variation of foF2 at the station Goosebay (52^{0}N) is approximately same for the quiet days and disturbed days. But at the station Portstanley (52^{0}S) the variation of foF2 in quiet days is more as compared to variation in disturbed days. When we go for the whole interval of solar cycle 23 (January 1996 to December 2008) the average variation of foF2 is more in disturbed days than quiet days. **(See in the last page)**

Discussion - As we know that solar activity influences each and every activity of the upper atmosphere, it affects the critical frequency of F2 layer and causes variation in the foF2. During low solar activity in the year 2008, it is observed the variation is quite low at the Goosebey 52^{0}N in the Northern hemisphere and the same time the variation have been foF2 is more at Portstenley 52^{0}S in the Southern hemisphere and the maximum variation is in the night time. For the whole interval of solar cycle 23 (1996 to 2008) it is observed that the station Goosebey 52^{0}N in the Northern hemisphere shows high (Coefficient of variation) as compared to the Portstenley 52^{0}S in the Southern hemisphere.

In the monthly observation of foF2 during low solar activity, the maximum variation in foF2 is about 40% at the station Goosebey 52^{0}N in the Northern hemisphere but as we go for the Portstenley 52^{0}S in the Southern hemisphere the variation is about 60% which is high as compared to Goosebey 52^{0}N Northern hemisphere.

At the time of low solar activity i-e 2008, the maximum variation in foF2 for the station Goosebey 52^{0}N in the Northern hemisphere is in the months February, November and December. For the station Portstenley 52^{0}S in the Southern hemisphere it is observed that the maximum variation is pointed in the month July and August.

As we go for the whole interval of solar cycle 23 (1996 to 2008) it is observed that the monthly maximum value of foF2 is found in the months January-February and Novermber-December. Similarly for the station Portstenley 52^{0}S in the Southern hemisphere it is observed the maximum variation lies between April to July in the whole interval of solar cycle 23.

If we go for the seasonal that is Summer, Winter and Equinox for both the stations of Northern and Southern hemisphere, During low solar activity the hourly values shows quite more variation in the value of foF2 at the station Portstenley 52^{0}S in the Southern hemisphere as compared to Goosebey 52^{0}N in the Northern hemisphere in the morning and night hours.

For the low solar activity it is observed that quiet days shows increase in the value of foF2 at the station Portstenley 52^{0}S in the Southern hemisphere during low solar activity. For the whole interval of solar cycle 23, it is observed that during disturb days the value of foF2 shows more value as compared to quiet days in the entire solar cycle. From this study it is extracted that the ionosphere is directly concerned with the solar activity, for the period of one complete solar cycle 23 (1996 to 2008), it is found that the solar radiations influences the day to day variation of foF2 continuously.

Conclusion - In the whole study it is observed and

concluded that:

1. Solar radiations or solar activity influences ionospheric parameters continuously.
2. Solar activity may be high or low but it effects the F2 layer.
3. Solar activity effects both the hemispheres continuously as we observed the variation of foF2 in the complete solar cycle 23 (1996 to 2008).

Acknowledgement - We are thankful to World Data Center and NGDC Space Physics Interactive Data Resource (SPIDR) [http://ngdc.noaa.gov/] for providing the data of inonispheric parameters and foF2 values for the complete solar cycle 23rd (1996-2008), duration under consideration of the present study. We also thanks referees for their valuable suggestions for improving the presentation of the work.

References :-

1. Forbes, J.M, Palo, S., and Zhang, X., Variability of the ionosphere, Journalof Atmospheric and Solar Terrestrial Physics, 62, 685-693, 2000
2. Fuller- Rowell, T.J., Codrescu, M.V., Fejer, B.G., Borer, W., Marcos, F., and Anderson, D.N.: Dynamics of the low-latitude thermosphere: quiet and disturbed conditions, J. Atmos. S-P, 59, 1533-1540, 1997
3. Huang, C.M., Some abnormalities in the variations of F2- layer critical frequency during the period of high solar activity of solar cycle 8-19, J. Geophys, Res., 65, 897-906, 1960
4. Lal, C., Contribution to F2 layer ionization due to the solar wind, J. Atmos. Solar-Terr. Phys., 59(17), 2203–2211, 1997
5. W. Lotko, in Report of the Geospace Environment Modeling Workshop, Theory Campaign on Magnetopause and Boundary Layer Physics, ed. by M. Ashour-Abdalla, NSF Magnetospheric Physics Program, Washington D. C., p. 61-68, 1989
6. Nicolls, M. J., and C. J. Heinselman (2007), Three-dimensional measurements of traveling ionospheric disturbances with the Poker Flat Incoherent Scatter Radar, Geophys. Res. Lett., 34, L21104, doi: 10.1029/2007GL031506
7. Pancheva, D., N. Mitchell, R.R. Clark, J. Drobjeva, and J. Lastovicka, Variability in the maximum height of the ionospheric F2-layer over Millstone Hill (September 1998–March 2000); influence from below and above, Ann. Geophys., 20, 1807–1819, 2002.
8. Rishbeth H. and Mendillo M. Patterns of F2-layer variability. J. Atmos. Solar-Terr. Phys., 63, 1661-1680, 2001.
9. Simon P. A. and Legrand, J. P.: Solar cycle and geomagnetic activity : A review for geophysicists Part II. The solar sources of geomagnetic activity and their links with sunspot cycle activity, Ann. Geophys., 7(6), 579–594, 1989

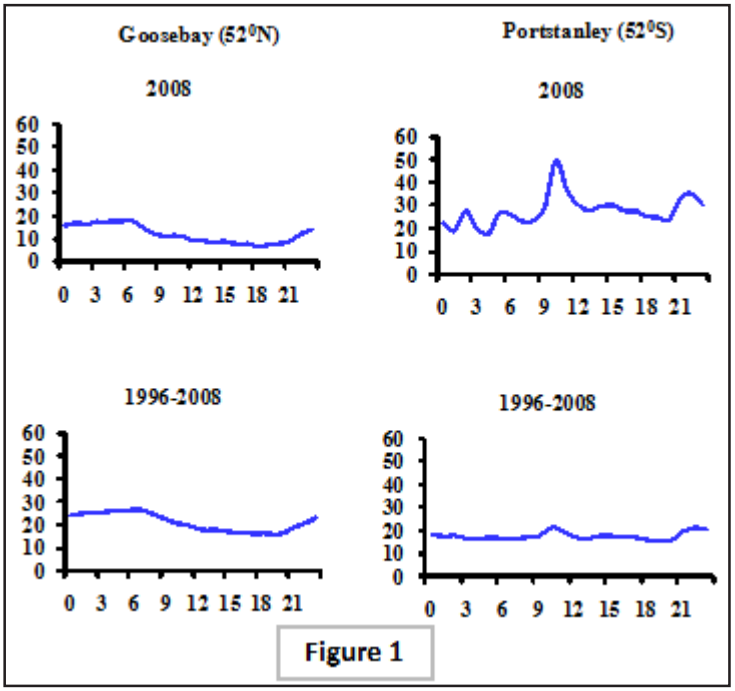

Figure 1

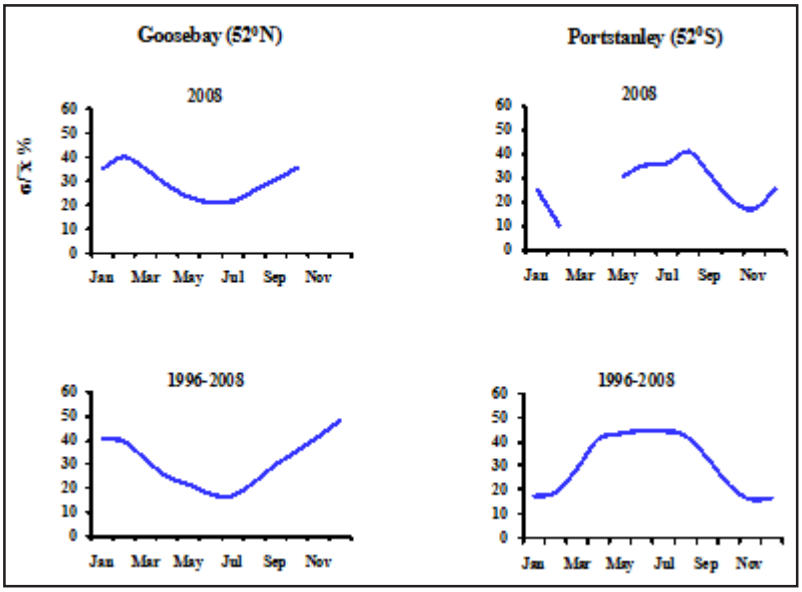

Figure - 2

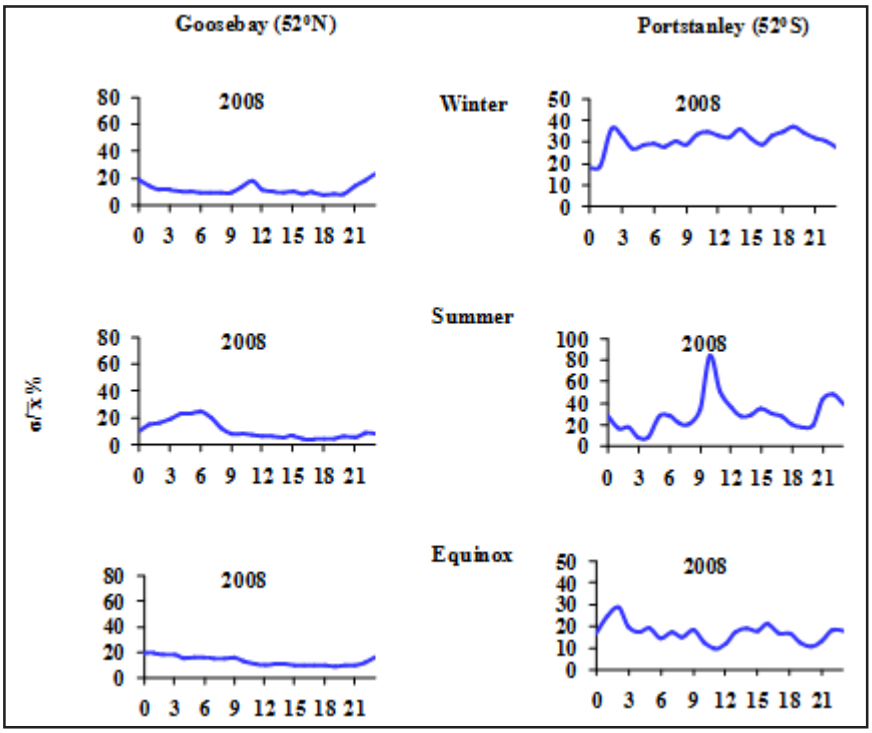

Figure - 3

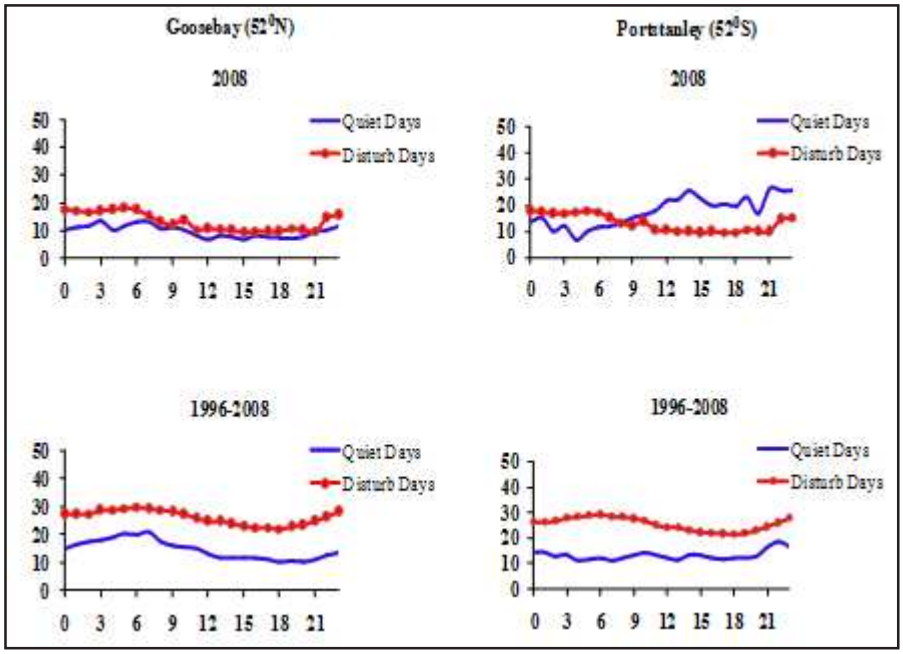

Hour
Figure - 4

****

Identification of Various Sugar Present in the roots of plant *Lycopercion Esculentun*

Sharif Khan* **Dr. P.C. Choudhary**** **Dr. M. L. Gangwal*****

Abstract - Present Communication deals with identification of various sugar in the roots of plant ***Lycopercion Esculentun***. There presence are confirmed by thin layer chromatography. The carbohydrates contents where found 2.5 percentage sugars. There are following sugars have identified D-Galactose, D-Mannose, D-Glucose, D-Fructose Maltose and Sucrose.

Introduction - Lycopersicon esculentum : plant belongs to family solanaceae. Lycopersicon esculentum is the world's most popular and widely cultivated vegetable. Lycopersicon esculentum are used for soup, salad, pickles, ketchup, puree, sauces and many other ways. Lycopersicon esculentum have been used as food by the inhabitants of Central and South America since per-historic times. The plant has originated in Peruvian and Mexican regions.

A short -lived perennial, grown as an annual, Branching herbaceous, with hairy, weak trailing stems up to 2:4 m ling Leczves-hair, variable in shape; Flowers –small yellow, in clusters, up to 12 per cluster fruits round or lobed variable in size; Colour-red, pink or yellow when ripe, Seed-flat, slightly curved hairy, light brown.

Lycopersicon esculentum is a warm season crop. Most suitable- soil for Lycopersicon esculentum cultivation is rich loamy of soil with little sand in the upper layer and a good clay in the sub-soil.

The roots by the plant - Lycopersicon esculentum procured from famous herb supplier and recognized by the famous taxonomist of this eerie.

It is widely cultivated throughout India. It fruits are eaten raw and cooked, numerous varieties are grown but all fruits are rich in meneral matter calcium 20 mg, phosphorus 40 mg iron 2.4 mg,carotene 320 1_ U_, vitamins as thiamine 69 ug. nicotinic acid 0_5 mg, riboflavin 60 ug ascorbic acid 30 mg/100 gms, fruits are nutritive, tonic, digestive, beverages are prepared, canned into sauces, dehydrated powder used as condiment, Lycopersicon esculentum soup appetizer.

The roots of Lycopersicon esculentum were taken up for further phytochemical investigations. The roots of Lycopersicon esculentum were supplied by Agriculture College, Indore.

Material and Methods

Collection, Identification and Purification of plant material - Crude plant material (lycopersicon esculeltum) was purchased from a local shop in Indore India The collected plant material was identified by the Department of Bio Chemistry Agriculture collage (State Government collage), Indore The plant material was purified as a follows: As described by the author elsewhere the crude material was soaked in warm water for 6 h, boiled for 2 h kept aside for 2 h for release of gum into the water. To isolate gum , an equal volume of butyl alcohol was added to the an oven at about 48^0 powdered and passed through a #85 sieve. The powdered gum was stored in desiccators until further use.

Phytochemical Characterization of Isolated Gum - Identification test for carbohydrates. As described by the author elsewhere, an aqueous solution 2% of the extracted gum was used for chemical characterization. Tests for carbohydrates, starch, fats were performed according to standard procedures.

Solubility - As described by the author elsewhere, the solubility of the gum was identified by taking one part of dry gum powder and shaking it with different solvents and then the solubility was determined.

Organoleptic evaluation of isolated gum - As described elsewhere, the isolated gum was characterized for organoleptic properties such as color,odor, taste and fracture.

pH of gum - As described by the author elsewhere, the pH of 2% w/v solution of the gum was measured using a digital meter.

Swelling index of isolated gum - As described by the author elsewhere, the swelling index is volume (in mL) taken up by the swelling of 2g under specified conditions. The swelling index of the gum was determined by accurately weighing 2g of gum, which was further in introduced in a

* Research Scholar (Chemistry) Mewar University, Chittorgarh (Raj.) INDIA
** Asst. Prof. (Chemistry) Mewar University, Chittorgarh (Raj.) INDIA
*** Professor (Chemistry) P.M.B. Gujrati College, Indore (M.P.) INDIA

30 mL glass Stoppard measuring cylinder 32mL of water was added and the mixture was shaken thoroughly every 10min for 1 h. it was then allowed to stand for 4 h at room temperature. Then the volume occupied by the gum was measured. The same procedure was repeated thrice and mean value was calculated.

Viscosity of gum - As described elsewhere , the viscosity of 2% w/v solution of the gum was measured using an Ostwald' s viscometer.

Surface tension of gum - As described elsewhere, the surface tension of two 2% w/v solution of the gum was measured using Stalagmometer .

Bulk density and bulkiness - A described by the author bulkiness is inverse of bulk density. For the determination of bulk density, an accurately weighed quantity of 6g was introduced into graduated measuring cylinder and the cylinder was fixed on the bulk density of apparatus. The volume occupied by the powder noted down. Tapped density calculated by tapping the powder in a bulk density apparatus until the constant volume by obtained. The final volume was noted.

Powder flow property - As a described by the author elsewhere, the flow property of the powder was calculated by measuring the angle response. Using the formula was calculated thrice.

Powder Compressibility - As described by the author elsewhere the compressibility of the powder is determined using Carr's index. For this finely powdered gum 6g transferred into a measuring cylinder and using the bulk density apparatus, calculation were done.

Particle size analysis - As described elsewhere the particle size was determined using microscopy was done using a Hicon microscope.

Ash value - As described by the elsewhere, the ash value was calculated by weighing 3g of lycopersicon esculeltum powder in a tared silica crucible. It was then incinerated in muffle furnace up to 550 C till the powder the completely changes to ash. The crucible was then kept in a desiccators after complete incineration. The weight of the ash was noted and total ash was calculated in terms of a percentage .

Chromatographic Study - The spot concentrated extract was applied on Thin layer Chromatographic plate with help of fine capillary. Chromatogram was developed by ascending technique in the solvent system : ethanol, acetic acid water (5:1:4)

Table 1. Solvent System-ethanol acetic acid water (5:1:4) spraying regent aniline Hydrogen Phthalate

S.	Sugar	R_f found	R_f reporeted
1	D-Galactose	0.19	0.18
2	D-Mannose	0.21	0.20
3	D-Glucose	0.16	0.17
4	D-Fructose	0.27	0.28
5	Maltose	0.39	0.38
6	Sucrose	0.63	0.59

Table 2 - Solubility profile of gum

Solvents	Solubility
Cold water	Swell to form a gel
Hot water	Soluble
Methanol	Insoluble
Diethyl ether	Insoluble
Petroleum	Insoluble
Acetone	Insoluble

Table 3. Parameter of gum

Parameters	Observation
pH (2% w/v solution)	6. 70 $\pm$ 0.01
Swelling index (%)	54 . 65 $\pm$ 0.02
Viscosity (2% w/v solution in N x sec x $^{-2}$)	6.87 $\pm$ 0.60
Surface tension (2% w/v in solution in gm x cm x sec^{-2})	56.46 $\pm$ 78
Bulk density (g/ cm^3)	0.32 $\pm$ 0.01
Tapped density (g/cm^3)	0.37 $\pm$ 0.01
Bulkiness (cm^3/g)	4.19 $\pm$ 0.19
Hausner's ratio	1.14 $\pm$ 0.00
Carr's index (%)	12.91 $\pm$ 0.00
Angle of repose (^{0})	27.46 $\pm$ 0.71
Particle size (μ m)	41.98 $\pm$ 10 .75
Total Ash (%)	3.00 $\pm$ 0.01

Results - After isolating mucilage lycopersicon esculeltum using ethyl alcohol acetic acid water, (5 : 1 : 4). The percentage yield of gum was found to be 2.5. Photochemical investigation showed the presence of carbohydrate. There are flowing sugars have identified D- Galactose , D – mannose, D- Glucose, D – fructose maltose and sucrose. The results of the phytochemical test are summarized in table.

The organoeleptic properties of gum observed and were found to acceptable. The odor and taste were found to be characteristic and agreeable. The fracture was rough. The solubility profile to the gum is shown in table2.

Solubility analysis showed that lycopersicon esculeltum gum was soluble in hot water, swells and forms a gel with cold water and was insoluble in most of the organic solvents. The different parameters of the gum were evaluated and are shown in Table3.

Conclusion - It is concluded from research work that the gum extracted from lycopersicon esculeltum shows the presence of carbohydrate after chromatographic Study . All the organoleptic properties evaluated were found to be acceptabl. The pH was found to be slightly acidic. The swelling index reveals that the gum swells well in water. Total ash value was in the limits. The values of angle of repose and Carr' s index of the powered gum powder show that the flow property was good

References :-

1. Kumar s. Gupta S.K : Natural polymers, gums and mucilages as excipients in drug delivery – Polim Med 2012, 42, 191 – 197.

2. Malviya R, Srivastava P., Kulkarni G. T. : Application of Mucilages in Drug delivery – A Review Ad. Biol. Res. 2011, 5, 01 – 07.
3. Jani G.K Shah D.P, Prajapati V.D., jain V.C, : Gums and mucilages versatile excipients for pharmaceutical formulations. Asian j. Pharm Sci. 2009, 4, 308 -322.
4. Malviya R.: Extraction characterization and Evolution of selected Mucilage as pharmaceutical Excipient . Polim. Med 2011, 41, 39 – 44
5. gaud R.S Gupta G.D.: Practical physical Pharmacy. CBs Publisher and Distributors Pvt . Ltd., Reprint 2011.
6. joseph L., George M.,: Pharmacomgostical profiling of Geranium ocellatum leaves. Int . j. Med Arom plants. 2011, 1, 351-354,
7. Parridge, S.M Biochem., J.p 4238 (2012)

****

स्वरोजगार के क्षेत्र में रेशम उत्पादन

डॉ. मीना स्वामी *

Introduction - रेशम एक मूल्यवान वस्त्र है, जिसका सौन्दर्य पहनने वाला ही महसूस कर सकता है। यह अहसास ही रेशम के मूल्यवान होने का कारण भी है रेशम और उससे बनने वाले उत्पाद अपने ऊँचे मूल्य के कारण अपने निर्माताओं के लिये आय के अच्छे स्त्रोत होते है। रेशम उत्पादक एक लाभदायक रोजगार का स्वरूप है।

Species of Silk worm - रेशम उत्पादन करने वाली सात प्रजातियॉ निम्नलिखित है –

(i) **Tussar Silk worm(Antherea paphea) -** भारत, चीन एवं श्रीलंका में पाया जाता है! मुख्य रुप से साल, बेर, अर्जन पर रहते है। coocons को जंगल से एकत्रित करना पड़ता है। पकड़े जाने पर ये मॉथ प्रजनन प्राय: नहीं करते है।

Tussar Silk worm

(ii) **Mulberry Silk – worm Bombyx mori -** इस कीट को चीन, भारत, जापान, कोरिया, इटली, फ्रांस एवं रुस में भी पाला जाता है। इस रेशम कीट को शहतूत के पौधे पर पाला जाता है, इस कारण इसको Mulberry Silk Wirm कहते है। यह शहतूत की पत्तियॉ खाता है! इसके द्वारा प्राप्त रेशम सफेद रंग का होता है तथा यह रेशम उच्चकोटि का होता है।

Mulberry Silk

(iii) **Munga Silk worm -** (Antheria assamensis) इसके caterpilar सिन्नेमोत तथा मैचिलिस नामक पौधो की leaves को खाता है, इस moth का cocoon सुनहरा पीला रंग का चमकदार रेशम देता है।

(iv) **Eri Silk – Worm -** (Philosomia ricini) इसके larva अरण्डी (Castor,ricinus, communis) नामक पौधों की पत्तियॉ खाते है। इस मॉथ के कोकून से धागे को उधेड़ नहीं जा सकता है, इस कीट का रेशम उत्तम नहीं होता है, किन्तु मजबूत होता है।

Eri Silk

(v) **Deo Munga Silk worm -** (Thiopaila religiosa) इसके larva मुख्यत: मैचिलिस तथा फाइकस पौधों की पत्तियॉ खाते है। इसके धागों का इस्तेमाल मुख्यत: मछली पकड़ने के जाल बनाने में होता है।

(vi) **Oak Silk Worm -** Antherea pernyi जापान एवं चीन मे पाए जाते है। ये अच्छे गुणों के रेशम का उत्पादन करते है।

(vii) **Giant Silk Worm -** Allacus atlus यह भारत तथा मलेशिया में पाया जाता है। यह सबसे बड़ा कीट है, जिसकी लम्बाई पंखों के विस्तार होने पर 11 inch होती है। सिर्फ चार जातियॉ Bimbyx mori, Attacus ricni, Antherea assama and Antherea paphea का उपयोग रेशम उत्पादन में होता है।

3. Garden Management - रेशम उत्पाद के लिए ऐसी सिंचित भूमि होना आवश्यक है, जिस पर शहतूत के पौधों को रोपित किया जा सके।एक उद्यमी के लिए लगभग डेढ एकड़ रकबा काफी है। इन्हें कहीं भी लगाया जा सकता है। इन पौधो को किसी विशेष किस्म की मिट्टी तथा विशेष आवोहवा की जरुरत नहीं होती है। शहतूत के पौधों को 2/3 व 3/5 के डिफरेंस में लगाया जाता है। इसके उत्पादन मे कुछ मात्रा पोटाश, नाइट्रोजन व सुपरफॉस्फेट की डाली जाती है। जिससे कि यह अधिक वृद्धि कर सके। उत्पादन जुलाई माह में वर्षा के समय में अधिक होता है।

शहतूत पेड़ की पत्तियॉ रेशम के कीड़ो का मुख्य भोजन होती है। अत: कीड़ो के लिए भोजन की कोई समस्या नहीं रहती है।

* सहायक प्राध्यापक (प्राणी शास्त्र) शासकीय ऑटो स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिंदवाड़ा (म.प्र.) भारत

औसतन रेशम उत्पादन – रेशम उत्पादन औसतन 1000 घस फ्रेश कोकून सुखाने पर 400 Kg के लगभग रह जाता है, जिसमें से 385 Kg प्यूपा 230 Kg रहता है और शेष 155 Kg शेल रहता है। इस 230 Kg प्यूपा में से लगभग 120 Kg कच्चा रेशम तथा 35 Kg सिल्क वेस्ट प्राप्त है।

4. Rearing of Silk Worm - Rearing का अर्थ होता है चरणबद्ध लालन–पालन। अण्डे देने से लेकर ग्रीष्म निष्क्रियता शीत निष्क्रियता (Hiberation) अण्ड ऊष्मायन (Incubation) larva की प्रारंभिक एवं अंतिम अवस्था की देखभाल कोकून के उत्पादन की देखभाल से संबंधित होती है। Rearing के चरण इस प्रकार है–

I. Grainage Management - इसका उद्देश्य जाति के वास्तविक गुणो को बनाए रखना तथा अच्छे गुणों वाले बीजों को प्रदाय करना होता है, कोकून में sex separatin के लिए कोकून के एक सिरे को काटा जाता है। फिर perbrine खोजी मशीन या साधारण माइक्रोस्कोपिक मूल्यांकनो का उपयोग होता है। इसके बाद इन्हें सामूहिक प्रकट के लिए रखा जाता है।

II. Emergence of fertilzation - मॉथ का निकलना तथा निषेचनद्ध वयस्को का सामूहिक रूप से प्रकटीकरण सामान्य कमरे के तापमान पर होता है। नर मॉथ तुरंत मादा के चारों ओर धूमने लगता है। मादा मॉथ अण्डों के साथ उड़ने में असमर्थ होती है। नर को मादा के साथ मैथुन करने से रोका जाता है, क्योंकि इस प्रकार से उत्पन्न अण्डे बीज के रूपे में उपयोग नहीं होते है। नर और मादा दोनों को दूसरे समूहों से लेकर मैथुन कराया जाता है और समापन के तुरंत बाद इनको अलग कर दिया जाता है इसके मादा को अण्डे देने के लिए छोड़ दिया जाता है।

III. अण्डे देना – मादा नर के साथ मैथुन के तुरंत बाद अण्ढे देना प्रारंभ कर देती है। प्रत्येक मादा के द्वारा 400 से 500 अण्डे दिए जाते है, जिन्हें seeds कहते है। इन बीजों को प्रयोगशाला में 4C तापक्रम पर रखा जाता है।

IV. निगर्मन (Hatching) - जैसे ही larva बीज से बाहर आते है, वे अत्यधिक मात्रा में भोजन लेने लगते है । भोजन की कमी होने पर शिशु larva मर जाते है, जिससे रेशम उद्योग को हानि होती है, यदि अण्डों को उसी स्थान पर रखा जाए जहॉ वे दिए गये हो तो Hatching 100% नहीं होता है। इस कारण अण्डों को तश्तरियों में रखा जाये और fathers से हटाया जाए। विभिन्न stages में निकले caterpillar को अलग–अलग रखा जाना चाहिए।

V. पालन करने वाले तक बीज पहुॅचाना और व्यावसायिक पोषण– (Supply of seeds to rearers and commercial rearing b) seed or caterpillar (second instar larva) को रेशम पालन के लिए किसानो को दिया जाता है, नये किसानों के लिए eggs को अपने second instar से प्रारंभ करना उचित होता है, क्योंकि पहले, दूसरे एवं तीसरे इनस्टार के पालन–पोषण में ज्यादा सावधानी करनी पड़ती है, पॉचवे तथा छठवें लार्वा का साधारण Nylon जाल से लटकी हुई तश्तरियों या सिर्फ जमीन पर रखी हुई तश्तरियों पर देखभाल किया जाता है। स्वस्थ कैटरपिलर के उत्पादन के लिए, जो साधारण प्रगति से हो, तीसरे चौथे तथा पॉचवे इन्सटार के रखने की सतह को दिन में एक बार अवश्य साफ करना चाहिए, लार्वा कों 60% – 70% आर्द्रता पर रखा जाता हैं।

VI. Sppinning of Cocoon - इस अवस्था में कैटरपिलर खाना बंद कर देते है और शहतूत के पत्ते में एक कोने से चिपक जाता है और paste की तरह एक पदार्थ अपने रेशम ग्रंथि से निकालते है, कीडो को पकडकर spinning tray में transfer कर दिया जाता है। इस ट्रे को कुछ समय तक सूर्य के प्रकाश में तिरछा रखा जाता है। निर्माण का कार्य तीन दिनों में समाप्त हो जाता है, और कोकून बनना पूरा हो जाता है।

VII. Stifling - यह कोकून को मारने की विधि है। 18 से 10 पुराने कोकून को या जो Heat treatment या पानी में उबालकर मार डाला जाता है। उबालने से कोकून मुलायम हो जाते है और धागे ढीले पड़ जाते है, जिससे उन्हे खोलने में आसानी होती है।

VIII. Reling and Spinning - मारे गए कोकून्स से रेशम के धागे को निकालना 'रीलिंग' कहलाता है। कुछ धागों को कलमसमजे से गुजारा जाता है और ऐंठ कर एक धागा बनाया जाता है और इसे एक चक्रिका पर लपेट दिया जाता है। इसे ही कच्चा रेशम या Reeled silk कहा जाता है। बेकार बाहरी सतह या खराब कोकून या धागों को अलग कर स्वच्छ धागे बनाए जाते है। अम्ल की सहायता से पुन: इसे बार–बार धोया जाता है। इस प्रकार धागों में Lustor लाई जाती है।

5. Life cycle of Bombyx mori - Mulberry silk worm एक मॉथ है, जिसकी लम्बाई 2.5 से 3.0 c.m. होती है और इसका creamy white होता है। Female, male से आकार में बड़ी और अपने भारी आकार और दुर्बल पंखों के कारण उड़ने में असमर्थ होती है। ये कीड़े (moth) अपने 2–3 दिनों के छोटे जीवनकाल में कुछ नहीं खाते है।

I. Fertrilization - Unisexual individuals के capulation g{ internal fertilization की क्रिया होती है, जो 2 से 3 घण्टे तक होती है। यदि मैथुन के बाद नर तुरंत नहीं हटता है तो उसकी मृत्यु हो जाती है।

II. Egg laying - मैथुन के पश्चात् मादा अण्डे देती है, जो Gelatinous Secretion के द्वारा ढके होते है।

III. Egg - शहतूत की पत्तियों के Dorsal surface पर silk seeds

attached होते है। ये छोटे आकार के गोल तथा सफेद रंग के होते है। अण्डे winter में Hibernation 1 Diapause में रहते है, जबकि 2–7 पीढ़ी तक Non–diapauses मे multivoltine race में रहते है।

IV. Hatching - अण्डों के Incubation के दस दिन बाद अण्डे से Larval cuterpillar निकलता है। इसको निरंतर भोजन की आवश्यकता होती है, और भोजन की कमी होने पर कैटरपिलर की मृत्यु हो जाती है।

V. Caterpillar - इसका रंग पीला, पीतांबरी सफेद होता है। इसके 3 जोड़ी thoracic leges और 5 जोड़ी Abdominal legs होते है। जो कि उदर खण्ड के तीसरे, चौथे, पॉचवे, छटवें तथा दसवें खण्ड में होती है। इसमें पूर्ण विकसित Mandibulate तरह के mouth parts होते है, जो कि शहतूत के पत्ते खाने के लायक होते है। ऑठवे खण्ड में पृष्ठीय सींग पाया जाता है। प्रथम instar larva शहतूत की पत्तियों को खाकर शीघ्र ही अपने आकार में वृद्धि करता है, और instar में तीन, से पॉच बार moulting करके परिवर्तित होता है। पूर्ण विकसित कैटरपिलर में लार ग्रंथियॉ होती है।यह भोजन का ग्रहण करना बन्द कर देता है और pupa में परिवर्तित हो जाता है।

VI. Pupa- कैटरपिलर खाना बंद कर देता है और अपने silk gland से अपने चारों और एक sticky द्रव्य निकालता है, जो हवा के सम्पर्क से कठोर हो जाता है यह Radishbrown रंग का होता है और यह cocoon की अवस्था में 10 – 15 दिनों तक रहता है।

VII. Cocoon - यह सफेद रंग का प्यूपा का आवरण होता है, जिसके बाहरी धागे अव्यवस्थित तथा भीतरी धागे व्यवस्थित होते है। यह एक घण्टे में 15c.m. धागा बुनता है। Cocon के चारों और धागे व्यवस्थित तरीके में होते है।

VIII. Imago - रेशम कीट कोकून के अन्दर एक क्षारीय द्रव्य स्त्रावित करता है, जो कि कोकून के एक सिरे को कोमल बनाता है। इस कोमल सिरे को ही तोड़कर प्यूपा बाहर आता है।

अच्छे रेशम के लिए मॉथ को प्यूपा से बाहर नहीं आने दिया जाता है और उसी अवस्था में कोकून को गर्म पानी या ताप से मारा जाता है।

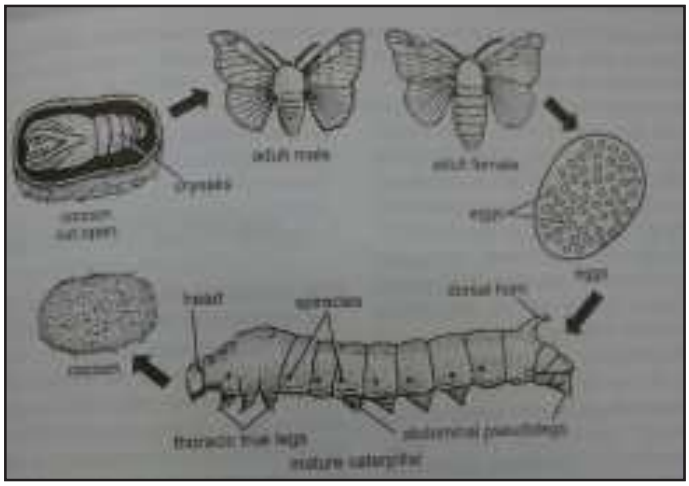

Life cycle of Bombyx mori

6. रेशम उद्योग नौकरी के साथ स्वरोजगार – रेशम उत्पादन में भारत का दूसरा स्थान है। भारत में निर्मित भारतीय परिधानो का निर्यात विदेशों में भी किया जाता है। रेशम उद्योग लगाकर दूसरे लोगों को भी रोजगार दे सकते है। रेशम उद्योग में तकनीकी ज्ञान के साथ विशेषज्ञता की भी आवश्कता होती है। पिछलें कुछ सालों में सिल्क उत्पादों का निर्यात बढ़ने से इसमें करियर की संभावनाएं भी बढ़ी हैं।

शैक्षणिक योग्यता – इस क्षेत्र मे करियर बनाने के लिए बायोलॉजी या केमेस्ट्री सब्जेक्ट के साथ 12th उत्तीर्ण आवश्यक है। देश के कई कृषि विश्वविद्यालयों में स्नातक के लिए चार वर्षीय डिग्री कोर्स चलाया जाते है। स्नातक में B. Sc. Sericulture और B.Sc. silk technology में प्रवेश लिया जा सकता है । तकनीकी योग्यता हासिल करने के बाद इस क्षेत्र में नौकरी के लिए पर्याप्त अवसर है। Sericulture कुटीर उद्योग के अंतर्गत आता है। सरकार ग्रामीण विकास और कुटीर उद्योग को बढ़ावा देने के लिए कई कार्यक्रम चला रही है। ग्रामीण युवाओं के साथ शहरी युवा भी इस क्षेत्र की और आकर्षित हो रहे है।

8. रेशम उत्पादन हेतु सरकार द्वारा चलायी जा रही योजनाए– इस भाग में सरकार के रेशम उत्पादन विभाग द्वारा चलायी जा रही अनेक योजनाओं का उल्लेख किया गया है।

कल्प वृक्ष सामान्य विस्तार – इस योजना का मुख्य उद्देश्य रेशम कीट पालन कार्य द्वारा सभी वर्गों को स्वरोजगार के अवसर उपलब्ध करवाना है। जिसमें कृषकों की स्वयं की एक एकड़ या आधा एकड़ सिंचित भूमि में शहतूत पौधा रोपण कराया जाता है तथा कृमिपालन के लिए समस्त तकनीकी मार्गदर्शन और प्रशिक्षण दिया जाता है।वर्तमान में ग्वालियर, भिण्ड और दतिया को छोड़कर सम्पूर्ण प्रदेश योजना का कार्य क्षेत्र है।

योजनांतर्गत लाभार्थी का चयन रेशम विभाग के अधिकारियों के सहयोग से स्थानीय पंचायत करती है। चयनित लाभार्थी को ट्रयसेम योजना के कृमिपालन के लिए पूर्ण तकनीकी मार्गदर्शन और रेशम कीट के अण्डे उपलब्ध कराए जाते है। साथ ही शहतूत पौधारोपित क्षेत्र के संक्षारण के लिए नाबार्ड द्वारा स्वीकृत पैकेज की राशि का ऋण बैंको के माध्यम से उपलब्ध कराए जाने के लिए आवश्यक सहयोग दिया जाता है।

उत्पादित कोकून को गुणवत्ता के आधार पर खरीदा जाता है। इस हेतु 'म.प्र. राज्य सेरीकल्चर डेवलपमेंट एवं ट्रेडिंग कोआपरेटिव फेडरेशन' (म.प्र. सिल्क फेडरेशन) का गठन किया गया है। जिसका मुख्य उद्देश्य सहकारिता के माध्यम से रेशम उत्पादकों का आर्थिक उन्नयन करना है। यह कोकून उत्पादन, धागाकरण, वस्त्र निर्माण का मूल्य प्राप्त करने हेतु विपणन आदि की व्यवस्था करती है।

मलबरी स्वावलबन योजना – इस योजना के अंतर्गत रेशम संचानालय द्वारा पूर्व में चलाए जा रहे रेशम केन्द्रों में उपलब्ध शहतूत पौधारोपण मे से एक एकड़ क्षेत्र का भागीदारी रेशम कषृको को दिया जाता है ताकि उसमें स्वराजगार की भावना जागृत हो। इसके साथ ही इन लाभार्थियों को केद्र पर उपलब्ध बुनियादी सूविधाओं का उपयोग करने की स्वतंत्रता दी गयी है तथा आवर्ती व्यय की पूतिन के लिए राशि रू 6,200 प्रति व्यक्ति लाभार्थी प्रति एकड़ की दर से चक्रीय राशि उपलब्ध कराई जाती है। ताकि खाद इत्यादि कार्य कारने के लिये उन्हें आर्थिक कठिनाईयों का सामना न करना पड़े।

वर्तमान में प्रदेश के 3 जिले ग्वालियर, भिण्ड, और दतिया को छोड़कर सम्पूर्ण प्रदेश योजना का कार्यक्षेत्र है। योजन के क्रियांवयन के साथ यह शर्त भी है कि जिन जिलों में शासकीय रेशम केन्द्र पर लाभार्थी उत्पादन का काम पूरी रूचि और लगन से नहीं कर रहे है। उनके स्थान पर अन्य इच्छुक लोगों को बदला जा सकेगा।

शासन द्वारा चलायी जा रही अन्य योजनाएँ –

1. मलबरी रेशम विकास एवं विस्तार कार्यक्रम ।
2. रेशम विकास एवं विस्तार कार्यक्रम ।

3. विदिशा इनोवेटिव योजना (सिरोज)।
4. राजगढ़ रेशम परियोजना।
5. विदिशा रेशम परियोजना।

रेशम उत्पाद बिक्री एवं विपणन – रेशम के बेहतर विपणन हेतु आवश्यक है कि रेशम में बेहतरीन चमक, मुलायामपन और लचीलापन हो इसलिए रेशम का धागा बुनने हेतु लकड़ी, चरखा श्रेष्ठ है क्योंकि इनसे बुनाई करने के लिए कोकून केक को नम करना पड़ता है, जिससे रेशम में उपरोक्त गुण उत्पन्न होते है। वस्त्र बाजार में रेशम अपनी मांग के अनुरूप उत्पादित नहीं होता है।इसलिए रेशम का बाजार मूल्य काफी ऊँचा रहता हैं।

Sericulture In Chhindwara - म. प्र. के हर्रई और तामिया क्षेत्र में मलवरी, टसर सिल्क का उत्पादन किया जाता है।

विकास खण्ड	सम्पर्क सूत्र
छिन्दवाड़ा	श्री अजय नेमा – जिला नोडल अधिकारी
तामिया	श्री एस.डी. कस्तूरे फील्ड ऑफीसर
तामिया	श्री एस. के. प्रजापति फील्ड आफिसर
हर्रई	श्री अशोक हेडाट्ट वरिष्ठ रेशम निरीक्षक
तामिया	श्री अजय नागवंशी कनिष्ठ रेशम निरिक्षक

केन्द्रीय रेशम बोर्ड, राज्य शासन एवं हितग्राही के सहयोग से संचालित सी. डी. पी. योजना 2015– 2016 से अनुमोदित प्रावधान (देखे)

References :-

1. Mulberry Cultivation by Dr. Patanik.
2. Applied Biology by Dr. Parasar.
3. Sericulture manual by Dr. R.K. Patanik.
4. Applied animal economy by Kulshresth.
5. Economic importance of sericulture by K.S.Rao.
6. Economic Zoology by Shukla and Upadhyay

केन्द्रीय रेशम बोर्ड, राज्य शासन एवं हितग्राही के सहयोग से संचालित सी. डी. पी. योजना 2015– 2016 से अनुमोदित प्रावधान

मद	श्रेणी	इकाई लागत	केन्द्रांश	राज्यांश	हितग्राही अंश
म्लवरी पौधारोपण के लिए कलमें	5500	14000	7000 (50)	7000 (50)	00
बायोबाल्टाईन कृमि पालन उपकरण सूची अनुसरण	01 या अधिक प्रति बैच 250	50000	25000 (50)	12500 (25)	12500 (25)
कृमि पालन गृह डिजाइन अनुसार	(1000 fect2) 250 Lolewg	2.75	0.275 लाख (10%)	1.10 लाख (40%)	137500 लाख (50%)
स्चाकी कृमि पालन इकाई विवरण सूची अनुसार	25000प्रति बेच	4100 लाख	1.40 लाख (25%)	1.40 लाख (25%)	1.20 लाख (50%)
सिचाई, सिचाई के उपकरण तथा भूजल संरक्षण	प्रति एकड़	25000	12500 (50%)	6250 (25%)	6250 (25%)
वर्मी कम्पोस्ट शेड	प्रति शेड	20000	10000	5000	5000

****

अलसी - एक औषधीय महत्व का पौधा

डॉ. राजेश बकोरिया *

प्रस्तावना - पूरे भारत वर्ष में अलसी रवि की फसल के रूप में उगाई जाती है इसे हिन्दी में अलसी या तीसी भी कहा जाता है। अंग्रेजी में इसे लिनसीड या फ्लेक्स सीड कहते है। इसका वनस्पतिक नाम
Linum usitassium है इसका कुल लाइनेसी है।

अलसी का पौधा झाड़ीय होता है जो 2- 4 फुट ऊॅचा, सीधा तथा कोमल होता है। इसकी पत्तिया रेखाकार, भालाकार , अग्रक नुकीला तथा लेमिना तीन शिराओं युक्त होती है । फूल सुंदर आसमानी रंग के फल गोल घुडीदार, पंचकोष्ठीय होते है। इसके प्रत्येक कोष्ठ में चमकीले चपटे गाढे भूरे रंग के बीज मनुष्य द्वारा खाए जाने वाला सबसे पुराने खाद्य पदार्थो में से एक है, अलसी को आज पूरे विश्व में विभिन्न प्रकार के व्यजनों को बनाने के लिए इस्तेमाल किया जाता है। अलसी एक औषधीय महत्व का पौधा है क्योकि इसमें कई पौषक एवं कई स्वास्थ्य लाभ प्रदाय करने वाले तत्व पाये जाते है। इसके बीजो में ओमेगा -3 फैटी एसिड, लिगनिन और म्यूसीलेज पाया जाता है इसके अतिरिक्त बिटामिन बी-1, प्रोटीन, तांबा मैग्नीज, मैग्नीशियम, फास्फोरस जिंक, सोडियम तथा पोटेशियम आदि तत्व भी पाए जाते है, यह बाजार मे साबुत, पिसे हुए, तेल या पूरक के रूप में उपलब्ध है।

औषधीय गुण:-

1. **हृदय रोगो के उपचार में -** अलसी के बीजो में हृदय को स्वस्थ रखने हेतु कई पोषक तत्व पाए जाते है इसमें मोनाअनसेचुरेटेड और पॉलीअनसेचुरेटेड वसा सहित ओमेगा -3 फेटी एसिड पाया जाता है जो हृदय को स्वस्थ्य रखने के लिए महत्वपूर्ण होता है। यह धमनियों में प्लटलेट्स के निर्माण को कम करता है और हृदयाघात के खतरे को भी कम करता है साथ ही धमनियां सुचारू रूप से काम करती है। हृदय को स्वस्थ्य रखने हेतु हमारे भोजन में हमें अलसी के पिसे बीजों को सम्मिलित करना चाहिये।
2. **रजनोवृत्ति के लक्षणों के उपचार में -** अलसी के बीज महिलाओं में रजोनिवृति के लक्षणों से लड़ने में बहुत मद्दगार सिद्ध हुए है क्योंकि अलसी के बीजों में लिगनिन में एस्ट्रोजेनिक गुण होते है। जो हॉट फ्लेशेस, चिडचिडापन और एवं अन्य लक्षणों को कम करता है तथा महिलाओं में मासिक धर्म नियमित एवं प्रजनन क्षमता को बढाता है।
3. **कोलेस्ट्रॉल कम करने में -** अलसी के बीजों के नियमित सेवन से खराब कोलेस्ट्राल स्तर कम होते है। इसके बीजों में पाए जाने वाला फ्लेवीनाइड, लिपोप्रोटीन व हृदयाघात को कम करता है। अलसी के बीजो में घुलनशील फाइबर होता है जो शरीर में कोलेस्ट्रॉल के अवशोषण को कम करता है। बुरे कोलेस्ट्रॉल को कम करने के लिये 2 से 4 चम्मच पिसे हुए अलसी के बीजों का प्रतिदिन सेवन करना चाहिए।
4. **वजन कम करने में सहायक -** अलसी के बीज में तीन मुख्य तत्व ओमेगा 3 फैटी एसिड, फाइबर और और लिगनिन पाए जाते है, जो वजन कम करने में सहायक है। वसा और फाइबर भूख को दबाने और आपके पेट को लंबी अवधि के लिए भरा हुआ रखने में मदद करते है। इसके अतिरिक्त इसके बीजों में विटामिन बी, पोटेशियम, मैग्नीशियम एवं जिंक भी प्रचुर मात्रा में पाया जाता है, जो वजन कम करने में मदद करते है।
5. **कैंसर के खतरे को कम करने में -** कैंसर को कम करने में अलसी के बीज बहुत असरदायक है, अमेरिकी कैंसर अनुसंधान संस्थान में स्पष्ट किया है कि अलसी के बीज प्रोस्टेट, डिम्ब ग्रंथि, स्तन कैंसर एवं पेट के कैंसर से लड़ने में लाभदायक सिद्ध हुए है । अलसी के बीज में लिगनिन उच्च स्तर में पाया जाता है हार्मोन मेटाबोलिज्म एवं ट्यूमर कोशिकाओं के प्रसार के लिये उत्तरदायी एन्जाइमों को अवरूध करके कैंसर से रक्षा करता है। अलसी के बीजो का पाउडर और अलसी का तेल दोनों ही अल्फा लिनोलेनिक एसिड, ओमेगा-3 फैटी एसिड से समृद्ध है, जो कैंसर के लिए फायदेमंद है। यदि हम पिसे हुए अलसी के बीजों का पाउडर दही में डालकर सेवन करे तो ओर भी लाभदायक होता है।
6. **मधुमेह के उपचार में -** अलसी के बीज टाइप -2 डायबिटीज के रोगियों में रक्त शर्करा के स्तर में सुधार करती है। जो लोग 12 सप्ताह तक अलसी के बीज का सेवन करते है, उनके रक्त शर्करा स्तर पर सकारत्मक प्रभाव पड़ता है अलसी के बीजों में अल्फा लिनालेनिक एसिड के साथ साथ प्रोटीन और फाइबर भी पाया जाता है, जो उच्च रक्त शकर्रा को नियंत्रित करने में सक्षम होता है।

मधुमेह में अलसी के बीज लेने से पहले डॉक्टर से सलाह अवश्य लें ले।

7. **पाचन शक्ति बढाने में -** अलसी के बीजो में फाइबर होता है, जो पाचन तंत्र को मजबूत करता है साथ ही जठरांत को स्वस्थ्य बनाए रखने में सहायक होता है अलसी के बीज और तेल दोनो ही प्राकृतिक रेचक के रूप में कार्य करते है। चूॅकि इसमें अधिक मात्रा फाइबर पाया जाता है, अत: इसके दुष्प्रभाव से बचने के लिए अधिक मात्रा में जल का सेवन करना चाहिए।
8. **विषैले पदार्थो की मुक्ति के लिए -** अपने शरीर को डिटॉक्सिफिकेशन करने का सबसे मुख्य उद्देश्य विषैले पदार्थो, कोलेस्ट्राल और अन्य अपशिष्ट पदार्थो को लीवर से निकालना है। अलसी के बीजो में घुलनशील तथा अघुलनशील दोनो तरह के फाइबर पाए जाते है जो आंत्रपथ से विषैले पदार्थो को बाहर निकालने में बहुत प्रभावी है। इसके अतिरिक्त अलसी में ओमेगा - 3 फैटी एसिड भी पाया जाता है। जो विषैले पदार्थो को बाहर निकाल कर एक स्वस्थ्य प्रतिरक्षा तंत्र को बनाए रखने में सहायक है, शरीर से विषैले पदार्थो के निकलने के कारण थकान, कमजोरी, सूजन आदि की संभावना कम हो जाती है। इसके लिए एक कप पानी में रातभर अलसी के 1 चम्मच बीज

* सहायक प्राध्यापक (वनस्पति शास्त्र) शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.) भारत

भिगो दे व सुबह पानी व बीज दोनों का सेवन कर ले।

9. बालों की समस्या में मददगार – अलसी के बीज ओमेगा –3 फैटी एसिड से भरपूर होते है, जो बालो का पोषण कर बालों को मजबूती प्रदान करते है व उन्हे स्वस्थ्य बनाते है। साथ ही इसमे विटामिन– ई भी होता है जो बालों की जड़ो और सिर की त्वचा को पोषण प्रदान करता है और झडते बालों और गंजेपन को रोकने में मदद करते है पिसे हुए अलसी के बीज अपने दैनिक आहार में शामिल करने पर बाल स्वस्थ्य व मजबूत बनते है।

10. त्वचा में सुधार – अलसी के बीजो में विटामिन बी तथा वसा पायी जाती है, जो त्वचा के लिए फायदेमंद होती है, इसके बीज त्वचा का रूखापन कम करते है साथ ही मुँहासे, खुजली, त्वचा एलर्जी और धूप की कालिमा जैसे त्वचा संबंधी विकारो में सुधार लाती है, अलसी में उत्तम एंटीइंफ्लेमेटरी गुण होता है, जो त्वचा में जलन, चकते, सूजन और लालिमा को कम करने में सहायक है। यह बीज त्वचा को चमकदार बनाने में मदद करते है साथ ही स्वस्थ्य एवं जवां त्वचा के लिए अपने दैनिक आहार में अलसी को शामिल करे।

अलसी को उपयोग में करते समय रखी जाने वाली सावधानियाँ –

1. गर्भवती महिलाओं और स्तनपान करा रही महिलाओं को अलसी के बीजो को नहीं खाना चाहिए।
2. रक्त को पतला करने वाली दवाई का सेवन कर रहे लोगों को इसका सेवन डाक्टर के परामर्श से ही करना चाहिए।
3. मधुमेह दवा के साथ अलसी के बीजों का प्रयोग करते समय रक्त में शकर्रा की जांच करते रहना चाहिए।
4. चूंकि अलसी के बीजों में अधिक मात्रा में फाइबर पाया जाता है, अत: इसका सेवन करते समय अधिक पानी पीना चाहिए।
5. अलसी के बीजों की अधिक मात्रा का सेवन करने से बचना चाहिए, क्योंकि यह आतों में रूकावट पैदा कर सकता है।
6. अलसी का अधिक मात्रा में सेवन एलर्जी का कारण भी बन सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. आयुर्वेद जड़ी बूटी रहस्य – आचार्य बालकृष्ण।
2. अलसी के फायदे और नुकसान – काजल सहाय।

****

A Study Of Reproductive Health Care Awareness Among Adolescent Girls

Dr. Deep Shikha Pandey *

Abstract - Adolescence is a period of rapid physical growth calling for adequate nutrients intake to meet body growth requirement. It is also a period of emotional and psychological changes. Adolescent learn about reproductive health and sexual matters by observing the behavior of the adults around them by listening to peers and the older siblings through the media in all its forms and by acquiring the knowledge of parents or other trusted mentors.

Reproductive health awareness is very important today in India. Most of the adolescent girls have not proper knowledge about their reproductive health awareness. Therefore it is needed to check their awareness about reproductive health. The main objective of this study is to study the reproductive health care awareness of adolescent girls. 300 adolescent girls are selected by random sampling from Gorakhpur city. Questionnaire method is used for data collection and percentage method is used for data analysis. The study reveals some surprising facts; important information like in Gorakhpur city adolescent girls had less knowledge about reproductive health and had problems related reproductive health.

Introduction - ''**The period following the onset of puberty during which a young person develops from a child into an adult."**

The word adolescent is derived from the Latin word 'ADOLESCERE' Which means to grow or become mature the process of maturation become rapid from the puberty stage that is from 11-13 years(Easwaran and poorani).

The world health organization has defined adolescence as the age group of 10-19 year. Adolescence in India has been defined to be a period between 10-18 years .Lately the girls in the age of 11-18 years have been included in the national adolescent girl's scheme under integrated child development scheme (Indian journal of public health 2004)

Adolescence is a period of rapid physical growth calling for adequate nutrient intake to meet body growth requirement. It is also a period of emotional and psychological changes. The need of adolescents very with their sex stage of development as mentioned above, the life circumstances and the socio economic condition of their environment. Adolescents learn about reproductive health and sexual matters by observing the behavior of the adults around them, by listening to peers and the older siblings, through the media in all its forms and by acquiring the knowledge of parents or other trusted mentors.

As health is no doubt fundamental to human progress, girls, boys and newly married couples are the threshold of married life which should have prior idea about conception, pregnancy and associated wastage.

The consequences like malnourished babies, anemia, and deterioration of health etc. Girls age at marriage considerably influences her reproductive health outcome ie. Anemic and malnourished adolescent girls give birth to malnourished babies only, which has to be rectified at this stage only. There for reproductive health awareness should be given priority in health care to have healthy mothers to get healthy children.

Reproductive health awareness is very important today in India .most of the adolescent girls have not proper knowledge about reproductive health awareness, inadequate knowledge may cause various health problems.(chawal et al 2005) . Therefore it is needed to check their awareness about reproductive health with following objective-

Objective - To study the reproductive health care awareness of adolescent girls.

Methodology - Present study was conducted among representative group of 300 adolescent girls from Chadrakanti Ramawati Devi Arya Mahila pg College Gorakhpur city by randomly selected to study the awareness about reproductive health care .A structural questionnaire developed to study the awareness about reproductive health care and demographic profile of the subjects. The data has been analyzed by percentage method.

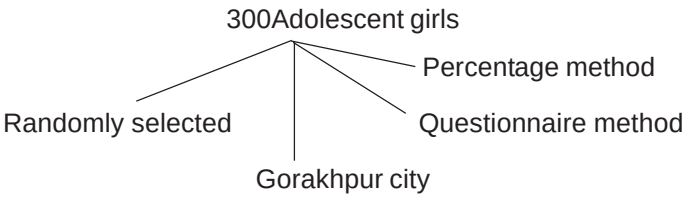

*Asst. Professor (Home Science) Chandrakanti Ramawati Devi Arya Mahila P. G. College, Gorakhpur (U.P.) INDIA

Result And Discussion

Table1.1

Knowledge about adolescent period

S.N.	Statements	Yes	No	Not response
1	Physical change during adolescent period	86 (28%)	210 (70%)	4 (2%)
2	Psychological changes during adolescent period	98 (32%)	191 (63%)	11 (5%)
3	Problems of adolescence	35 (12%)	265 (88%)	

Table 1.1 indicates that 28% girls have less knowledge about physical changing during adolescent period 32% girls know about psychological changes during adolescent period. 12% girls know about many problems of adolescence. Girls think that only emotional changes occur during adolescent period of life. Girls say that sex feeling occurs during adolescent period of life plans for future feel occur during adolescent period of life.

Table1.2

S.N.	Statements	Yes	No	Not response
1	Knowledge about menstruation cycle	300 (100%)		
2	Knowledge about process of menstruation cycle	85 (28%)	211 (70%)	4 (2%)
3	Personal care and hygiene during menstruation cycle	20 (7%)	280 (93%)	
4	Causes of disturbance of period	120 (39%)	179 (60%)	1 (1%)
5	Knowledge about virginal discharge	260 (86%)	40 (14%)	
6	Proper changing of sanitary pad	85 (29%)	215 (71%)	
7	Knowledge about hormonal disbalance	15 (5%)	245 (81%)	40 (14%)

Table 1.2 shows that 100% girls know about menstruation cycle. But only 28% girls know about process of menstruation cycle. Only 7% girls accept that we should proper care about personal hygiene during menstruation period .39% girls think that period disturb their life or polluted environment. 86% girls had problem of discharge from vagina and only 29%girls are accept that we should proper change of sanitary pad after 6hour duration. Only 5% girls know about causes of hormonal disbalance .

Table 1.3

S.N.	Statements	Yes	No	No response
1.	Knowledge about HIV/AIDS	300 (100%)		
2	Knowledge about other sexual disorder	0	300 (100%)	
3	Knowledge about UTI problems	0	300 (100%)	
4	Talk about sexual issues	30 (10%)	240 (80%)	30 (10%)
5	Knowledge about safe sex	40 (14%)	230 (76%)	30 (10%)

Table 1.3indicate that 100% girls know about HIV/AIDS. They had proper knowledge about the people where test and treatment of HIV/AIDS is available. But 100% girls have no any knowledge about other sexual disorder and 100% girls have no idea about UTI problems. Only 10% girls say that it is important to talk about sexual issues, while 10% girls did not give any response. Only 14% girls had knowledge about safe sex. They did not know about unsafe period of pregnancy.

Table 1.4

S.N.	Statements	Yes	No	Not response
1	Knowledge about female reproductive organs	25 (8%)	261 (87%)	14 (5%)
2	Structure and function of uterus	100 (33%)	196 (65%)	4 (2%)
3	Knowledge about fertilization	104 (34%)	190 (64%)	6 (2%)
4	Knowledge about family planning methods	109 (37%)	191 (63%)	

Table 1.4 shows that only 8% adolescent girls had knowledge about female reproductive organs. Only 33% student knew about structure and function of uterus. Only 34% girls know about process of fertilization and only 37% adolescent girls know about the various family planning methods.

Table 1.5

S.N.	Statements	Yes	No	No response
1	Knowledge about pre natural stage of development	22 (7%)	245 (81%)	33 (11%)
2	Care during pregnancy	40 (14%)	260 (86%)	
3	Knowledge about vaccination	118 (40%)	182 (60%)	

Table 1.5 shows that only 7% adolescent girls know pre natural stage of development. Only 14% girls aware about care during pregnancy and 40% girls did not about knowledge of vaccination.

Conclusion - To sum up all these observations among adolescent girls of Gorakhpur city revealed a positive relationship between illiteracy and lack of awareness. So in Gorakhpur area adolescent girls had less knowledge about reproductive health and had problems related reproductive health.

Suggestions -There are some suggestions for under following -

1. Women health awareness programmes should be

conduct in the institution.

2. Proper guidance and counseling programme should be conduct in the institution.
3. Proper sex education programme conduct for adolescent girls.
4. Programme related with adolescent girls health should be presented on radio and easy should published in every paper regularly on reproductive health care.

References :-

1. Anjana,nema (2007) evaluation of reproductive health care awareness among students of Jabalpur city .first published January 1,2007
2. Singh,shweta (2012) . Reproductive health of adolescent girls in rural population of varanasi . www.ijfans.com.
3. Sharma,shubhangana,nagar.shipra and chopra goldi (2009) health awareness of rural adolescent girls: an invention study ,j soc sci, 21 (2),99-104.

****

मानसिक नि:शक्त शहरी, ग्रामीण एवं आदिवासी बालक एवं बालिकाओं के असामान्य कन्जेक्टीवा एवं असामान्य कार्निया तथा असामान्य कन्जेक्टीवा एवं असामान्य त्वचा के मध्य सहसंबंध का अध्ययन

डॉ. मोहिनी सकरगायें *

प्रस्तावना – एक ऐसा बालक जो कि शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, शैक्षिक, सांवेगिक एवं व्यावहारिक विशेषताओं के कारण किसी सामान्य या औसत बालक से उस सीमा तक स्पष्ट रूप से विचलित या भिन्न होता है। जहाँ कि उसे अपनी योग्यताओं, क्षमताओं एवं शक्तियों को समुचित रूप से विकसित करने के लिए परम्परागत शिक्षण विधियों में परिमार्जन या विशिष्ट प्रकार के कार्यक्रमों की आवश्यकता होती है को विशिष्ट बालक कहा जाता है। इस श्रेणी में शारीरिक रूप से अक्षम, प्रतिभाशाली, सृजनात्मक, मन्द बुद्धि, शैक्षिक रूप से श्रेष्ठ एंव पिछड़े, बाल–अपराधी, असमायोजित, समस्याग्रस्त, सांवेगिक अस्थिरतायुक्त आदि प्रकार के बालक सम्मिलित हैं।

बालक के विकासक्रम के साथ पोषाहार का सीधा संबंध है। गर्भकालीन अवस्था से शिशु की माँ के द्वारा लिए गए आहार का प्रभाव गर्भस्थ शिशु के विकास को प्रभावित करता है। गर्भवती माता का आहार जितना अधिक पौष्टिक होता है, उतना ही स्वस्थ बालक जन्म लेता हैं। माँ का आहार बालक के विकास को जन्म के पश्चात् उस समय तक प्रभावित करता है, जब तक बालक स्तनपान करता है। इसके पश्चात् बालक द्वारा ग्रहण किए जाने वाले भोज्य पदार्थो का प्रभाव उसके शारीरिक विकास को प्रभावित करता है। बालक को दिए जाने वाले आहार की मात्रा की अपेक्षा उस आहार के पोषक तत्वों की मात्रा बालक के शारीरिक विकास को अधिकता से प्रभावित करती है।

शोध अध्ययन में क्षेत्रीय कार्य के समय अध्ययन हेतु चयनित तीनों ही क्षेत्रों–शहरी, ग्रामीण एवं आदिवासी में मानसिक नि:शक्त प्रतिसादकों का कुपोषण से पीड़ित पाया गया है। अध्ययन में प्राप्त परिणामों के आधार पर कहा जा सकता है कि तीनों ही क्षेत्रों में अल्पपोषण एवं अतिपोषण के लक्षण प्राप्त हुए है। कुपोषण के उपरोक्त दोनों ही प्रकारों की उपस्थिति के बारे में उनके लक्षणों के आधार पर ही स्पष्ट जानकारी प्राप्त होती है। पोषकतत्वों की कमी के कारण उत्पन्न लक्षण सामान्य से भिन्न होते है अत: निश्चित ही ये लक्षण शारीरिक बाह्य रूप को प्रभावित कर असामान्य बना देते है।

कुपोषण के कारण बाह्यरूप में आयी असामान्यता को कुछ सीमा तक पोषणयुक्त भोजन लेने से दूर किया जा सकता है। मानसिक नि:शक्त प्रतिसादकों के माता–पिता, अभिभावक, आश्रय केन्द्रों के संचालकों एवं केन्द्र में देखभाल करने वाले कर्मचारियों को पोषक तत्व एवं उनके महत्व की जानकारी होना आवश्यक है। सरकारी एवं गैर सरकारी संगठनों की बाल कल्याणकारी योजनाओं की जानकारी होना भी आवश्यक है।

शहरी, ग्रामीण एवं आदिवासी मानसिक नि:शक्त प्रतिसादकों के कुपोषण लक्षणों का शारीरिक बाह्य रूप पर प्रभाव एवं सहसंबंध – मानसिक नि:शक्त प्रतिसादकों के शारीरिक अंगों पर कुपोषण के प्रभाव को ज्ञात करने के लिए प्रतिसादकों के आहार में पोषक तत्वों की मात्रा का निर्धारण आय.सी.एम.आर. के निर्धारत मानक के आधार पर कर एवं शारीरिक लक्षणों के मध्य सह संबंध ज्ञात किया गया।

मानसिक नि:शक्त प्रतिसादकों की आँखो के असामान्य कन्जेक्टीवा एवं असामान्य कार्निया के मध्य सहसंबंध

क्षेत्र	असामान्य कन्जेक्टीवा	असामान्य कार्निया	सह–संबंध गुणांक
शहरी	24	46	0.405
ग्रामीण	12	52	
आदिवासी	27	66	

उच्च स्तर का धनात्मक सहसंबंध + 0.405

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि मानसिक नि:शक्त प्रतिसादकों की आंखों के असामान्य कन्जेक्टीवा का सीधा प्रभाव प्रतिसादकों के आंखों के असामान्य कार्निया पर पड़ता है। प्रस्तुत शोध अध्ययन में शहरी, ग्रामीण एवं आदिवासी तीनों ही क्षेत्रों में मानसिक नि:शक्त प्रतिसादकों में से अधिकांश प्रतिसादकों को विटामिन ए हीनता से पीड़ित पाया। क्लीनिकल असेसमेंट में जिन मानसिक नि:शक्त प्रतिसादकों का कन्जेक्टिवा सूखा एवं धब्बेदार पाया उन प्रतिसादकों के कॉर्निया के अवलोकन में अस्पष्ट दृष्टि या धुंधलापन पाया गया। आहार में विटामिन ए की कमी पहले कन्जेक्टीवा को प्रभावित करती है कॉर्निया की असामान्यता विटामिन ए की अत्यधिक हीनता के कारण उत्पन्न होती है। अध्ययन में प्राप्त आंकड़ों के आधार पर तीनों ही क्षेत्र के प्रतिसादकों में विटामिन ए की अत्यधिक हीनता पायी गयी। तीनों ही क्षेत्रों में शोधकर्ता ने साक्षात्कार एवं परिचर्चा में पाया कि मानसिक नि:शक्त प्रतिसादकों के माता–पिता एवं अभिभावक प्रतिसादकों के टीकाकरण के प्रति उदासीन है, एवं शिशु एवं बाल कल्याणकारी योजनाओं के प्रति भी जागरूकता में अभाव है।

अत: शोध उपकल्पना के अनुसार मानसिक नि:शक्त प्रतिसादकों के बाह्य रूप में असमानताएँ पायी जाती है 'सार्थक है। सह–संबंध गुणांक (+0.405) पाया गया।

मानसिक नि:शक्त प्रतिसादकों की आँखो के असामान्य कन्जेक्टीवा एवं असामान्य त्वचा के मध्य सहसंबंध

क्षेत्र	असामान्य कन्जेक्टीवा	असामान्य त्वचा	सह–संबंध गुणांक
शहरी	24	10	0.057
ग्रामीण	12	18	
आदिवासी	27	23	

धनात्मक सहसंबंध + 0.057

* सहायक प्राध्यापक (गृहविज्ञान) माखनलाल चतुर्वेदी शासकीय कन्या महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.) भारत

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि मानसिक नि:शक्त प्रतिसादकों के असामान्य कन्जेक्टीवा एवं असामान्य त्वचा के मंध्य संबंध की संभावना होती है। कन्जेक्टीवा की असामान्यता विटामिन ए की कमी के कारण होती है। त्वचा की असामान्यता प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण का लक्षण है। प्रतिसादकों में प्रतिदिन के आहार में विटामिन ए की निरंतर कमी होने से गंभीर विटामिन ए की हीनता के कारण कॉर्निया में भी असामान्यता आती है एवं साथ ही त्वचा सूखी, खुरदरी एवं परतदार हो जाती है। प्रतिदिन के आहार में शामिल वे भोज्य पदार्थ जो उत्तम प्रोटीन के स्त्रोत होते है, सामान्यतया उनमें विटामिन ए भी प्रचुर मात्रा में पाया जाता है।

अत: उपरोक्त परिणामों के आधार पर स्पष्ट होता है कि मानसिक नि:शक्त प्रतिसादकों को प्रतिदिन आय.सी.एम.आर.के निर्धारित मानक के आधार पर कम प्रोटीन एवं कम विटामिन ए युक्त भोजन देने से असामान्य कन्जेक्टीवा एवं असामान्य त्वचा के लक्षण दिखाई दे रहे है। नि:शक्त प्रतिसादकों के आहार में गंभीर कुपोषण की स्थिति होने पर संभवत: असामान्य कन्जेक्टीवा एवं असामान्य त्वचा के मध्य सहसंबंध हो।

अत: शोध उपकल्पना के अनुसार मानसिक नि:शक्त प्रतिसादकों के बाह्य रूप में असमानताएँ पायी जाती है 'सार्थक है। सह-संबंध गुणांक (+0.057) पाया गया।

निष्कर्ष – शोध का उद्देश्य मानसिक नि:शक्त बालक एवं बालिकाओं के शारीरिक विकास एवं पोषण स्तर का तुलनात्मक अध्ययन करना है। इस हेतु मध्यप्रदेश के इन्दौर संभाग के शहरी ग्रामीण एवं आदिवासी क्षेत्र से कुल 210 अर्थात् 70,70, एवं 70 मानसिक नि:शक्त बालक एवं बालिकाओं का उद्देश्यपूर्ण निदर्शन पद्धति के आधार पर चयन किया गया। पूर्व की मान्यता अनुसार मानसिक नि:शक्त बालक एवं बालिकाओं का शारीरिक विकास एवं पोषण स्तर सामान्य बच्चों की अपेक्षा भिन्न होता है परन्तु वर्तमान समय में प्रचलित मान्यताओं में परिवर्तन आया है कई प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष कारक हैं, जो मानसिक नि:शक्त बच्चों के शारीरिक विकास एवं पोषण स्तर का निर्धारण करते हैं। जिसके अर्न्तगत मुख्यत: सरकारी मातृ एवं शिशु कल्याणकारी योजनाएँ, माता-पिता के शिक्षा का स्तर, परिवार का सामाजिक आर्थिक स्तर, जननांकीय स्थिति, माता-पिता की शिशु जन्म के प्रति संचेतनाएँ, शिशु जन्म के पश्चात् उचित देखभाल एवं सामुदायिक दृष्टिकोण आते है। जो मानसिक नि:शक्त बच्चों के शारीरिक विकास एवं पोषण स्तर के निर्धारण में मुख्य भूमिका निभाते है।

सुझाव – शोध अध्ययन के दौरान अनुसंधान के द्वारा जो निष्कर्ष प्राप्त होते है, उनके आधार पर पाया गया कि मानसिक नि:शक्त बालक एवं बालिकाओं के जीवन में अधिकांश समस्याएँ उनके जन्मपूर्व गर्भावस्था में माता की अनुचित देखभाल शिशु जन्म के पश्चात् शिशु की अनुचित देखभाल, माता-पिता, अभिभावक एवं समाज की नकारात्मक अभिवृत्ति के कारण उनके विकास के प्रति उदासीनता उत्तरदायी है।

गर्भावस्था में उचित देखभाल के प्रति सकारात्मक पहल – महिला एवं बाल विकास कार्यक्रम का प्रमुख उद्देश्य समुदाय में विशेषकर महिलाओं को स्वास्थ्य एवं पोषण शिक्षा देना है। इस कार्यक्रम के माध्यम से महिलाओं को गर्भावस्था में संतुलित आहार के महत्व, नशीले पदार्थो का भ्रुण के विकास पर पड़ने वाले हानिकारक प्रभाव, संक्रामक एवं वायरल रोग से बचाव एवं शीघ्र उपचार का महत्व, नियमित व्यायाम, स्वास्थ्यवर्धक वातावरण में रहना, तनावपूर्ण स्थितियों से बचना एवं टीकाकरण का महत्व इन बातों की जानकारी आसानी से दी जा सकेगी। साथ ही समेकित बाल विकास योजना के अर्न्तगत जननी सुरक्षा योजना, जननी एक्सप्रेस योजना, गोद भराई योजना, स्वास्थ्य परीक्षण, विशेषज्ञ सुविधाएँ, रोग निरोधन, प्रसव सहयोगी योजना एवं शिशु के स्वस्थ्य जीवन में प्रथम स्तनपान के महत्व की जानकारी आसानी से दी जा सकेगी।

पोषण प्रशिक्षण कार्यक्रम का आयोजन – शहरी, ग्रामीण एवं आदिवासी क्षेत्रों में आंगनवाड़ी के माध्यम से मानसिक नि:शक्त बालक एवं बालिकाओं के माता-पिता अभिभावकों को विकास प्रक्रिया में पोषक तत्वों के महत्व की जानकारी देना चाहिए। पोषक तत्वों की भोजन में निरन्तर कमी के प्रभावों से अवगत करना चाहिए साथ ही कम मूल्य के परंतु पोषक मूल्य में उच्च खाद्य पदार्थो की जानकारी भी दी जाना आवश्यक है। जिससे मानसिक नि:शक्त बालक एवं बालिकाओं में कुपोषण को रोका जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डेविड अलका (2009) 'पूर्व बाल्यावस्था शिक्षा' शिवा प्रकाशन, श्री गणेश मार्केट, खजूरी बाजार, इंदौर।
2. गोपालन., सी (1989) वुमन एण्ड न्यूट्रीशन इन इण्डिया: जनरल कंसीडरेशन, न्यूट्रीशन फाउण्डेशन ऑफ इण्डिया, स्पेशल पब्लिकेशसन, सिरिज, पृष्ठ संख्या 1-15
3. जीत भाई योगेन्द्र बाल मनोविज्ञान विनोद पुस्तक मंदिर आगरा उत्तर प्रदेश
4. जैन, शशिप्रभा (2002) बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा, संस्करण प्रथम, शिवाा प्रकाशन, पृष्ठ संख्या 206-211
5. गुप्ता बी. एन. (2002) यसांख्यिकी' साहित्य भवन पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीटयूटर्स (प्रा.) लि. लाजपत कुंज, आगरा, उत्तर प्रदेश।

****

Study Of Customer Satisfaction Towards Restaurant In Bhopal City (Special Reference To Kfc Fast Food Restaurant Chain)

Prof. Rajesh Jain *

Abstract - KFC, is an American fast food restaurant chain that specializes in fried chicken almost 20,000 locations globally in 123 countries and territories. The main objectives of this research paper to identify the factors that influences the decisions of consumers Preference towards restaurant & to examine the consumption pattern in restaurant. A five point multi item liker t scale (1- strongly agree and 5- strongly disagree.) will be used for the study the research will be conducted in Bhopal. Sample size of 250 respondents in the age group 18 to 25 year and more than 40 year above will be taken for the survey. Out of all the respondent 73% are male and 27% are female. Out of all the respondent 46.1% are comes under once a week, 22.5% are more than once a week, 16.9% once a month, and 14.6 % comes in very rare. There is association customer satisfaction across the gender & the income. This research aims to provide a better understanding of the consumer decision-making process for restaurants in India.
Keywords - KFC, influences, consumption, respondent, Sample size.

Introduction - Kentucky Fried Chicken, more commonly known by its initials KFC, is an American fast food restaurant chain that specializes in fried chicken. Headquartered in Louisville, Kentucky, it is the world's second-largest restaurant chain (as measured by sales) after McDonald's, with almost 20,000 locations globally in 123 countries and territories as of December 2015. The chain is a subsidiary of Yum! Brands, a restaurant company that also owns the Pizza Hut and Taco Bell chains. Known as the City of Lakes, Bhopal is the capital of Madhya Pradesh**.** Founded by Raja Bhoj, the city has many natural and artificial lakes and it is one of the greenest cities in the country. Bhopal has several multi-cuisine restaurants in the city as well as international fast food chains like McDonald's. Sweets like Bafla , Sewaiya and fruits are an essential part of the meal. In Bhopal KFC restaurant chain included at DB City Mall, MP Nagar, Misroad, T.T. Nagar, Shamla Hills area.

Research Objectives -

1. To identify the factors that influences the decisions of consumers Preference towards restaurant.
2. To determine the most important factors that affect consumers' choice and satisfaction towards restaurant.
3. To examine the consumption pattern in restaurant
4. To study the opinion about the service in restaurant.

Research Methodology - The research is based on primary and secondary data collection methods and the research type is descriptive. A structured questionnaire will be designed to gather information for primary data and, for secondary data-internet, books and websites previous dissertations/research papers/marketing journals/ magazines/text etc will be used. A five point multi item liker t scale (1- strongly agree and 5- strongly disagree.) will be used for the study the research will be conducted in Bhopal. It will involve gathering of information from the customers who visit at KFC restaurant. Convenience sampling method will be used to get the responses from target population. Sample size of 250 (working and non working) respondents in the age group 18 to 25 year and more than 40 year above will be taken for the survey. To do the research following statistical tools will be used: percentage analysis, Rank analysis, Chi-square analysis, T-test.

Hypothesis -

1. H1- HA: There is association between Items preferred in Restaurant across Gender.
2. H2- HA: There is no association between Items preferred in Restaurant across Income.
3. H3- HA: There is no association between Customer satisfactions across the Gender
4. H4- HA: There is no association between Customer satisfactions across the Income.

Research Contribution - This research aims to provide a better understanding of the consumer decision-making process for restaurants in India. Understanding restaurant choice behavior can assist restaurant marketers and practitioners when they develop marketing strategies and enable them to select the most salient attributes to attract and retain customers. Furthermore, a theoretical model of restaurant selection behavior in India developed in this study will help to provide a useful framework for future research regarding consumer behavior in the restaurant industry.

Review of Literature - Previous studies on consumer

* **IPS Academy , Indore (M.P.) INDIA**

behavior in the restaurant context have identified a number of factors that consumers consider important in their restaurant selection. Auty (2010) identified the choice factors in the restaurant decision process based on four occasions: a celebration, social occasion, convenience/ quick meal, and business Meal. Food type, food quality and value for money were found as the most important Choice variables for consumers when choosing a restaurant. The Kevel's (2006) results Showed that the relative importance of the restaurant choice factors differed considerably by restaurant type, dining occasion, age, and occupation. The studies of consumer behavior in ethnic restaurants are relatively limited. Previous ethnic restaurant studies have focused on consumers' perceptions and attitudes or on a particular cuisine.

Analysis and Discussion - In the data analysis there is classification and Frequency of different demographic profile like as "Gender and Income statement. Chi-square test, T- test, as help to understand the relation between different demographic factors, customer preference and satisfaction. from the cross tabulation of different factors I make the relation then apply the chi-square test on the basis of the test result we come to know the Association or No association among different factors.

Table 1 - (See in the last page)

Interpretation - From above Table, it is being Interpreted that the

- Mean value for food is served hot and fresh is 1.34
- Mean value for the menu has a good variety of item is 1.84
- Mean value for the quality of food is excellent is 1.64
- Mean value for the order is taken correctly and there were no discrepancies while serving the item is 11.73

(A) Chi-Square Test Item Preferred In Restaurant Across The Demographical Factor

Hypothesis 1

Ho : There is no association between Gender and Item preferred in restaurant

HA : There is association between Gender and Item preferred in restaurant.

Table 2 (See in the last page)

Hypothesis 2 -

Ho : There is association between Income and Item preferred in restaurant

HA : There is no association between Income and Item preferred in restaurant

Table 4 (See in the last page)

(A) Ranking of factor for preferring a particular restaurant

Table 5 (See in the last page)

(A) **T-Test For Analyzing The Customer Satisfaction Across The Gender**

Hypothesis 3

Ho : There is association between Customer satisfactions across the Gender

HA : There is no association between Customer satisfactions across the Gender

Table 6 (See in the last page)

Hypothesis 4

Ho : There is association between Customer Satisfactions across the Income

HA : There is no association between Customer Satisfaction across the Income

Table 8 (See in the last page)

Results and Findings

- Out of all the respondent 73% are male and 27% are female
- Out of all the respondent 68.53% comes under less than 30000 Rs., 19.1% are 30000-40000 and 12.35 % comes under over 40000 Rs.
- Out of all the respondent 46.1% are comes under once a week, 22.5% are more than once a week, 16.9% once a month, and 14.6 % comes in very rare
- Out of all respondent 36% are vegetarian, 29.2% Non vegetarian and 34.8% are come under both. Out of all the respondent 4.5% are goes for Breakfast, 28.1% Lunch and 67.4% Dinner. Out of all the responded 6% Respondent willing to pay 100-200, 23% 300-500, 40% 600-800 and 31% comes in more than 800.
- There is no association item preferred in restaurant across the gender.
- There is association item preferred in restaurant across the income.
- There is association customer satisfaction across the gender & the income.

Conclusion - It is evident from the study that majority of the consumer have visited different restaurant at different times. So the restaurant owner has to take steps to retain the customer and make them a permanent customer. Majority of respondent came to know about the restaurant through their friends .and restaurant advertise in local media news paper, magazines to attract more customer. From the study majority of people are male who visit to restaurant ,and mostly are youngster , their qualification are post graduate income level of respondent is good they mostly visited in restaurant in a week and from the data majority of people like to non-vegetarian and around 67% are go for heavy meals its show the majority of people who visit have to take heavy meals Quality and taste are the two major factor consider by the respondent in selecting a restaurant, so the restaurant owner, should not compromise on these aspect at any cost.

References :-

1. India: Reed. Burton, S. (2013). The framing of purchase for services. The Journal of Services Marketing, 4(4), 55-66. Cadotte, E. R. & Turgeon, N. (2010). Key factors in guest satisfaction. Cornell Hotel and Restaurant Administration Quarterly, 28(4), 44-51.
2. Bailey,R., & Earle, M (2011). Home cooking to takeaways: Changes in food consumption in India during 1880-1990. Palmerston North, India : Massey

University
3. American Academy of Business, 2(1), 58-65. BenAkiva, M., & Lerman, S. R. (2014). Discrete choice analysis: Theory and application to travel demand. Cambridge: MIT press.
4. https://www.b2binternational.com/publications/customer-satisfaction-survey
5. https://www.retail-week.com
6. www.smartinsights.com/goal-setting.../customer...
7. https://www.getfeedback.com/examples/customer-satisfaction
8. www.indiacom.com/yellow-pages/restaurants/bhopal
9. https://www.zomato.com › Bhopal
10. https://www.tripadvisor.com › Asia › India.

Table 1 - Mean value among different measures

Statement	SA	A	N	D	SD	M	St. D
Food is served hot and fresh	61	25	3	_	_	1.34	0.55
The menu has a good variety of item	26	55	5	2	1	1.84	0.72
The quality of food is excellent	42	39	6	2	_	1.64	0.71
The order is taken correctly and there were no discrepancies while serving the item	38	40	8	3	2	1.73	0.77

SA(1)= Strongly agree, A (2) =Agree, N (3) = Neutral, D(4) Disagree, SD (5) Strongly disagree, St. D = Standard deviation

Table 2

Chi-Square Tests	Value	df	Asymp. Sig. (2-sided)
Pearson ChiSquare	15.44	2	0.0004
Likelihood Ratio	16.47	2	0.0002
Linear-by-Linear Association	15.02	1	0.0001
N of Valid Cases	89	_	_

Inference - The above HO : is Rejected (chi-square with 4 degree of freedom=15.44, p=.0004). There is no association Item preferred in restaurant across the Gender.

Table 4

Chi-Square Tests	Value	df	Asymp. Sig. (2-sided)
Pearson ChiSquare	7.88	4	0.095
Likelihood Ratio	8.46	4	0.075
Linear-by-Linear Association	2.83	1	0.092
N of Valid Cases	89	_	_

Inference - The above HO : is accepted. (Chi Square with 4 degree of freedom=7.88, p= 0.095). There is association Item preferred in restaurant across the Income.

Table 5

Serial No	1	2	3	4	5	6	7	8	WAS	Rank
Factor	Count	Count	Count	Count	Count	Count	Count	Count	_	_
Quality	46	10	8	6	11	2	1	5	6.44	1
Rates	6	26	16	21	9	3	5	3	5.49	2
Variety in the menu	2	6	16	4	9	24	12	16	3.61	6
Cleanliness	3	15	21	20	12	7	8	3	4.93	5
Location	13	13	10	19	18	8	6	2	5.16	4
Good taste	19	15	8	10	14	12	9	2	5.25	3

Inference - The Table 5 gives the distribution of the respondent according to the ranking of the factor for preference towards a particular restaurant….The food quality was ranked 1st ,2nd for rates, 3rd for good taste, 4th for location, 5th for cleanliness, 6th for variety in the menu.

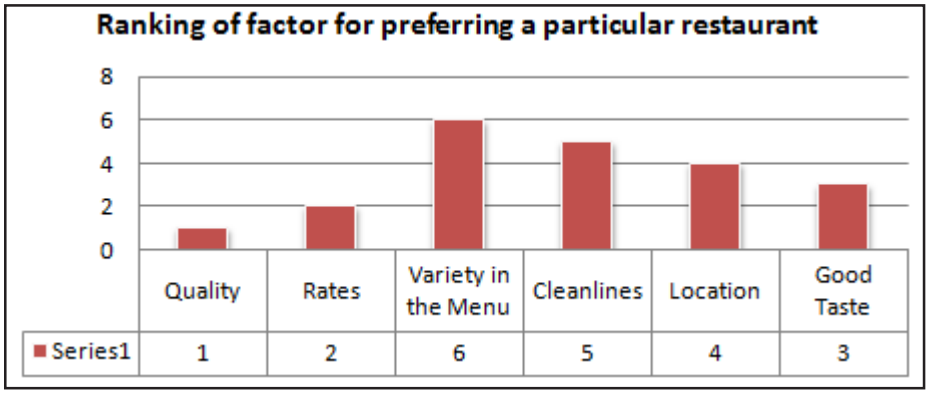

Table 6

Levine's Test for Equality of Variance s			t-test for Equality of Means		
	F	Sig.	t	df	Sig. (2-tailed)
Equal variances assumed	5.02	0.02	1.48	87	0.14

Inference - The above HO : is Accepted, (p=.14> .05, t= 1.48).There is association Customer satisfaction across the Gender.

Table 8

	Sum of Squares	df	Mean Square	F	Sig.
Between Groups	5.94	18	0.33	0.608	0.88
Within Groups	37.97	70	0.54	_	_
Total	43.91	88	_	_	_

Inference : The above HO : is Accepted (p=0.88 p>.05, f=.608) There is association Customer Satisfaction across the Income

****

"Effective Compensation Strategy; A Key to Retain Employees in the Banking Sector"

Dr. Sachin Sharma * Ritika Vyas **

Abstract - In a world of mom-and-pop operations, offering competitive employee benefits is what will set one business apart from another and will attract and retain valuable employees. Fierce competition is raging presently to secure competent human resources. Greater employment fluidity enhanced by increased job changes further intensifies the competition for securing capable, high-performing individuals as well as those who will become the future core personnel for organizations. This trend is evident even in times of economic recession. Viewing the same phenomenon from a different perspective, organizations today are at greater risk of losing capable human resources to other organizations. The keyword in terms of human resource management is 'retention.' A high rate of employee attrition is a challenge for most banks in service sector. An insight to which are the most effective retention strategies that can have a long-term impact. Companies now adopt more than one technique to create an internal environment that will retain their employees. The purpose of the paper is to highlight the importance of designing an effective compensation as a key to retain employees.

Compensation might not be the most important factor in determining whether an employee will stay with you, but it can tip the balance. In addition to salary and wages, benefits make up your compensation package, and it's possible to improve what you can offer your employees without spending more money. The better your compensation package, the more likely you will retain key employees.

Key Words - Employee Retention, Compensation Strategy, Benefits, Employee Satisfaction.

Introduction - Importance of Human Resource : Human Resource as the word suggests is one of the most important factors of production without which no industry can survive. Long term organizational success depends upon the recruitment, development, reward and retention of the right people. Today's business environment has become very competitive thus making skilled employees the major differentiation factor for most service sector. Banks both public and private – rely on the expertise of their employees in order to compete favorably and indeed gain competitive advantage in the international market. The process of 'global interlinking of economies', accelerated by technological development, has intensified competition in today's business environment. As economic globalization has become more pronounced, the ability of organizations to compete in the global marketplace is all the more tied to the quality of their human resource. In this economic environment, the retention of valuable employees becomes an extremely important strategy for human resources managers and organizational leaders. In the long run, the organization-specific knowledge, skills, and know-how that long-time employees possess will be lost due to turnover. In this sense, the retention of employees, especially the high performers, is an important issue for organizations.

Background of the study - Employee retention refers to adopting measures to prevent valuable employees from leaving their jobs. How to retain employees is one of the biggest problem that plague companies in the competitive automobile marketplace. Not too long ago, companies accepted the "revolving door policy" as part of doing business and were quick to fill a vacant job with another eager candidate. Nowadays, businesses often find that they spend considerable time, effort, and money to train an employee only to have them develop into a valuable commodity and leave the company for greener pastures. In order to create a successful company, employers should consider as many options as possible when it comes to retaining employees, while at the same time securing their trust and loyalty so they have less of a desire to leave in the future. Hiring good people is tough, but keeping them can be even tougher. Open competition for other companies' people, once a rarity in business, is now an accepted fact. Fast moving markets require fast-moving organizations that are continually refreshed with new talent. But no one likes to see talent leave; when a good employee walks, the business takes a hit. The solution is attractive, effective, compatible practices.

"Fostering long lasting relationships with employees

* Sanskar College of Professional Studies, Indore (M.P.) INDIA
** Research Scholar, D.A.V.V., Indore (M.P.) INDIA

begins with right recruitment practices and ends with effective retention tools adopted by an organization."

Thus efficient human resource practices are a base for retention of employees in any organization. There are various practices followed by different organizations but important among them is the compensation strategy. Money is the most important criteria nowadays for employees to leave the organization. In this dynamic environment opportunities are in ample which motivates them to leave. Thus an effective compensation strategy holds the highest percentage for retaining an employee. Compensation encompasses variety of variables like incentives, sabbatical leaves, allowances, reward for effective performance etc. Employee compensation is one of the major determinants of employee satisfaction and retention in an organization. The compensation policy and the reward system of an organization are viewed by the employees as indicators of the management's attitude and concern for them. A good compensation system should be able to attract and retain employees, give them a fair deal, keep the organization competitive and motivate employees to perform their best.

Compensation: A Tool for Retaining Employees - Employees should be paid appropriately and fairly for the work they do. So organizations should research what other companies are offering in terms of salary and benefits and pay approximately. It is also important to research what is the standard compensation package and benefits for the particular position, particularly related to non monetary benefits like insurance, retirement benefits, paid vacation etc. The compensation package offered should be competitive enough, so that team members will not go out and look for employers who are willing to offer more competitive compensation packages. It constitutes the largest part of the employee retention process. Employees always have high expectations regarding their compensation packages. Compensation packages vary from industry to industry. So an attractive compensation package plays a critical role in retaining the employees. Compensation includes various aspects like salary and wages, bonuses, benefits, prerequisites, stock options, bonuses, vacations etc. setting up of a package must be done very effectively and efficiently.

Review of Literature -

- **Rajnish Ratna (2012),** With secondary research the author had identified ten factors (importance of training, consultation of the employees during target setting, satisfaction with compensation level, rewards and recognition given to the executives, working conditions, job capability, ability to meet targets, plans to start their own business, satisfaction with the initiatives taken by hr, and participation in management) which play an important role in employee retention. After analysis of primary data, it was found that their some factors such as compensation level, and rewards and recognition etc. their satisfaction is less while in other factors like training, and working conditions are most important affecting employee retention. He further concludes that in the factors mentioned above wherein the satisfaction level of employees is less, companies' needs to take initiatives for betterment then only required retention level will be achieved.
- **Hiroshi Yamamoto (2011).** In his study of 1228 employees he concludes that enrichment of the employee benefits management policies has a positive impact on satisfaction and retention of employees. These practices are helpful in improving Work Life Balance and retention management. The introduction of employee benefit practices improved job attitude and are intermediatary factors in the relationship between family friendly policies and retention. In other words, the number of introduced employee benefit practices, which is more objective and easy to understand for organizations, was found to be important as a retention-promoting factor.
- Small businesses are in a constant battle to recruit and retain qualified employees. One key strategy for attracting and maintaining a valuable workforce in today's marketplace is to offer competitive employee benefits programs. According to Watson Wyatt's 2006 Strategic Rewards study, 22 percent of top-performing employees cited benefits as one of the top three reasons they would leave their employer. Replacing upper-level employees is even more difficult and costly than replacing lower level ones, so satisfying their desires for competitive benefits is imperative. Employers should talk directly to their employees to find out which benefits are perceived to hold the most value to them. Employee demographics will play a significant role in perceived value of benefits as younger people may want flexible time off while older people may want retirement planning services. **September 1.2008 Hudson Valley QVSWES JOÜRNAL -**
- **Kulshreshtha, AshutoshKumar, T. Krishna (2005)** develops a theoretical model for employee contribution and compensation and explores the problem of attrition from an economic point of view. Model based on the characteristics of the employee and the organizational environment; Employee value and employee cost to company; motivation and salary hike.
- Rewarding loyalty often involves introducing a benefits package that improves with the increasing duration of service. Benefits such as company cars and company-paid private medical insurance are often expected features of benefits packages for senior staff. For non-senior staff, one way is to introduce flexible or 'cafeteria' benefits which involve employees choosing from a menu of benefits. This may also be the easiest and cheapest way for employers to satisfy the needs of the majority of their employees **(Curtis and Wright, 2001: 61).**
- In the retention concept, organizations are the key players and retention is a specific organizational management issue, namely 'retention management,' which can be defined as 'the entire human resource management policies for retaining the current or expected high-performing employees within organizations for long periods of time,

enabling them to exercise or develop their capabilities.' **(Yamamoto 2009, pp. 14–15).**

- **Taylor (2002)** discussed that employee retention is increasing in importance as the competition for talent is high and still growing. The solutions to improve retention management are usually assumed to hinge on assessment, selection practices, and on increasingly comprehensive HR programs and services. Competitive salaries, comprehensive benefits, employee services, incentive programs, and similar initiatives are important when attracting employees It is not hard for a competitor to compete with individual element of employment such as salaries and benefits. Continuously Taylor argues that undesirable, unwanted, and voluntary attrition that companies experience when highly valued employees quit taking another job elsewhere is a much bigger problem than the frequency of corporate layoffs reported. To keep employees in the company, they need to feel part of the organization. People need to feel like their contributions to the organization are valued along with competitive packages.
- **Bevan et al (1997)** found that people leaving jobs gave dissatisfaction with pay as their main reason and that attitude surveys also found relative difference in terms of pay satisfaction between people who leave and colleagues who stay in the same organization. **A study by Graham**, **Murray and Amuso (2002)** supports this study where they concluded that compensation and reward schemes signify an organization's appreciation for employee efforts and this encourages individuals to remain with the firm.
- According to **Bailey (1993)** effective practices will help in retaining the talent /employees. According to him a comprehensive practice should consider the following:-

1. Employees must have an incentive (compensation, recognition, reward etc.)
2. Employees must possess the necessary skills to make their efforts meaningful (selection, training, development, career opportunities etc.)
3. Employees must have opportunity to participate at various levels. (Communication, participation, promotion etc).

- **Lawler (1990)** maintained that the key issue in retention is the amount of total compensation relative to levels offered by other organizations. "Organizations that have high levels of compensation have lower turnover rates and larger numbers of individuals applying to work for them". Furthermore, he argued, high wage workplaces may create a culture of excellence and competitive compensation packages can signal strong commitment on the part of the company, and can therefore build a strong reciprocal commitment on the part of workers. However, to the extent that it contributes to retention, competitive compensation is also likely to affect both desirable and undesirable turnover: it will help to retain workers, irrespective of the quality of their contribution to the company. He also states that the key issue in retention is the amount of total compensation relative to levels offered by other organizations. Furthermore he states that organizations that have high levels of compensation will have lower turnover rates and larger numbers of individuals applying to work for them. High wage workplaces may create a culture of excellence.

Objectives of the Study -

- To determine the compensation strategies for retaining employees.
- To facilitate the employees for their excellence in performance.
- To suggest incentive schemes this can lead to higher employee retention.

Hypotheses - In pursuance of the objectives of the study, the following hypotheses were formulated;

H_{01} There is no association between incentives in monetary terms and Employee Retention

H_{02} There is no association between reward and recognition and Employee Retention

H_{03} There is no significant relationship between amenities provided to employees and their Retention

Research Methodology -

Sample -The population for the study comprised the employees of banking sector in the Indore district of MP. Total 100 questionnaires were distributed to the employees. The SPSS has been used for the analysis of the data.

Research instrument - The data has been collected through self structured questionnaire based on five point likert scale. It consisted of 35 questions on compensation schemes, rewards, recognition, incentives, fringe benefits, facilities,etc. For the analysis of data we have used the step wise regression analysis. Compensation scheme has been taken as independent variable and employee retention as dependent variable.

Discussion - The regression analysis and the analysis of variance are shown in table 1 and table 2 respectively

Table 1 (See in the last page)

Table 2 (See in the last page)

Table 3 (See in the last page)

As shown in the tables there is a variation among the variables under study of the models 1, 2, and 3 so there must be some relation and we have tried to explain with the help of the regression equation. The co-efficient are given in table no 3. We got 3 models by step wise regression methods which are best fitted from Table 3.

Model 1 - This model explains about 61 % co-efficient of determination (R2) between incentives and employee retention. Y=10.049+1.279X1

Model 2 - This model explains about 72 % co-efficient of determination (R2) between rewards and recognition and employee retention. Y=10.049+1.279X1+0.811X2

Model 3 - This model explains about 78% co-efficient of determination (R2) between amenities provided to employees and their Retention.

Y=10.049+1.279X1+0.811X2+0.471X3

From the above tables we can conclude that incentives,

rewards, recognition and amenities are the important factors which affect employee retention. It has been evident also that amenities if the least factor among the 3 factors chosen.

Discussion - In above mentioned tables the researchers tried to find out the association of incentives, reward and recognition and amenities a part of compensation practices and employee retention. This level indicates the significance of the relationship between dependent and independent variable.

The study shows that an effective and competitive compensation practice goes a long way in satisfying and retaining an employee. Incentives (61%), reward and recognition (72%) and amenities (78%) have a strong hold in the compensation package provided to any employee and affect his decision to stay in any organization.

Conclusion - One of the most effective ways compensation can have a positive impact on employee retention is to construct an employee development plan that promises employees career track opportunities with the company. Being on an upward career track should come with corresponding salary and merit increases. In addition, performance-based bonuses motivate employees in terms of aligning their individual goals with company goals. Implementing incentives such as stock options, profit sharing and spot rewards are other ways compensation affects retention. These forms of compensation demonstrate how critical employee performance is to the organization's overall profitability. Spot rewards are usually not as lucrative; however, they provide immediate recognition, reward and compensation when company leadership observes an employee performing superior work. Appreciation is key to employee retention, and if compensation is a part of recognition, then compensation is likely to increase employee retention.

References :-

1. Bailey, T. (1993). 'Discretionary Effort and the Organization of Work; Employee Participation and Work Reform since Hawthorns', Working Paper, Columbia University.
2. Bevan S, Barber L, & Robinson D (1997). 'Keeping the Best : A Practical guide to retaining key employees', Brighton Institute of employment Research Birchfield, Reg 'Talent Attack', New Zealand Management, May 2004, 51(4) ,pg 64.
3. Curtis, S. and Wright, D. (2001) 'Retaining Employees – The Fast
4. Hiroshi Yamamoto (2011). 'The relationship between employee benefit management and employee Retention'. The International Journal of Human Resource Management, Vol. 22, No. 17, October 2011, 3550–3564.
5. Hiroshi Yamamoto* Aoyama Gakuin University, Tokyo, Japan 2011. 'The relationship between employee benefit management and employee retention.' The International Journal of Human Resource Management, Vol. 22, No. 17, October 2011, 3550–3564.
6. Kulshreshtha, Ashutosh Kumar, T. Krishna, (2005), "Economic Model for Optimum Attrition Rate", IIMB Management Review (Indian Institute of Management Bangalore), Jun2005, Vol. 17 Issue 2, pp.103-108.
7. Lawler, Edward E., III. Strategic Pay (San Francisco: Jossey-Bass Publishers, 1990). San Francisco.
8. Rajnish Ratna, Saniya Chawla (2012). 'Key Factors of Retention and Retention Strategies in Telecom Sector', Sona GlobalManagement Review / Vol 6/ Issue 3/ May 201.
9. September 1.2008 Hudson Valley QVSWESS JOÜRNAL
10. Taylor, C. R. (2002). 'Focus on talent', Journal of Training and Development', 26-31.
11. Track to Commitment', Management Research News, Vol. 24, No. 8, pp. 59–64.
12. Yamamoto, H. (2009), Retention Management of Talent: A Study on Retention in Organizations, Tokyo: Chuokeizai-sha.
13. http://www.ehow.com/info_7924255_compensation-affect-employee- retention.html#ixzz2cDy1DYzMhttp://www.ehow.com/info_7924255_compensation-affect-employee- retention.html#ixzz2cDxt4zqW

Table 1
Step-wise Regression Analysis

Model	R	R –squared	Adjusted Squared	Std. Error of the Estimate
1	0.793(incentives)	0.628	0.619	4.72779
2	0.859(reward & recognition)	0.737	0.723	4.03049
3	0.891(amenities)	0.795	0.778	3.61045

a. Predictors (Constant) Employee Retention
b. Independent Variables (Compensation Factors)

Table 2
ANOVA

	Model	Sum of Squares	Degree of freedom	Mean sum of squares	F Ratio	P-Value
1	Regression	1436.223	1	1436.22	165.71	0.000
	Residual	849.377	98	8.667		
	Total	2285.600	99			
2	Regression	1684.541	1	1684.541	274.668	0.000
	Residual	601.059	98	6.133		
	Total	2285.600	99			
3	Regression	1816.328	1	1816.328	379.350	0.000
	Residual	469.272	98			
	Total	2285.600	99	4.788		

a. Predictors (Constant) Employee Retention
b. X (Incentives), Y (Reward & Recognition), and Z (Amenities) Independent Variables

Table 3
Co-efficients

	Model	Unstandardized Co-efficient		Standardized Co-efficient	t-value	Sig.
		Beta	Std Error			
1	(Constant)	10.049	3.153	0.793	3.188	0.003
	Incentives(X1)	1.279	0.160			
2	Reward & Recognition (X2)	0.811	0.181	0.503	4.475	0.000
3	Amenities (X3)	0.471	0.120	0.439	3.910	0.000

a. Dependent Variable Employee Retention
Level of significance 5%

****

Study Of India's Trade Agreements With Other Countries In The Year 2014-15

Dr. Pradeep Chaurasia *

Abstract - India is the seventh largest economy in the world. However, it is only the sixteenth largest exporter, in terms of value with its exports accounting for around USD 336.6 billion. In contrast, India is the 12th largest importer demanding USD 477.3 billion as of 2013. Although it is claimed that the liberalisation of the Indian economy in the 1991 has greatly transformed the economy by removing many trade barriers and de-licensing of the industrial sector, its value or trade flow has remained very ordinary for a country with a population of 1.26 billion (Census, 2011). For the development of foreign trade Ex. Prime Minister had 8 foreign visits in the period of UPA Government during the first year of UPA-1.and 14 visits during UPA-2.But in this case Modi scored more than Mamohan singh. Last year Modi visted 19 countries and Bangladesh visit was his 20th foreign visit. For May 2015 India's exports contracted 20.2 per cent to $22.3 billion from what they were in May 2014, while its imports were down 16.5 per cent over the same period. Balance of Trade in India averaged -2091.30 USD Million from 1957 until 2015, reaching an all time high of 258.90 USD Million in March of 1977 and a record low of -20210.90 USD Million in October of 2012. The data are collected are secondary and convenient.

Key Words - Foreign Trade agreements, India's Gold Import, India's Export-Import, Exported Growth of Selected Commodity in India

Introduction - The trade liberalisation in India refers to the ongoing economic liberalisation, initiated in 1991, of the country's economic policies, with the goal of making the economy more market-oriented and expanding the role of private and foreign investment. Specific changes include a reduction in import tariffs, deregulation of markets, reduction of taxes, and greater foreign investment. Liberalisation has been credited by its proponents for the high economic growth recorded by the country in the 1990s and 2000s. Trade liberalization always concern with the improvement in Export and Import and for this ex. Prime Minister had 8 foreign visits in the period of UPA Government during the first year of UPA-1.and 14 visits during UPA-2.But in this case Modi scored more than Mamohan singh. Last year Modi visted 19 countries and Bangladesh visit was his 20th foreign visit. Overall the objective of visit is to improve the foreign trade and investment in India.

Literature Review - India is the seventh largest economy in the world. However, it is only the sixteenth largest exporter, in terms of value with its exports accounting for around USD 336.6 billion. In contrast, India is the 12th largest importer demanding USD 477.3 billion as of 2013. As India's gross domestic product (GDP) growth rate became lowest in 2012-13 over a decade, growing merely at 5.1%, more criticism of India's economic reforms surfaced, as it apparently failed to address employment growth, nutritional values in terms of food intake in calories, and also exports growth - and thereby leading to a worsening level of current account deficit compared to the prior to the reform period. But then in FY 2013-14 the growth rebounded to 6.9% and then in 2014-15 it rose to 7.3% as a result of the reforms put by the New Government which led to the economy becoming healthy again and the current account deficit coming in control. Growth reached 7.5% in the Jan-Mar quarter of 2015 before slowing to 7.0% in Apr-Jun quarter.

For May 2015 India's exports contracted 20.2 per cent to $22.3 billion from what they were in May 2014, while its imports were down 16.5 per cent over the same period. Balance of Trade in India averaged -2091.30 USD Million from 1957 until 2015, reaching an all time high of 258.90 USD Million in March of 1977 and a record low of -20210.90 USD Million in October of 2012. The data are collected are secondary and convenient.

Objectives Of The Study -

1. How trade liberalization is important in the growth of country?
2. What are the India's new agreements with other country?
3. What is the India's export and import (Jan 2011- Jan 2015)?

India's Agreements With Other Countries - Aiming to nearly double India's exports of goods and services to $900 billion by 2020, Narendra Modi government announced

*Asst. Professor (Management Studies) A. K. S. University, Satna (M.P.) INDIA

several incentives in the five-year Foreign Trade Policy (FTP) for exporters and units in the Special Economic Zones. India got benefits from foreign visits although America is the biggest business partner of India but in the commitments of investments, china is competing America, and this all happened in past 8 months. after Ginping's India's visit and then Modi's china visit both countries commits about agreements of 52billion dollars. America also commits some agreements with India in during past 8 months but the investment will be 7 billion dollers less than china. It will be around 45 billion dollars.

India's investment in Bhutan - After taking the responsibility of Prime Minister Modi visited Bhutan in June 2014. India will invest in the building of supreme court and one hydro electric plant. India can also have some electricity from this plant.

Electricity Power plant in Nepal - Modi visited Nepal in august and then November 2014.Modi talked about electricity power plant projects on both visits. India may get some benefits from this power plant project.

Four investment agreements with Shrilanka - Modi visited Shrilanka as a prime minister after 1987.Four agreements signed between both countries which are related to the investments on businesses.

Myanmar, Moriciouse and signature- Modi's these visits were the part of India's act east policy.

Japan will help in the matter of bullet train- Modi's Japan visit was successful in September 2014.Jpan will help to run bullet train between Ahmadabad and Mumbai. Japan commits to give 35 billion dollars for development projects.

Investments from America- With agreements on defence , intelligence and terrorism Modi and Obama wrote a united editorial in Washington post .Modi's speech was also in the headlines. American industrialists commits to invest 45billion dollars.

Discussion of MAKE IN INDIA – After 28 years any Indian Prime Minister visited Australia .Modi went there to be a part of event of G-20 countries. Everyone discussed in Australia about MAKE IN INDIA to bring more investments for the development.

Promotion of MAKE IN INDIA in Germany - Modi promoted the project MAKE IN INDIA in Germany with many other CM and CEOs.

France investment in India- Modi had a direct deal with France about 36 Rafael planes (fighter jets) although this agreement was in process from many years. Modi also discussed about jaitpur nuclear plant.

Canada will arrange Uranium- Agreement signed of 34 crore dollars for importation of Uranium.

Hypothesis -

H1 - Trade Liberalization has significant relationship with the EXIM policy in India.

H2 - Trade Liberalization has significant relationship with the investment in India.

H3 - Export and Import has significant relationship with the foreign trade in India.

H4 : Export and Import has significant relationship with the growth in India.

Methodology -

Data collection - The data are collected from many sources like government reports, news papers, magazines and websites. The data are secondary and collected on the basis of convenient types of research. The data collected and shorted started from the year 1991 to the year 2015.

Research design - There are many of variability found in-between the data collected from the year 1991 to 2015. There are direct variable and indirect variable affect the result of the study.

Direct variable - The direct variables are basically the export and import and investment decision made by Indian government.

Indirect Variable - In this study the constitution of India, GDP of India and foreign trade policy are term as indirect variables. The constitutional amendment made by government in the year 1991 for trade liberalization.

Conclusion - Trade liberalisation can give substantial economic benefits. However, these benefits may not be distributed equally. Also the success of trade liberalisation depends on how flexible an economy is. Further Export and Import in India is growing with the trade liberalization. The study of export and import in India is discussed and concluded below.

India - Export and Import - India's latest export and import figures for May 2015 reflect the subdued economic scenario both globally and within the country. India's exports contracted 20.2 per cent to $22.3 billion from what they were in May 2014, while its imports were down 16.5 per cent over the same period.

India recorded a USD 11,664 million trade deficit in December of 2015, higher than a USD9,434 million gap a year earlier. It is the largest trade deficit since August, as exports fell 15 percent and imports declined only 3.9 percent as purchases of gold significantly rose. Balance of Trade in India averaged -2091.30 USD Million from 1957 until 2015, reaching an all time high of 258.90 USD Million in March of 1977 and a record low of -20210.90 USD Million in October of 2012. Balance of Trade in India is reported by the Ministry of Commerce and Industry, India. **(Graph see in the last page)**

India's exports and imports have both contracted for six consecutive months, that is, from December 2014 onwards. Looking at the previous year, the December 2013 to May 2014 period also saw a continuous contraction in imports, except March 2014, which saw a marginal uptick in imports. Exports in this period, however, saw robust growth, especially in March, April and May 2014. To be sure, these trends have more to do with the global economic scenario than internal reasons. **(Graph see in the last page)**

As can be seen in the chart above, India consistently runs a trade deficit—it imports more than it exports. The most recent contraction in exports and imports has led to a

fall in India's trade deficit to $10.4 billion from $11.2 billion in May 2014 and $11 billion in April 2015.

Looking ahead, the consensus is that poor global growth—especially in the US, China, the euro area and Japan—will continue to affect India's exports detrimentally. Import growth, on the other hand, might bounce back if gold imports continue trending up. Data shows gold import growth has been positive since August 2014. **(Graph see in the last page)**

Gold imports increased 10.5 per cent over their May 2014 figures, but this is far lower than the 78.3 per cent growth seen in April. In fact, in absolute terms, the $2.4 billion of gold imports in May were a three-month low. The increase in the value of gold imports was driven more by volumes than by the price of gold. India imported 63 tonnes of gold in May 2015, up 19 per cent from the May 2014 figures. Gold prices, on the other hand, were down 7 per cent last month.

This scenario is the converse of what happened with oil imports. **(Graph see in the last page)**

Oil imports in May, at $8.5 billion, were 41 per cent lower than what they were in May 2014, marking the eighth straight month of contraction. Unlike in gold, however, this fall in the value of imports was driven by falling prices rather than a dip in volumes imported. As can be seen from the graph above, the growth in imports and exports of oil faithfully follow the price changes. **(Graph see in the last page)**

Weak global and Indian demand didn't just affect oil and gold, however. India's exports in many commodities fell in May 2015. Rice exports, for example, contracted 14.6 per cent over their May 2014 level, while the export of other grains contracted a whopping 77.7 per cent. The exports of iron ore and gems & jewellery similarly fell 86 per cent and 12.9 per cent, respectively.

Overall, it is important to note that the ongoing contraction of imports and exports is an indication of subdued global and Indian demand. At the moment, GDP growth in the US is negative, China's growth has decelerated to a six-year low and the euro area and Japan are seeing only marginal growth.

Within India, although the Index of Industrial Production for May showed a revival in production and therefore demand, the consensus is that demand still has to pick up significantly to bolster any real growth in the economy.

References :-

1. "BBC News - India growth rate slows to 5.3% in first quarter". Bbc.co.uk. 2012-05-31. Retrieved 2013-07-10.
2. "Bhutan Rolls Out the Red Carpet for Prime Minister Narendra Modi". NDTV. Retrieved 15 June 2014.
3. "Economic survey of India 2007: Policy Brief" (PDF). OECD.
4. "India seeks its place in Indian Ocean ahead of Modi's China visit". Times of India. 17 February 2015. Retrieved 17 February 2015.
5. "India, Modi and the neighbourhood". Gateway House. 25 August 2014. Retrieved 3 November 2014.
6. "India, Nepal hold negotiations for 900 MW power project". The Economic Times. 5 November 2014. Retrieved 4 November 2014.
7. "MODI 1ST PM IN 36 YRS TO ADDRESS SL PARLIAMENT". The Pioneer. 19 August 2014. Retrieved 19 August 2014.
8. "Narendra Modi emphasises on "neighbourhood first' policy, talks about 'strong SAARC' with Rajapakse, Hasina and Koirala". Daily News and Analysis. 28 September 2014. Retrieved 4 November 2014.
9. "Narendra Modi's push for strong relations with neighbours". The Economic Times. 3 July 2014. Retrieved 3 November 2014.
10. "Nepal deplores attack on Indian priests, promises action". The Hindu. 6 September 2009. Retrieved 6 August 2014.
11. "Nepal Enthralled by Visit of India's Prime Minister, Who Hits 'the Right Notes'". The New York Times. 7 June 2014. Retrieved 4 August 2014.
12. "PM Narendra Modi holds talks with Nepal PM, ten pacts inked". The Economic Times. 25
13. "Sri Lanka Presidential polls: PM Narendra Modi congratulates Maithripala Sirisena on poll victory". The Economic Times. 9 January 2014. Retrieved 13 January 2014.
14. *"Sushma Swaraj arrives in Afghanistan; strategic ties on the agenda". The Indian Express. 2014-09-10*. Retrieved *2014-09-10.*
15. *"Sushma Swaraj describes her Nepal visit very successful". The Times of India. 27 July 2014*. Retrieved *4 August* 2014.
16. *"The India Report" (PDF). Astaire Research.*
17. *"The McKinsey Quarterly: India—From emerging to surging" (PDF). The McKinsey Quarterly. 2001.*
18. *"The mini SAARC summit". The Sunday Times (Sri Lanka). 1 June 2014*. Retrieved *3 November* 2014.
19. *"The World Factbook". Cia.gov*. Retrieved *2013-07-10.*
20. *"To boost ties, PM Narendra Modi to present advanced chopper to Nepal". The Economic Times. 24 November 2014*. Retrieved *14 December* 2014.
21. http://modiachievements.in/good-governance/what-benefits-india-attained-upto-now-by-narendra-modis-foreign-visits/
22. http://www.cppr.in/article/5300/
23. http://www.thehindu.com/data/what-do-indias-latest-export-and-import-figures-tell-us/article7326453.ece
24. www.exportgenius.in

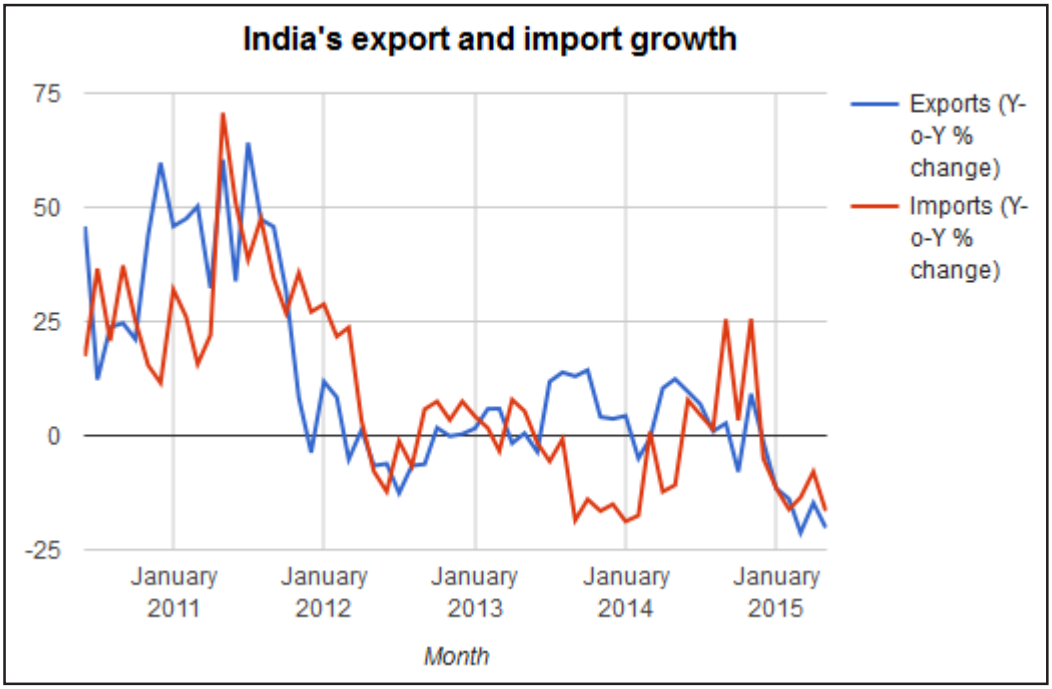
India's export and import growth
75
50
25
0
-25
January 2011
January 2012
January 2013
January 2014
January 2015
Month
Exports (Y-o-Y % change)
Imports (Y-o-Y % change)

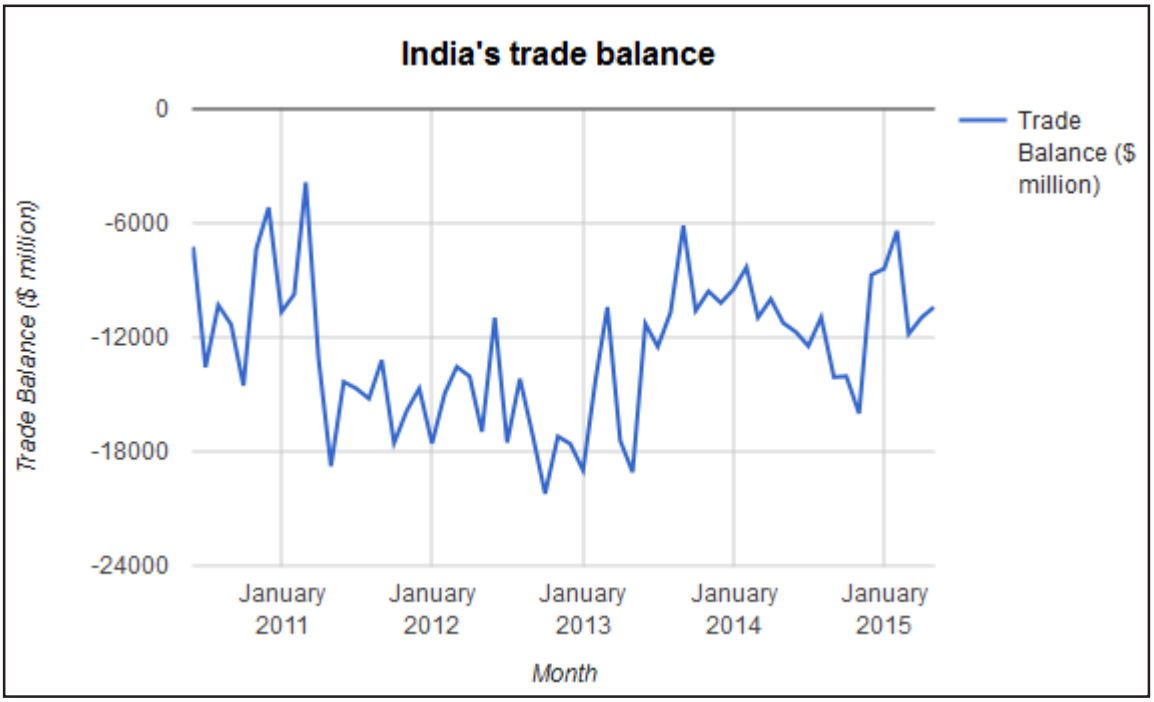
India's trade balance
0
-6000
-12000
-18000
-24000
Trade Balance ($ million)
January 2011
January 2012
January 2013
January 2014
January 2015
Month
Trade Balance ($ million)

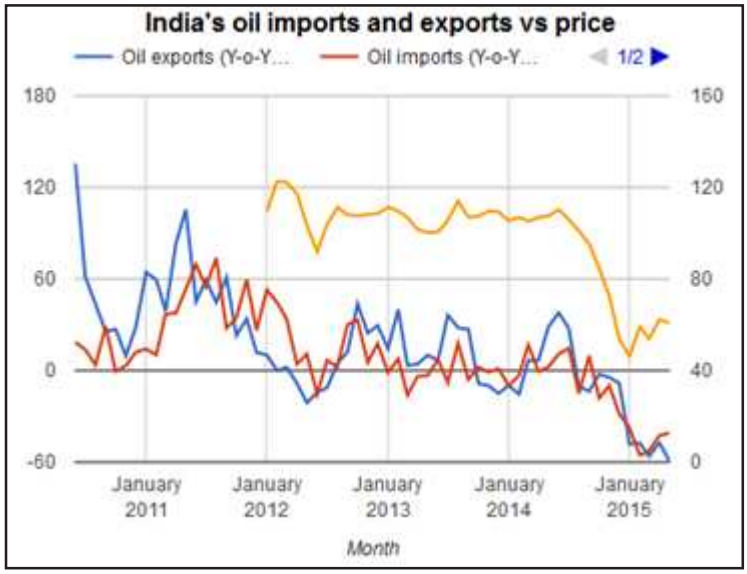
India's oil imports and exports vs price
Oil exports (Y-o-Y...
Oil imports (Y-o-Y...
1/2
180
120
60
0
-60
160
120
80
40
0
January 2011
January 2012
January 2013
January 2014
January 2015
Month

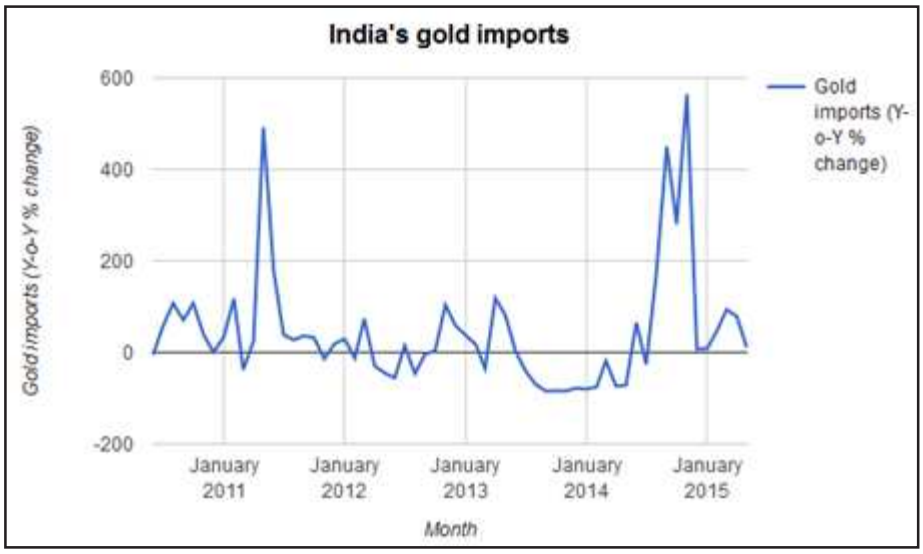
India's gold imports
Gold imports (Y-o-Y % change)
600
400
200
0
-200
Gold imports (Y-o-Y % change)
January 2011
January 2012
January 2013
January 2014
January 2015
Month

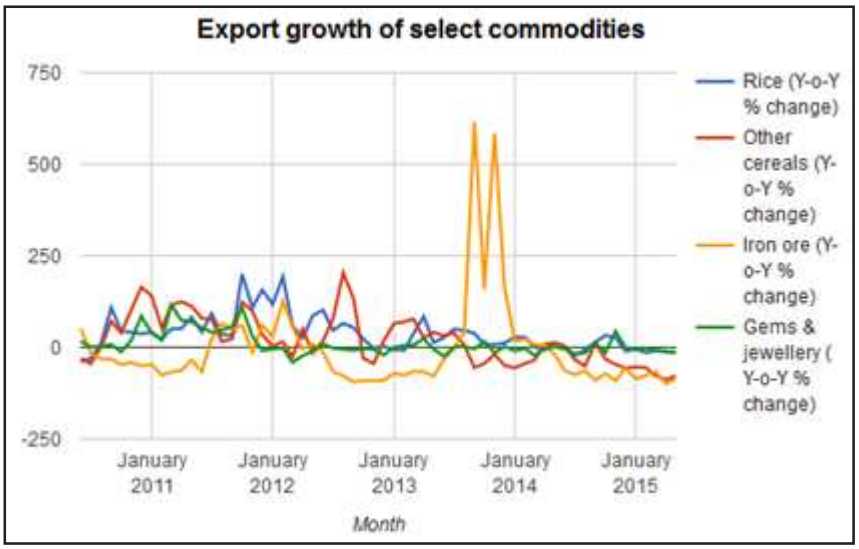
Export growth of select commodities
750
500
250
0
-250
Rice (Y-o-Y % change)
Other cereals (Y-o-Y % change)
Iron ore (Y-o-Y % change)
Gems & jewellery (Y-o-Y % change)
January 2011
January 2012
January 2013
January 2014
January 2015
Month

****

Rural Distribution Strategies For Mahindra Two Wheelers : An Exploratory Study

Dr. Shefali Tiwari *

Introduction - The advent of Industrial Revolution established the concept of Urbanization. People migrated from Rural to Urban areas for various opportunities and thus market centered on the exclusive needs of urban consumers, neglecting the rural populace. With the blood shedding in urban markets, rural India is once again center of our attention. Rural market has a tremendous potential that is yet to be tapped. A small increase in rural income, results in an exponential increase in overall buying power. The Indian rural markets are today witnessing competition in almost all product segments. The marketers across all sectors have embarked on their journey to rural markets to woo the consumers and exploit its potential. Thereby, initiating changes in marketing tactics.

Indian market is divided into urban and rural. While there is a large growth in the urban markets, the rural or latent market is yet to be tapped, and has an enormous potential for growth. A rural market can be defined as any market that exists in an area where the population is less than 50,000(S. Ramaswami,2000). Recent years have witnessed spurt in rural consumption. Analysts predict that by 2020 the number of underprivileged households will be less than aspirers and seekers. This is just the effect. The cause of this massive transformation lies in a rise in discretionary incomes from increasing productivity and integration of rural markets through innovative alternate distribution channels. The attractiveness of rural market lies in its size. There is higher number of individual consumers and household in rural markets than in urban market.

Rural marketing is gaining grounds. A marketer has to develop the proper distribution channel and marketing plan as the rural market has sustained the bottom lines of many of the corporate giants in last 6-7 years. The HUL, ITC, Philips, Marico, Coca-Cola, Pepsi, LG, Samsung, Max New York, LIC and many more have strategically focused themselves for grabbing the eye and wallet share of rural markets. Rural markets are set to play an important role in the corporate boardrooms. Today companies have one thing in common, a desire to step-up their presence in the relatively virgin rural markets.

Distribution Strategies in Rural Market - Marketing companies can cover vast rural arena by using various tactics for delivering products to the customers in every nook and corner of the market thus enabling the firm to establish a direct contact with consumers, facilitating sales promotion and propounding brand awareness. Syndicated distribution can be used by mediocre companies with sizable resources. Various tactics are:

a) Distribution upto Feeder Towns / Mandis
b) Delivery Vans c) Haats d) Melas
e) Hub & Spoke Method of Distribution
f) Joint Distribution by Non-Competing Companies

Objectives of Study -

- Understand the Rural Distribution Strategy of LG Electronics, Nokia India, Maruti Suzuki India Ltd & Bajaj Auto Ltd.
- Design The Rural Distribution Strategy for Mahindra 2 wheelers.

Research Methodology - The study is Exploratory and conducted in Indore and nearby Satellite market as Indore is considered to be one of the best test markets for any new launch in country. This study focuses on rural distribution approach and rural marketing strategies of LG Electronics India Ltd, Maruti Suzuki Ltd, Bajaj Auto Ltd & Nokia Electronics. Structured interview was employed as method for data collection. Interview was designed for dealers and other employees of the companies and situationally open ended format was used for the respondents. Both primary and secondary data are gathered. The primary data is derived from the employees and dealer distributors of the reference companies and secondary data from books, previous research papers and websites. The study is undertaken to design an appropriate distribution strategy for Mahindra two wheelers in rural market with special reference to afore mentioned four brands. A self - analytical tool has been used to analyse the data. The steps of analysis are as follows:

- Studying rural marketing strategy of LG Electronics, Nokia India, Bajaj Auto (Two Wheeler), Maruti Suzuki India Ltd.
- To meet Indore Distributors.
- To meet Branch office.
- To meet LG brand Shop (Shoppe), Nokia Priority brand Shop, Bajaj Exclusive Show room, Maruti Suzuki Show room
- Overall market visit of identified towns.
- Collect the necessary data from company website & other references.

*Professor (Business Management) Shri Raojibhai Gokalbhai Patel Gujarati Professional Institute of Management, Indore (M.P.) INDIA

Analysis and Findings -

Learning From LG Electronics Ltd -

- **Be in touch with market -** The Company should be in touch with market especially in rural areas as rural areas believe more in personal contact and interaction. Company can make use of BTL activities.
- **Annual calendar system -** Company has gained years of experience since inception so now the time was to design an annual Standard Sales Target Calendar. Running itself through daily, weekly, monthly quarterly, half yearly to yearly achievements embracing all levels of hierarchy. This will help the employee to figure out the exact status of his performance- Actual viz-viz Standard Sales Target.

Learning From Nokia India Ltd. -

- When it comes to distribution of Nokia phones in India they soak all the limelight as they forged a strong partnership with HCLI (formerly Hindustan Computers Ltd.), which had impressive and extensive network for its own products, supplemented by additional Nokia distribution efforts. This ensures optimal resources utilization of both companies. Similarly Mahindra can develop a go-to-market strategy with its existing channel partners to jointly address the coverage needs of the urban and widely dispersed rural areas and also implement micro distribution concept.

Learning From Bajaj Auto Ltd (Two Wheelers) -

- Bajaj Auto Ltd has Company Owned & Company Operated showrooms (COCO).Based on concept of creating market awareness about the latest in technology that the company has to offer only with regards to Pro – Biking showrooms. A plethora of products is showcased and suggestions are welcomed. There is no booking done, but consumer is provided with list of dealers. Similarly to increase its visibility in market, Mahindra can develop such showrooms across country.

Learning From Maruti Suzuki Ltd. -

- Extending Sales Training initiatives to business partners is of vital importance. The automobile companies were among the first to implement Dealership Training Program. Maruti achieved the highest rank for customer satisfaction in 2014. The project aimed at creating learning among the service staff (of the dealer) by imparting the knowledge and know – how required to satisfy the customer, leadership and business planning aspects. This in turn helped to bring about attitudinal changes in the dealer segment to meet the demands of customers. Mahindra should step into similar footsteps.

Recommendations and Suggestions - My study concludes that today majority of the companies see potential in rural market as they had seen it earlier in urban market due to increase in rural income and expenditure. This section deals with suggestions & recommendations for Mahindra2wheelers to make its Rural Market Distribution More Effective than before. These suggestions & recommendations are the outcome of survey and discussions conducted through interviews based on perceptions of individuals who are directly or indirectly related with the aforementioned companies. Following points are recommended to make their rural distribution strategy more latent

a) Geographical Sample of High Market Potential Districts and Towns In Central India (Specifically Indore Region)

DISTRICT	TOWNS
INDORE	Rau, MHOW Cantt. , Runji, Gautampura
UJJAIN	Khacharod, Nagda, Tarana
RATLAM	Jaora, Alot, Tal
DEWAS	Sonkatch, Hatpipalya
KHANDWA	Less than 15000 population
MANDSAUR	Narayangad
NEEMUCH	Jawad, Manasa

- Afore mentioned locations are identified as potential market in terms of All India Ranking. Satellite Indore market ranks high at State Level too.
- As per census 2011 these locations record for more than 15,000 population.
- Sampled Towns are Tier II and III.
- Market Potential Value is higher, which indicates elevated level of income and expenditure pattern when compared with other places

b) Create New Business Opportunities Within the Existing Mahindra Channel Partners Instead of Developing New Distribution Network for 2 Wheelers Alone - Mahindra Tractors are the Numero Uno in Rural Market Segment. According to annual report, overall M&M rank third in India for Sales of Commercial Vehicles. They have their own setup in rural as well as urban market. The existing MUV and three wheelers distribution network has high penetration in rural market, so it makes right business sense for Mahindra2 Wheelers to make use of the existing network. This will ensure minimum cost for new resource allocation (except for product training), increase satisfaction in existing channel partners as they would be assured about continued business relationship which at the same time registers a higher income returns.

c) Below the Line (BTL) Activities to Channelize the Rural Market Distribution - Every company creates brand value maximization in the minds of consumers by use of appropriate marketing mix and create awareness about their existence in market and the product itself. The first thing that strikes any consumer when he comes across a MAHINDRA & MAHINDRA is that they are one of the biggest player in Automobile Industry specially for commercial vehicles, tractors etc. In short, leaders in Four Wheelers but one does not identify them as makers of Two Wheelers. This needs to be focused. In other words there is an urgent need to address product awareness through use of ground level marketing to carve a niche. Therefore the company should allocate more of its resources during this growth stage through use of BTL instead of ATL activities in order to be cost effective.

Company should invest in following BTL (Below the Line) Activities for creating awareness in Rural Market as LG has ringed its success through the use of same.

- To create product awareness reach out to Feeder Town for advertisement, where rural folks frequently go to fulfill their daily needs.
- Putting Hoarding across identified towns and districts.
- Company should organize Road Shows and Test Ride in Tier I & II cities
- Give adverts and or flyers in local dailies on daily or at regular interval to create brand awareness.
- Showcase their product in Melas. This provides a platform for improving product awareness, giving Demos and booking new sales.

CHART (See in next page)

Conclusion - Due to social and backward conditions, the personal selling efforts are challenged, hence promotion of brands in rural markets requires the special measures. The rural market has a grip of strong country shops, which affect the sale of various products in rural market. They are identifying the fact that rural people are now in the better position with disposable income. The low rate finance availability has also increased the affordability of purchasing the costly products by the rural people. Hence an attempt to promote the brand image in the rural market must be made (Bargal, H. 2005). Indian consumers are poor but not backward. The future lies with those companies who see the poor as their customers. Companies should focus on creative solution and product engineering to reduce their costs and offer tremendous 'life time value' to the 'Bottom of the Pyramid' customers. Effective rural marketing is one & only solution to reach the BOP segment. Rural Marketing Strategies: Rural marketing concept is a customer-centered 'sense & respond' philosophy (G. Ravi, 2010).

References :-

1. Bargal H. et. al., (2005), "Promotion of Brand in Rural Market", Management Trends, Vol. 2, No. 2, September 2005, pp. 69-71.
2. G.Ravi, (2010),"A Case Study on Rural Marketing: Ready to Rule India", Dissertation Report.
3. Hindustan Lever's Project Shakti.
4. ITC's e-Choupal Project
5. Jha N., (2000) Gung-Ho on Rural Marketing", The Financial Express, June 19.
6. Kotler P, et al(2009), " Marketing Management" , Dorling Kindersley(India) Pvt. Ltd 13th Edition ,pp 401- 430.
7. Pardeep K. (2013), "Challenges and Opportunities of Indian Rural Market", International Journal of Marketing Studies, Vol. 5, No. 3, pp 161-173
8. Ramaswami S., Namakumari S.,(2002), "Marketing Management- Planning, Implementation & Control " , Rural Marketing in India – The Changing Picture, Vol 3
9. Richard R. Still, Edward W. , Norman A.P. Govani(2004) "Sales Management Decisions, Strategies and Cases", Prentice Hall of India Pvt. Ltd
10. Velayudhan S.K. (2007), "Rural Marketing- Targeting the Non-Urban Consumer" , Response Books New Delhi, Vol 2.

Recommended Flow Chart For Most Effective Mahindra 2 Wheeler Distribution Network

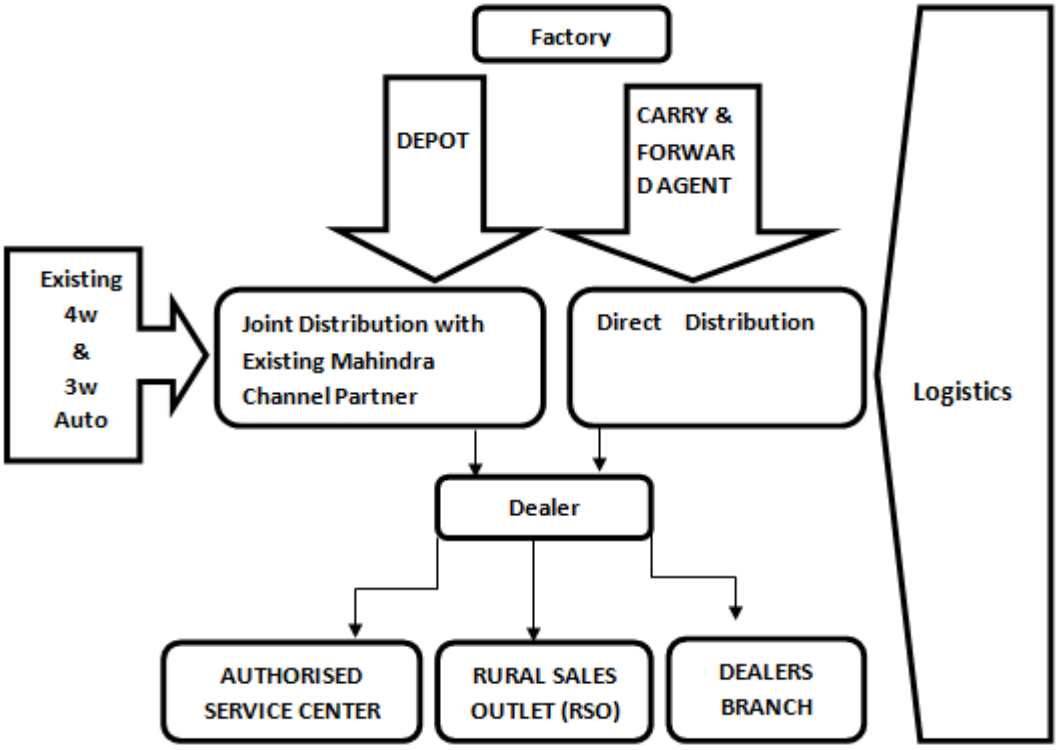

FDI- The New Capital Formation System Under 'New Beginnings In Indian Financial System'

Roshni Siddiqui *

Abstract - Indian Economy is developing economy. For economic development the capital formation from domestic saving is not satisfactory.

FDI came in Indian since 2000-01 and it is in increasing order upto date. During 2000-01 it was only Rs. 10733 crore which increase upto 2015-16 to Rs. 262322 crore and the total FDI is 1495860 crore Rupees.

The foreign investor want full package they want to change in Labour Law, Tax Law, Land requirement etc. Some other condition like communication transportation and weather condition are the challenges to FDI.

Some suggestion can be give for better FDI government should be full. guarantee to foreign investor as given conditions. FDI is very helpful for development Indian economy adopting some precaution government should promote full FDI in all sectors.

Introduction - Indian Economy is developing economy. For economic development the capital formation from domestic saving is not satisfactory. So foreign investment is important for sufficient capital formation. Form the beginning of century a new concept of foreign investment came out, FDI .(Foreign Direct Investment). FDI is a form of foreign investment that means the unit of any country investment in other country's unit. According to world Investment Report 1999: "The development priority of developing countries include achieving sustained growth for their economic by raising investment rate strengthening technological capital and skills and improving the competitiveness of their exports in world market."

The government on may 11, 2011 allowed foreign direct Investment in Limited Liability partnership companies (LLPs) but only in sectors like mining, power, roads and highways, manufacturing activities, drugs and pharmaceuticals. These are the sectors where 100 percent FDI is allowed for companies through automatic route. But LLPs engaged in agricultural and plantation activities, print media or real estate business are not allowed to have FDI.

Research Methodology - The study is purely based on secondary data which was collected through the Journals, magazines, economic book, daily news paper. For the purpose of analyzing the secondary data related to the satisfaction level of investors in regard to capital formation reforms statistical techniques. Tabulation of year wise data is shown in prescribed method and tried to find out the result on this base the economic structure of Indian capital formation is determined.

Hypothesis -

- FDI for Indian capital formation is not sufficient.
- Proper investment cannot be said regularly as our need.
- Some damage are also possible with foreign Direct investment.
- The secrecy of our economic policies and condition can leak with FDI.

Objective -

- To study foreign direct investment in Indian economy.
- To study effects of FDI in short term and long term.
- To find out the growth of Indian economy due to FDI.
- To suggest the major to save side effect form FDI.
- To study the challenges against FDI and suggest for Improvement.

Review of lectures - The world Investment Report 1999. Report of Indian finance ministry regarding to FDI.

FDI in India - Know it is very important to formulate sufficient capital for whole direction of development due to uncertainty of economic condition of Indian economy moved as to collect foreign investment even direct foreign investment from rapid economic development. Since 2000-2001 this system developed and time to time their some changing adopted as our national need. On may 11, 2011 government allowed foreign direct investment in limited liability partnership company but only in sectors like minning, power, roads, highways, manufacting, activities drugs and pharmaceuticals. These are the sectors where 100 percent FDI is allowed for companies through automatic route. But limited liability partnership company engaged in agricultural and plantation activities, print media or real estate business are not allowed. In financial year 2016-17 Indian government has changed the limits and condition of foreign direct investment is seven sector. These change has done with

* Research Scholar (Commerce) A.P.S. University, Rewa (M.P.) INDIA

this hope that foreign direct investment will a huge number of amount and will helpful for several sectors of India. The foreign investment since 2000-01 is shown as table No 1. According to above table total FDI is Rs. 1495860 crore. It is also found that in 2015-16 is maximum investment and it was Rs. 26322 crore and in 2003-04 the FDI was minimum of Rs. 10064 crore in other year like 2008-09, 2011-12, 2014-15 were high investment year.

Indian government allowed 74 percent in pharma industry without permission and for more investment government will allowed.

49 percent in domestic year based company 100 percent FDI allowed in Defence, DTH, Mobile, T.V., food processing and e-commerce.

Table – I (See in the next page)

Table - 2 (See in the next page)

The highest FDI 17.8% in computer software and hardware. In second number service sector inflow 16.5% in this sector financial non-financial and other service sector are included. The third position was of trading it was 10.5% of all investments. The lowest investment during this period was in petroleum and natural gas it was only 0.2%. Therefore it can be said that proper FDI was not in several sector. In Indian contest power, minning, Telecommunication, Automobile are most important sector for sufficient FDI.

Advantage of FDI -

- The foreign direct investment fills the gap between demand for capital and its availability from domestic sources.
- When domestic capital lacks experience in certain areas, the foreign capital may help development of those sectors.
- When foreign investments take place in a country, it also induces domestic saving to be invested in industry service or other sectors. This foreign investment helps in the mobilization of domestic savings.
- Foreign direct investment brings with it expertise of an investing company, technical know-how business experience and its world wide contacts if it is a MNC or TNC which helps in improving quality of product or service and helps in export promotion.

Challenges of FDI -

- A foreign companies want full package in other they want reform in financial sealing, Tax law, labour law, Land requirement etc. They wants eco-system.
- The Concepts of redcarpet is not clear. So the big producers do not ready to invest form long term investment because the image of India in foreign is as red tape.
- There are some rules are not clear the condition for foreign investment are typical.
- This is also a change to withdraw investment and this is depend on our “is off dueing business.”
- The proper communication, transportation, weather are responsible for foreign investment. Our country has not improved properly in these fields.
- In some sector 100 percent FDI allowed and this is not secured in view of security, life defense, rail transportation, food processing and pharma industries. If by change foreign country withdraw their investment the whole economic system of our country will disturb and will helpless high investment create lazyness for our domestic industries and it is fear to be damage infront of foreign companies this will effect on employment and other sectors.

Suggestion - Foreign investor hesitate to invest in India because there are some difficulties. Before them so government should be full warrantee and guarantee to foreign investors. Some leaving sectors should be bring after FDI for rapid and quick development of Indian economy. Government should improve operation system for best treatment with foreign investors.

Conclusion - FDI is a need of new era of Indian economy. Because domestic investment is not sufficient for enough development. For rapid development FDI is as a big push.” For drawing out swamp of Indian economy. The problem of our country through not allow developed properly in all need sectors FDI is the basic need of resolving problem.

References :-

1. Economic Survey, 2015-16, Young Global Publication Delhi. Page No. 133
2. Business Environment, 2014, Jain & Verm Sahitya a bhawan Publication Page No. 236
3. General Awareness, Ravindra Dhankar Dhankar Publication Meerut. Banking & Financial.
4. Current Affairs Magazines-2015
5. Patrika (Daily newspaper), 20 June 2016 Page No. 02.
6. www.google.com

Table - 1 Financial year and FDI in Indian Economic (In crore)

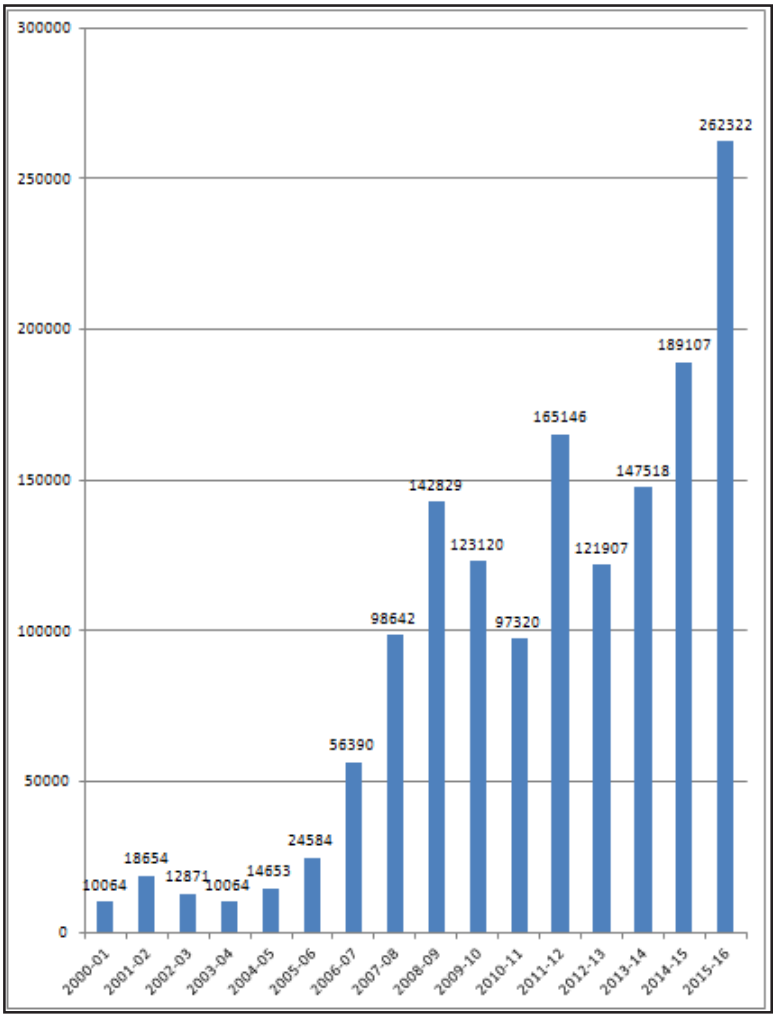

Source - Economic Survey 2015-16

Table - 2 : Sector wise FDI inflows during April 2014 to Nov 2015

S. No.	Sector	Amount of FDI (in US $ million)		
		2014-15 April-March	2015-16 April-March	Percent of total FDI Apr-Nov 2015-16
1.	Service sector (financial, non financial and other)	4443.26	4102.47	16.5
2.	Computer software and hardware	2296.04	4419.84	17.8
3.	Trading	2727.96	2604.40	10.5
4.	Automobile Industry	2725.64	1657.82	6.2
5.	Telecommunication	2894.94	1062.91	4.3
6.	Construction (Infrastructure) Activities	870.25	1368.96	5.5
7.	Chemicals (other than fertilizers)	762.76	1157.37	4.7
8.	Drug & Pharmoceuticals	1497.74	321.37	1.3
9.	Hotel & Tourism	777.01	865.25	3.5
10.	Power	707.04	635.13	2.6
11.	Mining	684.39	518.84	2.1
12.	Petroleum & Natural Gas	1079.02	48.69	0.2
13.	Non-Conventional Energy	615.95	440.64	1.8
14.	Industrial Machinery	716.76	293.56	1.2
15.	Other, exetuding above mentions	8131.71	5310.51	21.4

Source - Economic Survey 2015-16 Page No. 133

Challenges And Future Prospects Of Quality Higher Education In India

Dr. Reena Gupta *

Abstract - Higher education occupies a significant position in educational system of a nation because it is the apex of entire educational structure and influences all levels of education. Higher education also influences every national activity. There is a dire need to enhance and maintain quality in our educational institutions. To fulfill this need the National Assessment and Accreditation Council (NAAC) was established at Bangalore. Internationalization would lead to an improvement in the quality of education, promote Indian culture abroad, inculcate the cult of international understanding, generate good will and social interaction and yield rich financial harvests. The government should set up a single-window clearance mechanism, in the form of Task Force including representatives of different bodies like the UGC, AICTE and MCI for admitting students to different professional programmes. Above all, teachers need to be informed and involved in these changes through access to both preparatory and continuing education which is professional in the sense that it is informed and actively engaged, rather than passively "professional" through a turned but a prescriptive and coercive technology of teaching and teacher training.
Keywords - apex , financial harvests, mechanism, technology, influences.

Introduction - Higher education occupies a significant position in educational system of a nation because it is the apex of entire educational structure and influences all levels of education. Higher education also influences every national activity. Through innovative ideas and innovations, it also influences the future of a country. It plays a crucial role in generating new knowledge and skills. Higher education is a process of empowerment and enlightenment, leading to harmonious development of the individual and sustainable development of the nation. The higher education is supposed to be the guide of the society and it creates experts for different fields of the society. It is the responsibility of the universities to prepare the future generation to participate effective, and sincerely in different developmental programmes of the emerging society. In fact, higher education is a weapon to enhance the quality, efficiency and productivity of manpower. It helps in reducing income inequalities and thus promote economic development at a faster rate. It also enriches the social and cultural standards of life. Higher education must be able to respond to rising students' expectations and the demands of global competition. Now day's university has many functions to play.

Status of Higher Education in India - Since Independence higher education has grown in the country substantially. Now there are approximately 493 universities, 29,430 colleges, within estimated 734 lakh students enrolled in the higher education institutions. Merely increasing the number of higher education institutions and their enrolment capacity will not achieve the national development goals without concurrent attention to quality of the educational system. Its access to those who desire, and equity measures ensuring fair and impartial treatment of the disadvantaged sections of the society. The Indian higher education system in its vastness is the second largest after America. In spite of an impressive quantitative expansion, India lags behind the developed nations and also some of the developing nations in regard to access to higher education. The enrolment ratio in higher education is about 100% in Canada, 80% in USA, 50% in France and 30% in UK. Where as, our higher education hardly covers six per cent which is lower than even that of Indonesia (11%), Brazil (12%), Thailand (19%). Out of total enrolment, 46.1% of students are in Arts, 19.9% in Science,17.8% in Commerce and Management, 1.3% in Education (Teacher training and Shastri), 6.9% in Engineering, 3.1% in Medicine, 0.6% in Agriculture, 0.2% in Vet. Science,3.2% in Law, 0.9% in others viz Music, Drawing, Painting, Library Science, Physical Education, Journalism, Social Work etc (UGC, Information and Statistics Bureau 2015). There is a growing concern for quality and those who positively respond to this will survive and prosper. Hence there is a dire need to enhance and maintain quality in our educational institutions. To fulfill this need the National Assessment and Accreditation Council (NAAC) was established at Bangalore in 1994 by the University Grants Commission to assess and accredit institutions of higher education in the country. It is an external quality Assurance Agency like the Higher

* IPS Academy, Indore (M.P.) INDIA

Education Quality Control Council of the UK and is a member of the International Network of Quality Assurance Agencies in Higher Education (INQAAHE).

Internationalization of Indian Higher Education - An unprecedented explosion of scientific and technological knowledge in current panorama has turned the world into a global village. Change and management of change effectively and efficiently have become the clarion call of the era. In the day of explosion of knowledge, expectation and awareness, the 21st century society is bound to be a knowledge-based society. A knowledge society is a globally linked borderless one, which will impose on institutions the need for international level accreditation and maintenance of standards in the near future. It is the intellectual capital i.e. trained manpower rather than financial and physical capital which gives strength and prosperity to the society. In this context, the world of higher education in the 21st century can truly be a borderless world of knowledge and ideas, which will yield reciprocal benefits for all nations. Major rationale behind the internationalization of Indian higher education is that:

- Internationalization would lead to an improvement in the quality of education, promote Indian culture abroad, inculcate the cult of international understanding, generate good will and social interaction and yield rich financial harvests.
- Partnership and networking are essential for the enrichment of the teaching – learning process and for improved quality in Research.

Negotiations are still on. No final agreement on internationalization of higher education in India has been made yet. IIT and IIM have already got international acknowledgement. The Indian Institute of Technology (the only University) has been ranked 31st among the top 100 universities of the world, according to a global survey, released on December 10, 2011,some of the Indian Universities i.e. Jadavpur University, West Bengal, IGNOU etc. have opened study centers and established collaboration strategic services with various Universities all over the World.

Recommendations to the Government-

- Urgent action should be taken in the matter of finalization of Govt. policies relating to the promotion of Indian education abroad.
- The UGC Act, 1956, and the Acts of other statutory councils, needs to be amended to include a specific provision allowing universities to open off-shore campuses and export Indian education through the distance mode. There is also need to enact legislation that would regulate the operation of foreign institutions and thereby prevent the gross commercialization of education.
- The government statutory bodies and the UGC should grant greater autonomy and flexibility to universities in dealing with the process of admission of foreign students and in entering into collaborative arrangements with foreign institutions, especially in the establishment of off-shore campuses and centers.
- The government should set up a single-window clearance mechanism, in the form of Task Force including representatives of different bodies like the UGC, AICTE and MCI for admitting students to different professional programmes. Universities could get their foreign students-applicants cleared through this Task Force.

Recommendations to Academic Institutions -

- Universities and other academic institutions which decide to enroll a large number of international students need to have a good infrastructure in the form of lecture halls, well-equipped laboratories, adequate library resources, facilities for sports, recreation facilities, and above all special living facilities in the form of international houses/hostels.
- The academic institutions must evaluate their strengths in different disciplines of education, and identify areas that would attract international students at different levels.
- The procedure for granting admission to international students must be simplified. As indicated elsewhere it is necessary to reserve a certain number of seats for international students, or provide for supernumerary seats.
- The 'social infrastructure' should be strengthened so as to place the international students at ease. Each institution must have an Office for International Education (OIE) and an International Students Advisor.
- Indian universities should develop special "Study India" programmes that could be covered in one semester for the benefit of students from developed countries who would like to visit India to learn more about its culture and heritage, natural resources, diversity, language or indigenous technologies and systems.

Finding and Suggestive Action Plan -

Techno-socio-political Changes - Techno-socio-political changes will affect our approach to this challenge. First, changes in technology will increase our connectedness (Information and Communications Technologies); our control over ourselves as a species (genetic and nanotechnologies). Second, such changes will foster existing trends towards individualization and connectivity producing (paradoxically) segmentation and differentiation on the one hand and connectedness and solidarity on the other hand. Third, globalization of economic, military, legislative will change governmental activities and civil society to a great extent.

Changes in Governance - The role of government is undergoing significant changes in most countries. First, there will be legislated requirements for basic performance and accountability across both private and public sectors, combined with regulatory bodies having powers intervention. Second, over and above these requirements, government will respond to increasing social, cultural,

economic and geographic differences by accepting the process of differentiation currently under way in all societies. Third, responsibilities of government bureaucracies will be brought together with community, business and non-government agencies in ways that empower local communities to take charge of their future and link more effectively will the futures of other communities.

Role of Schools - The role of schools in helping students to select information, contextualize that information that information so that it makes sense within knowledge frameworks of various kinds, and translate that knowledge into a wise application for the solution of the different problems in the global society.

Role of Teachers - Above all, teachers need to be informed and involved in these changes through access to both preparatory and continuing education which is professional in the sense that it is informed and actively engaged, rather than passively "professional" through a turned but a prescriptive and coercive technology of teaching and teacher training. The work of teacher is, therefore, above all cultural work and teaching needs to be understood as a cultural process of negotiation.

Developing a quality culture - There is a need to develop a quality culture in our institutions. This will require mental infrastructure more than physical infrastructure, because quality depends upon our sincerity of purpose, our vision and conviction to do our duties.

Conclusion - Internationalization would lead to an improvement in the quality of education, promote Indian culture abroad, inculcate the cult of international understanding, generate good will and social interaction and yield rich financial harvests. The government should set up a single-window clearance mechanism, in the form of Task Force including representatives of different bodies like the UGC, AICTE and MCI for admitting students to different professional programmes. Above all, teachers need to be informed and involved in these changes through access to both preparatory and continuing education which is professional in the sense that it is informed and actively engaged, rather than passively "professional" through a turned but a prescriptive and coercive technology of teaching and teacher training.

References :-

1. Aruchami, M., (2011).Private Initiativesand Quality Imperatives in Higher Education, University News.
2. Bates,R., (2014). Onthe Future of Teacher Education: Challenges, Context and Content, Journal of Education for Teaching, Manchester.
3. Delors, J., (2014). Learning: The Treasure Within (Report to UNESCO) of International Commission on Education for 21st Century.
4. Gupta, P., (2015). Higher Education in India inthe New Millennium: Challenges and Remedies, University News 42 (50).
5. Mc Carthy, E.D., (2012). Knowledge as Culture, Routledge, London.
6. www.highereducationinindia.com/
7. www.iracst.org/ijrmt/papers/Vol1no22011/4vol1no2.pdf

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

उमरिया जिले की कोयला खानों में श्रम-प्रबंध संबंधों का अध्ययन

डॉ. राजू रैदास *

प्रस्तावना – उमरिया जिला प्राकृतिक दृष्टि से काफी सम्पन्न है, किन्तु प्राकृतिक का पूर्ण निदोहन न होने के कारण यहाँ का समुचित विकास नहीं हो पा रहा है जैसे की प्रथम अध्याय के अध्ययन से स्पष्ट है। खनिज पदार्थो का पर्याप्त मात्रा में भण्डार है। उद्योग धन्धे का विकास हो रहा है, संचार एवं संदेहवाहक की स्थिति संतोषजनक है। यातायात का विकास तीव्र गति से हो रहा है। बैकिंग की सुविधाऐं ग्रामीण क्षेत्र में अपर्याप्त है कृषि में तकनीकी परिवर्तन आ रहा है, जिससे उत्पादन में वृद्धि हो रही है। सिंचाई की सुविधाओं में वृद्धि संतोषजनक नही कही जा सकती है। विद्युत प्रदाय की मात्रा में कमी है तकनीकी शिक्षा नाममात्र की कही जा सकती है। वनों का समुचित विकास नही हो पाया है वनों का क्षेत्रफल पर्याप्त मात्रा में होने पर भी वनों की सुरक्षा व्यवस्था एवं किस्म दयनीय है यदि उमरिया जिला को सम्पन्न जिला किन्तु निवासी विपन्न कहॉ जाए तो अतिशयोक्ति न होगा। आदिवासी बाहुल्य जिला होने के बावजूद भी जिस अनुपात में विकास होना चाहिए उस अनुपात में इस जिले का विकास नही हो पा रहा है, जो स्वतंत्र भारत सरकार की घोषित नीति के विरूद्ध है।

आधुनिक औद्योगिक सभ्यता की यह देन है कि साहसी, प्रंबधक और श्रमिक सभी अलग-अलग ढंग से उत्पादन की प्रक्रिया में अपना योगदान देते हैं। वृहत-कार्य उपक्रमों में जहाँ पर बहुसंख्यक श्रमिक एक साथ कार्य कर अपनी आजीविका अर्जित करते हैं, वहाँ उन्हें श्रम-संघों के रूप में संगठित होने का अवसर भी प्राप्त होता है। ये श्रम-संघ श्रमिकों के हितों की रक्षा करते हैं। श्रमिक अपनी शारीरिक एंव मानसिक क्षमता के अनुरूप कार्य के घंटे तय करवाना चाहता है, अपने रोजगार की सुरक्षा चाहता है, सम्मान-पूर्वक जीवन निर्वाह करने के लिए आवश्यक मजदूरी का आकांक्षी होता है, अपने नियोक्ता से समुचित आवास, शिक्षा एवं चिकित्सा संबंधी सुविधांए प्राप्त करना अपना बुनियादी अधिकार समझता है, दुर्घटनाओं जैसे आकस्मिक संकटों के समय आर्थिक सहायता का अभिलाषी होता है। इससे भी बढ़कर श्रमिक उपक्रम के लाभों तथा प्रबंध में हिस्सेदार बनना चाहता है। संगठित श्रमिक अपने श्रम सघं के माध्यम से इन उपर्युक्त सुविधाओं को प्राप्त करने के लिए नियोक्ता अथवा प्रबंधकों के साथ सामूहिक रूप से सौदेबाजी करते हैं।

दूसरी ओर उपक्रमों के प्रबंधक अथवा नियोक्ता पर सामाजिक दायित्व के निर्वाह का भारी बोझ होता है। उन्हें परिवर्तन शील आर्थिक दशाओं में राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर की कटु प्रतिस्पर्द्धा के बीच उपक्रम से जुड़े हुए श्रमिक वर्ग, धनदाताओं तथा राष्ट् के हितों को ध्यान में रख कर उपक्रम को लाभ पर चलाना होता है। अंत: नियोक्ता या प्रबंधक श्रम की सभी आकांक्षाओं की पूर्ति करने में अपने आपको असमर्थ महसूस करते हैं, जिसके परिणामस्वरूप नियोक्ता या प्रबंधक तथा श्रमिक -वर्ग के बीच वर्ग -संघर्ष उत्पन्न होना स्वाभाविक है। जिसकी परिणति श्रमिक आंदोलन, हड़ताल, तालाबंदी, औद्योगिक कार्य दिनों की क्षति, न्यूनउत्पादन, अधिक उत्पादन-लागत तथा आर्थिक संसाधनों के अपठ के रूप में होती है।

चूँकिं श्रमिक एवं प्रबंध इन दोनों के हित परस्पर विरोधी हैं। अत: एक ऐसे मध्यम मार्ग की खोज करना अत्यंत आवश्यक है ।जिससे एक ओर श्रमिक संतुष्ट हों तथा दूसरी ओर प्रबंधक भी अपने दायित्व का निर्वाह कर सकें। विशेष कर जबकि हमारे देश में गैट समझौते पर हस्ताक्षर करके स्वतंत्र विश्व व्यापी अर्थव्यवस्था को स्वीकार किया है। हमें समष्टि विचारों Macro Concept को ग्रहण कर इस चुनौती का सामना करते हुए अंतर्राष्ट्रीय औद्योगिक समाज की रचना करनी है। उस कार्य की सफलता मूलत: इस बात पर आश्रित है कि किस प्रकार हम श्रम और प्रबंध के बीच सुमधुर एंव प्रभावपूर्ण औधोगिक संबंधो की स्थापना कर सकते हैं।

यही इस शोध कार्य की मूल विषय वस्तु है, कि उर्जा के पांरपरिक एवं अत्यंत महत्वपूर्ण स्त्रोत के रूप में कोयले का उत्पादन न्यूनतम लागत पर अधिकतम परिमाण पर अच्छे औद्योगिक संबंधों द्वारा कर सकते है। इसलिए इस शोध कार्य के क्षेत्र के रूप में उमरिया जिले की कोयला खानों का चयन किया गया है।

पूर्व में किए गए कार्यों का संक्षिप्त विवरण – उमरिया जिले की कोयला खानों में श्रम और प्रंबध संबंधों के अध्ययन पर शोध कार्य का अभाव है।

पूर्व में अनेक शोधार्थियों ने कोयला खान श्रमिकों के बारे में शोधकार्य किए जैसे –

1. डॉ0 राकेश ढण्ड द्वारा 'सोहागपुर कोयला प्रक्षेत्र की कोयला खानों में कोयले की संचालन लागत का विश्लेषण'।
2. डॉ0 इन्द्रामणिप्रसाद त्रिपाठी द्वारा 'विन्ध्य क्षेत्र के कोयला खान उद्योग में श्रमिको की दशाएँ'।
3. डॉ0 व्ही0एन0 इंगोले द्वारा 'सोहागपुर कोयला क्षेत्र के कोयला खान श्रमिकों हेतु क्रियान्वित सामाजिक सुरक्षा योजनाओं का मूल्यांकन'।

इन शोध कार्यो में श्रम और प्रबंध संबंधों के अध्ययन का हल्का सा आभास मिलता है किन्तु मुख्य विषय के रूप में गहराई से विश्लेषणात्मक अध्ययन नहीं किया गया है। विषय का स्पर्श मात्र जिज्ञासा की संतुष्टि के लिए अपर्याप्त है।

संबंधित क्षेत्र में प्रस्तावित शोध कार्य का योगदान – सन् 1985 में भारत के कोयला उद्योग का राष्ट्रीयकरण किया गया ताकि कोयला खान उद्योग के श्रमिक एंव प्रबंधकों के बीच बिगड़ते सम्बधों को सुधारा जा सके तथा कोयला खानों के उत्पादन को बढाया जा सके। लेकिन फिर भी कोई

* अतिथि विद्वान (वाणिज्य) शासकीय महाविद्यालय, उमरिया (म.प्र.) भारत

सुधार परिलक्षित नहीं हो सका है। इस दिशा में शोध परक मूल्यांकन भी नहीं किया गया है। इसलिए इस क्षेत्र में श्रम और प्रबंध के संबंधो में सुधार लाने के उद्देश्य से अध्ययन किया जाना नितान्त आवश्यक प्रतीत होता है।

प्रस्तुत शोधकार्य के द्वारा कोयला खान श्रमिकों के आचरण एंव मनोविज्ञान का अध्ययन किया जा सकेगा। उनकी उत्पादन क्षमता के विकास के मार्ग में आने वाली बाधाओं से अवगत हुआ जा सकेगा। उनकी व्यक्तिगत एवं आर्थिक समस्याओं से प्रबंन्ध को परिचित कराया जा सकेगा। चयनित कोयला खानों में श्रम और प्रंबध के सुमधुर संबधों की स्थापना हेतु परियोजन प्रतिवेदन निर्मित किया जा सकेगाा। व्यावहारिक पृष्ठभूमि में ऐसा प्रतिवेदन अन्य कोयला खान इकाइयों में सुमधुर औद्योगिक संबंध स्थापित कर कोयले का उत्पादान बढ़ाने की दृष्टि से मार्गदर्शक आधार प्रस्तुत करेगा।

किए जा रहे शोध कार्य हेतु प्रस्तावित शोध प्रविधि –

(अ) शोध क्षेत्र – प्रस्तावित शोध कार्य का उद्देश्य उमरिया जिले की कोयला खानों में श्रमिको तथा प्रबंधकों के मध्य औद्योगिक संबंधो में वैमनस्यता, विवाद आदि उत्पन्न होने के कारणों की खोज कर उन्हें जड़ मूल से समाप्त करने की दिशा में प्रयास करना है। अत: शोध क्षेत्र उमरिया जिले तक सीमित है,अन्य क्षेत्रों से तुलनात्मक अध्ययन भी किया गया है।

(ब) समंक – प्रस्तुत शोध कार्य में प्राथमिक एंव द्वितीयक संमंक दोनो का ही प्रयोग किया जायेगा। प्राथमिक समंकों का संकलन डॉ0 राजू रैदास के द्वारा समुचित प्रश्नावली के माध्यम से कोयला खान श्रमिकों से प्रत्यक्ष साक्षात्कार कर किया जायेगा और श्रमिकों के असंतोष के सभी कारणों का परीक्षण किया जायेगा। कोयला खानों के प्रबंधकों तथा श्रम संघों के पदाधिकारियों से भी साक्षात्कार विधि द्वारा जानकारी प्रत्यक्ष –व्यक्तिगत रूप से प्राप्त किया गया है।।

(स) शोध तकनीक – संकलित संमंकों का वर्गीकरण एंव सारणीयन कर आवश्यकतानुसार गणितीय माध्य, मध्यका, सह – संबंध, गुण संबंध आदि सांख्यकीय तकनीक के प्रयोग के आधार पर निष्कर्ष निकाले जायेंगे।

श्रम कल्याण एवं सामाजिक सुरक्षा – किसी उद्योग की सफलता का रहस्य वहां के श्रमिक व कार्य के वातावरण पर निर्भर होता है। अत: श्रमिकों को अच्छा कार्य करने का वातावरण दिया जाए। जिसके जिसके लिए श्रमिकों को श्रम कल्याण व सामाजिक सुरक्षा दी जानी चाहिए , जिससे कि श्रमिक वर्ग बिना किसी सोच के अच्छा कार्य करें।

श्रम कल्याण एवं सामाजिक सुरक्षा के द्वारा श्रमिक का नैतिक मानसिक एवं शारीरिक विकास होता है। श्रमिकों की कार्यक्षमता व कार्य कुशलता में वृद्धि होती है। अत: श्रमिकों के हितार्थ श्रम कल्याण व सामाजिक सुरक्षा की अधिक से अधिक व्यवस्था की जानी चाहिए।

श्रम कल्याण व सामाजिक सुरक्षा पर सौदेबाजी के पूर्व की अवस्था– उमरिया जिले की कोयला खदानों में सौदेबाजी के पूर्व श्रमिकों का कोल कम्पनी द्वारा किसी प्रकार के श्रम कल्याण एवं सामाजिक सुरक्षा से संबंधित सुविधाओं का नाम मात्र अंश ही प्राप्त होता था जो कि अप्रर्याप्त था।

मजदूरी, औद्योगिक प्रशिक्षण, स्वच्छता, प्रकाश एवं वायु की व्यवस्था, जलपान गृह, मध्यान्तर एवं निर्धारित समय, विश्राम भवन, चिकित्सा व्यवस्था, जल आपूर्ति सुरक्षा व्यवस्था, शिक्षा का प्रबंध, आवास ब्यवस्था, मनोरंजन की सुविधा, रियायती दर पर वस्तुओं की पूर्ति, बैकिंग ब्यवस्था एवं सांस्कृतिक व सामाजिक गतिविधियां आदि की व्यवस्थाएं श्रमिकों को उपलब्ध नहीं हो पाती थी।

श्रम कल्याण व सामाजिक सुरक्षा पर सौदेबाजी के पश्चात प्रभाव – उमरिया जिले की कोयला खानों में सामूहिक सौदेबाजी के प्रभाव से श्रम कल्याण एवं सामाजिक सुरक्षा सम्बन्धी निम्न प्रावधानों को लागू किया जाय –

(अ) श्रम कल्याण संम्बन्धी प्रावधान –

1. मजदूरी,
2. औद्योगिक प्रशिक्षण,
3. स्वच्छता,
4. प्रकाश एवं वायु की व्यवस्था,
5. जल पान गृह,
6. मध्यान्तर एवं निर्धारित समय,
7. विश्राम भवन,
8. चिकित्सा ब्यवस्था,
9. जल आपूर्ति,
10. सुरक्षा ब्यवस्था,
11. शिक्षा का प्रबंध,
12. आवास ब्यवस्था,
13. मनोरंजन की सुविधा,
14. रियायती दर पर वस्तुओं की पूर्ति,
15. बैंकिग व्यवस्था एवं सांसकृतिक व सामाजिक गतिविधियां आदि की ब्यवस्थाएं आदि के प्रवधान बन जाने से श्रमिकों की कार्य क्षमता व जीवनस्तर में वृद्धि हुई।

सुझाव – उमरिया जिले की कोयला खानों में श्रम प्रंबध सम्बधों को सुमधुर बनाने हेतु निम्न सुझाव दिए जा सकते हैं–

(अ) श्रमको की आवास व्यवस्था –

1. कमरो की संख्या में वृद्धि की जानी चाहिए।
2. आवास व्यवस्था में प्रयाप्त मात्रा में जल की अपूर्ति, बिजली की अपूर्ति, धूप व हवा की व्यवस्था की जानी चाहिए।
3. कचरा फेंकने के लिए नियत स्थान बनाना चाहिए।
4. मकानों का आवंटन उचित रीति से किया जाना चाहिए।

(ब) चिकित्सा की व्यवस्था –

1. चिकित्सालयों की संख्या में वृद्धि की जानी चाहिए।
2. विशेषज्ञ चिकित्सकों में वृद्धि करनी चाहिए।
3. विस्तरों की संख्या में वृद्धि करनी चाहि
4. दबावों का भण्डार करना चाहिए ताकि सही समय पर श्रमिको को दवा उपलब्ध की जा सके।

(स) मनोरंजन की सुविधा

(द) श्रम कल्याण कार्यक्रम

(इ) श्रम संघों का स्वरूप

(फ) कार्यदशा में सुधार

प्रस्तावित शोध कार्य का प्रतिफलन – प्रस्तावित शोध कार्य के बारे में अनूमानित परिणाम की निम्नानुसार परिकल्पना की जा सकती है –

1. कोयला उद्योग के राष्ट्रीयकरण के उपरांत कोयले का उत्पादन उस सीमा तक नहीं बढ़ा हैं। जितना कि प्रदर्शित किया जा रहा है।
2. भारतीय कोयला खान श्रमिकों की उत्पादकता में पाश्चात्य देशों के श्रमिकों की तुलना में निरन्तर ह्रास हो रहा है।
3. कोयला खान श्रमिकों की न्यून उत्पादन क्षमता का कारण उनका

प्रबन्ध से विवाद है।

4. कोयला खान श्रमिकों की उत्पादन क्षमता में वृद्धि, प्रबन्ध के साथ सुमधुर संबंधों की रचना के द्वारा हो सकती है।
5. श्रमिकों की उत्पादन क्षमता में वृद्धि से आर्थिक विकास में भी वृद्धि होगी। आर्थिक विकास से श्रम का विकास होगा यह स्वंय चलित आर्थिक – चक्र निरन्तर गतिशील रहेगा।

निष्कर्ष – उमरिया जिला की कोयला खानों में औद्योगिक विवाद के निवारणर हेतु किए गए अनेक प्रयासों में एक प्रयास सामूहिक सौदोबाजी है। सामूहिक सौदोबाजी औद्योगिक विवाद के निवारण की सबसे अच्छी विधि मानी जाती है क्योंकि इसमें कोयला कंपनी के प्रबंध तथा श्रमिकों के द्वारा विचार विमर्श किए जाने के पश्चात दोनों पक्षों की आपसी सहमति से ही नियम या प्रावधान लागू किए गए। जिसके परिणामस्वरूप दोनों पक्षों के संबंधो में सुधार हुआ और औद्योगिक विवाद में भी कमी हुई।

सन्दर्भ गन्थ सूची :–

1. Labour Administration at the state level - Sudkar Sharma.
2. Industrial Economics - Dr. V. Sinha.
3. Labour Economics - Dr. V.C. Sinha .
4. Industrial Welfare in India - R. S. Loknathan.
5. The Indian working class - 1958. R. K. Mukergee.
6. www.google.com/wikipedia.com.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) January to March 2017, Vol. I

पर्यावरण जागरूकता एंव आर्थिक विकास

डॉ. एन. एल. गुप्ता * जयराम बघेल **

शोध सारांश –

क्षिति जल पावन गगन समीरा।
पंच तत्व यह मनूज शरीरा। रामचरितमानस।।

हमारा यह नश्वर शरीर पृथ्वी, जल, अग्नि, आकाश एवं वायु से मिलकर निर्मित हुआ हैं। इन पांच तत्वों का समुचित संतुलन ही विश्व में श्रेष्ठ पर्यावरण का पर्याय है। आयुर्वेद विज्ञान में मुनि चरक ने स्वस्थ शरीर के लियें शुद्ध वायु, शुद्ध जल तथा शुद्ध मिट्टी को पर्यावरण का आवश्यक तत्व माना है। ठीक उसी प्रकार पर्यावरण सें अभिप्राय उस फिजा से है जिसमे हम सांस लेते है, उस जल से है, जो जीवन का आधार है। ये लहलहाते पेंड़ चहचहाते पक्षी, कलकल करती सरिता, शीर्ष उठाए पर्वत, विचरते पषु: यही सब है, हमारे पर्यावरण के घटक/ यही है। प्रकृति के प्रति इसी आस्था, प्रेम और आदर–भाव की अभिव्यक्ति संत कबीर ने यूं की है–

'भूली मालिन पाती तोड़े, पाती पाती जीव'

जब जीवनदायी प्राणवायु (ऑक्सीजन) और प्राणपोषक शुद्ध जल ही नहीं मिलेगा, तो जीवन कैसे बच सकेगा। प्रदूषण का जनक भी मानव है और वह ही, इसका नियंत्रक भी।

शब्द कुंजी – पर्यावरण प्रदुषण, संरक्षण, क्रियान्वयन, सरकारी नीति, ध्वनी प्रदुषण, प्लास्टिक प्रदुषण, उर्वरक, पश्चिमीकरण, पाश्चात्य तकनीक।

प्रस्तावना – आधुनिक वैज्ञानिक युग में मनुष्य आर्थिक विकास की लालसा एवं सुख–साधनों में वृद्धि के प्रयास में पर्यावरण के समस्त अवयवों – भूमि, जल, वायु, वनस्पतियों एवं अन्य प्राकृतिक संसाधनों एवं ऊर्जा के स्त्रोतों का अनियन्त्रित उपयोग एवं विदोहन कर रहा है। पर्यावरण के तेजी से हो रहे उपयोग एवं शोषण से आज विश्व को पर्यावरण असंतुलन की भीषण विभीषिका का सामना करना पड़ रहा है। पर्यावरण के अति प्रयोग एवं क्षरण की समस्या का सामना विकसित एवं विकासशील दोनों ही अर्थ व्यवस्थाओं कों करना पड़ रहा है। इन दोनों में पर्यावरण को बिगाड़नें में मात्र अंश का ही अन्तर है। विकसित देशों ने पूंजी की पर्याप्त उपलब्धता के कारण जहां पर्यावरण संसाधनों का अत्यधिक दोहन किया वहीं अल्प विकसित देशों नें जनसंख्या कें बडें आकार के कारण पर्यावरण के अवयवों के अणुगत को बिगाड़ने का प्रयास किया। आज विश्व के समस्त देश एवं मनीषी पर्यावरण में हो रहे इस विघटन से चिन्तित है और इसके मौलिक स्वरूप को बनाए रखने के प्रति संजीदा दिखाई पड़ते है। पर्यावरण के संसाधनो का अनियंत्रित एवं अत्यधिक प्रयोग न हो अन्यथा इसका मौलिक स्वरूप ही नष्ट हो जाएगा इस तथ्य के परिप्रेक्ष्य मे पर्यावरण के संसाधनो के आवंटन की समस्या उत्पन्न हुई है। पर्यावरण के संसाधनों का किस क्षेत्र में कितना एवं किस सीमा तक प्रयोग किया जाए ताकि इसके क्षरण अथवा विघटन की समस्या न उत्पन्न हो। यह आज की एक ज्वलंत समस्या है एवं विचारणीय प्रश्न है। इस समस्या के समाधान से ही दारूण दुख की प्राप्ति एवं आत्म – विनाश की ओर अग्रसर मानव जाति का भला हो सकेगा तथा विलुप्त हो रही जीव – जन्तुओं एवं वनस्पतियों की प्रजातियों को संरक्षित किया जा सकेगा।

पर्यावरण का उजाला – आदर्श की बात जुबान पर है, पर मन में नहीं उड़ने के लिए आकाश दिखाते है, पर खड़े होने के लिए जमीन नही। दर्पण आज भी सच बोलता है पर हमने मुखौटे लगा रखे है। ग्लोबल वार्मिंग आज विश्व के सामने सबसे बड़ी समस्या है औंर हम पर्यावरण को दिन प्रतिदिन प्रदूषित करते जा रहे है। पर्यावरण के असन्तुलित एवं प्रदूषित होने की स्थितियाँ इतनी भयावह एवं डरावनी है कि कोई भी कांप उठे प्रतिवर्ष 1500 करोड़ पेड़ धरती से काट दिए जाते है मनुष्य जाति कि शुरूआत सें आज तक 46 प्रतिशत जगंल व पेड़ खत्म कर दिए गए है। लगातार कम होते जंगलों के कारण आज तक तकरीबन 20 लाख लोग बेराजगार ओर बेंघर हो चुके है। धरती पर हर 8 वीं मौत दूषित हवा से होती है। यज्ञ का हमारे यहाँ प्राचीन काल से ही विशिष्ट महत्व रहा है। यज्ञ का न केवल आध्यात्मिक महत्व है बल्कि यज्ञ पर्यावरण के लिए भी विशेष रूप से महत्व रखता है। यज्ञ के सास्कृतिक एवं वैज्ञानिक पहलू भी है। हवन करने से पर्यावरण में उपस्थित अनेक तरह के बैक्टीरिया खत्म होते है । हवन वातावरण आक्सीजन की मात्रा को बढ़ाता है। वृक्ष इस सजीव जगत के जीवन मे रीढ़ की तरह है। पेड़ स्वयं कार्बनडाई आक्साइड का प्रयोग करते है और बदले में हमे फल फूल और आक्सीजन देते है।

उद्देश्य – पर्यावरण जागरूकता एवं आर्थिक विकास शोध पत्र के उद्देश्य निम्नांकित है।

1. पर्यावरण की हो रही क्षति के बारे में जानना।
2. पर्यावरण बचाव हेतु लोगों को जागरूक करना।
3. सूक्ष्म कार्यक्रम आयोजित कर पर्यावरण संरक्षण के बारे में बताना।

***शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत**
****शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत**

4. उद्योग – व्यापार में पर्यावरण के महत्व जानना।
5. मानव स्वास्थ्य में पर्यावरण के महत्व को बताना।
6. पर्यावरण से आर्थिक विकास में प्रगति को जानना

जनभागीदारी एवं जनजागरण – पर्यावरण जनचेतना या बोध से आशय मानव के उस ज्ञान व व्यवहार से है, जिसके द्वारा मानव प्रकृति के साथ सामंजस्य स्थापित कर विकास का मार्ग प्रशस्त करता है। वर्तमान में विश्व के अधिकांश विकसित तथा विकासशील राष्ट्र विश्व के प्राकृतिक संसाधनो का अविवेकपूर्ण ढ़ंग से तीव्र विदोहन करने में लगे है, जिसके फलस्वरूप प्राकृतिक संसाधनो पर मानव का दबाव अत्यधिक बढ़ गया है। जिसके कारण पृथ्वी के बहुत से प्राकृतिक संसाधनों के पूर्णतया समाप्त होने का समय निकट आ गया है। कि प्रकृति के इन उपहारो पर केवल वर्तमान पीढ़ी का ही अधिकार नहीं वरन उस भविष्य में आने वाली पीढ़ी का भी नैतिक अधिकार है। वर्तमान में मानव ने प्राकृतिक संसाधनों का तीव्र गति से विदोहन ही नहीं किया बल्कि कुछ सतत् या समाप्त न होने वाले प्राकृतिक संसाधनो जैसे – वायु, जल, मिट्टी, आदि का अविवेकपूर्ण ढंग़ से प्रयोग कर वातावरण गुणवत्ताओं पर प्रतिकूल प्रभाव डाला है। जिसके कारण स्वयं मानव जाति के अस्तित्व पर प्रश्नचिन्ह लग गया है। वर्तमान पीढ़ी का आने वाली पीढ़ी के साथ यह एक बहुत बड़ा अन्याय है कि भविष्य की आगे आने वाली मानवीय पीढ़ियो को अपने पूर्वजों से विरासत में प्राकृतिक संसाधनो से रहित पृथ्वी तो मिलेगी ही साथ ही उसे जल प्रदुषण, वायु प्रदुषण जैसी समस्याओ से भी जूझना पडेगा। पर्यावरण के इसी गंभीर संकट को दृष्टिगत रखते हए आज समस्या समुदाय में पर्यावरण सरंक्षण के प्रति जनचेतना का जागरण हुआ है। पर्यावरण को सुरंक्षित व सरक्षित रखने के लिए विश्व स्तर पर अनेक सम्मेलन गोष्ठियो का आयोजन किया जा रहा है। संयुक्त राष्ट्र द्वारा वर्ष 1994 को पर्यावरण चेतना वर्ष के रूप में मनाया गया।

पर्यावरण नैतिकता – प्रमुख मुद्दे तथा संभावित समाधान – वर्तमान समय में पर्यावरण के सरक्षंण एवं सुरक्षा के सबंध विश्वव्यापी जागरूकता का अनुभव किया जा रहा है। विश्व की तेजी से बढ़ती जनसंख्या नगरीकरण, औद्योगीकरण तथा तकनीकी क्रांति के कारण विश्व में पर्यावरण प्रदूषण संसाधनो का अविवेकपूर्ण, विदोहन, जगंली जैव प्रजातियों की घटती संख्या, जलवायु परिवर्तन तथा पीने योग्य जल की कमी ऐसी अनेक पर्यावरण समस्याएँ है। जिनसे पृथ्वी के समूचे जैव पर्यावरण पर खतरा उत्पन्न हो गया है। यही कारण है कि विश्वभर में पर्यावरण संरक्षण संबधी अनेक कार्यक्रमों व आन्दोलन का संचालन वर्तमान समय में हो रहा है। वस्तुत: इन कार्यक्रमों व आन्दोलन का एक मात्र लक्ष्य मानव जाति को उत्तम पर्यावरण गुणवत्ता को उपलब्ध कराना रहा है। इसके साथ, ही विश्व के विभिन्न देशो मे पर्यावरण प्रबंधन एवं सरंक्षण की दृष्टि से अनेक अधिनियम लागू कर रखे है।

पर्यावरण नीति से संबधित प्रमुख बिन्दु निम्नलिखित है–

1. पर्यावरण के विभिन्न घटकों को प्रदूषित होने से बचाना।
2. मानव की पर्यावरण प्रदूषण से रक्षा।
3. विलुप्तशील प्रजातियो का सरंक्षण।
4. विभिन्न सरकारी और गैर सरकारी संस्थाओं में पर्यावरण प्रबंध हेतु समन्वय बनाना।
5. विकास योजनाओं का पर्यावरण प्रभाव के दृष्टिकोण से विश्लेषण करना।
6. पर्यावरण सबंधी राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय नीति निर्धारण में सहयोग प्रदान करना।
7. पर्यावरण की गुणवत्ता बनाए रखने हेतु निरन्तर पुनरीक्षण हेतु व्यवस्था करना।
8. पर्यावरण संरक्षण एवं प्रबंधन हेतु पर्याप्त मानवीय एवं संस्थागत साधनों को जुटाना।
9. पर्यावरण चेतना जागृत करना तथा पर्यावरण शिक्षा का प्रसार करना।
10. प्रबंधन हेतु किये गये उपायो के परिणामों की सतत् जांच एवं सुधार।
11. पर्यावरण नियोजन हेतु प्रारूप तैयार करना।
12. पर्यावरण के विभिन्न पक्षो पर शोध कार्यो को बढ़ावा देना। वास्तव में पर्यावरण प्रबंधन नीति वर्तमान युग की महती आवश्यकता है। अत: इस पर समुचित ध्यान देना आवश्यक है।

पर्यावरण संरक्षण हेतु सन्देश

निष्कर्ष – मनुष्य अपने जीवित रहने एवं सुख–साधनों की वृद्धि हेतु जिन प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग करता है, वे सब पर्यावरण के प्रमुख एवं महत्वपूर्ण घटक है। भूमि, जल, वायु, खनिज, वन्यजीव एवं वनस्पतियां, ऊर्जा तथा ताप आदि एवं समस्त जैव एवं अजैव तत्व मिलकर पर्यावरण का निर्माण करते है। विकसित देशों ने इन तत्वों को चरम सीमा तक प्रयोग किया है, जबकि प्राकृतिक संसाधनों की प्रचुरता वाले कतिपय अल्पविकसित देशों ने अपने पर्यावरणीय संसाधनो का एक अंश ही विदोहन है। उल्लेखनीय है कि विश्व के देशों में कतिपय प्राकृतिक संसाधनों का वितरण भी समान नहीं है। किसी देश में खनिजों के विपुल भण्डार है, तों कहीं जल संसाधन की प्रचुरता है। इन संसाधनों के बल पर ही इन देशों ने पर्याप्त प्रगति की है। जापान के 70 प्रतिशत वन तथा कनाडा के 46 प्रतिशत वन क्षेत्र ने इन देशों को समृद्ध बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। अरब देशों में उपलब्ध खनिज तेलों के विपुल भण्डार ने इन देशों का धनवान राष्ट्रों की श्रेणी में खड़ा कर दिया है। इसी तरह दक्षिणी अमेरिका की अमेजन नदी तथा अफ्रीका

की नील नदी ने अपने किनारे बसने वाले लोगों का समृद्धशाली बनाया है।

विभिन्न देशों को समृद्धशाली बनाने वाले प्रकृति के नि:शुल्क उपहार इन प्राकृतिक संसाधनों को इस तरह उपयोग किए गजाने की आवश्यकता है ताकि पर्यावरण का संतुलन बना रहे तथा इसमें क्षरण अथवा विघटन की समस्या न उत्पन्न हों। इस दृष्टि से पर्यावरण के विभिन्न अवयवों जैविक एवं अजैविक तत्वों की संरक्षा, सुरक्षा एवं संरक्षण की आवश्यकता है।

सुझाव – पर्यावरण संरक्षण बेहतर जीवन के लिए आवश्यक है। पर्यावरण मनुष्य को शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ प्रदान कर सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक विकास के लिए अभिप्रेरित करता है। अत: आर्थिक विकास एवं पर्यावरण संरक्षण हेतु सुझाव इस प्रकार है–

1. भारतीय संस्कृति के संरक्षण हेतु युवा पीढ़ी को जागृत किया जाए।
2. प्राथमिक शिक्षा में भारतीय संस्कृति एवं नैतिक मूल्यों का समावेश किया जाना चाहिए।
3. जन जागृति द्वारा पर्यावरण सहजने हेतु लोगों की मनोवृत्ति बनाना आवश्यक है।
4. पर्यावरणीय संसाधनों का दोहन उस सीमा तक किया जाए जिस सीमा तक उनमें प्राकृतिक रूप से वृद्धि होती है।
5. 'पेड़ अधिक और मानव कम' की धारणा को सार्थक बनाना होगा।
6. अधिक उपभोग की संस्कृति का त्याग कर वस्तुओं का उपभोग हिफाजत से किया जाना चाहिए जिससें प्राकृतिक संसाधनों पर दबाव कम हों।
7. औद्योगिक संस्थाओं में वायु प्रदूषण संरक्षण अधिनियम का कठोरता से पालन किया जाना चाहिए तथा पालन न करने पर कठोर दंड की व्यवस्था होना चाहिए।
8. पुन: उत्पादनीय ऊर्जा तकनीक का अधिक उपयोग किया जाना चाहिए।
9. विकास योजनाओं का पर्यावरणीय प्रभाव के दृष्टिकोण से विश्लेषण कर उन्हें सही ढंग से क्रियान्वित किया जाना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. विकास और पर्यावरण का अर्थशास्त्र – डॉ. माया राठी एवं डॉ. नुजहत जमा – म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल 2016
2. पर्यावरणीय अध्ययन – प्रोफेसर त्रिभुवन नाथ शुक्ल – म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल 2016
3. विकास औंर पर्यावरण का अर्थशास्त्र – डॉ. जे.पी. मिश्रा – साहित्य भवन पब्लिकेशन आगरा।
4. सामान्य ज्ञान – आनन्द कुमार पाण्डेय एवं अर्चना पाण्डेय – म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल 2016
5. समाचार पत्र दैनिक जागरण 6 फरवरी 2016
6. राष्ट्रीय शोध सेमीनार बड़वानी 9,10 सितम्बर 2016

****

वस्तु एवम् सेवा कर-ऐतिहासिक आर्थिक सुधार का माध्यम

डॉ. डी. सी. कुमरावत * शिखा कुमरावत **

प्रस्तावना –वस्तु एवं सेवा कर को इस दशक का सबसे अहम् आर्थिक सुधार माना जा रहा है। इस कर के लागू हो जाने के बाद वस्तुओं और सेवाओं पर लगने वाले अलग अलग सभी कर एक ही कर में समाहित हो जाएगें, जिससे पूरे देश में वस्तुओं और सेवाओं की कीमतों में एकरूपता आएगी, उत्पादन लागत घट जाएगी और उपभाक्ताओं को अपनी जरूरत का सामान कम दर पर प्राप्त होने लगेगा। एक अनुमान के अनुसार अप्रत्यक्ष कर की इस नई व्यवस्था से सरकार को लगभग 60 करोड़ लाख रूपयों का फायदा होगा।

वस्तु एवं सेवा कर दो स्तरों पर लागू होगा–एक केन्द्रीय वस्तु एवं सेवा कर होगा और दूसरा राज्य सेवा कर होगा। इस व्यवस्था से पूरा देश एकीकृत बाजार में तब्दील हो जाएगा और अधिकांश कर इस वस्तु एवं सेवा कर में समाहित हो जाएगें।

वस्तु एवं सेवा कर को 1947 के बाद सबसे बड़ा आर्थिक सुधार माना जा रहा है। हमारे देश में सर्वप्रथम 2006–07 के आम बजट पहली बार इस कर का जिक्र किया गया था, लेकिन उस समय राजनीतिक दलों में सर्वानुमति नहीं हो पाने के कारण यह विधेयक अधिनियम का रूप नहीं ले पाया। केन्द्र में मोदी सरकार के पदभार ग्रहण करने के बाद इस विधेयक को दोबारा लोकसभा में पेश किया गया और उसे 37 के मुकाबले 352 मतों से पारित कर दिया गया। लेकिन राज्य सभा में सरकार के लिए इस विधेयक को पारित कराना एक चुनौती से कम नहीं था। राज्य सभा में सरकार के पास पर्याप्त बहुमत नहीं होने से विपक्षी दलों का इस मुद्दें पर सहयोग प्राप्त करना जरूरी था।

इसलिए सरकार द्वारा विपक्ष द्वारा सुझाए गए संशोधनों को मंजूरी देकर और उनके द्वारा उठाई गयी आशंकाओं का समाधान कर इस विधेयक के राज्स सभा में पारित होने का मार्ग प्रशस्त कर दिया, और इस तरह संविधान (122 वाँ संशोधन) विधेयक, 2014 राज्य सभा में सर्वसम्मति से पारित हो गया। पूर्व में यह वस्तु एवं सेवा कर अधिनियम 01, अप्रैल, 2016 से सम्पूर्ण देश में लागू किया जाना प्रस्तावित था, लेकिन अब यह अधिनियम जुलाई, 2017 से लागू किया जाना प्रतावित है।

वस्तु एवं सेवा कर एक ऐसा कर है, जो राष्ट्रीय स्तर पर किसी वस्तु या सेवा के उत्पादन, बिक्री और उपयोग पर लगाया जायेगा। इस कर के लागू होने के बाद चुंगी, सेंट्रल सेल्स टेक्स (सीएसटी), राज्य स्तर के कर जैसे सेल्स टेक्स या वैट, एण्ट्री टेक्स, स्टॉम्प ड्यूटी, टेलीकॉम लायसेंस फीस, टर्न ओव्हर टेक्स, बिजली के इस्तेमाल या बिक्री पर लगने वाले टेक्स, ट्रान्सपोर्टेशन टेक्स इत्यादि खत्म हो जाएगें। केंद्रीय वित्त मंत्री श्री अरूण जेटली के अनुसार जी एस टी पर केन्द्र की सभी राज्य सरकारों के साथ सहमति बन गई है,जिससे यह धारणा और विश्वास पुख्ता हुआ है कि पूरे भारत को एक समान बाजार बनाने के उद्देश्य से 01जुलाई, 2017 से इस अधिनियम के लागू होने में कोई समस्या नहीं आएगी। केन्द्र और राज्य सरकारें इस बात पर सहमत हो गयी है कि वस्तु एवं सेवा कर के तहत चार दरें क्रमश: 5, 12, 18, और 28 प्रतिशत प्रवर्तनीय रहेगी। दैनिक उपयोग की वस्तुऐं मँहगी ना हो, राजकोषीय आय में भी कमी ना हो और साथ ही कर का ढाँचा सरल हो, इसी मकसद से जी एस टी परिषद ने वस्तु एवं सेवा कर की उपर्युक्त चार दरों को मंजूरी दी है।

दैनिक उपयोग की वस्तुओं पर 5 प्रतिशत ही कर लगेगा। साथ ही खाद्यान्न जैसी अति आवश्यक वस्तुओं को शून्य कर के दायरें में रखा गया है। इससे निम्न आय वर्ग को राहत तो मिलेगी ही साथ ही, मुद्रा स्फीति को नियंत्रित करने में मदद मिलेगी। साबून, तेल, शेविंग स्टिक, टूथपेस्ट आदि वस्तुओं पर 18 प्रतिशत की दर से कर लगेगा। वस्तु एवं सेवा कर की अधिकतम दर के दायरें में टी.वी.,फ्रीज, वाशिंग मशीन, लक्ज़री कारें, तम्बाखू उत्पाद, कोल्ड ड्रिंक्स् जैसे डिमेरिट गुड्स आएगें,।उन पर 28 प्रतिशत कर लगेगा और साथ ही, उन पर पूर्व वत उपकर (सेस) भी लगेगा।

वित्त मंत्री के अनुसार राज्य स्तर पर लगाए गए करों की समाप्ति से राज्य सरकारों को जो राजस्व की हानि होगी, उसकी पूर्ति केन्द्र सरकार द्वारा की जाएगी। वस्तु एवं सेवा कर विधेयक में दी गई मौजूदा व्यवस्था के अनुसार केन्द्र सरकार राज्यों को प्रथम तीन वर्ष 100 % , चौथे वर्ष 75% और पाँचवें वर्ष 50 % भरपाई करने का प्रावधान किया गया है। केन्द्रीय वित्त मंत्री श्री अरूण जेटली के अनुसार केन्द्रीय जी एस टी (आई–जी एस टी) एकीकृत जी एस टी कानून के अंतिम मसौदें को मंजूरी दे दी है और राज्य जी एस टी (एस–जी एस टी) तथा केन्द्र शासित जी एस टी कानून को मार्च 2017 मंजूरी मिल जाने की सम्भावना हैं। जी एस टी परिषद की बैठक में यह फैसला लिया गया कि 50 लाख सालाना कारोबार करने वाले छोटें होटलों, रेस्त्राओं, ढाबों को 5 प्रतिशत की दर से कर देना होगा। जी एस टी से प्राप्त राजस्व को केन्द्र और राज्य सरकारों के मध्य बराबर बाँटा जायेगा।

जहाँ तक मध्य प्रदेश का सम्बन्ध है, जी एस टी के लिए प्रदेश के 87.59 प्रतिशत व्यापारियों ने अपना पंजीयन करा लिया है। जी एस टी के लिये पंजीयन करने वाले प्रमुख शहरों की स्थिति निम्नानुसार है– **(देखे आगे पृष्ठ पर)**

मध्य प्रदेश के वित्त मंत्री श्री जयन्त मलैया द्वारा विधान सभा में दिए जवाब के अनुसार 14 फरवरी, 2017 तक प्रदेश में 2,44,210 व्यापारियों

*** विभागाध्यक्ष (कम्प्यूटर एप्लीकेशन) शहीद भीमानायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत**
**** अतिथि विद्वान (व्यवसाय प्रबन्धन्) शहीद भीमानायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत**

को लॉग इन किया, जिसमें से 2,13,921 व्यापारियों द्वारा इसे एक्टिवेट करवा लिया गया हैं।

कर ढाँचें में सुधार की दिशा में वस्तु एवं सेवा कर (जी एस टी) अधिनियम को ऐतिहासिक एवं साहसिक कदम माना जा रहा है, लेकिन इसके बावजूद उपर्युक्त अधिनियम को अविवादास्पद नहीं माना जा सकता है। जी एस टी की चार दरों के सम्बन्ध पूर्व वित्त मंत्री श्री यशवंत सिन्हा का कहना है कि ज्यादा कर की दरें रखने से कर अपवंचन की आशंका को बढ़ावा मिलेगा। इससे करदाताओं के मन में यह प्रवृत्ति जोर पकड़ेगी कि हम 5 प्रतिशत के दायरें में ही क्यों न रहें, क्यो 12 प्रतिशत या अधिक दर से कर का भुगतान करें ? इससे कानूनी मामले बढ़ने की आशंका प्रबल होगी।

वर्तमान में वेट, सर्विस टेक्स या एक्साईज ड्यूटी के मामलों में तिमाही रिटर्न भरा जाता है। लेकिन जी एस टी के लागू हो जाने के बाद करदाताओं को प्रतिवर्ष 61 रिटर्न फार्म दाखिल करने होगें, जिससे व्यापारियों को अधिक रिकार्ड रखना होगा और उनका आफिस एवं वैधानिक व्यय भी बढ़ जायेगा, जिसका भार अंतत: उपभोक्ताओं को ही वहन करना होगा।

जी एस टी से प्राप्त राजस्व को केन्द्र और राज्य सरकारों के मध्य बराबर बाँटा जाना प्रस्तावित है। ऐसी स्थिति में प्रशासनिक समस्याऐं उठ खड़ी होगी। यदि टर्न ओव्हर के आधार पर व्यापारियों को बाँटा जाता है और 1.5 करोड़ टर्नओव्हर वाले मामले राज्य सरकारों के सुपुर्द किये जाते है तो भी केन्द्र सरकार राजनीतिक या अन्य कारण से 1.5 करोड़ से अधिक कारोबार के आधार पर रेड डाल सकती है। इससे केन्द्र और राज्य सरकारों के मध्य विवाद का स्थिति उत्पन्न हो सकती है।

पेट्रोलियम पदार्थ, शराब आदि पर कर को जी एस टी के दायरे से बाहर रखा गया है। इन पर राज्य सरकारों को कर लगाने का अधिकार होगा। ऐसी स्थिति में अलग अलग राज्य अलग अलग दरों से कर का निर्धारण करेगें, जिसके कारण 'एक कर–एक देश' की मूल अवधारणा ही समाप्त हो जाएगी। ऐसी स्थिति में जी एस टी लागू होने के बाद भी

उपर्युक्त उत्पादों की समान दर के अभाव में अलग अलग राज्यों में कीमतें अलग अलग बनी रहेगी।

उपर्युक्त समस्याओं को यदि केंद्रीय और राज्य सरकारें आपसी सहमति के आधार पर दूर कर लेती है तों कर सम्बन्धी विसंगतियों को दूर कर पूरे भारत में 'एक देश–एक कर' की अवधारणा को साकार किया जा सकेगा – इसमें कोई संदेह नही हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. GST LAW IN INDIA BY AGRAWAL, PUNIT, ATHENA LAW ASSOCIATES.
2. A HAND BOOK FOR GST IN INDIA (E-BOOK) 3rd edition
3. GST LAW AND ANALYSIS WITH CONCEPTUAL PROCEDURES – BIMAL JAIN & ISHA BANSAL
4. NEWS PAPERS

क्र.	शहर का नाम	व्यापारियों की संख्या, जिन्हें लॉग इन किया	व्यापारियों की संख्या, जिन्होंने लॉग इनएक्टीवेट करवा लिया
1.	इन्दौर	37,036	33,095
2.	भोपाल	18,019	15,817
3.	ग्वालियर	13,466	11,828
4.	जबलपुर	12,911	11,711
5.	हरदा	02,073	02,069

स्रोत–दैनिक नई दुनिया (04 मार्च, 2017)

****

म.प्र. में कृषि आधारित प्रमुख उद्योगों की आधुनिक प्रवत्तियाँ और संभावनाएँ

डॉ. पी. सी. काशिव *

प्रस्तावना – सर्वेक्षण के आधार पर कृषि आधारित उद्योगों की स्थापना की संभावनाएं– म.प्र. में कृषि आधारित औद्योगिक विकास की अपार संभावनाएँ हैं। हमारे प्रदेश में जहॉ एक ओर प्राकृतिक सम्पदाएं उपलब्ध है, वही जनशक्ति का भी अभाव नहीं हैं। बढ़ती हुई जनसंख्या का दबाव कृषिभूमि पर सतत् बढ़ता जा रहा हैं। ऐसी स्थिति में ग्रामीण औद्योगिकरण की नीति पर आधुनिक परिप्रेक्ष्य में नए सिरे से एवं सही दृष्टि से विचार किया जाना आवश्यक है।

प्रारंभिक चरण में ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि एवं वनोपज पर आधारित लघु मध्यम एवं बड़ी तथा पायोनियर इकाईयों की स्थापना को प्राथमिकता दी जानी चाहिए ताकि ग्रामीण परिवेश में उपलब्ध कच्चे माल का लाभप्रद उपयोग संभव हो सके।

प्रदेश में अभी तक हुए सर्वेक्षण के आधार पर कृषि आधारित उद्योगों की सम्भावनाओं की स्थिति निम्नानुसार हैं। (तालिका देखे आगे पृष्ठ पर)

मध्यप्रदेश, भारत का विपुल शक्ति संपन्न प्रदेश है। सिंचाई पर आधारित परिवर्तनशील कृषि की संभावनाए पर्याप्त है। अनेक कृषि उद्योगों की स्थापना की गई है और आवश्यकता भी है। कृषि उत्पादन अधिक होने क कारण कृषि पर आधारित उद्योगों के विकास की संभावनाएं अधिक विद्यमान हैं। कृषि उपज, कृषि अवशिष्ट तथा कृषि उद्योगों के उप–उत्पादों की उपलब्धता और कृषि उत्पादन को कायम रखने के लिए आवश्यकताओं के आधार पर लघु एवं मध्यम पैमाने के कृषि उद्योगों की भी भावी सम्भावनाए विद्यमान हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. विकास की दस्तक अपेक्स बैंक म.प्र. राज्य सहकारी बैंक मर्यादित।
2. उन्नत कृषि।
3. कुरूक्षेत्र– ग्रामीण विकास मंत्रालय।
4. म.प्र. विकास वार्षिकी – श्रीमति कमला कुंदा प्रकाशन।
5. उद्यमिता समाचार।

म.प्र. में कृषि आधारित उद्योगों की सम्भावनाएं।

क्षेत्रफल – लाख हेक्टेयर
उत्पादन –लाख मैट्रिक टन

क्र	फसल	उत्पादन से संबंधित प्रमुख जिले जिनमें संभावित प्रक्रिया – इकाईयॉ	संबंधित जिलों में प्रमुख फसलों का कुल क्षेत्रफल	उत्पादन	प्रस्तावित इकाई की क्षमता	प्रकार	उत्पादन का नाम
	(ए) अनाज						
1.	धान	बालाघाट, सिवनी, जबलपुर, मंडला	33.93	33.46	मध्यम एवं बड़ी	चावल मिल	परिष्कृत चावल, पोहा आदि
2.	गेहूँ	विदिशा, टीकमगढ़, सागर सतना, गुना, होशंगाबाद हरदा, रायसेन, सीहोर	11.69	12.41	मध्यम	आटा मिल	आटा, मैदा दलिया, सूजी
3.	मक्का	राजगढ़, मंदसौर छिंदवाड़ा धार, मंडला, गुना	3.46	7.05	लघु	फ्लोर मिल	आटा फ्लेक्स फार्म
4.	जौ	सीधी, भिंड, छतरपुर	0.89	0.76	लघु	जौ मिल	बिस्लेरी वाटर, मदिरा
5.	ज्वार	मुरैना, शिवपुरी, उज्जैन	7.27	8.94	लघु	फ्लोर मिल	आटा, मुरमुरा
	(बी)						
1.	दलहन चना	मंदसौर, गुना, भिंड, विदिशा, रायसेन, नरसिंगपुर, होशंगाबाद	7.43	4.80	मध्यम	दाल मिल	दाल, बेसन

* प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय ला. बहा. शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सिरोंज, जिला – विदिशा (म.प्र.) भारत

2.	तुअर	छिंदवाड़ा, होशंगाबाद नरसिंगपुर, रायगढ़	1.07	1.44	मध्यम	दाल मिल	दाल
3.	सोयाबीन	होशंगाबाद, हरदा, छिंदवाड़ा इंदौर, देवास, सीहोर, बैतूल, सागर, धार, नरसिंगपुर, उज्जैन	18.14	15.45	मध्यम व बड़ी	सोया मिल	आटा, केक, दूध, प्रोटीन, बिस्किट, बड़ी आदि
4.	मूंगफली	छिंदवाड़ा, मंदसौर, शिवपुरी, खरगौन, खंडवा, राजगढ़	1.86	1.31	मध्यम	तेल मिल	दाना, खली, तेल
5.	सरसो	भिंड, मुरैना	2.14	2.08	मध्यम एवं बड़ी	तेल मिल	तेल, खली
1.	(सी) फल आम	जबलपुर, रीवा, सतना हरदा, होशंगाबाद, इंदौर	0.16	1.43	लघु, मध्यम	ज्यूस, जैम, अमचूर, स्क्वेश	ज्यूस, जैम, अचार, अमचूर, स्क्वेश इकाई
2.	अमरूद	हरदा, होशंगाबाद, बाबई, विदिशा, टीकमगढ़	0.05	0.87	लघु, मध्यम	जैम, जैली मुरब्बा	जैम, जैली, मुरब्बा
3.	पपीता	खरगोन, खंडवा	0.002	0.02	लघु, मध्यम	जैम, ज्यूस	जैम, पपेन पैप्टीन, पल्प
4.	संतरा (डी)	छिंदवाड़ा, बैतूल, मंदसौर	0.05	0.87	मध्यम	ज्यूस, स्क्वेश	ज्यूस, स्क्वेश
1.	सब्जियां एवं मसाले	इंदौर, छिंदवाड़ा	0.14	1.85	मध्यम	निर्जलीकरण	आटा, चिप्स, पेस्ट, स्टार्च
2.	आलू	छिंदवाड़ा, सागर, सतना, हरदा, होशंगाबाद	0.07	1.00	मध्यम	सॉस, स्क्वेश केचप	सॉस, स्क्वेश केचप
3.	टमाटर	खंडवा, खरगौन, इंदौर मंदसौर	0.06	0.68	लघु	निर्जलीकरण इकाई	प्याज, पावडर, अचार, बिनेगर
4.	प्याज	छिंदवाड़ा, इंदौर, देवास	0.03	0.38	लघु	निर्जलीकरण	अचार फास्टफूड
5.	फूलगोभी	शहडोल, टीकमगढ़, हरदा	0.004	0.003	लघु	निर्जलीकरण	हल्दी पावडर
6.	हल्दी	खरगोन, धार, रतलाम	0.31	0.07	लघु	निर्जलीकरण	आचार सुखी मिर्च
7.	अदरक	छिंदवाड़ा, खरगौन,	0.01	0.03	लघु	निर्जलीकरण	सौंठ, पावडर, अचार
8.	लहसुन	मंदसौर, छिंदवाड़ा बालाघाट, उज्जैन, रतलाम देवास, शाजापुर, सीहोर राजगढ़, इंदौर, झाबुआ	0.16	0.56	लघु	पावडर, फ्लेग	पावडर फ्लेग
		मंदसौर, शाजापुर, गुना मुरैना, विदिशा	0.47	0.18	लघु	निर्जलीकरण पावडर इकाई	सुखा धनिया, तेल
9.	धनिया	खंडवा, खरगौन, देवास	3.33	2.25	मध्यम एवं बड़ी	जीनिंग, बीविंग	रूई, कपड़ा धागा, बिनोला
10.	(ई) कपास						

****

नोट बंदी से कैशलेश की ओर बढ़ते कदम

डॉ. पी. पी. पाण्डेय *

प्रस्तावना – भारत में बढ़ते भ्रष्टाचार एवं आतंकवाद से निपटने के लिए (कालेधन) की सामान्तर अर्थव्यवस्था से निवटने के लिए 08 नवम्बर 2016 को देश के प्रधानमंत्री द्वारा लिया गया फैसला ऐतिहासिक एवं देश में अफरा–तफरी भरा रहा है। जिसकी सराहना राष्ट्रपति महोदय ने संसद में अपने अभिभाषण में कहीं है। चुनाव नामक महायज्ञ में कालेधन का सबसे बड़ा योगदान रहता है। जिसे वित्तमंत्री ने पार्टियों को मिलने वाली नकद राशि केवल 2000 रू. तक रहेगी शेष चेक या अन्य साधनों से पार्टी फण्ड में चन्दा दिया जा सकता है। यह एक सराहनीय कदम है। नोटबन्दी से गरीबो और आम नागरिको के कन्धे का सहारा लेकर नेताओं ने खूब आन्दोलन चलाए इसमें आम व्यक्तिओं की 125 मौते विभिन्न राज्यों में दर्ज की गई। किसान, श्रमिक, व्यापारी छोटे एवं मध्यम श्रेणी के परेशान रहे जिन्हें बच्चों की शादी के लिए 02.05 लाख की सीमा रही, किसान खाद पानी रासायनिक दवाओं को लेकर परेशान रहा, श्रमिक को बडे पैमाने पर कारखानों से निकाल दिया गया लेकिन वह पपीहे की तरह यह आस लगाए रहा कि शायद उसके खाते में वह काले धन का कुछ हिस्सा मिल जाए शायद अभी तक नही हो सका। भारत की जी0डी0पी0 एकदम से 5.7 प्रतिशत नवम्बर में रही किन्तु दिसम्बर में नोट की पर्याप्तता धीरे–धीरे होने पर 6.5 प्रतिशत दिसम्बर में रही है। हमारे देश में FDI (प्रत्यक्ष विदेशी निवेश) में गिरावट दर्ज की गई। वर्तमान माह में कुछ अर्थव्यवस्था में तेजी से सुधार प्रारम्भ हो गया है।

यह एक सुखद अनुभूति है। देश के जी0डी0पी0 में आंशिक वृद्धि दर्ज की गई है केवल आटोमोबाइल क्षेत्र को छोड़कर शेष सभी क्षेत्रों में वृद्धि दर्ज की गई है। नोट बन्दी के पक्ष एवं विपक्ष में बहुत सारे दल खड़े मिले यह एक चिन्ता का विषय रहा है लेकिन कभी ये राजनैतिक दल बस स्टैण्ड, रेल, राशन की दुकान, स्वाथ्य विभाग में लंबी–लंबी लाइनों में खड़ा मिलता है तब इनके दुखों को जानने का किसी राजनैतिक दल ने प्रयास नहीं किया है। तो फिर नोट बन्दी में क्यों ?, जनता ने अपार धैर्य एवं क्षमता का परिचय दिया है। किसी तरह की अप्रिय घटना देश में घटित नहीं हुई बल्कि इसकी सर्वत्र सराहना हुई है।

भारत समाज कैशलेस की ओर – विश्व में अधिकांश देशों में नकदी चलन नाममात्र 10 प्रतिशत से भी कम रहा है। हमारे देश में यह 80 प्रतिशत के आस–पास है। नकदी लेन–देन भ्रष्टाचार को जन्म देता है। नकदी लेन–देन जितना कम होगा राष्ट्र को उतना अधिक लाभ होगा, गैर नकदी लेन–देन से भारतीय अर्थव्यवस्था में अप्रितिम सुधार होगा। नकदी को दूसरे विकल्प में डालने से रोजगार की संभावनाए बढ़ती है। नकदी बाजार के सिकुडने के साथ ही मोबाइल बाजार और कार्ड व्यापार में तेजी से वृद्धि हुई है। यह फायदा ही फायदा का फण्डा बना है।

सारिणी

नकद लेन–देन	नकद रहित लेन–देन वाले देश	प्रतिशत
भारत	–	85
	फ्रान्स	92
	कनाडा	90
	ब्रिटेन	89
	स्वीडन	89

कैशलेश से प्रत्यक्ष फायदे –

1. काला बाजारी एवं भ्रष्टाचार से रोक लगेगी ईमानदारों के साथ न्याय होगा।
2. वैधमुद्रा चलन में आने से बैंकिगं व्यवस्था में सुधार होगा एवं राजस्व में वृद्धि होगी।
3. जो मुद्रा अब तक बैंकिगं व्यवस्था से बाहर थी, उसे बैंक में जमा होने से इन जमा राशि को पुनर्जीवन मिलेगा इससे गरीबो को कल्याणकारी योजनाओं को फायदा मिलेगा, रोजगार के साधन उपलब्ध होगे।
4. काले धन की समग्र राशि बैंक में आने से प्रत्यक्षकरों की कमी आने से आम नागरिक को लाभ होगा।
5. कालाबाजारी एवं भ्रष्टाचार कम होने से हमारे राष्ट्र की छवि सुधरेगी व विदेशी निवेश में वृद्धि होगी।

परोक्ष लाभ –

1. आतंकवाद पर लगाम लगेगी।
2. जाली मुद्रा का खत्मा होगा।
3. पड़ोसी देशों से हवाला करोबारियों पर रोक लगेगी।
4. ड्रगमाफिया देश के अन्दर छुपे गद्दारों को पहचानने में मदद मिलेगी, आर्थिक दर में काफी वृद्धि होगी।
5. संदिग्ध लेने–देन में कमी आएगी।

भारत में पिछले दो दशको में सरकार एवं बैकों द्वारा ऐसे कदम उठाये गए है। जिससे कम नकद वाली अर्थव्यवस्था की ओर बढ़ने में मदद मिलेगी जिसकी सुख्यात ऊँचे मूल्य वर्ग के नोटों और डेबिट कार्ड के प्रचलन से हुई है। इसी कड़ी में सरकार द्वारा जन–धन योजना के जरिए 41.23 करोड़ जमा हुये 45 दिनों में डिपाजिट दो गुना से ज्यादा बढकर 87000 करोड़ रू. हो गया है। भारत में सिर्फ 24.04 लाख आयकर दाताओं ने अपनी वार्षिक आय 10 लाख रू. घोषित की गई है। लेकिन देश में हर साल 25 लाख नई कारो की खरीद होती है। इनमें से 35000 लग्जरी कारे होती है। आयकर विभाग के अनुसार 125 करोड़ से ज्यादा लोगों के देश में सिर्फ 03.65

* विभागाध्यक्ष (वाणिज्य) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, अमरपाटन, जिला–सतना (म.प्र.) भारत

करोड़ लोगों ने 2014-15 में आई.टी. रिटर्न फाइल किया। देश में ऐसे बहुत से लोग है जिसकी आय अधिक है लेकिन वे टैक्स के दायरे से बाहर है।

निष्कर्ष- नोटबन्दी (विमुद्रीकरण) हमारी भावी अर्थव्यस्था के लिए लिया गया उचित कदम है हॉ यह अवश्य इतने बडे जनसंख्या के लिए उचित तैयारी का अभाव रहा। सरकार द्वारा जैसे-जैसे पैन्ट कड़ा होता गया उसे ढ़ीला करने का प्रयास किया गया। लेकिन यह भ्रष्टाचार काला बाजारी में नित-नए लाखों करोड़ों की सम्पत्ति जप्त होने से आने वाले दिनों से आर्थिक स्वच्छता से भारत का मान बढ़ेगा। चुकि सरकार अब कैशलेस की ओर कदम बढ़ा चुकी है, इससे परिणाम सुखद मिलेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना से महिलाओं को मिला सम्मान

डॉ. विजय ग्रेवाल * अंजली ओहरिया **

प्रस्तावना – प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी की अध्यक्षता में आर्थिक मामलों पर मंत्रीमंडलीय समिति ने बीपीएल परिवारो की महिलाओं को नि:शुल्क एलपीजी कनेक्शन प्रदान करने वाली प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना को 1 मई 2016 को अपनी अनुमति दे दी है। योजना का शुभारंभ प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी ने उत्तरप्रदेश के बलिया जिले से किया। और मध्यप्रदेश में उज्ज्वला योजना का आरम्भ 4 जुलाई 2016 को किया गया। योजना के अन्तर्गत बीपीएल परिवारो को पॉच करोड़ एलपीजी कनेक्शन प्रदान करने के लिए आठ हजार करोड़ (8,000 करोड़)रुपए का प्रावधान किया गया है और प्रत्येक बीपीएल परिवार को एलपीजी कनेक्शन के लिए 1,600 रुपए वितीय सहायता प्रदान की जाएगी।

ग्रामीण महिलाओ को लकडियों पर खाना बनाने से उठता धुँआ फेफड़ों मे जाता था, जिससे फेफड़ें से सम्बन्धित व अन्य बीमारियों से ग्रस्त हो जाया करती थी। लकड़ियों से निकले धुंए से बर्तन काले हो जाते थे और भोजन बनाने में वक्त भी बहुत लगता था। बरसात मे तो लकड़ियों में सीलन लगने से और अधिक परेशानी हुआ करती थी,और सिर पर भारी भरकम लकड़ी का गट्ठा के साथ लौटने पर ही भोजन बनाने की तैयारी हो पाती थी। और गाँव से दूर जाकर लकडी एकत्रित करने के दौरान जंगली जानवरों का हर समय अंदेशा बना रहता था लेकिन महिलाओं को अब इन सारी परेशानियों से निजात मिल गई है।

योजना के अन्तर्गत भारत सरकार अगले 3 साल में 5 करोड़ बीपीएल परिवारों को मुक्त में एलपीजी कनेक्शन उपलब्ध कराएगी। वर्तमान वित्तीय वर्ष (2016–17) मे 1.5 करोड़ बीपीएल (गरीबी रेखा से नीचे) परिवारों को एलपीजी कनेक्शन उपलब्ध कराने का लक्ष्य रखा गया है।

योजना का उददेश्य – प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना का उददेश्य पूरे भारत मे स्वच्छ ईधन के उपयोग को बढ़ावा देना है जो कि मुफ्त में एलपीजी कनेक्शन वितरित करके पूरा किया जा सकता है योजना के लागू होने का एक उददेश्य यह भी है कि इससे महिला सशक्तिकरण को बढ़ावा देना और महिलाओं के स्वास्थ कि सुरक्षा करना है।

वर्तमान मे उपयोग में आने वाली अशुद्ध जीवाश्म ईधन के उपयोग को कम करना और शुद्ध ईधन के उपयोग को बढाकर प्रदूषण में कमी लाना भी योजना के प्रमुख लक्ष्यों में से एक है।

प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना के प्रमुख उददेश्य निम्न प्रकार है –

- महिला सशक्तिकरण को बढ़ावा देना।
- बच्चों और महिलाओं में अशुद्ध ईधन के कारण होने वाले रोगों मे कमी लाना।
- भीतरी और वायु प्रदूषण को कम करना।
- जीवाश्म ईंधन के उपयोग के कारण होने वाले वायु प्रदूषण को कम करने में सहायता करना।
- जीवाश्म ईधन पर आधारित खाना पकाने के साथ जुड़े स्वास्थ्य के गंभीर खतरों को कम करना।
- अशुद्ध ईधन पर खाना पकाने की वजह से भारत में होने वाली मौतों की संख्या को कम करना।
- घर के अंदर के वायु प्रदूषण में तीव्र श्वसन की वजह से युवा बच्चों में होने वाली बीमारियों की रोकथाम।

योजना का बजट और वित्त पोषण – भारत सरकार ने योजना के कार्यान्वयन के लिए 800 करोड़ रुपए का बजट बनाया है, जो कि 3 साल के लिए है। वित्त वर्ष 2016–17 के लिए भारत सरकार के वित्त मंत्री अरूण जेटली जी पहले ही 200 करोड रुपए चिन्हित कर चुके है। योजना का वित पोषण अथवा योजना का खर्च होने वाला पैसा एलपीजी सब्सिडी में बचाए गए पैसे से होगा। भारत सरकार द्वारा जनवरी 2015 में शुरु किए गए 'गिव–इट–उप' अभियान के अन्तर्गत अब तक लगभग 1.13 करोड़ लोगों ने सब्सिडी छोड दी है और वो लोग बाजार मूल्य पर एलपीजी सिलिंडर खरीद चुके है। चलाए गए अभियान से अभी तक करोड़ों रुपये कि बचत हो चुकी है, जिसे उज्ज्वला योजना के लिए इस्तेमाल किया जाएगा।

वित्तीय सहायता – योजना के अन्तर्गत भारत सरकार प्रत्येक पात्र एलपीजी कनेक्शन परिवार को 1600 रुपए की आर्थिक सहायता प्रदान करेगी जो की गैस कनेक्शन खरीदने के लिए होगी।

भारत सरकार बीपीएल परिवारों को स्टोव खरीदने और पहली बार सिलिंडर भरवाने के लिए आने वाले खर्च को अदा करने के लिए किस्तो की सुविधा भी प्रदान करेगी।

योजना का कार्यान्वयन – योजना का कार्यान्वयन भारत सरकार के पेट्रोलियम और प्राकृतिक गैस मंत्रालय के अधीन किया जाएगा। इतिहास में पेट्रोलियम मंत्रालय की इस तरह की पहली योजना है जिससे करोड़ों गरीब परिवार की महिलाओं को लाभ होगा। मूल स्तर पर योजना का कार्यान्वयन तेल व्यापार कम्पनियों द्वारा किया जायेगा। योजना वित्त वर्ष 2016–17 से लेकर 2018–19 तक 3 वर्ष के लिए चलायी जायेगी। इस योजना के अन्तर्गत ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में रह रहे परिवार जो की गरीबी रेखा से नीचे है। उन्हे मुफ्त में एलपीजी गैस कनेक्शन उपलब्ध कराया जाएगा।

योजना के लिए पात्रता और चयन प्रक्रिया – पात्र बीपीएल परिवारों की पहचान राज्य सरकारों और केंद्र शासित प्रदेशों के परामर्श से की जाएगी।

* सहायक प्राध्यापक, श्री वैष्णव वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

योजना के अंतर्गत जिन बीपीएल परिवारों के पास योजना के आरम्भ के समय तक एलपीजी कनेक्शन नहीं है, वो इस योजना के लिए आवेदन कर सकते हैं।

लाभार्थी का चयन केवल बीपीएल परिवारों में से ही किया जाएगा। हालाँकि योजना के अंतर्गत एससी/एसटी और दुर्बल वर्ग के लोगों को प्राथमिकता दी जाएगी। एलपीजी कनेक्शन के वितरण के दौरान उन राज्यों को प्रथामिकताा दी जाएगी जहाँ पर राष्ट्रीय अनुपात की तुलना में कम एलपीजी कवरेज कम है।

भारत में रसोई गैस वितरण की वर्तमान स्थिति – पेट्रोलियम मंत्री धर्मेंद्र प्रधान के अनुसार भारत में वर्तमान में 16.64 करोड़ सक्रिय एलपीजी उपभोक्ता हैं। जिनमें से ज्यादातर शहरी और अर्ध शहरी क्षेत्रों में है। गरीब परिवारों तक स्वच्छ ईधन,एलपीजी की पहुँच सीमित है। सरकार ने पिछले एक साल में गरीबों को 60 लाख नए कनेक्शन जारी किए हैं।

भारत 21 लाख टन एलपीजी यानि कि अपनी कुल जरूरत का लगभग 40 प्रतिशत आयात करता है। नए कनेक्शन के साथ आयात भी लगभग 50-55 प्रतिशत तक जाने की उम्मीद है।

योजना के मुख्य बिंदु

क्र.	योजना बिन्दु	विवरण
1	योजना का नाम	प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना
2	शुभारम्भ	1 मई 2016
3	मंत्रालय	पेट्रोलियम और प्राकृतिक गैस मंत्रालय
4	मुख्य उद्देश्य	गरीबी रेखा से नीचे वाले परिवारो को मुफ्त एलपीजी कनेक्शन उपलब्ध कराना।
5	क्या-क्या मिलेगा	एक नया खाली एलपीजी सिलेंडर,एक प्रेशर रेगुलेटर,मुफ्त DGCC पुस्तिका,एक सुरक्षा नली,मुफ्त इंस्टालशन,
6	अन्य उद्देश्य	महिला सशक्तिकरण को बढ़ावा देना बच्चो और महिलाओं में अशुद्ध ईधन के कारण होने वाले रोगो में कमी लाना। भीतरी और बाहरी वायु प्रदूषण को कम करना।
7	लक्ष्य	पाँच करोड (5 करोड) बीपीएल परिवारों को एलपीजी कनेक्शन वितरित करना।
8	समय सीमा	3 साल 2018-19 तक
9	कुल बजट	8,000 करोड (आठ हजार करोड)
10	वितीय सहायता	प्रत्येक बीपीएल परिवार को 1600 रुपए
11	पात्रता	SECC 2011 डाटा।

प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना से लाभान्वित महिलाओं की जानकारी – प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना की प्रारम्भ तिथि 1 मई 2016 से 7 नवम्बर, 2016 तक प्रगति इस प्रकार है –

क्र.	राज्य	कुल कनेक्शन की संख्या (लगभग)
1	मध्य प्रदेश	13 लाख
2	उत्तर प्रदेश	34 लाख
3	राजस्थान	12 लाख
4	बिहार	10.2 लाख
5	पश्चिम बंगाल	7 लाख
6	गुजरात	5 लाख
7	उड़ीसा	4.8 लाख
8	छत्तीसगढ़	3 लाख
9	महाराष्ट्र	2.7 लाख
10	हरियाणा	2 लाख
11	तमिलनाडू	1.4 लाख

निष्कर्ष – गरीबों के घरो में उज्ज्वला योजना के तहत गैस चुल्हा पहुँचने के बाद लोगों के कामकाज में खास बदलाव आया है, पहले घर हा चुल्हा जलाने के लिए ईधन के लिए जंगल में भटकने वाले परिवारों की मुश्किले आसान हो जाने से अब ये लोग घरो में ही रह कर अपनी अतिरिक्त आय के लिए दुसरे कामो को पूरा करने लगे है और महिला सशक्तिकरण को भी बढ़ावा मिला है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. दैनिक भास्कर, इन्दौर।
2. पत्रिका, इन्दौर।
3. रोजगार और निर्माण भोपाल।
4. इंन्टरनेट से प्राप्त विभिन्न आँकड़े व सूचनाएँ।
5. www.pmujjwalayojana.in

****

Indian Rural Market - Opportunities And Challenges

Dr. Anjana Jain *

Abstract - Indian Rural Marketing has always been complex to forecast and consist of special uniqueness. However many companies were successful in entering the rural markets. They proved with proper understanding of the market an innovative marketing idea, it is possible to bag the rural markets. It is very difficult for the companies to overlook the opportunities they could from rural markets. As Two – Thirds of Indian population lives in rural areas, the market is much unexpected for the companies to be successful in rural markets. They have to overcome certain challenges such as Pricing and Distribution. The present paper has been covered to know the rural market status in India, the identification of different Rural Marketing Strategies, to highlight the Opportunities and Challenges of rural marketing in India, to analyze Rural Marketing Strategies Adopted by stated business houses.

Introduction - The Indian rural market is an area of darkness to Indian corporate. Rural area is vast in size but amorphous in detail. And yet, the rural market represents the largest potential market in the country. With over 70% of India s population residing in rural areas, capturing these markets is becoming one of the most lucrative options for all sectors. In the wake of economic crisis, while the urban markets remain subdued due to cash crunch, rural economy has remained largely unaffected. A good harvest has further added to their respite. As a result, marketers are focused on small towns and villages with dedicated workforce. At present, rural consumers spend about USD 9 billion per annum on FMCG items and product categories such as instant noodles, deodorant and fabric, with the pace of consumption growing much faster than urban areas. The fast moving consumer goods market in rural India is tipped to touch by 2025 on the back of "unrelenting" demand driven by rising income levels, according to a study by research firm The Nielsen Company. Also the Indian rural market is set to become a USD 100 billion opportunity for retail spending in the next fifteen years, "according to a statement released by the company. With urban markets getting saturated for several categories of consumer goods and with rising rural incomes, marketing executives are fanning out and discovering the strengths of the large rural markets as they try to enlarge their markets. A survey by the National Council for Applied Economic Research (NCAER), India's premier economic research entity, recently confirmed that rise in rural incomes is keeping pace with urban incomes. From 55 to 58 per cent of the average urban income in 1994-95, the average rural income has gone up to 63 to 64 per cent by 2001-02 and touched almost 66 per cent in2004-05. The rural middle class is growing at 12 per cent against the 13 per cent growth of its urban counterpart. Even better, the upper income class those with household incomes of over Rs. one million [$22,700] per annum is projected to go up to 21 million by 2009-10 from four million in 2001-02. It will have a 22 to 23 per cent rural component. Higher rural incomes have meant larger markets. Already, the rural tilt is beginning to show. In the country we have 0.6 million villages out of which only 13 percent have population above 2000. The rural economy contributes nearly half of the country's GDP (ETIG 2002-03) which is mainly agriculture driven and monsoon dependant. More than 50 percent of the sales FMCG and Durable companies come from the rural areas. The McKinsey report (2007) on the rise on consumer market in India predicts that in twenty years the rural Indian market will be larger than the total consumer markets in countries such as South Korea or Canada today, and almost four times the size of today's urban Indian market and estimated the size of the rural market at $577 Billion. It is no wonder that even MNCs have cottoned on to the idea of a resurgent rural India waiting to happen.

Objectives of the Study -

- To highlight the Opportunities and Challenges of Rural Marketing in India.
- To know the Rural Market status in India
- To state different Rural Marketing Strategies

Data Collection - Data is collected from various Published & unpublished Journals, Articles available in various websites, popular Journals, Text Books etc.

Rural Market Status - The market scenario in the rural areas today is changing very rapidly. The boundaries of nation are disappearing, technological changes are taking place at the flash of an eye, standards are undergoing changes in no time and so are the fortunes of various organizations. Rural families have shown no intentions of cutting down their expenditures on weddings, pilgrimages,

*Professor (Economics) Govt. M.L.B. P. G. Girls College, Indore (M.P.) INDIA

construction or consumption. They have their own set of aspirations and are willing to pay right price for right product. CEO s of a rural marketing firm says "The rural India has cash in hand and is not bound by EMIs or loans. With the majority of our population based in tier-III, tier-IV cities and villages, it is the right time to penetrate into rural markets". The consumer in the village knows his math and doesn't merely want the cheapest product. The way they define value is similar to the urban consumers." They have sufficient disposable income and are appreciating brands, customer service, aesthetics and products. There is a growing demand for television sets, two wheelers, cars etc. There are three fastest selling categories in rural market. - Rural-rural, i.e. products mainly used in rural markets eg. Tractors, seeds, fertilizers etc., Rural-urban , i.e. products like bicycle, transistors, soap, shampoo, battery, washing powder etc. and Urban- urban and the best penetration in this segment is mobile phones. Nokia have found that farmers are now getting more familiar with the handsets and it has become a tool of prosperity for them. Nokia has therefore, lined up various applications exclusively for non-urban population which will be providing entertainment, education and agricultural information to subscribers. The village folks previously have no televisions, but now they are skipping cables and going straight to DTH.

Table - 1 (See in the Next page)

Table - 2 (See in the Next page)

The table shows that the rural share in stock of consumer demands. The rural share in demand for car/ jeeps has increased from 2.1% in 1995-96 to 8.0% in 2001-02 and 10.9% in 2009-10 and for motorcycle it has increased from 47.3% in 1995-96 to 48.3% in 2009-10. Similarly, the demand of fans, scooter, moped and low cost items has also increased. Share of automotive remained same at 37.9%.

Table - 3 (See in the Next page)

Rural Marketing Strategies - Rural markets and rural marketing involve a number of strategies which includes following,

- Client & location specific promotion
- Joint or cooperative promotion
- Bundling of inputs
- Management of demand
- Developmental marketing
- Unique selling proposition
- Extension services
- Business ethics
- Partnership for sustainability.

Opportunities for Marketers -

- Untapped Potential
- Market Size and Potential
- Increasing Income
- Accessibility Markets
- Competition in Urban Areas

Challenges of Rural Marketing

- Packaging
- Warehousing
- Low level of Electricity
- Transportation Problems
- Media Problems
- Seasonal Marketing
- Low per capita Income

Suggestions -

- There is a need to find out the appropriate media, which could reach the hearts of the rural masses. This is required as none of the media like television, print, radio etc has absolute reach to the rural masses.
- Product redesign from the beginning can be done. Marginal changes to existing product will not work effectively. Product must work in hostile conditions in noise, dust and electricity blackouts etc.
- Products can be priced to build up volume in the rural market, especially for smaller pack size SKUs.
- It should be designed to reach highly dispersed rural markets as compared to highly dense urban markets.

Conclusion - The study concluded that rural India offers huge opportunities which companies can tap for their growth and development. However, Companies face many challenges in tackling the rural markets. The rural market is where the markets of the future are likely to be. Urban markets are becoming increasingly competitive for many products. In some cases they are even saturated. On the other hand, rural markets offer growth opportunities. Rural market is the market of the new millennium. Marketers will have to understand the rural customers before they can make inroads into the rural markets. The size of the rural market is fast expanding. The rural market is fascinating and challenging at the same time. It offers large scope on account of its sheer size.. The Rural market is a greater future prospect for the marketers and there are many opportunities available for them in rural markets.

References :-

1. Phanindra K. Swamy S. (2013) Indian Rural Market – Opportunities & Challenges Trans Asian Journal vol 2, 2013 pg.no. 40-47
2. The Rural Marketing Book (2006), by Pradeep Kashyap & Siddhartha Raut, Biztantra Publications.
3. Kumar P. Rural Marketing in India : Challenges and Opportunities "Management and Social Science Research Journal 2013 vol. 2pg.no. 93-100
4. Nabi, M. K. and K.C. Raut. 1995. 'Problems and Imperatives of Rural Marketing in India', Indian Journal of Marketing, February-March: 16-24.
5. Rao, K. L. K. and R.G. Tagat. 1985. 'Rural Marketing: A Developmental Approach', Vikalpa, 10 (3): 315-326.
6. Kavitha, C.T. (2012). A comparative study of growth, challenges and opportunities in FMCG of rural market. Interscience Management Review, 2(3), 23-28.
7. Kotni, VV D.P. (2012). Prospect and problems of Indian rural markets. ZENITH International Journal of Business Economics and Management Research, 2(3), 200-213.

Table - 1 Rural share in stock of consumer

Stock	1995-96 (in'000)	Share in percent	2001-02 (in'000)	Share in percent	2009-10 (in'000)	Share in percent
Cars/Jeeps	197	7.4	389	6.9	1876	9.3
Motorcycle	2210	45.8	6710	50.4	34724	55.4
Scooters	2496	25.2	4416	29.8	6125	32.0
Mopeds	2096	37.3	3930	42.2	7333	46.6
Automotive	6999	30.5	15445	35.9	50058	42.5
Television	21411	40.7	40605	47.6	63295	44.9
All Fans	37990	42.4	74673	49.3	157237	49.0
Other White goods	3337	13.5	7766	16.7	16730	16.7
Low cost items	226952	57.9	313892	58.7	521999	58.5

Source: The Great Indian Market, National Council of Applied Economic Research.

Table - 2 Rural share in stock of consumer demands

Demand	1995-96 (in'000)	Share in percent	2001-02 (in'000)	Share in percent	2009-10 (in'000)	Share in percent
Cars/Jeeps	197	7.4	389	6.9	1876	9.3
Cars/Jeeps	6	2.1	63	8.0	376	10.9
Motorcycle	359	47.3	1036	39.8	4045	48.3
Scooters	368	33.1	355	39.4	311	39.9
Mopeds	286	52.7	235	58.2	141	57.7
Automotive	1016	37.9	1689	36.0	4873	37.9
Television	4852	54.0	6400	54.5	7712	44.2
All Fans	7050	50.0	14627	56.9	32561	56.7
Other White goods	819	23.8	1439	23.9	3120	23.7
Low cost items	29228	58.1	45139	60.1	88607	61.3

Source: The Great India Market, National Council of Applied Economics Research

Table - 3 Difference in rural urban demand

(in thousands)

Year		Two Wheelers	Televisions	Other Goods	Low Goods
2001-02	Rural	1626	6400	1439	45139
	Urban	2279	5334	4585	29971
2009-10	Rural	4497	7712	3122	88607
	Urban	4896	9746	10028	55908

Source - The Great Indian Market, National Council of Applied Economic Research.

****

Diversification of Agriculture in India

Sujata Naik *

Abstract - This paper discusses about diversification of agriculture in India. There are many perspectives of the term 'diversification' in agriculture. There are many opportunities that come with diversification, but there are challenges too. There has been change in pattern of the diversification over past few years in India, also, the globalisation has an impact on diversification of agriculture – which is discussed at length in the paper. Finally the paper concludes with some suggestions from the Author to maximise the gains from opportunities thrown by diversification.

Introduction - Definition Of Diversification - Most developing countries define agriculture diversification as substitution of one crop with another or another agricultural product, or an increase in number of activities carried out by a particular farm.

One section of the British Department for Environment, Food and Rural Affairs (DEFRA) defines diversification as "the entrepreneurial use of farm resources for a non-agricultural purpose for commercial gain".

Drivers Of Diversification

Changing consumer demand - Changes in diet pattern has resulted in farmers growing more vegetables and fruits than staple foods to meet with the challenges of dynamic market and earn extra.

Changing demographics - Rapid urbanisation in India has resulted in lesser number of farmers, which, may not necessarily be diversification, but, farmers need to adopt to techniques to serves a larger consumer base.

Export Potential - Developing country farmers have had considerable success by diversifying into crops that can meet export market demand, however, there remains much potential to diversify to meet export markets by improvising compliance with international certifications.

Adding value - Consumers now a days increasingly require ready-prepared meals and labour-saving packaging. This provides the opportunity for farmers to diversify into value addition particularly in countries where supermarkets play a major role in retailing.

Changing marketing opportunities - In India, policy changes to remove the monopoly of state "regulated markets" to handle all transactions made it possible for farmers to establish direct contracts with buyers for new products.

Improving nutrition - Diversifying from the monoculture of traditional staples can have important nutritional benefits for farmers in developing countries.

Threats

Urbanization - This is both an opportunity and a threat. If farmers are to remain on the land they need to generate greater income from that land than they could by growing basic staples. This fact and the proximity of markets, explains why farmers close to urban areas tend to diversify into high-value crops.

Risk - Farmers face risk from bad weather and fluctuating prices. A diversified portfolio of products should ensure that farmers do not suffer from bad weather and are able to manage price risk on the assumption that not all products will suffer low prices at the same time.

External threats - Farmers who are dependent on exports run the risk that conditions will change in their markets, not because of a change in consumer demand but because of policy changes.

Domestic policy threats - The reduction or removal of subsidies, whether direct or indirect, can have a major impact on farmers and provide a significant incentive for diversification.

Climate change - The type of crop that can be grown is affected by changes in temperatures and the length of the growing season. Climate change could also modify the availability of water for production.

Crop Production And Economics Scenario - The share of the agriculture sector in the total GDP has declined rapidly (24.2 percent) after 1980/81 (34.8 percent). By 2020, the share of agriculture in the total GDP of the country is likely to be reduced to 15 percent due to faster development of non-agriculture sectors. The agriculture sector at present employs 60 percent of the country's work force. With the development of alternative sources of employment in the rural areas, viz., agro industries, supportive infrastructure, etc., it is hoped that the share of population dependent on agriculture will come down, though not commensurately, by the year 2020. It is hoped that 45-50 percent of the

*Asst. Prof. (Economics) Amar Shahid Raja BhauMahakal Govt. College, Sonkach, Distt. Dewas (M.P.) INDIA

population will be dependent on agriculture by that time.

India's performance during the post-independence period has been a matter of pride and satisfaction. The Green, White, Yellow and Blue revolutions have been landmarks that have been claimed and recognized the world over. India is now the largest producer of wheat, fruits, cashew nut, milk and tea in the world and second largest producer of vegetables and fruits. India is the largest producer, consumer and exporter of spices in the world. Food grains production has increased four-fold since independence, from 51 million tonnes (Mt) during 1950/51 to 203 Mt during 1998/99.These achievements are the result of a policy framework of improving rural infrastructure including irrigation, research, extension, provision of agricultural inputs at reasonable prices, and marketing support through minimum price mechanism.

In spite of the impressive achievements, the Indian agricultural sector continues to face poor infrastructure conditions. This is because of higher dependency on rainfall (less than 36 percent of the cultivated land is under any assured irrigation system), lack awareness of science and technology resulting in lower yields and these factors coupled with high illiteracy constrain the farmer's ability to shift to more remunerative cropping patterns in response to market signals. Therefore, their capacity to take advantage of the opportunities presented by liberalization of trade is limited. The country's agriculture has gained in strength and resilience since independence, although growth in agriculture is highly skewed over regions and crops. Efficient and effective management of agriculture will be crucial in the years to come for acquiring enduring self-reliance and ensuring sustainable growth with an emphasis on consideration of equity.

Crop Diversification In The Indian Perspective - With the advent of modern agricultural technology, especially during the period of the Green Revolution in the late sixties and early seventies, there is a continuous surge for diversified agriculture in terms of crops, primarily on economic considerations. The crop pattern changes, however, are the outcome of the interactive effect of many factors which can be broadly categorized into the following five groups:

1. Resource related factors covering irrigation, rainfall and soil fertility.
2. Technology related factors covering not only seed, fertilizer, and water technologies but also those related to marketing, storage and processing.
3. Household related factors covering food and fodder self-sufficiency requirement as well as investment capacity.
4. Price related factors covering output and input prices as well as trade policies and other economic policies that affect these prices either directly or indirectly.
5. Institutional and infrastructure related factors covering farm size and tenancy arrangements, research, extension and marketing systems and government regulatory policies.

What is most notable is the change in the relative importance of these factors over time. Indian agriculture is increasingly getting influenced more and more by economic factors. This need not be surprising because irrigation expansion, infrastructure development, penetration of rural markets, development and spread of short duration and drought resistant crop technologies have all contributed to minimizing the role of non-economic factors in crop choice of even small farmers. The reform initiatives undertaken in the context of the ongoing agricultural liberalization and globalization policies are also going to further strengthen the role of price related economic incentives in determining crop composition both at the micro and macro levels. Obviously, such a changing economic environment will also ensure that government price and trade policies will become still more powerful instruments for directing area allocation decisions of farmers, aligning thereby the crop pattern changes in line with the changing demand-supply conditions. In a condition where agricultural growth results more from productivity improvement than from area expansion, the increasing role that price related economic incentives play in crop choice can also pave the way for the next stage of agricultural evolution where growth originates more and more from value-added production.

Consequences Of Crop Pattern Changes - Turning now to the socio-economic and environmental consequences of crop pattern changes, the Green Revolution technologies have fomented, among other things, an increasing tendency towards crop specialization and commercialization of agriculture. While these developments have positive effects on land/labour productivity and net farm income, they have also endangered a number of undesirable side effects like reduced farm employment and crop imbalances. Although the expansion of commercialized agriculture has fomented new sets of rural non-farm activities and strengthened the rural-urban growth linkages, it has also weakened the traditional inter-sectoral linkages between the crop and livestock sectors. Besides, crop pattern changes also lead to serious environmental consequences that take such forms as groundwater depletion, soil fertility loss and waterlogging and salinity - all of which can reduce the productive capacity and growth potential of agriculture over the long-term.

Globalization And Crop Diversification - With the advent of WTO and India being a member and signatory to GATT, the scenario of the agricultural sector will not be the same as that of past. For crops on which we have substantial area and production, specially food grains, the import market has to be insulated through increased productivity which gives us a kind of comparative advantage and also a level playing field so that large scale importation is contained and farmers interests are protected. The crops which are traditionally exported like basmati rice and spices and condiments also need to be supported in terms of area expansion and quality improvement to explore more

opportunities for export. Crop diversification in the areas of certain tropical fruits and also a few vegetables also need support for both production and post-harvest handling in terms of their export opportunity. In future, with improved living standards along with increased purchasing power, more and more people will look for nutritional and quality foods which will also call for greater crop diversification.

India, being a vast country of continental dimensions, presents wide variations in agro-climatic conditions. Such variations have led to the evolution of regional niches for various crops. In the aftermath of technological changes encompassing bio-chemical and irrigation technologies, the agronomic niches are undergoing significant changes. With the advent of irrigation and new farm technologies, the yield level of most crops-especially that of cerealshas witnessed an upward shift making it possible to obtain a given level of output with reduced area or more output with a given level of area and creating thereby the condition for inter-crop area shift (diversification) without much disturbance in output level. Besides, as agriculture become drought proof and growth become more regionally balanced, there has been a reduction in the instability of agricultural output.

Conclusions - An accelerated pace of diversification to create positive impact of higher income, higher employment and conservation and efficient use of natural resources emphasizes the need for efficient policies, especially in technological development, selective economic reforms and institutional change. A strategy of crucial importance is growth enhancing non-farm activities. This calls for investment in rural infrastructure and skill up gradation and it also implies a careful examination and adjustment of macro-policies, which influence the relative profitability of different activities and in turn determine the nature and pace of diversification. In order to ensure social equity, policies on structural adjustment and reforms must pay special attention to the band of marginal and small farmers and agricultural labourers. The direct benefits from diversification should reach these sections of the farmers.

References :-

1. Barghouti, S., S. Kane, K. Sorby and M. Ali. 2005. Agricultural diversification for the poor: guidelines for practitioners. Agriculture and Rural Development Discussion Paper 1. Washington D.C.: The World Bank.
2. Deshingkar P., U. Kulkarni, L. Rao and S. Rao 2003. Changing food systems in India: resource-sharing and marketing arrangements for vegetable production in Andhra Pradesh, Development Policy Review
3. Gulati A., and M. Torero. 2004. http:// www.lenntech.com/water-food-agriculture. Use of water in food and agriculture.
4. Joshi, P.K., P.S. Birthal and V. Bourai. 2002. Socioeconomic constraints and opportunities in rainfed rabi cropping in rice fallow areas of India. International Crops Research Institute for the Semi-arid Tropics, Patancheru, India.
5. Ravi, C., and D. Roy 2006. Consumption patterns and food demand projections, a regional analysis. Draft Report submitted to IFPRI, New Delhi.
6. www.planningcommission.com
7. www.wikipedia.com

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

Role Of Media In Social, Mass & Economic Development

Dr. Archana Singhal*

Abstract - Development cannot happen in isolation whether it may be in micro or macro level. So there is a need for a strong tool to connect people instantly so that the knowledge transfer is never ending and instant. Media for development uses to convey messages on issues such as health care, poverty reduction, good governance, environmental protection and community development, socio-economic and cultural development. Today the world is becoming a small place to live in and share knowledge, ideas and passing over valuable culture to the next generation, all the above said things is possible through social networking and media. Every aspect in the society has positive and negative externalities so we need to see how these negative externalities can be balanced and surpassed through positive externalities to reach development in all dimensions. No one is perfect in this world and so is the media. Here I am not degrading the media, rather I would say there is still a lot of scope for improvement by which media can raise upto the aspirations of the people for which it is meant. I cannot think of a democracy without active and neutral media. Media is like a watchdog in a democracy that keeps government active. From being just an informer it has become an integral part of our daily lives. With the passage of time it has become a more matured and a more responsible entity. The present media revolution has helped people in making an informed decisions & this has led to beginning of a new era in a democracy.

Introduction - Media - the fourth pillar of the society RADHAKRISHNAN "Pen is mightier than Sword" - this old proverb seems to be true even in today's context as the media seems to gain strength in the modern society. Media includes mass media like TV, News channels, News papers, Radio, journals, magazines and most importantly internet and email. The sphere of influence of media is increasing day by day as the coverage of a small news article is very wide these days. And more importantly in this modern knowledge-society, media plays the role of facilitator of development, disseminator of information, and being an agent of change. Today, media is considered the fourth pillar of the state all over the world. More importantly this is very true in the context of a biggest democracy like India.

In recent times Indian media has been subject to a lot of criticism for the manner in which they have disregarded their obligation to social responsibility. Dangerous business practices in the field of media have affected the fabric of Indian democracy. Big industrial conglomerates in the business of media have threatened the existence of pluralistic viewpoints. Post liberalisation, transnational media organisations have spread their wings in the Indian market with their own global interests. This has happened at the cost of an Indian media which was initially thought to be an agent of ushering in social change through developmental programs directed at the non privileged and marginalised sections of the society. Though media has at times successfully played the role of a watchdog of the government functionaries and has also aided in participatory communication, a lot still needs to be done.

Role of Media in Social Development - Molestation of a girl from Guwahati, Baghpat panchayat's diktat, Nirmal Baba's case, rupee depreciation, petrol price hike, CWG scam, 2G scam, not to forget Anna Hazare's anti-corruption movement and Baba Ramdev's movement against black money have been much talked about and discussed all along the length and breadth of the country. The issues have the caught attention not just of those who are directly involved in them but also became the status updates of many and pressing concern among the commoners.

That one thing, which has been common thread in taking up issues to the mass, is the public media. Media is rightly considered as the fourth pillar of democracy. Much has been spoken about its role by the Chairman of Press Council of India, Markandey Katju himself. While various institutions and organization are directly or indirectly involved in influencing the formulation of policies, their implementation and execution, such as civil society, NGOs, voluntary organizations and of course the final authority that puts a stamp for the action i.e. the government; the indispensable role that the media plays can't be ignored. Where e-governance, MIS, public discussion of draft bills have become the buzzword with the seeping in of various forms of media to the larger public be it radio, print, television or the internet, media has moved from it just being disseminator of information to the one which sensitizes the mass who are the end beneficiaries of all such activities.
In this context the social media needs to be mentioned and discussed elaborately. The social network giants have been revolutionary in many ways. They played major role in the protests that happened at Tahrir square, Egypt, Anna Hazare's movement and several other such movements gained a lot of public attention particularly among the youth. It helped not just in creating awareness but also in mobilizing

*Asst. Professor (Economics) D.A.V. (P.G.) Collage, Muzaffarnagar (U.P.) INDIA

them to stand up for the cause. Social media is a platform that has brought the world on the same platform. It is an interface that brought people closer to each other and removed the distances. Having a mass following to a great extent, it is supposed to be the part and parcel of our lives. We are in a time where the government is running the digital India campaign and plans to connect the remote areas with the internet and social platform. The motive of the campaign is to bring the last person of the society to a level where he can connect with the world. Let us have a look at the role of the social media that will be accountable to bring the change in society. Ever since human race evolved, the communication has been an effective medium to convey the feelings and the emotions. The social media is again serving the same purpose but to a larger audience at the same time. The wider outreach seems to be beneficial on one end, however, can be equally thrashing at the same time. An irresponsible communication will lead to mutual conflict and thus result into tensions.

Personal communication via social media brings politicians and parties closer to their potential voters. It allows politicians to communicate faster and reach citizens in a more targeted manner and vice versa, without the intermediate role of mass media. Reactions, feedback, conversations and debates are generated online as well as support and participation for offline events. Messages posted to personal networks are multiplied when shared, which allow new audiences to be reached.

Although the presence of social media is spreading and media use patterns are changing, online political engagement is largely restricted to people already active in politics and on the Internet. Other audiences are less responsive. For example, television news together with print and online newspapers are still the most important sources of political information in most EU Member States. Social media has reshaped structures and methods of contemporary political communication by influencing the way politicians interact with citizens and each other. However, the role of this phenomenon in increasing political engagement and electoral participation is neither clear nor simple.

Role of Mass Media in Development - Among the several mass media, newspaper and farm magazine are commonly used. They have a vital role to play in the communication of agricultural information among the literate farmers. Increasing rate of literacy in the country offers new promises and prospects for utilising print medium as a means of mass communication. The print media widened the scope of communication. It is cheap and people can afford to buy and read them at their convenience. The significance of communication for human life cannot be overestimated. This is true because beyond the physical requirements of food and shelter man needs to communicate with his/her fellow human beings. This urge for communication is a primal one and in our contemporary civilization a necessity for survival. That is to say without communication no society can exist, much less develop and survive. For the existence as well as the organisation of every society communication is a fundamental and vital process. A free press is not a luxury.

The pity of the Indian media is that it is surviving on myths and superstition. Where has all the factual news gone? Astrology, superstition, snakes, sai baba, daily soaps reviews, fashion week etc. are the only sources to retain themselves in the media world. Prime time news is all about superstition news story with some catchy headlines and this is the best time for advertisements.

Media should encourage art, science and literature but it is focusing on astrology, rebirths, religious myths, beliefs and aliens. Now days almost every news channel telecast astrological programmes where an astrologer or some baba is sitting and predicting about deaths, marriages and relationships. The funny part is that sometimes statements made by each astrologer are contradictory which confuses the audience. Superstition and myths are also encouraged as recently in one of the news channel there was programme based on a tantrik who claimed that he can kill a person within three minutes. It was telecast but the action failed and to escape from humiliation the tantrik said that it can only be performed at night.

The Mass Media is an unique feature of modern society. It's development has accompanied an increase in the magnitude and complexity of societal actions and engagements, rapid social change, technological innovation, rising personal income and standard 'of life and the decline of some traditional forms of control and authority. There is an association between the development of mass media and social change, although the degree and direction of this association is still debated upon even after years of study into media influence. Many of the consequences, either detrimental or beneficial, which have been attributed to the mass media, are almost undoubtedly due to other tendencies within the society. Few sociologists would refuse the importance of the mass media, and mass communications as a whole, as being a major factor in the construction and circulation of social understanding and social imagery in modern societies. Therefore it is argued that the mass media is used as ,"an instrument", both more powerful and more flexible than anything in previous existence, for influencing people into certain modes of belief and understanding within society Social media comprise platforms to create and exchange user-generated content Sometimes social media are called consumer-generated media (CGM).Social media are different from traditional media, such as newspaper, books and television,in that almost anyone can publish and access information inexpensively using social media.But social media and traditional media are not absolutely distinct. For example, major news channels have official accounts on Twitter and Facebook. Social media has some or all of these seven function blocks: identity, conversations, sharing, presence, relationships, reputation and groups. Different forms of social media have different points of focus. For example, collaborative projects such as Wikipedia mostly care about sharing and reputation. Social networking service is a set of online sites and applications, which

at least consist of three parts: users, social links, and interactive communications. In fact, SNS is a subset of social media, which include the social network. On SNS, communication is interactive.The user's major motivations could be recording one's daily life, providing commentary and opinions, expressing feeling and emotion, demonstrating ideas via text and keepin.

The Role of Media in Economic Development - The rapid growth of the media and television networks in recent decades has made the mutual interaction between the media and economic development more prominent than ever. Due to the significant role of media in a country's economic development, this specific domain has received much attention recently. The way how the television programmes affect economic development, the shortcomings of current Iranian TV programmes in this respect, and finally the characteristics of a suitable and effective business programmes are to be discussed in the following lines. First of all, what is meant by "business programmes" are those television productions that try to convey a particular economic message in the form of news items, reports, or even entertaining productions such as movies and TV series.Business programmes generally aim to convey an economic idea or message; therefore, they need to have a full understanding of what they mean to deliver. If not, they will not be able to get across the idea in question as accurately as possible. Moreover, they should bear in mind that introducing empirical researches is just as important as complicated theoretical aspects for the audience. The role that a researcher could play in this regard has been paid less attention in Iran than in developed countries. If the researchers of television programmes, who are responsible for developing the original theoretical ideas into a practical model, do their job properly, the intended idea will be conveyed far more effectively.

The best and most effective business media is one that possesses a good knowledge of the national and local economic system of a country, has theoretical and procedural stability in its pursuit of national goals, and utilises a logical scientific method in its analyses. There's no doubt that there are quite a lot of solutions to economic problems but introducing these solutions is a burden shouldered by the mass media. As such, the Iranian national media is required to follow a certain economic path, one that is comprised of the overall framework of the domestic economy as well as that of the Islamic methodology and ethical values.

An independent press is essential to sound and equitable economic development. The media helps to give a voice to the poor and the disenfranchised. An independent press also provides a solid foundation for a free and transparent society.'The Right to Tell' contains an outstanding list of contributors from Nobel Prize winner and former World Bank chief economist, Joseph Stiglitz to Robert J. Shiller author of 'Irrational Exuberance', and Nobel Prize winner and novelist Gabriel Garcia Marquez. Contributors to this volume explore the role of the media as a watchdog of government and the corporate sector, and the policies that prevent the media from exercising that role. 'The Right to Tell' assesses the media's function as transmitters of new ideas and information. This book also evaluates the damaging effects that an unethical or irresponsible press can cause to a society. Several of the book's contributors describe the role of the media and the challenges they face in specific countries including Bangladesh, Egypt, the former Soviet Union, Thailand, and Zimbabwe. These fascinating case studies highlight the media's ability to act as a catalyst for change and growth.

Conclusion - This review presents evidence to suggest that independent media play a critical role in improving governance and reducing corruption, increasing economic efficiency and stability, and creating positive social and environmental change. The media provide information to actors throughout society allowing them to participate in the decisions and debates that shape their lives. The media also play in important monitoring role in a democracy that enables citizens to hold their governments and elected officials accountable—leading to better policies and service implementation. For these reasons and others media development should be viewed as a desirable development outcome that underpins all others. In Indian democracy media has a responsibility which is deeply associated with the socio economic conditions. The present scenario is not quite encouraging and certain areas need to be addressed. Media organisations, whether in print, audio visual, radio or web have to be more accountable to the general public. It should be monitored that professional integrity and ethical standards are not sacrificed for sensational practices. The freedom of press in the country is a blessing for the people. However, this blessing can go terribly wrong when manipulations set in.

References :-

1. Gupta, Sanjeev, Hamid R. Davoodi and Rosa Alonso-Terme . 2002. 'Does corruption affect income inequality and poverty? Economics of Governance 3(1): 23–45
2. Karlekar, K. and Becker, L.B. "By the numbers: Tracing the statistical correlation between press freedom and democracy." Center for International Media Assistance.
3. Fry,Kathryn,"DisastersandTelevision," http://www.museum.tv/archives/etv/D/htmlD/disastersand/disastersand.htm
4. Biney, Ama, "The Western Media and Africa: Issues of Information and Images," Interstate Online, http://users.aber.ac.uk/scty34/50/Africa.htm (15/5/2003)
5. "HowtheMediaInfluencesYourChild," http://www.oprah.com/ tows/pasthows/tows_2002/tows_past_20020520_b.jhtml (23/2/2003)
6. "Media and Peacebuilding," IMPACS, 2001, http://www.impacs.ca/index.cfm?Group_ID=2683 (30/6/2003)
7. "MediaandTechnologyCommunicationTheories," http://oregonstate.edu/instruct/comm321/gwalker/media.htm

नर्मदा जल प्रदाय का लागत-लाभ अध्ययन (खण्डवा जिले के विशेष संदर्भ में)

मधुबाला कश्यप * डॉ. आशा साखी गुप्ता **

प्रस्तावना – जल ही जीवन है। जल मानव जीवन के लिए प्रकृति का अमूल्य उपहार है। परन्तु, मानव द्वारा इस अमूल्य उपहार का मूल्य नहीं जान सका। देश के बढ़ते विकास के साथ-साथ समस्याएँ भी बढ़ती जा विकास शहरीकरण को जन्म देता है। स्थानीय सरकार का यह कर्त्तव्य होता है कि वह शहर के निवासियों को स्वास्थ्य सुविधा, शुद्ध व स्वच्छ पेयजल व साफ-सुथरा निवास स्थान, परिवहन के साधन, जनसंख्या के अनुपात में उपलब्ध करवाए। आजादी के 65 साल के बाद भी देश की एक तिहाई जनता को पीने के लिए स्वच्छ जल की समस्या है। प्रतिवर्ष जल जनित बीमारियों के चलते लगभग 15 लाख बच्चें प्रभावित होते हैं। देश में शुद्ध पेयजल आम व्यक्ति की पहुँच से आज भी दूर है।

शोध समस्या का चयन – नर्मदा जल प्रदाय योजना खण्डवा जिले की चर्चित योजना है। जिसमें केन्द्र व राज्य सरकार व स्थानीय सरकार का अंशदान 80:10:10 के अनुपात में निवेश किया गया है। परन्तु, नगर निगम खण्डवा की यह योजना जन-निजी भागीदारी (PPP) क्रियान्वित हो रही है। शोध समस्या में इस विषय का चयन इसलिए किया गया है कि यह ज्ञात किया जा सके कि 106.72 करोड़ की योजना किस सीमा तक सफल हुई है।

शोध अध्ययन का उद्देश्य –

1. नर्मदा जल प्रदाय योजना के संबंध में जानकारी प्राप्त करना।
2. नर्मदा जल प्रदाय योजना की लागत व लाभ का अध्ययन करना।
3. खण्डवा जिले की जल की माँग व पूर्ति का अध्ययन करना।
4. खण्डवा में उपलब्ध पेयजल संसाधनों का अध्ययन करना।

शोध अध्ययन की परिकल्पना – नर्मदा जल प्रदाय योजना से खण्डवा जिले की पेयजल व्यवस्था में सुधार आया है।

शोध पद्धति – शोध अध्ययन में निष्कर्षों को ज्ञात करने के लिए द्वितीय संमकों का प्रयोग किया जायेगा। द्वितीयक संमक का एकत्रीकरण कर वर्गीकरण व विश्लेषण कर निष्कर्ष तक पहुँचने का प्रयास किया जावेगा।

शोध अध्ययन का क्षेत्र – शोध अध्ययन का क्षेत्र खण्डवा जिला है, जिसमें जिले में पेयजल के सुधार हेतु संचालित नर्मदा जल प्रदाय योजना का अध्ययन किया गया है।

नर्मदा जल प्रदाय योजना – नर्मदा जल प्रदाय योजना में इंदिरा सागर परियोजना के बैंक वॉटर से चारखेड़ा के पास छोटी तवा नदी से नर्मदा जल को पाईप लाईन जिसकी लंबाई 50 किलोमीटर है, के द्वारा खण्डवा शहर लाया जाएगा। इस योजना में 80 प्रतिशत राशि केन्द्र सरकार, 10 प्रतिशत राज्य सरकार तथा 10 प्रतिशत नगर निगम का अंशदान प्रावधित है। नगर निगम खण्डवा की योजना जन-निजी भागीदारी (पी.पी.पी.) में क्रियान्वित की जा रही है। नगर निगम के 10 प्रतिशत अंशदान की राशि को निविदाकार द्वारा प्रपत्र योजना सलाहकार मेहता एण्ड एसोसिएट्स, इन्दौर द्वारा तैयार की गई है। दिनांक 31.3.2008 के प्रस्ताव के अनुसार योजना को वित्तीय एवं तकनीकी स्वीकृति प्रदान की गई है व योजना के क्रियान्वयन जन-निजी भागीदारी के अन्तर्गत किए जाने की स्वीकृति प्रदान की गई। योजना के अन्तर्गत नगर पालिका निगम द्वारा जल प्रभार नर्मदा घाटी विकास प्राधिकरण को देय होगा। शहर में 09 ओव्हर हेड टैंक व एड सेम्पल बनाकर मीटरिंग सिस्टम द्वारा जल वितरण की योजना है। अनुबंधित कम्पनी द्वारा प्रतिमाह जल उपयोग की मात्रा के अनुसार बिल उपभोक्ता को प्रस्तुत कर जल कर की राशि वसूल करने का प्रावधान है।

नर्मदा जल प्रदाय योजना की लागत – नर्मदा जल प्रदाय योजना की लागत 106.72 करोड़ रुपये है। इस योजना के माध्यम से खण्डवा जिले को पेयजल उपलब्ध कराने की योजना है। योजना के निर्माण की निविदा (टेण्डर) विश्वा इंफ्रास्ट्रक्चर एण्ड सर्विसेस प्रा. लिमिटेड, हैदराबाद को दिया गया है। राज्य स्तरीय तकनीकी समिति भोपाल द्वारा विश्वा कम्पनी की दर 11.95 प्रति कि.ली. का अनुमोदन किया गया है। विश्वा इन्फ्रास्ट्रक्चर एण्ड सर्विसेस प्रा. लिमिटेड, हैदराबाद द्वारा राष्ट्रीकृत बैंक में 5.00 करोड़ की बैंक ग्यारण्टी जमा की गई है। नगर पालिका निगम खण्डवा द्वारा 9325.30 लाख की राशि सब्सीडी के रूप में विश्वा यूटिलिटिज प्रा. लि. को देय होगी। प्रथम किश्त 2401.72 लाख व द्वितीय किश्त 2401.72 लाख की राशि प्राप्त हो चुकी है। इस प्रकार केन्द्र व राज्य शासन से 4802.53 लाख रुपये प्राप्त हो चुके हैं, जिसमें से 4657.55 लाख की राशि व्यय हो चुकी है। विश्वा कम्पनी द्वारा 10 प्रतिशत की राशि योजना में व्यय की जा रही है। दिनांक 1.1.2012 तक 5175.00 लाख व्यय हो चुके हैं। केन्द्र व राज्य शासन से द्वितीय किश्त की राशि रुपये 4802.53 लाख प्राप्त होना शेष है। नर्मदा जल प्रदाय योजना में कुछ विषयों पर विवाद का विषय होने पर केन्द्र सरकार द्वारा सहायता कुछ समय के लिये रोकी गई है।

खण्डवा जिले में जल पूर्ति के परम्परागत साधन – वर्तमान में खण्डवा की जल आपूर्ति दो साधनों सुक्ता डेम व नागचून खण्डवा पर निर्भर है। नगर निगम की 60 प्रतिशत निर्भरता इन्हीं साधनों पर है, जिनके माध्यम से खण्डवा जिले में जल वितरण होता है। वास्तविक समस्या गर्मी के मौसम में होती है, क्योंकि जल आपूर्ति के साधन सूख जाते हैं। इन दिनों भगवंत सागर तालाब से जल की आपूर्ति की जाती है।

Variation in Supply (In MLD) (तालिका देखे आगे पृष्ठ पर)

* शोधार्थी (अर्थशास्त्र) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शहीद भीमा नायक स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

खण्डवा जिले में जल की माँग –

1. जनसंख्या के द्वारा जल की माँग (Population demand)
2. औद्योगिक माँग (Industrial demand)
3. रेल्वे विभाग की माँग (Railways demand)
4. अग्निशमक (Fire Fighting)
5. अन्य व्यवसायिक गतिविधियों हेतु (And other commercial activity)

उपरोक्त उद्देश्य की पूर्ति हेतु जल की माँग की जाती है। समय के साथ-साथ जल की माँग बढ़ती जायेगी। निम्न तालिका में वर्ष 2025 तक व 2040 तक खण्डवा शहर के द्वारा की जाने वाली जल की माँग का अनुमान लगाया गया है।

जल की माँग वर्ष 2025 तक

S.No.	Particular	Raw Water in MLD	Raw Water in MLW
1	Population demand	43.00	Full Fill from Nagchun
2	Industrial demand	1.00	
3	Railways demand	8052	
4	Fire Fighting	44.46	

स्त्रोत – मेहता एण्ड एसोसिएट, इन्दौर।

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि विभिन्न उद्देश्यों की पूर्ति के लिए जल की पूति नागचून तालाब से पूर्ण की जावेगी।

जल की माँग वर्ष 2040 तक

S.No.	Particular	Raw Water in MLD	Raw Water in MLW
1	Population demand	54.00	Full Fill from Nagchun
2	Industrial demand	1.00	
3	Railways demand	1.41	
4	Fire Fighting	0.0059	
		56.00	

स्त्रोत – मेहता एण्ड एसोसिएट, इन्दौर।

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि वर्ष 2040 में कुल जल की माँग 56 एम.एल.डी होगी। जिसमें Population Demand 54.00 एम.एल.डी. होगी, जिसकी पूर्ति नागचून से की जावेगी।

खण्डवा जिले में वर्ष 2040 तक जल पूर्ति की तालिका (देखे आगे पृष्ठ पर)

उपरोक्त सारणी में Power expenditure for raw water pumping in Khandwa को दर्शाया गया है, जिसमें वर्ष 2010 से वर्ष 2040 तक का अनुमान लगाया गया है। साथ ही 5 प्रतिशत प्रतिवर्ष जल के मूल्य में वृद्धि की गई है। तालिका के अनुसार वर्ष 2010 में Power Consumption 7337319 जिस पर Power Expenditure 293.49 का अनुमान लगाया गया है। यह योजना फरवरी, 2013 तक विवादों के कारण पूर्ण नहीं हो सकी।

नर्मदा जल प्रदाय योजना की वर्तमान स्थिति – नर्मदा जल प्रदाय योजना के अन्तर्गत अप्रैल, 2015 तक की अवधि तक पूरे खण्डवा शहर में नर्मदा जल वितरण नहीं हो पाया है। जल वितरण क्षेत्र, लाईनों में पानी प्रेशर टेस्टींग, कम्पनी को भुगतान से पहले टेस्ट रिपोर्ट, लेखा-जोखा और आडिट रिपोर्ट आदि विवाद व चर्चा का विषय बने हुए हैं।

निष्कर्ष – उपरोक्त विश्लेषण से हम इस तथ्य तक पहुँचे हैं कि नर्मदा जल प्रदाय योजना में निवेश की गई राशि 106.72 करोड की योजना जिसकी निर्माण अवधि 02 वर्ष थी 05 वर्ष पूरे होने को है, परन्तु अभी तक योजना के द्वारा पूरे खण्डवा शहर में सफलतापूर्वक जल वितरण नहीं हो पाया है। जिसका विरोध जल आन्दोलन के माध्यम से किया गया है। नगर निगम के पास तीन विकल्प है। नर्मदा जल प्रदाय योजना को लेकर निगम खुद नर्मदा जल योजना को चलाए, विश्वा कम्पनी से निगम बल्क सप्लाई में पानी ले और स्वयं सप्लाय करें, या फिर अनुबंध के हिसाब से विश्वा कम्पनी 23 साल के लिए योजना संचालित कर मेंटनेंस करें। वर्तमान तक नगर निगम खण्डवा द्वारा कोई भी निर्णय नहीं लिया गया है। यह कहा जा सकता है कि नर्मदा जल प्रदाय योजना से खण्डवा जिले की पेयजल व्यवस्था में पूरी तरह से सुधार नहीं आया है। खण्डवा नगर निगम द्वारा उचित निर्णय लेने के पश्चात् भविष्य में यह योजना नर्मदा जल वितरण खण्डवा हेतु लाभदायक सिद्ध हो सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. मेहता एण्ड एसोसिएट, इन्दौर – रिपोर्ट।
2. नगर निगम, खण्डवा।
3. दैनिक भास्कर समाचार पत्र।

Variation in Supply (In MLD)

S.No.	Season	SUKTA	Nagchun	Tubewell	Total
1	Rainy Season	11.25	1.8	6.3	19.50
2	Winter Season	11.25	1.8	6.3	19.50
3	Summer Season	9.0	--	3.6	12.60

स्त्रोत – नगर पालिका निगम, खण्डवा।

खण्डवा जिले में वर्ष 2040 तक जल पूर्ति की तालिका

Year	Discharge in MLD	Total Head in m.	Power Consumption Per Year In Khandwa	Rate in Rs.	Power Expenditure
2010	33.44	176.5	7337319	4.00	293.49
2011	33.96	177.56	7496903	4.20	314.87
2012	34.49	178.62	7659857	4.50	344.69
2013	35.03	179.68	7826253	4.70	367.83
2014	35.58	180.74	7996169	4.90	391.81
2015	36.14	181.80	8169683	5.20	424.82
2016	36.71	182.86	8346875	5.40	450.73
2017	37.29	183.92	8527826	5.70	486.09
2018	37.88	184.98	8712620	6.00	522.76
2019	38.48	186.04	8901344	6.30	560.78
2020	39.09	187.10	9094086	6.60	600.21
2021	39.72	188.16	9290935	6.90	641.07
2022	40.35	189.22	949183	7.20	683.42
2023	40.99	190.28	9697326	7.60	737.00
2024	41.65	191.34	9907060	8.00	792.56
2025	42.31	192.40	10121285	8.40	850.19
2026	42.99	193.46	10340102	8.80	909.93
2027	43.68	194.52	10563614	9.20	971.85
2028	44.38	195.58	10791930	9.70	1046.82
2029	45.10	196.64	11025157	10.20	1124.57
2030	45.82	197.78	11263409	10.70	1205.18
2031	46.52	199.76	11506799	11.20	1288.76
2032	47.32	200.88	11755445	11.80	1387.14
2033	48.09	201.94	12009468	12.30	1477.16
2034	48.87	202.00	12268990	13.00	1594.97
2035	49.66	203.00	12534138	13.60	1704.64
2036	50.47	204.06	12805041	14.30	1831.12
2037	51.30	205.12	13081832	15.00	1962.27
2038	52.14	206.18	13364646	15.70	2098.25
2039	52.39	207.24	13653624	16.50	2252.85
2040	53.86	208.74	13978371	17.30	2418.26

Assuming power charges will be increase @5% per annual.

****

कृषि में रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग का रोजगार एवं उत्पादकता पर प्रभाव (छ.ग. के बिलासपुर संभाग के विशेष संदर्भ में)

नोर्बेलता एक्का *

शोध सारांश– देश में हरित क्रांति के फलस्वरूप बिलासपुर संभाग में भी आधुनिक रासायनिक उर्वरकों के उपयोग से कृषि उत्पादन बढ़ा है। कृषि में रासायनिक उर्वरकों के उपयोग से उत्पादन एवं रोजगार पर पड़ने वाले प्रभाव के साथ ही मानव स्वास्थ्य एवं कृषि मित्र जीव–जन्तुओं, कीट–पतंगों पर पड़ने वाले दुष्परिणामों का अध्ययन कर सन्तुलित एवं सतत् विकास हेतु सुझाव प्रस्तुत करना अध्ययन का उद्देश्य है।
शब्द कुंजी– रसायन, उर्वरक, रोजगार, उत्पादकता ।

प्रस्तावना – कृषि, सकल घरेलू उत्पाद में जिसका सातवां भाग है, हमारी दो–तिहाई जनसंख्या का पोषण करती है। इसके अतिरिक्त, यह शेष अर्थव्यवस्था में अत्यंत पिछड़ों और अगड़ों के मध्य तारतम्य स्थापित करने का कार्य भी करती है। क्रमिक पंचवर्षीय योजनाओं में खाद्यान्नों के उत्पादन में आत्म पर्याप्तता एवं आत्मनिर्भरता पर निरन्तर बल दिया जाता रहा है और इस दिशा में किए गए संगठित प्रयासों के परिणामस्वरूप कृषि उत्पादन एवं उत्पादकता में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। रासायनिक उर्वरकों द्वारा निभाई गई महत्वपूर्ण भूमिका के कारण भारत न केवल खाद्यान्नों की कुल आवश्यकता को पूरा करने में बल्कि निर्यात योग्य अतिरिक्त उत्पादन करने में भी सफल रहा है।

बिलासपुर संभाग की उपजाऊ भूमि के उपरान्त भी कृषकों की कमजोर आर्थिक स्थिति, जल के लिए मानसून पर निर्भरता तथा पुराने परम्परागत साधनों एवं रासायनिक उर्वरकों से फसल पर निर्भरता ने कृषि उत्पादन में आशातीत वृद्धि नहीं होने दी है। वर्तमान में आधुनिक रासायनिक उर्वकों के उपयोग से कृषि उत्पादन में सकारात्मक परिवर्तन हुए हैं।

अध्ययन का उद्देश्य – बिलासपुर संभाग में कृषि उत्पादकता पर रासायनिक उर्वरकों के प्रभावों का अध्ययन करना, आंकडे संकलित करके वास्तविकता ज्ञात करना तथा रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग से उत्पन्न कठिनाईयों को दूर करने हेतु सुझाव देना, इस शोध का उद्देश्य है।

परिकल्पना – प्रस्तुत अध्ययन हेतु निम्न शून्य परिकल्पनाओं की जांच की जाएगी –

1. रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग से बिलासपुर संभाग की कृषि उत्पादकता में वृद्धि हुई है और लागतों में कमी आयी है।
2. रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग से कृषकों की आर्थिक दशा में सुधार हुआ है।
3. रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग से भूमि की उत्पादकता पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ा है।

शोध प्रविधि– प्रस्तुत शोध मुख्यत: द्वितीयक समंकों पर आधारित है। इसके संग्रहण हेतु पत्र–पत्रिकाओं, विभागों के प्रतिवेदन तथा वेब–साइट से प्राप्त सूचानाओं का प्रयोग कर विश्लेषणात्मक पद्धति का उपयोग किया गया है।

अध्ययन की सीमाएँ :– प्रस्तुत शोध अध्ययन सन् 2007–08 से 2013–14 के प्राप्त आंकड़ों एवं जानकारियों तक सीमित है।

रासायनिक उर्वरक से आशय – रासायनिक उर्वरक से आशय कृषि में उपज बढ़ाने के लिए प्रयुक्त रसायन से है जो कि पेड़–पौधों की वृद्धि में सहायता के लिए प्रयोग किए जाते हैं। पानी में शीघ्र घुलने वाले ये रसायन मिट्टी में या पत्तियों में छिड़काव करके प्रयुक्त किए जाते हैं। पौधे मिट्टी से जड़ों द्वारा एवं उपरी छिड़काव करने पर पत्तियों द्वारा उर्वरकों को अवशोषित कर लेते हैं। इस तरह उर्वरक पौधों के लिए आवश्यक तत्वों की पूर्ति तत्काल कर देते हैं। पोषक तत्व की दृष्टि से तीन तरह के रासायनिक उर्वरक कृषि में प्रयोग किए जाते हैं– नत्रजन, फास्फेट एवं पोटाश।

रासायनिक उर्वरक नीति – कृषि के निरन्तर विकास और सन्तुलित पोषक तत्व अनुप्रयोग को बढ़ावा देने के लिए आवश्यक है कि किसानों को उर्वरक वहनीय मूल्य पर उपलब्ध कराया जाए। इसी उद्देश्य से एकमात्र नियंत्रित उर्वरक यूरिया को सांविधिक अधिसूचित एक समान बिक्री मूल्य पर बेचा जा रहा है और नियंत्रण मुक्त फॉस्फेटयुक्त और पोटाशयुक्त उर्वरकों को एक सांकेतिक अधिकतम खुदरा मूल्य पर बेचा जा रहा है। उत्पादकों द्वारा नियंत्रित मूल्यों के कारण उनके निवेश पर उचित प्रतिलाभ अर्जित करने के सम्बन्ध में आ रही कठिनाईयों को यूरिया इकाईयों के लिए नई मूल्य निर्धारण नीति के अन्तर्गत और नियंत्रण मुक्त फॉस्फेटयुक्त और पोटाशयुक्त उर्वरकों के लिए रियायत योजना के जरिए सहायता करके कम किया जा रहा है। सांविधिक तौर पर अभिसूचित बिक्री मूल्य और सांकेतिक मूल्य सामान्यत: उत्पादन इकाई की उत्पादन लागत से कम होते हैं। उत्पादन लागत और बिक्री मूल्य के बीच के अन्तर को उत्पादकों को शासकीय सहायता रियायत के रूप में भुगतान किया जाता है। चूंकि स्वदेशी और आयातित दोनों उर्वरकों का उपभोक्ता मूल्य समान रूप से निर्धारित किया जाता है, इसलिए आयातित यूरिया और नियंत्रण मुक्त फॉस्फेटयुक्त और पोटाशयुक्त उर्वरकों के लिए भी वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है।

कृषि में रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग का रोजगार पर प्रभाव–कृषि में रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग से कृषि आधारित रासायनिक उद्योगों एवं यातायात के प्रसार से रोजगार के अवसर उत्पन्न होते हैं। फलत: लोगों को रोजगार का अतिरिक्त अवसर प्राप्त होता है।

* शोधार्थी, डॉ. सी. वी. रमन विश्वविद्यालय, करगीरोड़, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

बिलासपुर संभाग में रासायनिक उर्वरकों की प्रगति – बिलासपुर संभाग में रासायनिक उर्वरकों के वितरण की प्रगति को सारणी क्रमांक–01 में प्रदर्शित किया गया है। 2007 में यूरिया की खपत 156578 टन थी जो कि 2014 में घटकर 145093 टन रह गई है। अगर 2013 को छोड़ दिया जाए तो 2007 से अब तक यूरिया की खपत में निरन्तर कमी आई है। वहीं सुपर फॉस्फेट की खपत में निरन्तर वृद्धि हुई है। 2007 में सुपर फॉस्फेट की खपत 42434 टन थी जो कि 2014 में बढ़कर 51007 टन हो गई है। बिलासपुर संभाग में कुल रासायनिक उर्वरकों की खपत 2007 में 262860 टन थी जोकि 2014 में 0.01 प्रतिशत की नगण्य वृद्धि के साथ 264903 टन हो गई है।

सारणी क्रमांक–01 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

सारणी क्रमांक–02 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

क्रमांक–02 के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि कृषि उर्वरक के रूप में नत्रजन की खपत प्रति हेक्टेयर निरन्तर कम हो रही है। 2007 में उपयोग की जाने वाली प्रति हेक्टेयर कुल रासायनिक उर्वरक 109.46 किलोग्राम में नत्रजन का भाग 76.15 किलोग्राम (69.57 प्रतिशत) था, जो कि घटकर 2008 में 75.19 किलोग्राम (65.98 प्रतिशत), 2009 में 72.35 किलोग्राम (63.85 प्रतिशत) एवं 2010 में 65.64 किलोग्राम (58.29 प्रतिशत) हो गया है। वहीं प्रति हेक्टेयर स्फूर की खपत निरन्तर वृद्धि हो रही है। 2007 में 23.96 किलोग्राम (21.89 प्रतिशत) प्रति हेक्टेयर खपत थी जो कि 2010 में बढ़कर 34.72 किलोग्राम (30.83 प्रतिशत) प्रतिहेक्टेयर खपत हो गई है। पोटाश की खपत में भी प्रति हेक्टेयर वृद्धि हुई है। 2007 में 9.35 किलोग्राम (8.54 प्रतिशत) से बढ़कर 2010 में 12.24 किलोग्राम (10.87 प्रतिशत) हो गया है।

बिलासपुर संभाग में प्रति हेक्टेयर रासायनिक उर्वरकों की खपत में वृद्धि हुई है। 2007 में प्रति हेक्टेयर 109.46 किलोग्राम खपत थी जोकि घटकर 2008 में 113.96 किलोग्राम, 2009 में 113.32 किलोग्राम एवं 2010 में 112.60 किलोग्राम हो गया है।

रासायनिक उर्वरकों का उत्पादकता पर प्रभाव–सारणी क्रमांक–03(देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

क्रमांक–03 से स्पष्ट होता है कि बिलासपुर संभाग में कृषि हेतु 2007 में 1239.65 हजार हेक्टेयर क्षेत्र उपलब्ध था। जो कि विगत छ: वर्ष उपरान्त 2013 में 1.28 हजार हेक्टेयर नगण्य वृद्धि के साथ 1240.93 हजार हेक्टेयर हो गया है। अर्थात् कृषि हेतु क्षेत्र सीमित व निश्चित है। यह अन्तर विभिन्न प्रयोजनों से भू–उपयोग परिवर्तन के कारण है। जहाँ तक उत्पादन का प्रश्न है, इन्ही वर्षों में 1627.71 हजार मैट्रिक टन से बढ़कर 2045.34 हजार मैट्रिक टन दर्ज किया गया। इस तरह 417.63 हजार मैट्रिक टन की कुल उत्पादन में वृद्धि दर्ज की गई। सारणी क्रमांक–01 से स्पष्ट होता है कि 2007 से 2013 के मध्य रासायनिक उर्वरक की खपत में 15.47 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इसी अवधि में प्रति हेक्टेयर 25.51 प्रतिशत उत्पादन में की वृद्धि के साथ प्रति हेक्टेयर उत्पादन 1313.04 किलो ग्राम से बढ़कर 1648.23 किलोग्राम हो गयी है। उत्पादकता में यह वृद्धि रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग, कृषि यंत्रीकरण एवं सिंचाई सुविधाओं में विस्तार का ही परिणाम है।

रासायनिक उर्वरकों की उपयोग की सीमाएँ – प्राय: रासायनिक खाद और कीटनाशक का बहुत कम हिस्सा अपने वास्तविक उद्देश्य के काम आता है। इनका एक बड़ा हिस्सा हमारे विभिन्न जल स्रोतों में पहुँच जाता है और भू–जल को प्रदूषित करता है। इसके कारण गंभीर स्वास्थ्य समस्याएँ इस पानी का उपयोग करने वाले स्थानीय निवासियों और पालतू पशुओं दोनों में देखी गई हैं। नदी और अन्य जल स्रोतों के प्रदूषण का बुरा असर मछलियों को भी भुगतना पड़ता है। एक खाद्यान्न उत्पादन बढ़ाने के प्रयास में दूसरे खाद्यान्न का ह्रास होता है। तालाब जैसे जल स्रोत में नाइट्रोजन अधिक पहुँचने से हानिकारक पौधों का तेज प्रसार तालाब की उपयोगिता को समाप्त कर सकता है। मिट्टी का उपजाऊपन बनाने वाले अनेक सूक्ष्म जीवों केंचुओं आदि के लिए ये रसायन कहर ढाते हैं। साथ ही किसानों के मित्र अन्य कीट पतंगों, पक्षियों और अन्य जीवों के लिए भी ये रसायन हानिकारक होते हैं।

निष्कर्ष– कृषि में रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग से कृषि उत्पादकता में वृद्धि होती है और कृषकों के आय में वृद्धि के साथ ही साथ जीवन स्तर में भी सुधार होता है। कृषि में रासायनिक उपकरणों के उपयोग से कृषि आधारित रासायनिक उद्योगों एवं यातायात में विस्तार से रोजगार के अवसर उत्पन्न होते हैं। इस तरह तीनों परिकल्पना– रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग से बिलासपुर संभाग की कृषि उत्पादकता में वृद्धि हुई है और लागतों में कमी आयी है, रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग से कृषकों की आर्थिक दशा में सुधार हुआ है और रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग से भूमि की उत्पादकता पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ा है, सत्य सिद्ध हुई।

सुझाव – उर्वरक, पौधों के लिए आवश्यक तत्वों की तत्काल पूर्ति के साधन है, लेकिन इसे अन्धाधुन्ध प्रयोग के कुछ दुष्परिणाम भी हैं। ये लम्बे समय तक मिट्टी में बने नहीं रहते हैं। सिंचाई के बाद जल के साथ ये रसायन जमीन के नीचे भौम जलस्तर तक पहुँचकर उसे दूषित करते हैं। मिट्टी में उपस्थित जीवाणुओं और सुक्ष्मजीवों के लिए भी ये घातक साबित होते हैं।
वहीं दूसरी ओर किसानों के मित्र कहे जाने वाले कीडे, केंचुएँ खत्म हो रहे हैं।

अत: कृषि भूमि को धीरे–धीरे रसायनों की लत से मुक्त कर हमें अपने देश में उपलब्ध जैविक खाद का भरपूर उपयोग करना होगा। किसानों को इस कार्य के लिए तकनीकी और आर्थिक सहायता देनी होगी, जिससे हमारे कृषि भूमि के साथ–साथ नदी, तालाब का पानी प्रदूषित न हो।

फसलों को जिन विभिन्न पोषक तत्वों की आवश्यकता है, कुछ की अधिक मात्रा में और कुछ की सूक्ष्म मात्रा में, उन्हें उपलब्ध करावाने के लिए प्रकृति की अपनी व्यवस्था है। जैसे– दलहनी फसलों में वायुमण्डल से नाइट्रोजन नि:शुल्क प्राप्त करने की अद्भुत क्षमता है। अत: हमें मिट्टी की उर्वरा–शक्ति को बनाये रखने के लिए फसल चक्र सरीखे तरीकों का प्रयोग करना चाहिए।

मृदा परीक्षण उपरान्त ही सन्तुलित मात्रा में ही रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग करना चाहिए ताकि नकारात्मक पक्ष से बचा जा सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. मिश्र, डॉ0 जय प्रकाश, कृषि अर्थशास्त्र, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स: आगरा।
2. आर्थिक सर्वेक्षण, आर्थिक एवं सांख्यिकी संचालनालय, छत्तीसगढ़, रायपुर।
3. वार्षिक रिपोर्ट, भारत सरकार, रसायन और उर्वरक मंत्रालय, उर्वरक विभाग, नई देल्ही।
4. जिला सांख्यिकीय कार्यालय, बिलासपुर, छ0ग0।
6. http://cg.nic.in/revenue/Table Of Agriculture Statistics 2013-14

सारणी क्रमांक-01

बिलासपुर संभाग में रासायनिक उर्वरक वितरण की प्रगति (खरीफ)

इकाई- टन में

उर्वरक / वर्ष	2007	2008	2009	2010	2012	2013	2014
यूरिया	156578	145115	133356	125393	152701	170312	145093
सुपर फास्फेट	42434	41002	48850	46275	52279	52603	51007
म्योरेट ऑफ पोटाश	12032	12748	13693	17071	13285	10943	6903
डी.ए.पी.	23103	25240	42750	50517	47040	42887	40098
इफको 12:32:16	15456	9359	2796	10932	13695	15334	17387
सुफला 20:20:0	6868	7880	8496	3969	5858	3934	344
सुफला 15:15:15	212	295	645	928	694	431	521
सुफला 14:35:14	226	60	333	1874	634	669	180
ब्रोमोर 28:28:0	1182	3365	1387	1676	2124	1296	687
ब्रोमोर 20:20:10	112	353	804	241	89	180	5
ब्रोमोर 10:26:26	495	7061	2922	2608	1887	2266	160
सी.ए.एन	675	656	269	869	119	0	0
टी.एस.पी.	0	1392	196	12	259	0	0
एम.ए.पी.	0	1339	0	0	100	0	0
अन्य	3487	15080	4591	5265	968	2679	2518
योग	**262860**	**270945**	**261088**	**267630**	**291732**	**303534**	**264903**
खपत में वृद्धि / कमी		**3.08**	**-3.64**	**2.51**	**9.01**	**4.05**	**-12.73**

सारणी क्रमांक-02

बिलासपुर संभाग में प्रति हेक्टेयर उर्वरक की खपत (खरीफ)

इकाई-किलोग्राम प्रति हेक्टेयर

वर्ष	नत्रजन	खपत प्रतिशत	स्फूर	खपत प्रतिशत	पोटाश	खपत प्रतिशत	योग
2007	76.15	69.57	23.96	21.89	9.35	8.54	109.46
2008	75.19	65.98	27.92	24.50	10.85	9.52	113.96
2009	72.35	63.85	31.24	27.57	9.73	8.59	113.32
2010	65.64	58.29	34.72	30.83	12.24	10.87	112.60

रासायनिक उर्वरकों का उत्पादकता पर प्रभाव

सारणी क्रमांक-03

बिलासपुर संभाग में कृषि फसलों का क्षेत्राच्छादन, उत्पादन एवं उत्पादकता

इकाई- क्षेत्र 000 हेक्टेयर, उत्पादन 000 मेट्रिक टन, उत्पादकता कि0ग्रा0 प्रति हेक्टेयर

वर्ष	क्षेत्राच्छान	उत्पादन	उत्पादकता
2007	1239.65	1627.71	1313.04
2008	1264.72	1472.58	1164.35
2009	1210.04	1442.03	1191.37
2010	1236.25	1886.71	1526.16
2011	1259.4	2047.48	1625.76
2012	1158.5	2197.78	1897.09
2013	1240.93	2045.34	1648.23

****

महिला स्वरोजगार मूलक योजनाओं का विश्लेषणात्मक अध्ययन

कमलराज सिंह उइके *

प्रस्तावना – प्राचीन काल में भारतीय नारी को उच्च स्थान प्राप्त था। बाद में उसकी सामाजिक स्थिति में गिरावट आने लगी और उसे परतन्त्र व निर्बल बना दिया गया। सामाजिक क्षेत्र में उसके अधिकार समाप्त हो गए और स्त्रियों की दशा दास तुल्य हो गई किसी भी देश की वास्तविक प्रगति को जानने के लिए वहां की महिलाओं की स्थिति का आंकलन अति आवश्यक है। क्योंकि महिलाओं के अधिकारों की उपेक्षा कर कोई भी समस्या अपने को विकसित नहीं कर सकता है। किन्तु आजादी के बाद नारी स्तर और शिक्षा में सुधार होता गया और नारी अत्यधिक जागरुक हो गई। आज भारतीय महिलाओं के विकास की ओर बढ़ते कदम पूरी दुनिया के लिए मिसाल बन चुके हैं। आज सरकार महिलाओं के उत्थान, विकास और उन्हें सशक्त बनाने वाले सारे प्रयासों पर जोर दे रही है। महिलाओं से संबंधित कम से कम 42 महिला विषिष्ट अधिनियम हैं, जिनके अंतर्गत महिलाओं को विभिन्न प्रकार के उत्पीड़न से कानूनी सुरक्षा प्रदान की जाती है।

इन महिला विशिष्ट कानूनों का मकसद महिलाओं को सही मायने में सशक्त बनाने की दृष्टि से अन्य बातों के साथ साथ महिलाओं को सामाजिक भेदभाव से संरक्षण प्रदान करने के अलावा समान अवसर प्रदान करना भी है। इस प्रकार हम देख रहें है कि आज महिलाओं के सशक्तिकरण की बात हो रही है। महिला सशक्तीकरण अर्थात महिलाओं को शक्तिशाली बनाना। दुनिया का कोई भी राष्ट्र महिला को सशक्त बनाए बगैर प्रगति नहीं कर सकता। महिला सशक्तिकरण से आशय है कि महिलाओं को पुरुषों के बराबर सामाजिक राजनैतिक वैधानिक एवं आर्थिक क्षेत्र में निर्णय लेने की स्वायत्तता हो। अर्थात महिला सशक्तीकरण का अर्थ है कि महिलाओं को बराबरी का हक मिले। महिला सशक्तीकरण के मोटे तौर पर तीन पक्ष है। पहला महिलाओं में समाजिक स्तर पर स्वाभिमान, व आत्म सम्मान की भावना जागृत करना दूसरा महिलाओं को समान अधिकार प्रदान करना तीसरा आर्थिक मोर्चे पर महिलाओं का सम्पूर्ण विकास करना है तथा उनके शोषण को रोकना है और उन्हें सशक्त आर्थिक आधार देना जरुरी है। अगर महिलाओं को सशक्त करना है, तो यह तभी सम्भव हो सकेगा जब महिलाए आत्म निर्भर हों और आर्थिक निणर्यो में भागीदार हो।

यदि वास्तव में देखा जाय तो प्राचीन समाज से लेकर आज के आधुनिक कहे जाने वाले समाज तक स्त्रियां उपेक्षित ही रही है। आखिर स्त्रियों की इस उपेक्षा के पीछे कौन से कारण उत्तरदायी रहे है। उद्यमिता आजादी मिलने के 62 साल बाद भी महिलाओं की स्थिति तथा समाज में उनकी भूमिका में कोई बहुत ज्यादा बदलाव नहीं आया है। महिलाए उसी तरह शोषण की शिकार है, जैसे कि पहले थी। आज के आधुनिक कहे जाने वाले समाज में स्त्रियों को बाजार की वस्तु बना दिया गया है। आज चाहें विज्ञापन हो या फिल्में सभी जगह वस्तु बेचने के लिए स्त्री को उपभोग्या के तौर पर लगभग निर्वस्त्र ही दिखाया जाता है। चाहे वह वस्तु स्त्रियों से संबंधित हो या न हो। उद्यमिता स्वतंत्रता संग्राम के दौरान महिलाओं ने पुरुषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर कुर्बानियां दी थी लेकिन नेतृत्व हासिल करने में व अब भी बहुत पीछे है। पर जब तक अधिकांश महिलाएँ अशिक्षित, उपेक्षित और अंधविश्वासी रहेंगी तब तक सही मायनों में विकास नहीं हो सकता। समाज के सर्वांगीण विकास के लिए यह आवश्यक है कि महिलाओं को न केवल शिक्षित किया जाए बल्कि उन्हें आर्थिक रुप से भी सशक्त किया जाए लोगों का यह मानना है कि महिलाओं द्वारा घर में किए जाने वाले कार्यो की यदि आर्थिक गणना की जाए तो उन सेवाओं का मूल्य हजारों रुपये के बराबर है लेकिन वास्तव में इस सेवा का कोई भी मूल्यांकन आर्थिक रुप से नहीं किया जाता है। यही कारण है कि उनकी सेवाओं को नि:शुल्क मानकर उन्हें कुछ न करने के बराबर मान लिया जाता है। महिलाओं को सशक्त बनाने के विभिन्न तरीको में एक कारगार माध्यम यह हो सकता है। कि इनको अपने घर गृहस्थी के कार्यो के साथ-साथ स्वरोजगार के क्षेत्र में प्रवेश कराया जाए।

महिलाओं को पुरुषों के बराबर अधिकार देने के लिए संविधान की धारा 16(2) में व्यवस्था कर धारा 39 में उन्हें पुरुषों के बराबर जीविका अर्जित करने एवं समान कार्य के लिए समान वेतन प्राप्त करने तथा शोषण के विरुद्ध अधिकार प्रदान किए गये। इन कानूनों ने महिलाओं के लिये रोजगार का मार्ग खोला। 1971 में रोजगार के मामले में महिलाओं की सहभागिता 53 प्रतिशत पुरुषों की तुलना में मात्र 14 प्रतिशत था जो 1991 मे बढ़कर 22 प्रतिशत हो गई। जबकि पुरुषों की सहभागिता घटकर 51 प्रतिशत रह गई। यह महिला स्वालम्बन का बढ़ते हुए ग्राफ का परिचायक है। महान साम्यवादी नेता लेनिन ने भी महिलाओं की आर्थिक सहभागिता को नारी मुक्ति के लिए आवश्यक शर्त के रुप में स्वीकार्य किया है। एक शिक्षित महिला ही आर्थिक उत्पादन में भागीदारी रख सकती। महिलाओं को उनके अधिकारों के प्रति जागरुक करने के लिये भी शिक्षा की अत्यंत आवश्यकता है।

स्पष्ट है कि महिला सशक्तीकरण की राह में सबसे बडी बाधा महिलाओं में शिक्षा और जागरुकता की कमी है। यदि महिलाओं को शिक्षित बना दिया जाए तो वे अपने आर्थिक, समाजिक और राजनैतिक अधिकारों के प्रति जागरुक हो जाएगी। और तब ऐसी जागरुक महिलाओं को दबाना संभव नहीं होगा।

महिला डेयरी परियोजना – इस योजना को महिला दुग्ध समितियों का गठन, डेयरी व्यवसाय में महिला भागीदारी के लिये प्रोत्साहन दूध संकलन

* शोद्यार्थी (अर्थशास्त्र) अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

संसाधन और विपणन का प्रभारी संचालन तथा दूध उत्पादको को उचित मूल्य के भुगतान के लिए पशु पालन विभाग द्वारा चलाया जा रहा है। इसका लाभ महिला सहकारी दूध समिति की ऐसी महिलाए जो पशु-पालन एवं डेयरी व्यवसाय में रुचि रखती हों तो इसका लाभ ले सकती है। सरकार द्वारा इन्हें भरपूर सहायता दी जाएगी।

महिलाओं के लिए मध्यप्रदेश सरकार की कुछ और लाभकारी योजनाओं का क्रियान्वयन –

रोजगार और आत्मनिर्भरता की दिशा में – राज्य सरकार ने महिलाओं को रोजगार के अवसर देकर, आत्मनिर्भर बनाने की दिशा में कई महत्वपूर्ण निर्णय लिये उन्हें अमली जामा भी पहनाया है। प्रदेश में पंचायत संस्थाओं और नगरीय निकायों में 50 प्रतिशत, वन समितियों में एक तिहाई आरक्षण उपलब्ध काराया हैं। महिलाओं की समृद्धि और विकास के लिए विभागीय बजट में अलग से प्रावधान 38 जिलों में महिला डेस्क, कार्यपालिका बल में उप निरीक्षक की भर्ती के लिए 10 प्रतिशत आरक्षण, रानी दुर्गावती बटालियान के लिए 239 पदों का सृजन महिलाओं में रचानात्मक को विकासित करने के लिए 2 लाख रुपये का रानी दुर्गावती पुरुस्कार, समाज सेवा और वीरता के क्षेत्र में एक-एक लाख रुपये का राजमाता विजयाराजे सिंधिया एवं रानी अंवती बाई पुरुस्कार और खेल में महिलाओं को प्रोत्साहन देने के लिए राज्य महिला अकादमी की स्थापना ग्वालियर म0प्र0 में दर्शाती है कि महिलाओं के विकास से जुड़ा हर मुद्दा सरकार की प्राथमिकता में सुमार है। अब लक्ष्य इनके जीवन स्तर में सुधार के साथ आगे बढ़ने के निरन्तर अवसर प्रदान करना है।

(क) महिला एवं बाल विकास विभाग –

(1) झूलाघर (2) कुष्ठ रोगिंयों के स्वस्थ बच्चों का कल्याण
(3) निराश्रित बाल गृह (4) शासकीय नारी निकेतन संस्थाएँ
(5) राजकीय महिला उद्धार गृह (इन्दौर)
(6) राजकीय महिला अनुरक्षण गृह (ग्वालियर)
(7) सिलाई, कढ़ाई, बुनाई केन्द्र (8) महिला वसति गृह
(9) महिलाओं के लिए अल्पकालीन आवास

(ख) ग्रामीण विकास विभाग –

(1) मध्यप्रदेश ग्रामीण रोजगार गारण्टी योजना
(2) विवेकानन्द समूह बीमा योजना
(3) राष्ट्रीय काम के बदले अनाज योजना

(ग) ग्रामोद्योग विभाग –

(1) खादी और ग्रामोद्योग बोर्ड द्वारा संचालित योजनाए
(2) परिवार मूलक इकाई की स्थापना
(3) स्वावलम्बन (4) उद्यमी विकास

(घ) म.प्र. हस्तशिल्प, हथकरघा विकास योजना –

(1) बुनकर सहकारी समिति के सदस्यों के समिति के अंश खरीदने के लिए अनुदान
(2) हाथकरघा बुनकर सहकारी समितियों की अंशपूँजी में शासन द्वारा अंश की खरीद (विनियोजन) हेल्थ पैकेज
(3) बाजार अध्ययन योजना
(4) उद्योगिक सहकारी संस्थाओं को कार्यशील पूंजी, ऋण अंश अनुदान तथा मार्जिन मनी सहायता
(5) उद्योग सहकारी समितियों के लिए वैतनिक पदाधिकारियों के प्रशिक्षण के लिए शासन द्वारा अग्रिम सहायता

(ड.) लोक स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण विभाग –

(1) स्वास्थ्य सुविधाए (2) परिवार कल्याण कार्यक्रम
(3) राष्ट्रीय उन्मूलन कार्यक्रम (4) राष्ट्रीय दृष्टिहीन नियंत्रण कार्यक्रम
(5) राष्ट्रीय आयोडीन अल्पता नियंत्रण कार्यक्रम
(6) राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण कार्यक्रम

(च) बीड़ी बनाने का कार्य –

(छ) ब्यूटी पार्लर –

(अ) शोध का क्षेत्र – अध्ययन में भारतीय महिला उद्यमी का अध्ययन किया गया हैं। कुछ विशेष महिला उद्यमी के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी जुटाई गई हैं। महिला उद्यमी के क्षेत्र को भारतीय सीमा तक ही रखा गया हैं।

(ब) जवशेष – महिला उद्यमी के अध्ययन का जवशेष महिला उद्यमिता के बारे में जानना है, महिला उद्यमी महिलाओं के आत्मनिर्भरता एवं सशक्तिकरण का माध्यम हैं। सरकार ने वर्ष 2001 को महिला सशक्तिकरण वर्ष घोषित किया । वर्ष 1990 के बाद से महिला उद्यमियों की संख्या में वृद्धि हुई है सरकार द्वारा महिलाओं के लिए कौन कौन से योजनाओं का क्रियान्वयन किया जा रहा है एवं महिला उद्यमियों के विकास पर इससे क्या प्रभाव पड़ा है कि महिलाओं के स्वरोजगार योजना का अध्ययन इस शोध का मुख्य जवशेष हैं।

उपकल्पना –

इस शोध पत्र में निम्न उपकल्पनाएं ली गयीं हैं –

1. महिलाओं की शिक्षा का विस्तार होने से उद्यमिता के प्रति जागरूकता आयी हैं।
2. महिलाएअपने अधिकारों को कर्तव्यों के प्रति सजग हुई है और समाज में उद्यमिता के जरिए विशिष्ट स्थान बनाने की ललक उनमें पैदा हुई हैं।
3. महिला उद्यमी पुरूषों की तुलना में उच्च कोटि की प्रबंधकीय क्षमता वाली होती हैं।
4. गृह कार्य के प्रति समर्पण का अनुभव उद्योग के क्षेत्र में भी वैसा ही बना रहता हैं।
5. जिले में महिला उद्यमी मनोवृत्ति का अभाव है।
6. महिला उद्यमियों को ऋण एवं अन्य सुविधाओं की प्राप्ति हेतु कई कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है

महिला उद्यमी के बढ़ते कदम (भारतीय परिवेष में) जिस व्यवसाय में महिलाओं का स्वामित्व प्रबंध और नियन्त्रण होता है, उसे महिला उद्यमी कहते हैं। कि यदि देश की समृद्धि संस्कृति आर्थिक स्थिति का अध्ययन करना है तो पहले उस देश की महिलाओं का अध्ययन करना चाहिए। यदि महिलाए सुखी सम्पन्न व समृद्ध हैं। तो देश भी उतना ही सुखी - सम्पन्न व समृद्ध होगा।

महिला उद्यमिता की समस्यायें –

1. देश का समाजिक ढांचा परम्परागत एवं महिला उद्यमियों के प्रति कठोर, संवेदनहीन है।
2. सामान्यत: महिलाओं में अपने आप निर्णय लेने की क्षमता का अभाव होता है।
3. भारतीय महिला उद्यमियों की प्रमुख समस्या भारतीय पुरुषों की दोहरी मानसिकता है।
4. पुरुष श्रमिको एवं कर्मचारियों के साथ काम न कर पाना।
5. महिला उद्यमी कभी-कभी नवीनतम तकनीक से पूर्णत: जानकारी नहीं

ले पाती है। जिससे उत्पादन लागत में वृद्धि हो जाती है।

6. भारत में महिलाओं की साक्षरता का प्रतिशत पुरुष की तुलना में कम है, शिक्षा के अभाव में वह तकनीकी ज्ञान एवं विपणन के संबंध में सजग नहीं रह पाती। जिसका विपरीत प्रभाव उनके व्यवसाय के विकास पर पड़ता है।
7. महिला उद्यमियों को सामान्यत: ऋण की प्राप्ति में अनेक कठिनाओं का सामना करना पड़ता है।

सुझाव –

1. महिला उद्यमियों की समस्याओं के समाधान के लिए महिला सशक्तिकरण के विकास को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।
2. महिला उद्यमिता को प्रोत्साहित करने के लिए औद्योगिक परिवेष को बदलना होगा। साथ ही महिला उद्यमियों को विभिन्न प्रकार की रियायतें देनी चाहिए तथा कुछ विशिष्ट उद्योगो को महिला उद्यमियों के लिए आरक्षित कर देना चाहिए।
3. महिला उद्यमियों को कम ब्याज दर शाख सुविधा उपलब्ध करायी जानी चाहिए।
4. महिला उद्यमियों को श्रेष्ठ प्रबंधक बनाने के लिये प्रबंधकीय शिक्षा आवश्यक है। अत: महिलाओं के लिए प्रबंधकीय एवं व्यवसायिक शिक्षा का विस्तार किया जाना चाहिए।
5. महिला उद्यमियों को प्रोत्साहित करने के लिए महिलाओं को उत्पादन की नवीनतम तकनीको से परिचित कराया जाना चाहिए।
6. महिला उद्यमियों एवं पुरुषों के साथ बराबरी का अधिकार देना चाहिए।
7. पारिवारिक दृष्टि से महिलाओं को निर्णय लेने की स्वतंत्रता का अधिकार देकर प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।
8. सरकारी नीतियों एवं सूचनाओं की जानकारी सीधे महिलाओं तक पहुँचाने की व्यवस्था की जानी चाहिए।

निष्कर्ष – हमारे देश की पहली नागरिक महिला हैं, लोकसभा स्पीकर महिला है, केन्द्र सरकार के अध्यक्ष पद पर भी महिला है। चार राज्यों की मुख्यमंत्री भी महिला है। व्यापार व्यवसाय बैंक आदि बड़ी बड़ी संस्थाओं में महिलाओं की संख्या बढ़ती जा रही है। महिला उद्यमी बनकर आत्म निर्भर एवं देश के विकास में पुरुषों के बराबर सहभागी बन रही है। महिला उद्यमियों के लिए सामाजिक आर्थिक राजनैतिक दृष्टिकोण से बड़े बदलाव की सोच रखनी चाहिए। उनको समानता का अधिकार केवल संविधान में न होकर व्यवहारिक भी होना चाहिए। सभी महिलाएं स्वतंत्र रुप से कार्य कर सकती है। और अपने परिवार और देश के विकास में भागीदारी निभा सकती हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. एस. अखिलेख (2010) महिला सशक्तिकरण दशा एवं दिशा गायत्री पब्लिकेशन रीवा।
2. सिद्दकी सहेदा (2008) नगरीय मुस्लिम महिलाओं का शैक्षिणिक स्थित पेज नं. 46–47
3. राय पारस नाथ (1973) अनुसंधान परिचय लक्ष्मी नारायण अग्रवाल आगरा।
4. शुक्ला एस. एम., सहाय एस.पी. (2005) सांख्यिकी के सिद्धांत साहित्य भवन पब्लिकेशन हॉपिटल रोड़ आगरा।

****

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में महिला सशक्तिकरण

डॉ. नीलम मिश्रा *

शोध सारांश – आज की महिला अपने कर्तव्यों को गृहकार्य की इंति श्री ही नहीं समझती है, अपितु अपने सामाजिक दायित्यों के प्रति भी सजग है। वह अब स्वयं के प्रति सचेत होते हुए अपने अधिकारों के प्रति आवाज उठाने का हौसला रखती है। कोई सिर्फ यह कहकर उनके आत्म विश्वास को तनिक भी नहीं हिला सकता है कि वह एक नारी है। शिक्षा के चलते नारी जागरूक हुई और इस जागरूकता ने नारी के कार्य क्षेत्र की सीमा को घर की चार दीवारी से बाहर की दुनिया तक फैला दिया। शिक्षा के बढ़ते प्रभाव के चलते आज नारी भी अपने कैरियर के प्रति संजीदा है।

प्रस्तावना – समाज में सदियों से ही महिलाओं का स्थान गौरवशाली रहा है। पौराणिक कथाएँ और इतिहास इस बात की साक्षी है कि महिला न केवल पूज्य रही है बल्कि समाज को नेतृत्व प्रदान करने में महत्वपूर्ण एवं अग्रणी भूमिका निभाई है। आधुनिकता के नाम पर जब से पुरूष प्रधान समाज की स्थापना हुई महिला स्थान गौण हो गया, जिसके चलते समाज के ही लोग शोषक बन गए।

मध्यकाल में नारी की स्थिति और भी गिर गई, आक्रमणकारियों के भय के कारण महिलाओं की सुरक्षा के लिए उसे पर्दे में छिपाकर रखा जाने लगा। पर्दा प्रथा,सती प्रथा,वैश्यावृत्ति आदि कुरीतियां तथा अत्याचार बढें कलांतर में आक्रमणकारियों से नारी की सुरक्षा में सपने को असमर्थ पाकर कन्या जन्म से पूर्व ही मार दिया जाने लगा। इन परिस्थितियों के बावजूद भी कुछ महिलाओं ने राजनीति, साहित्य, शिक्षा और धर्म के क्षेत्रों में सफलता हासिल की वर्तमान युग में भारत में महिलाओं की स्थिति में पिछली कुछ सदियों से कई बदलावों का सामना किया है प्राचीन काल में पुरूषों के साथ बराबरी की स्थिति से लेकर मध्य युगीनकाल के निम्न स्तरीय जीवन और साथ ही कई सुधारकों द्वारा समान अधिकारों को बढावा दिए जाने तक भारत में महिलाओं का इतिहास काफी प्रगतिषील रहा है।

वर्तमान में महिलाए अब सभी तरह की गतिविधियों जैसे कि शिक्षा, राजनीति, मीडिया कला, और संस्कृति, सेवा क्षेत्र विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी में हिस्सा ले रही है।

हमारी भारतीय संस्कृति ने सदैव ही नारी जाति को पूज्यनीय एवं वन्दनीय माना है। नारी का रूप चाहे माँ के रूप में हो, बहन हो बेटी हो, अथवा पत्नी के रूप में हो नारी सम्मान की बात आदिकाल से ही हमारे समाज में विद्यमान रही है। हमें यह बात भी ज्ञात है कि नारी प्रेम, स्नेह, करूणा एवं मातृत्व की प्रतिमूर्ति है। जिस प्रकार से कोई भी पक्षी एक पंख के सहारे उड नहीं सकता उसी प्रकार नारी के बिना पुरूष की कल्पना भी नहीं की जा सकती।

विश्व की आधी आबादी महिलाओं की है ,लेकिन भारतीय समाज में महिलाओं को वह स्थान प्राप्त नहीं हो सका, जिसकी वह हकदार है। सदियों से महिलाओं में घरेलू हिंसा भारतीय समाज में प्रचलित है। घर की चार दीवारी में कैद महिलाएँ तमाम जुल्म और ज्यादतियों को चुपचाप सह जाती थी। वक्त बदल रहा है, पहले महिलाएँ इसलिए जुल्म सहती थी क्यों कि उनका आर्थिक आधार होता ही नहीं था, पति ही उनकी आर्थिक जरूरतों को पूरा करने का माध्यम था और महिलाओं की संख्या बहुत कम थी। लड़कियों को बाहर जाकर पढने– लिखने की आजादी बहुत कम थी अशिक्षा उनके आत्म विश्वास को कमजोर बना देती थी कि वह आवाज ही नहीं उठा पाती थी, पति का जुल्म भी इसलिए चुपचाप बरदाश्त करती थी, आज की नारी सभी बंधनों से मुक्त है। वह स्वतंत्र तथा शिक्षित है। अपने पैर पर खडी है, अब लडकियों और महिलाओं की जिन्दगी में में व्यापक बदलाव आ रहा है वह पढ़ाई के लिए मन पसंद स्कूल कॉलेजों में जा रही है। घर की दहलीज लांघकर नौकरी करके आर्थिक रूप से मजबूत हो रही है। भारतीय समाज सदैव से ही पुरूष प्रधान माना गया है लेकिन इस कथन के बदलाव की बयार इक्कीसवीं सदी में प्रारंभ हो चुकी है। आज की महिलाएँ सिर्फ गृहस्थी को सम्हालने तक की सीमित नहीं रही है, बल्कि हर क्षेत्र में उन्होनें अपनी उपस्थिति दर्ज करा दी है। व्यावसायिक क्षेत्र हो या पारिवारिक महिलाओं ने यह साबित कर दिया है कि वे हर वो काम कर सकती है, जो कभी पुरूष के योग्य समझा जाता था आज महिलाए अन्य कार्य क्षेत्र में भी पुरूषों के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर चल रही है। आईटी, पी.बी.ओ, मेडिकल, इंजीनियरिंग , पत्रकारिता, सेना, राजनीति, और विज्ञान में छलांग मारते आंकडे तो यही बताते है कि आज के जमाने की महिलाए हर उस क्षेत्र में अपनी कामयाबी के झण्डे गाड़ रही है जो अब तक पुरूषों का क्षेत्र माना जाता था। जिसके परिणाम स्वरूप आत्म निर्भरता और आत्म विश्वास की भावना पैदा हुई।

आधुनिक भारत में महिलाये राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री, लोकसभा अध्यक्ष, प्रतिपक्ष की नेता आदि शीर्ष पदों पर आसीन हुई है। वर्तमान में महिलाए पुरूषों के समकक्ष ही नहीं, बल्कि कई क्षेत्रों में तों पुरूषों के वर्चस्व को भी चुनौती दे रही है। पूरे देश की महिलाओं के लिए प्रेरणास्त्रोत बन चुकी मुक्केबाज एमसी. मेरीकाम हो या बैटमिन्टन स्टार सायना नेहवाल हो विश्व की सबसे शक्तिशाली महिलाओं में शुमार पेप्सीको सी.ई.ओ इंदिरा नुई हो या आई.सी.आई.सी.आई. की सी.ई.ओ. चन्द्रा कोचर हो चाहे अपने कल्पनाओं, हौसलों की ऊंची उडान भरने वाली आंतरिक्ष यात्री कल्पना चावला हो , या सुनीता विलियम इन्होने अपनी एक अलग राह चुनी और अपनी मंजिल तक पहुचने के लिए कदम बढाए चाहे स्वर कोकिला लता मगेशकर, आशा

* अतिथि विद्वान(अर्थशास्त्र)शासकीय महाविद्यालय, उंचेहरा, जिला - सतना (म.प्र.) भारत

भोसले हो या विश्व सुन्दरी ऐश्वर्या राय हो ये अपने फौलादी व्यक्तित्व और सकारात्मक दृष्टिकोण की वजह से इन्हें ताकतवर महिलाओं की श्रेणी में गिना जाता है।

महिलाए देश की आर्थिक ताकत और घर में बदलती आमदनी का बदलता चेहरा है, ये बदलाव पिछले एक दशक में कुछ इस तरह होता चला गया की देखते ही देखते जो बात खास थी वो आम हो गयी। कामकाजी महिलाए अब हर तरफ है, अब इनकी संख्या बहुत ज्यादा तेजी से बढ़ती चली जा रही है। महिलाए एक शहर से दूसरे शहर में बेधड़क घूम रही है, आम धारणा के विपरीत महिलाओं का एक बडा प्रतिशत कामकाजी है, वे पारिश्रमिक और कार्य स्थल पर अपनी स्थिति के मामले में अपने पुरूष सहकर्मी के साथ बराबरी पर है।

नारी की नयी सदी में सर्वदा एक नयी छवि उभर रही है महिलाए पिछली सदियों में जो बेडियों से जकडी थी उसे तोडकर आज वह अपने नयी पहचान बनाने में जुटी है, आज नारी अबला नही रही है वह पुरूषों से दुर्बल नहीं है बल्कि उससे कहीं ज्यादा सक्षम और सबल है। इस सन्दर्भ में राष्ट्र निर्माता स्वामी विवेकानन्द ने पहले कहा था कि 'किसी भी राष्ट्र की प्रगति का सर्वोत्तम थर्मामीटर है, वहां के महिलाओं की स्थिति' हमें नारियों को ऐसी स्थिति में पहुँचा देना है चाहिए, जहां वे अपनी समस्याओं को अपने ढंग से स्वयं सुलझा सके हमें नारी शक्ति के उद्धारक नहीं बल्कि उनके सहायक बनना चाहिए, भारतीय नारियां संसार की अन्य किन्हीं भी समस्याओं का सामना कर सकती है आवश्यकता है, उन्हें अवसर देने की। घर की घुटन भरी चारदीवारी प्राय: टूट चुकी है। कल की साधारण सी गृहणी आज कुशल प्रबंधक बनकर अपने कार्यों का, दायित्वों का निर्वहन कर रही है। उनकी इस भूमिका में नवीनता है, सृजनशीलता की आभा है। हालांकि नारी में यह प्रतिभा जन्मजात है। इसके साथ ही वर्तमान परिपेक्ष्य में महिला को यदि सफलता का पर्याय कहा जाए तो यह अतिश्योक्ति नहीं होगी साथ ही वर्तमान में महिलाए कुछ बातों को ध्यान में रखकर महिला शक्ति को और सशक्त बना सकती है।

चुनौतियाँ– इन चुनौतियों की वजह से आगे नहीं बढ़ पा रही महिलाए–

- पुरूषों के मुकाबले महिलाओं को 35 घंटे ज्यादा काम करना पड़ रहा है।
- दस साल में दुगुने से ज्यादा बढ़ गए महिलायों के खिलाफ अपराध।
- आज अठ्ठारह से कम उम्र में 26.8 प्रतिशत लड़कियां ब्याही जा रही है।
- 59 प्रतिशत् महिलाए आज भी घर से बाहर नहीं निकलती है।
- महिलाओं के खिलाफ सबसे बडा अपराध मारपीट रहा है।
- महिलाओं का वर्कप्लेस स्कूल कलेजों में शोषण।

वर्तमान में महिलाओं का सफर चुनौती भरा जरूर है, पर आज उसमें चुनौतियों से लड़ने का साहस आ गया है। अपने आत्मविश्वास के बल पर आज वह दुनिया में अपनी एक अलग पहचान बना रही है। आज की नारी आर्थिक व मानसिक रूप से आत्मनिर्भर है, परिवार व अपने कैरियर दोनों में तालमेल बैठाती नारी का कौशल वाकई काबिले तारीफ है किसी को षिकायत का मौका नहीं देने वाली नारी आज अपनी काबिलियत व साहस के बूते पर कामयाबी के मुकाम तक पहुँची है। चुनौतियों का हंसकर सामना करने वाली महिलाए आज हर क्षेत्र में अपना लोहा मनवा रही है। कल तक भावनात्मक रूप से कमजोर महिलाए आज आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बन रही है तथा अपनी जिन्दगी के महत्वपूर्ण फैसले स्वयं कर रही है। अपनी क्षमताओं से महिलाओं ने आज पुरूषों को पीछे छोडते हुए परिवार व समाज में एक अलग पहचान बनायी है। आत्म निर्भर बनकर आज महिलाए बाजार की हर चुनौतियों का सामना कर रही है।

सुझाव –

1. महिलाओं को यह निश्चित करना होगा कि वे अपनी जागरूकता को बढाएंगी प्रत्येक महिला प्रशासन और सत्ता से जुडे मुद्दों को लेकर अपनी जागरूकता बढ़ाए इसके लिए उन्हें नियमित तौर पर समाचारों और विचारों को सुनना होगा समाचार पत्र–पत्रिकाओं को पढ़ना होगा टी.व्ही. पर बुद्धिमानी बढ़ाने वाले कार्यक्रम देखने होगे और ऐसे भाषण सुनना होगा जो कि महिलाओं को राजनीति, आर्थिक और कानून से जुडे मुद्दों के प्रति सजग एवं सचेत बनाए ग्रामीण क्षेत्रों की महिलाओं को समझना होगा कि उनके लिए कौन सी नई योजनाए है ताकि वे इनसे अपने लाभ हासिल कर सके और अपने अधिकारों को प्राप्त कर सके।
2. जो महिलाए नौकरी नहीं करती है उन्हे विशेष प्रयास कर पेशेवर क्षमताओं को हासिल करना होगा ताकि वे स्वरोजगार प्राप्त कर सके उन्हें कारोबार करना सीखना होगा और इस बात का अहसास करना पड़ेगा कि इसके लिए उन्हें किसी दूसरे पर निर्भर नहीं रहना होगा।
3. उन्हें यह भी जानना होगा कि उनके क्षेत्र का निर्वचित प्रतिनिधि कौन है और उनके क्षेत्र में किस चीज की आवश्यकता है। यह जरूरत एक स्कूल की हो सकती है, सफाई स्टाफ की हो सकती है, नियमित जल और बिजली आपूर्ति का मामला हो सकता है।
4. सभी महिलाओं को निष्चित तौर पर दो कानूनों को अवष्य जानना चाहिए इसमें पहला है सूचना के अधिकार का कानून और दूसरा घरेलू हिंसा रोकथाम कानून ये दोनों कानून सामाजिक तौर पर महिलाओं को अधिकार देते है। सभी महिलाओं के लिए जरूरी है कि वे इन कानूनों के बारे जाने कहने का अर्थ है कि कानून की सीधी सरल जानकारी। इससे उन्हें कानूनों के बुनियादी प्रावधानों को जानने में मद्द मिलेगी और वे इस जानकारी के भरोसे आत्म निर्भर बनेगी। महिलाओ के लिए यह भी जरूरी है कि वह दृढ़ निष्चय करें कि अपने बच्चों पर नैतिक मूल्यों पर ध्यान देगी और आगे बढने का उदाहरण कायम करेगी। सबसे युवा और युवा भारत पारिवारिक देखभाल की उपज है और यह बताती है कि उन्हें स्कूली स्तर पर कैसी शिक्षा मिलती है परवरिश और स्कूली शिक्षा की गुणवत्ता तय करेगी कि उनमें सही गुणों का बीजारोपण किया जाता है या नहीं इस इस स्तर पर ज्यादातर शिक्षक महिलाए होती है। महिलाए अपनी क्षमताओं को साकार करने पर भी ध्यान दे सकती है और इसके लिए उन्हें उदयमी बनना होगा।
5. महिलाओं में आत्म रक्षा की शिक्षा की जागरूक होनी चाहिए उन्हें अपनी सुरक्षा स्वयं करने व आत्म निर्भर बनने के लिए कराटे एवं मार्शल आर्ट का प्रशिक्षण लेना होगा।
6. इसके साथ ही लिंगानुपात को ठीक करने एवं महिला एवं बालिका शिक्षा पर विशेष जोर देना होगा कहा भी गया है 'मानव को शिक्षा देना एक मानव को शिक्षा देने के बराबर है लेकिन एक महिला को शिक्षा देना पूरे परिवार को शिक्षा देने के बराबर है' वह आगे आने वाली पीढ़ी को सुशिक्षित एवं संस्कारित बना सकती है इसलिए हमारी संस्कृति को मातृ प्रधान माना गया है।
7. अच्छा कारोबार करने के लिए महिलाओं को विपणन और बैंकिंग क्षमताओं को विकसित करना होगा इस मामले में स्व– सहायता गुट

गठित करना एक सही तरीका हो सकता है।

निष्कर्ष– निष्कर्षत: महिला सशक्तिकरण का मतलब महिला को सशक्त करना नहीं महिला सशक्तिकरण का मतलब पुरूष की नकल करना भी नहीं है ये सब महज लोगों के दिमाग में बसी भ्रांतियां है, नारी सशक्तिकरण का बहुत सीधा सा अर्थ कि नारी और पुरूष इस दुनिया में बराबर है और ये बराबरी उन्हें प्रकृति से मिली है। महिला सशक्तिकरण एक जागृति है कि नारी और पुरूष दोनों इंसान है और समाज में समान अधिकार रखते है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. दैनिक भास्कर दैनिक जागरण, नई दुनिया समाचार पत्रों के न्यूज लेख।
2. Hindi.webduniya.com
3. Womens .Empoerment. com
4. Unmukth.Wordpress.com

****

भारत में स्वतंत्रता उपरान्त सहकारी कृषि साख का क्रमिक अध्ययन

डॉ. प्रगति जैन *

प्रस्तावना – यह स्पस्ट है कि स्वतंत्रता के पहले सहकारी कृषि साख नीति का सूत्रपात भारतीय कृषकों की ऋण ग्रस्तता को दूर करके उन्हें न्याय युक्त शर्तो पर साख उपलब्ध कराने के लिए किया गया था। यह नीति असंस्थागत वित्त का त्याग एवं संस्थागत वित्त को प्रोत्साहन का प्रथम चरण था। संस्थागत वित्त में विशेषकर सहकारिता के माध्यम से कृषि साख प्रदान की अवधारणा को सर्वोपरि माना गया था।

सहकारी कृषि साख आन्दोलन के 100 वर्ष के इतिहास में प्रथम 50 वर्ष तो सहकारी कृषि साख के महत्वपूर्ण माने जाएगे। क्योंकि कृषकों को इस आन्दोलन के माध्यम से कृषि हेतु कई प्रकार की साख प्राप्त हुई है, जिसके कारण कृषकों की दिशा एवं दशा में सुधार की आशा की जानी चाहिए थी। यह न हुई है, किन्तु यह निश्चित तौर पर कहा जा सकता है कि सुधार की दशा में हम आगे बढे हैं।

सहकारी साख नीति की सफलता के लिए जरूरी है कि कतिपय आवश्यक तत्वों को समायोजित करके चलें। जिससे सहकारी साख की अपने निश्चित लक्ष्यों की प्राप्ति में सफलता सुनिश्चित हो सके। यह अनिवार्य है कि देश की कृषि साख नीति में मजबूत पक्ष व्यापक एवं प्रगतिशील साख व्यवस्था का निर्माण हो।

प्रथम योजना (1950-51से1955-56) – सहकारी साख नीति के क्षेत्र मे महत्वपूर्ण कार्यवाही भारतीय रिर्जव बैंक ने की है। इससे 'अखिल भारतीय ग्रामीण साख सर्वेक्षण समिति' को गठित करना था। (1) जिससे यह पता चला कि कुल साख का 97.7 प्रतिशत भाग असंस्थागत के रूप में प्रदान किया जा रहा था यह सोचनीय विषय था।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना (56-57 से 60-61) – इस योजना मे सर्वेक्षण समिति की सिफारिशों के आधार पर बनाया गया था। इसमें कृषि साख समितियों का गठन करना आवश्यक बनाया गया। इस काल में समितियों की संख्या 3.32 लाख तथा सदस्य संख्या 342 लाख थी ऋण प्रदान किये गये 203 करोड रूपये (2)

तृतीय पंचवर्षीय योजना (61-62 से 65-66) – मेहता समिति की सिफारिशों के आधार पर लख्यों एवं कार्यक्रमों का निर्धारण किया गया। योजना के अन्तिम वर्ष में (65-66) में यह अपेक्षा की गई थी कि 530 करोड रूपया अल्पावधि एवं मध्यावधि ऋणों के रूप में बांटा जायेगा। (3) साथ में कृषि साख के क्षेत्र में बहु-अभिकरण उपागम की नीति की शुरूआत की गई।

चतुर्थ योजना (69-74) – इस योजना में नई कृषि प्रविधि एवं अधिक उपज देने वाले कार्यक्रमों की सफलता के लिए बढ़ी हुए वित्त आवश्यकता की पूर्ति से सहकारी साख अभिकरण को मजबूत बनाने पर विशेष ध्यान दिया गया। कृषक विकास अभिकरण की स्थापना की गई।

पॉचवी पंचवर्षीय योजना (74-79) – इसके अन्तर्गत कृषि साख के क्षेत्र मे सहकारिता को ही प्रमुख संस्थागत एजेन्सी के रूप में मान्यता दी गई।

छटवी पंचवर्षीय योजना (1980-85) – इस योजना में प्राथमिक ग्राम साख को मजबूत करने के लिए एक स्पस्ट कार्यवाही कार्यक्रम बनाया गया था। इस योजना में अल्पकालीन ऋण 2500 करोड़ रूपये मध्यम – 250 करोड रू. तथा दीर्घकालीन 500 करोड रू के वितरित किये गये।

सातवीं योजना (1985-90) – कृषकों को निरन्तर रूप से ऋण उपलब्ध कराने के लिए एक विशेष कोष की स्थापना का प्रस्ताव था। इस योजना रू. 5540 करोड़ रूपये का लक्ष्य था उपलब्धि हुई 4223 करोड़ रूपये।

ऑठवी योजना (1992-97) – इस योजना में कृषि साख हेतु अल्प कालीन ऋण 11737 करोड रूपये का लक्ष्य था।

नौवी योजना (1997-2002) – कृषि साख हेतु छोटे कृषकों, सीमानत कृषकों को सर्वाधिक लाभ पहुॅचाना था।

क्योंकि गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले कृषक परिवारों को प्राथमिकता के आधार पर ऋण प्रदान किए गए।

दसवी पंचवर्षीय योजना (2002-2007) – इस योजना के प्रारूप में मुख्य संकल्प प्रति व्यक्ति आय, सकल घरेलू उत्पाद में वृद्धि, गरीबी की प्रतिशतता में कमी को ध्यान में रखकर सहकारिता के क्षेत्र को भी महत्व दिया गया है ।

यह अध्ययन दसवी पंचवर्षीय योजना तक किया गया है। – वर्तमान सन्दर्भ में कृषि साख में सहकारी साख के अतिरिक्त वाणिज्य बैंक भी अपनी महान महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर ग्रामीण (कृषि) साख प्रदान कर रही हैं। अब कृषि साख असंस्थागत साख पर निर्भर नहीं रह गई है।

देश में सहकारी कृषि साख को प्रदान करने वाले ढ़ांचे का समंको द्वारा चित्रण – सहकारी कृषि साख, सहकारी बैंक व्यवस्था का ढ़ांचा, एक पिरामिड के सदृश है। जो संधीय व्यवस्था पर आधारित है। सम्पूर्ण ढ़ांचे का आधार ग्राम-स्तर पर स्थापित प्राथमिक साख समिति (Primary Cridit Society) हैं। इन्हीं को मिलाकर केन्द्रीय समिति संगठित की जाती है। राज्य स्तर पर केन्द्रीय सहकारी बैंकों की एक संघीय संस्था स्थापित की जाती है जिसे सर्वोच्च या शिखर बैंक (Apex Bank) कहते हैं। इसे राज्य

* बुढ़ार, जिला-शहडोल (म.प्र.) भारत

सहकारी बैंक भी कहते हैं। नाबार्ड (राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक) सम्पूर्ण सहकारी व्यवस्था को आवश्यक वित्तीय सहायता प्रदान करता है। यह वित्तीय सहायता अल्प कालीन तथा मध्यम कालीन कृषि ऋण के रूप में प्रदान करती है। जबकि दीर्घावधी कृषि साख व्यवस्था का ढाँचा द्विस्तरीय है।

इसमें प्रत्येक जिले में जिला सहकारी कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक (पूर्व नाम भूमि विकास बैंक) कार्यरत है। राज्य स्तर पर शीर्ष सहकारी कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक है। यह व्यवस्था सम्पूर्ण देश के प्रत्येक राज्य में है।

भारत में प्राथमिक कृषि साख सहकारी समितियों की प्रगति पर दृष्टिपात करें तो वर्ष 1991-92 में समितियों की संख्या 83.00 हजार तथा सदस्य संख्या 86.76 मिलियन थी। जबकि 1995-96 में यह संख्या बढ़कर क्रमश: 92.30 हजार तथा 91.40 मिलियन हो गई। जबकि 1996-97 में यह स्थिति क्रमश: 91.62 हजार तथा सदस्य संख्या 92.10 मिलियन हो गई थी। (स्त्रोत- इंडियन को-आपरेटिव मूवमेनट ए प्रोफाईल 6 वां संस्करण 99 भारतीय राष्ट्रीय सहकारी संघ नई दिल्ली) संख्या एवं सदस्य संख्या में बडी आकार की आदिवासी बहुउद्देशीय समितियां और कृषक सेवा समितियां भी शामिल है।

भारत में प्राथमिक कृषि साख समितियों की वित्तीय स्थिति – राशि करोड रूपयो में) 1991-92 में निजि पूँजी रूपये 18.85 करोड़ रूपया तथा 77.51 करोड़ उधार राशियॉ थीं। जबकि क्रमश: 1995-1996 में 29.12 करोड़ रूपयों तथा 111.71 करोड रूपये उधार राशियां थी। इसी प्रकार 1997-98 मे निजिपूंजी स्वीकृत निधियां 35.84 करोड़ रूपये थी उधार राशियां 138.24 करोड रूपये थीं।

(स्त्रोत - नाबार्ड और भारतीय रिजर्व बैंक आर.बी.आई. बुलेटिन, भारत में बैंकिग की प्रवृत्ति एवं प्रगति संबंधी रिपोर्ट)

आंकड़ों की समीक्षा करने पर ज्ञात होता है कि निजी पूंजी वृद्धि 25.14 प्रतिशत रही है, किन्तु उधार राशियों में भी वृद्धि सर्वाधिक रही है।

सहकारी कृषि साख की श्रंखला में द्वितीय चरण पर **केन्द्रीय सहकारी बैंकों** का स्थान है। भारत में इनकी स्थिति इस प्रकार है -

1991-92 में केन्द्रीय सहकारी बैंकों की संख्या-351 थी उनकी निजि निधियां 1888 करोड़ रूपये थी। इसी प्रकार उधार राशियां 6021 करोड़ रूपये थी। जबकि 1995-96 में, क्रमश: संख्या 363 निजि निधियां 3943 करोड़ रूपये, 10041 करोड़ रूपये उधार राशियां थीं। जबकि 1997-98 में बढ़कर क्रमश: 367, 5977 करोड़ रूपये तथा 10729 करोड़ उधार राशियां थीं।

भारत में केन्द्रीय सहकारी बैंकों की जमाएं तथा कार्यशील पूंजी का विश्लेषण – जमायें 1991-92 में 11010 करोड़ रूपये, कार्यशील पंजी 20115 करोड़ रूपये थी जबकि 1995-96 मे 24397 करोड़ रूपये जमा पूंजी और कार्यशील पूंजी 52646 करोड़ रूपये थी।

स्त्रोत - नाबार्ड एवं भारतीय रिजर्व बैंक बुलेटिन से संगठित भारत मे बैंकिग की प्रगति सम्बन्धी रिपोर्ट)

जमाओं एवं कार्यशील पूँजी में निरंतर वृद्धि हुई है। अभी हाल में (नई दुनियां इन्दौर 5 मई 2002 पेज 17) में वित्त मंत्री श्री यशवंत सिन्हा ने कहा कि

'सहकारी बैंकों के पुर्नपूँजीकरण के लिए और सहायता देने पर उनका मंत्रालय विचार कर रहा है किन्तु बैंकों को साबित करना होगा कि भविष्य में उन्हें फिर इसकी जरूरत नहीं पड़ेगी। यह बात उन्होंने भारतीय राष्ट्रीय सहकारी संघ के एक समारोह में कही इसका कारण है कि पिछले कुछ समय से सहकारी बैंकों की साख गिरी है। उनके कारोबार पर अंगुली उठाई जाने लगी है।

राज्य सहकारी बैंकों की संख्या देश में 28 थी, जमाए 1300 करोड़ रूपये, वितरित किए ऋण 13921 करोड रूपये (वर्ष 1997-98 स्त्रोत - बी.एस.माथुर सहकारिता') साहित्य भवन 1999-2000 पेज 225)

केन्द्रीय सहकारी भूमि विकास बैंक प्रगति यह बैंक दीर्घकालीन साख प्रदान करता है, देश में इनकी संख्या 1997-98 की स्थिति में 20 थी कार्यशील पूँजी 9488 करोड़ रूपये, वितरित किये ऋण 1876 करोड़ रूपये तथा बकाया ऋण 6910 करोड़ रूपये था स्त्रोत (वही)पेज 237

राष्ट्र स्तर पर जो संस्थाएं सहकारी कृषि साख प्रदान करने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका नियोजन काल से लेकर 2000 तक निभा रही है। इससे ये तो निश्चित किया जा सकता है कि अब सहकारिता अपने प्रभाव क्षेत्र में बढ़ोतरी कर कृषकों को ऋण प्रदान कर रही हैं, किन्तु, इनकी मानीटीरिंग अथवा निमंत्रण को प्रभावी बनाया जाए तभी लक्ष्य की प्राप्ति हो सकती है। क्योंकि देश की ये संस्थाए घाटे में चल रही हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अखिल भारतीय ग्रामीण साख सर्वेक्षण समिति आर.बी.आई. 1956,65
2. डॉ. एच.सी.जैन, कृषि वित्त सिद्धांत एवं व्यवहार, म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी 1976
3. वही
4. के.पी. भटनागर मारन एवं विदेश में सहकारिता
5. बी.एम.माथुर सहकारिता, साहित्य भवन आगरा 2000
6. सी.एल.श्रीवास्तव, सहकारिता का अर्थशास्त्र सरस्वती सदन,दिल्ली 1984

****

शहडोल जिले की कृषि की स्थिति, कठिनाईयां एवं सुझाव - एक अध्ययन

राजेश कुमार अहिरवार *

प्रस्तावना - भारत कृषि प्रधान देश है। यहां की तीन चौथाई जनसंख्या कृषि पर निर्भर है। अर्थात कृषि के ही द्वारा उनका जीवकोपार्जन होता है। अर्थव्यवस्था की सकल विकास दर और कृषि कार्य के मध्य निकट का संबंध है। कृषि क्षेत्र समृद्धि सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था प्रतिनिधित्व करती है। कृषि ही लोगों के रहन-सहन पोषण के स्तरों में सुधार लाने में अहम् भूमिका निभाती है। शहडोल जिले में कृषि मुख्य रूप से मानसून पर निर्भर है। सिंचाई के अन्य साधनों का अभाव है। वर्तमान में जिले के मुख्य फसलें धान, गेहूँ, मक्का, कोदो, कुटकी, चना, मटर, मसूर, उड़द, अरहर, सरसों, राई, अलसी, सोयाबीन, मूंगफली आदि फसलों के लिए भूमि का उपयोग किया जाता है।

शहडोल जिले के कुल भूमि का क्षेत्रफल 561006 हेक्टेयर है। इसके अंतर्गत यदि हम व्यौहारी तहसील की बात करें तो व्यौहारी तहसील में वर्ष 2008 में कृषि योग भूमि 164553 हेक्टेयर थी। जो वर्ष 2010-11 में बढ़कर 216078 हेक्टेयर हो गई है इस प्रकार व्यौहारी तहसील में कृषि योग भूमि में वृद्धि हुई। इसी तरह जयसिंहनगर तहसील की कृषि योग भूमि जो वर्ष 2008-09 में 6367 हेक्टेयर रही वह 2010-11 में बढ़कर दस गुना हो गया। सोहागपुर तहसील में अधिकांश भूमि पहाड़ी पथरैली और रेतीली वाली है फिर भी यहां कृषि योग्य भूमि वर्ष 2010-11 में 89286 हेक्टेयर रही। जैतपुर तहसील का अधिकांश भाग जंगलों एवं पहाड़ियों से गिरा हुआ है। यहां कृषि परम्परागत तरीकों से की जाती है। अत: यहां अन्य तहसीलों के मुकाबले कृषि भूमि का उपयोग कम है। शहडोल जिला पूरी तरह से पहाड़ी क्षेत्र है। यह सतपुड़ा, मैकल, विंध्य क्षेत्र के बीच में स्थित यह जिले धरातल का भाग ऊँची-नीची है। जिसके कारण कृषि कार्य करने में समस्या उत्पन्न होती है। इसी प्रकार अधिकांश भागों में भूमि अत्यधिक ढाल युक्त पायी जाती है। जो कृषि कार्य करने में बाधक है।

कृषि के लिए मिट्टियों का ही बड़ा महत्व है। मिट्टी के गुण-अवगुण कृषि को पूरी तरह प्रभावित करते हैं। शहडोल जिले में मुख्यतया तीन प्रकार की मिट्टियाँ पायी जाती है।

1. हल्की एवं रेतीली मिट्टी।
2. मध्यम ढोमट मिटटी
3. भारी एवं काली मिट्टी

जिले में सबसे अधिक हल्की एवं रेतीली 76 प्रतिशत भाग एवं भारी एवं काली मिट्टी 6 प्रतिशत है। शहडोल जिले में भूमि कटाव भी कृषि के लिए एक समस्या है। यहां भूमि पटाव तेजी से जारी है। इसका मुख्य कारण है, यहां कि धरातल का समतल न होना यहां की भूमि कहीं ऊँची कहीं नीची पहाड़ी एवं पथरैली है। शहडोल जिले में भूमि कटाव निम्नांकित प्रकार है -

1. धरातलीय या परतदार कटाव
2. नाली या कछारदार कटाव
3. वायु द्वारा कटाव

एक सर्वे में पाया गया कि जिले के व्यौहारी तहसील के पूर्व दिशा में रेलवे स्टेशन से तीन किलोमीटर की दूरी पर लगभग 100 एकड़ भूमि पर भूमि का कटाव अत्यधिक तेजी से हो रहा है। शहडोल जिले में निम्नांकित कारणों से भूमि कटाव हो रहा है।

1. वनों तथा वनस्पतियों का विनाश के कारण
2. पशुओं द्वारा अत्यधिक चराई के कारण
3. स्थांतरित कृषि के कारण
4. कृषि का दोषपूर्ण ढ़ंग

शहडोल जिले में भूमि उपयोग प्राचीन परम्परागत विधि से होता आ रहा है इसलिए इस जिले में आज भी भूमि उपयोग में कृषि के लिए जितना होना चाहिए उतना नहीं हो पा रहा है। वर्तमान में 54.60 भूमि कृषि कार्य के उपयोग में लायी जा रही है। यही कारण है कि इस जिले में कृषि का प्रति हेक्टेयर उत्पादन न्यूनतम है और यह जिला आज भी कृषि के क्षेत्र में आत्मनिर्भरता प्राप्त नहीं कर पाया है।

कृषि कार्य के लिए सिंचाई का विशेष महत्व है, अच्छी सिंचाई के द्वारा ही अच्छी फसल होती है। शहडोल जिले में सिंचाई का स्तर अन्य जिलों के अपेक्षा बहुत कम है। यहां के कृषि मूल रूप से पूरी तरह वर्षा पर निर्भर है। सिंचाई के अन्य साधनों का यहां अभाव है। शहडोल जिले में किसानों के भूमि अलग-अलग है जिसके कारण उत्पादन कम होता है तथा अलग-अलग भूमि होने से कृषि कार्य करने में किसानों को कठिनाइयों का सामना करना पड़ता रहता है एवं उत्पादन कम होता है। जिले के अधिकांश किसान अशिक्षित हैं, जिनको कृषि के नई तकनीकों की जानकारी का अभाव पाया जाता है, जिसके कारण हुई खेती अभी भी कृषि का परम्परागत या पुराने तरीकों से करते हैं। जिले के किसानों के द्वारा देशी खाद बीजों का प्रयोग किया जाता है। जिसके कारण जिले के फसल उत्पादन कम हो रहा है।

जिले में किसानों के द्वारा रासायनिक खादों का उपयोग बहुत कम मात्रा में किया जा रहा है। जो शिक्षित किसान है, उनके द्वारा रासायनिक खादों या दवाईयों कीटनाशकों का उपयोग अत्यधिक मात्रा में किया जा रहा है। जिसके परिणाम को भूमि के उत्पादन क्षमता घटती जा रही है। जिससे भूमि बंजर का रूप ले रही है।

शहडोल जिले में प्रमुख फसलों के उत्पादन पर यदि एक दृष्टि डालते है, तो हम पाते है कि जिले की मुख्य फसल धान है, जो 37 प्रतिशत भूमि पर इसका उत्पादन हो रहा है। जिले धान का उत्पादन वर्ष 2006-07 में 127900 मिलियन टन था जो वर्ष 2010-11 में बढ़कर 200000 मिलियन टन हो गया। शहडोल जिले का दूसरा मुख्य फसल गेहूँ है, जिसका उत्पादन वर्ष 2006-07 में 17766 मिलियन टन था, जो वर्ष 2010-11 में घटकर 17117 मिलियन टन हो गया। अत: शहडोल जिले में धान के अपेक्षा गेहूँ घट रहा है। जो कि चिंता का विषय है।

* अतिथि विद्वान (अर्थशास्त्र)शासकीय नेहरू स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बुढ़ार, जिला - शहडोल (म.प्र.) भारत

सुझाव –

1. बंजर भूमि का उपयोग – जिले में कुल बंजर पड़त भूमि 46992 हेक्टेयर है, जिसका उपयोग लोगों को शिक्षित या जागरूक करके बंजर भूमि में उद्योग, धंधे, मकान, भवन, तालाब, नहरें, खेल का मैदान, हाट बाजार का उपयोग किया जाए। जिले में जनसंख्या के वृद्धि से भूमि की वृद्धि को बढ़ाया नहीं जा सकता है लेकिन बंजर भूमि को सुधार कर उपजाऊ बनाया जा सकता है। शोध अध्ययन में पाया गया कि जिले में बेकार पड़ी भूमि उनका उपयोग भू सुधार करके भविष्य में उसका उपयोग किया जाए।

2. भूमि उपयोग में वृद्धि करना – जिले में अभी मात्र 47 प्रतिशत भाग पर खेती की जाती है। जिसे भविष्य में सामाजिक आवश्यकता के अनुरूप भूमि का उपयोग कृषि कार्य में वृद्धि की जा सकती है तथा भविष्य में कृषि कार्य का बढ़ावा देने के लिए विभिन्न योजनाओं को लाभ दिया जाए।

3. चकबन्दी – जिले में सभी किसानों की भूमि अलग-अलग उसको एक चेक चकबन्दी की जाए। जिससे फसल उत्पादन में सुधार होगा।

4. जिले में विपुल उपज देने वाले बीजों के अन्तर्गत कम क्षेत्र होने का कारण फसलों की उत्पादकता कम है। अत: यह आवश्यक है कि किसानों के प्रशिक्षण के संबंध में व्यापक कार्यक्रम हाथ में लिया जाए। जिससे इनके द्वारा अधिकाधिक क्षेत्र अधिक पैदावार देने वाले बीजों के अंतर्गत आ सके। इसके अतिरिक्त मौसम और वर्षा पर अधिक निर्भरता के कारण जिले में खाद्यानों के उत्पादन में वर्ष दर वर्ष काफी परिवर्तन होता रहता है। फसलों के अंतर्गत भी सिंचित क्षेत्र कम है। इस कारण कृषकों को ऐसी बारानी कृषि पद्धितयों के अपनाने हेतु प्रेरित करना जरूरी है, जिन्हें बरानी कृषि परियोजना द्वारा अनुमोदित किया गया है।

5. उर्वरको के प्रयोग से अधिकतम लाभ से उठाने के लिए यह आवश्यक है कि उर्वरक संतुलित मात्रा में प्रयोग किया जाए। मिट्टी परीक्षण के पश्चात् क्षेत्र की वर्तमान उर्वरक स्तर को ध्यान में रखते हुए आवश्यकतानुसार मुख्य तत्वों नत्रजन, फास्फोरस तथा पोटास धारी उर्वरको की मात्राएँ निर्धारित की जाए और सही अनुपात में मिलाकर प्रयोग किया जाए।

6. कृषि उत्पादकता में वृद्धि हेतु उर्वरकों के उपयोग में वृद्धि आवश्यक है। अत: शासन को कृषकों के लिए समुचित सुविधाएँ उपलब्ध कराना चाहिए ताकि कृषि उपज के पर्यन्त प्रतिफल कृषकों को प्राप्त हो सके। भूमि उपयोग में उर्वरकों का मूल्य निर्धारण करते समय कृषि उत्पादन मूल्य को ध्यान में रखना चाहिए। कृषि अनुसंधान केन्द्र कृषि विश्व विद्यालय तथा विभिन्न अनुसंधान केन्द्रों के कृषि वैज्ञानिकों द्वारा भूमि उपयोग में बंजर भूमि को सुधार एवं चकबन्दी कर किसानों को उन्नत किस्म बीजों आदि की जानकारियों समय-समय पर कृषकों को देने की व्यवस्था करनी चाहिए। जिससे बंजर भूमि को भविष्य में अधिक उपयोगी बनायी जा सके। इस हेतु कृषि विश्वविद्यालय तथा कृषि विभाग के वैज्ञानिकों तथा कृषकों की सप्ताहिक एवं मासिक बैठक की व्यवस्था की जानी चाहिए।

1. भूमि की लम्बाई चौड़ाई से आगे की सोच।
2. प्रत्येक वर्ष में भूमि परीक्षण किया जाए।
3. भूमि की उचित मापन और मानचित्रण के लिए उपग्रह तकनीक का प्रयोग किया जाए।
4. किसानों को मृदा स्वास्थ्य कार्ड दिया जाए।

अनाज की हानि से बचने के लिए शीत भण्डारण सुविधाओं का विस्तार-

1. सुविधा जनक और सहज ऋण व्यवस्था का तंत्र विकास किया जाय।
2. कोल्ड स्टोरेज के निर्माण को प्रोत्साहित करने के लिए रियायतें किया जाए।
3. फसलों के उत्पादन के वास्तविक आँकड़े।
4. मांग वाले स्थानों पर अनाज की अपूर्ति किया जाय।
5. कृषि उत्पादों के भण्डारण और परिवहन के लिए विकसित तंत्र का निर्माण किया जाए।
6. कृषि उत्पादों का रेलवे द्वारा परिवहन किया जाए।

किसानों को संस्थागत वित्तीय सहायता, साहूकारों की भूमिका की समाप्ति-

1. दूर दराज के किसानों को ऋण उपलब्ध कराना।
2. किसान के क्रडिट कार्ड पर ध्यान दिया जाए।
3. ऋण उपलब्ध कराने वाली प्रक्रिया का सरलीकरण किया जाए।
4. फसल बीमा का विस्तार किया जाए।
5. किसानों को निम्न दरों पर ऋण दिया जाए।

आनुवांशिक रूप से संशोधित फसलें-

1. विज्ञान का प्रयोग होना चाहिए पर किसानों के हित में प्राथमिकता दिया जाए।
2. किसान की उच्च आय मूल्य संवर्द्धन पर ध्यान किया जाए।
3. कुपोषण से लड़ने एवं दवा उद्योग में सोयाबीन की प्रयोग की जाए।
4. शहडोल में गन्ना उत्पादन सहकारिता के माध्यम से की जाए।
5. ड्रिप सिंचाई को प्रोत्साहन दी जाए।
6. जिले में छोटी-बड़ी नदियों में बाँध निर्माण की जाए।
7. किसान और कृषि हितैषी सरकार से की जाए।
8. बेहतर कृषि से किसानों की क्रय शक्ति में वृद्धि की जाए।
9. कृषि आधारभूत संरचना का विकास और तकनीक के प्रयोग को प्रोत्साहन दिया जाए।
10. किसानों को तकनीकी प्रशिक्षण दिया जाए।
11. उर्वरकों के उत्पादन में मांग एवं पूर्ति में जैविक खादों का अधिक से अधिक उपयोग की जाए।
12. किसानों को उर्वरकों के वितरण उचित व्यवस्था की जाए।
13. वर्षा के जल को आवश्यकता के अनुरूप रोका जाए।
14. सिंचाई के सुविधाओं में वृद्धि की जाए।
15. भूमि कटाव को रोकने के लिए पशुचरण पर रोक लगाई जाए।
16. भूमि उपयोग मछली उत्पादन में भी की जाए।
17. कृषि कार्य में धान उत्पादन के लिए श्री पद्धति एवं संकर बीजों का उपयोग किया जाए।

संक्षेप में कृषि विकास की निहित सम्भावनाओं का त्वरित दोहन करके जिले के विकास की संवृद्धि में वृद्धि द्वारा ही विकास के लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ0 जयप्रकाश मिश्र, कृषि अर्थशास्त्र, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा 2004
2. शहडोल जिला, विष्णु भगवान मिश्रा।
3. कृषि विज्ञान केन्द्र शहडोल (म.प्र.)।
4. उपसंचालक विकास कल्याण तथा कृषि वितरण विभाग शहडोल (म.प्र.)।
5. शोधार्थी द्वारा निजी सर्वेक्षण एवं साक्षात्कार।

महात्मा गांधी

डॉ. टी. एम. खान *

प्रस्तावना – 'सत्य एक विशाल वृक्ष हैं , उसकी ज्यों–ज्यों सेवा की जाती हैं त्यों–त्यों अनेक फल आते हुए दिखाई देते हैं। उनका अंत नहीं होता ज्यों–जयों हम गहरे पैढते हैं, त्यो–त्यो उसमे से रत्न निकलते हैं।'–गांधी जी गांधी परिवार पंसारी का कारोबार करता था। बाद में दादा से लेकर पिछली तीन पीढ़ियों से वह दीवानगीरी करता रहा हैं।

ओता गांधी के दो विवाह हुए थे। प्रथम विवाह से चार पुत्र और दूसरे से दो। पांचवे पुत्र करमचंद या कला गांधी थे। कला गांधी या करमचंद गांधी, गांधी जी के पिता थे।

कबा गांधी के चार विवाह हुए थे। पहली 02 से दो पुत्री, आखरी पत्नी पुतली बाई से एक कन्या और तीन पुत्र थे, सबसे छोटे गांधी थे।

जन्म–2 अक्टूबर 1869 को पोरबंदर में हुआ (संवत 1825 की भादो बदी बारस के दिन) पिताजी दीवान थे, फिर भी थे तो नौकर ही जिस पर राजप्रिय थे, इसलिए अधिक पराधीन हैं।

पोरबन्दर से पिता राजस्थानिक कोर्ट के सदस्य बनकर राजकोट गए उस वक्त गांधी की उम्र सात साल की थी।

गांधी का विवाह बाल अवस्था में सपन्न हो गया। गांधी ने पढ़ा था कि एक पत्नी व्रत पालना पति का धर्म हैं, यही बात उनके मन में रम गयी। सत्य का तो शौक था ही उनकी भावना थी कि अगर मुझे एकपत्नी व्रत पालन हैं तो पत्नी को एकपति व्रत पालन चाहिए।

गांधी पत्नी को आदर्श स्त्री बनाना चाहते थे। इसलिए वह स्वच्छ बने स्वच्छ रहे, मैं सीखू सो सीखे मैं पढ़ सो पढ़े और हम दोनों एक दूसरे में ओत प्रोत रहे।

कस्तूरबाई अनपढ़ थी गांधी जी की इच्छा पढ़ाने की थी पर वह नाम और अक्षर ज्ञान तक ही रह सकी। विवाह के समय गांधी जी हाईस्कूल में पढ़ते थे। उन्हें शिक्षकों का प्रेम सदा ही मिलता रहा। पढ़ाई के दौरान अनेक छात्रवृत्तियां मिली।

गांधी जी का मानना था कि उच्च शिक्षा के पाठ्यक्रम में मातृभाषा के अलावा राष्ट्रभाषा हिन्दी, संस्कृत, फारसी और अंग्रेजी का स्थान होना चाहिए।

गांधी जी का मानना था कि मित्रता में अद्धैत भाव होता हैं। मित्रता समान गुण वालों के बीच शोभाती और निभती हैं। मित्र एक दूसरे को प्रभावित किए बिना रह ही नहीं सकते हैं। मित्रता में सुधार के लिए बहुत कम समय रहता हैं। घनिष्ठ मित्रता अनिष्ट हैं क्योंकि मनुष्य दोषों को जल्दी ग्रहण करता हैं।

'गांधी ने लिखा– मैं बहुत डरपोक था, चोर, भूत, सांप आदि के डर से घिरा रहता था। रात कहीं अकेले जाने की हिम्मत नहीं थी, दीए के बिना सोना लगभग नामुमकीन था।'

भाई के दोस्त से मित्रता एक दुखद प्रसंग था, जिसमें मांसाहारी प्रसंग जुड़ा। जिसके संबंध में गांधी ने लिखा–मेरी वह रात बहुत बुरी बीती नींद नहीं आई, स्वप्न में ऐसा भाषा होता था मानों शरीर के अंदर बकरा जिंदा हो और रो रहा हो।

विकारयुक्त दोस्त को सुधारने चला था परन्तु खुद ही गिरा और गिरावट का मुझे होश तक न रहा। एक बार ये मित्र मुझे वेश्याओं की बस्ती में ले गए, मित्र की बातों में आकर मैंने अपनी धर्मपत्नी को कितने ही दुख पहुंचाए हैं इस हिंसा के लिए अपने को कभी क्षमा नहीं किया।

गांधी ने कहा दुख हिन्दू स्त्री ही बर्दाश्त करती हैं, इसलिए मैंने स्त्री को सहनशीलता की मूर्ति के रूप में देखा हैं, स्त्री को सहचारिणी सहधार्मिणी माना।

गांधी जी को एक रिश्तेदार के साथ बीड़ी पीने का शोक लगा, पैसे नहीं होने के कारण बीड़ी के टुकड़े फिर लकड़ी के टुकड़े और अंत में आत्म हत्या का फैसला, चोरी का दोष तत्पश्चात उनका प्रायश्चित करना अपनी गलती को परिवार के समक्ष प्रस्तुत करना शुद्धत्तम प्रायश्चित हैं।

गांधी ने लिखा–मैं वैष्णव सम्प्रदाय में जन्मा था, धर्म अर्थात आत्मबोध, आत्मज्ञान हैं। धाय रम्भा ने समझाया था कि भूत प्रेतादि के भय से बचने के लिए रामनाम जपना आरंभ किया।

बचपन में जो बीज बोया गया वह नष्ट नहीं हुआ, आज रामनाम मेरे लिए अमोध शक्ति हैं, मन पर गहरा असर रामायण का परायण भी रहा। सभी धर्मो के लिए समान भाव उत्पन्न हुआ। सर्पादि और खटमल आदि को मारना नीति हैं, उस समय धर्म समझकर खटमल आदि का नाश भी किया।

किन्तु मन में एक चीज ने जड़ जमा ली यह संसार नीति पर टिका हुआ हैं, नीति मात्र का समावेष सत्य में हैं, सत्य को तो खोजना ही होगा।

नीति का एक छप्पय हृदय में बस गया अपकार का बदला अपकार न उपकार हो सकता हैं यह एक जीवन सूत्र ही बन गया।

गांधी जी भारतीय संस्कृति के पूजारी, प्रतीक आध्यात्मिकता के पथ के पथिक थे। इसी से वो भारत को भारतीय संस्कृति के सांचे में ढालना चाहते थे।

गांधी जी ने व्यक्ति को हस्तकला सीखने पर जोर दिया। मन की उन्नति के लिए उन्होंने सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचर्य, कायिक श्रम, सर्वधर्म समभाव पर जोर दिया। गांधी ऐसे महापुरूष थे जिनका सारा जीवन लोगो के लिए ही था। उन्हें न कोई अहंकार और न ही कोई स्वार्थ। वे दूसरे के दुख को अपना दुख और दुसरे के पाप से अपने को पापी भी मानते थे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डॉ.अमित शुक्ल रचना ।
2. गांधी जी सत्य के प्रयोग ।

* प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, धामनोद (म.प्र.) भारत

छत्तीसगढ़ की राजनीति में महिलाओं का योगदान

बिनोद कुमार साहू *

शोध सारांश – लोकतंत्र अब तक के मानव इतिहास में सर्वश्रेष्ठ शासन प्रणाली है। लोकतांत्रिक व्यवस्था को सफल बनाने हेतु सभी वर्ग एवं समुदायों का समान रूप से भागीदारी आवश्यक है। स्त्री–पुरूष समाज रूपी गाड़ी के दो पहिये है, अत: समाज को अग्रसर करने एवं सफल बनाने में दोनों की समान रूप से भागीदारी सुनिश्चित होना चाहिए। छत्तीसगढ़ प्रदेश के रूप में अपने विकास यात्रा के डेढ़ दशक पूर्ण कर चुका है। अपने विकास यात्रा की अल्पावधि में विभिन्न क्षेत्रों में उल्लेखनीय सफलता हासिल की है। छत्तीसगढ़ के विकास एवं समृद्धि में महिलाएं विविध क्षेत्रों में सक्रिय भूमिका निभा रहीं है। जहां एक ओर प्रदेश में महिला साक्षरता में सुधार हो रहा है तथा सामाजिक क्षेत्र में जागरूक हुई है, एवं आर्थिक रूप से स्वाललंबी एवं रोजगार की ओर उन्मुख हो रही है, वही राजनीतिक क्षेत्र में इनकी सहभागिता और सक्रियता में वृद्धि हुई है। 73 वॉ एवं 74 वॉ संविधान संशोधन विधेयक संसद में पारित होने के पश्चात् प्रदेश के ग्रामीण शासन एवं नगरीय निकायों में इनकी संख्या में पर्याप्त वृद्धि हुई है। स्थानीय संस्थाओं में विभिन्न पदो में अपनी योग्यता, निर्णय क्षमता एवं नेतृत्व का लोहा मनवा चुकी है। छत्तीसगढ़ त्रि–स्तरीय पंचायत निर्वाचन 2015 के विभिन्न पदो में 50 प्रतिशत से अधिक महिलाएं निर्वाचित हुई है। किन्तु संसद एवं विधानसभा में छत्तीसगढ़ की महिलाओं का प्रतिशत उनकी जनसंख्या के अनुपात में अत्यंत कम है। जिस प्रकार संसद विधानमंडलों में महिलाओं का अनुपात कम है, उसी प्रकार नवोदित राज्य छत्तीसगढ़ का है। अत: प्रदेश की शीर्ष नीतिनिर्माणक राजनीतिक संस्था अर्थात विधानसभा में महिलाओं का प्रतिनिधित्व आबादी के अनुरूप हो।

प्रस्तावना – जिस प्रकार भारतीय संस्कृति में नारी को महान शक्ति के रूप में सदैव आदर एवं सम्मान प्राप्त होता रहा है, उसी प्रकार छत्तीसगढ़ में सामाजिक, धार्मिक एवं आध्यात्मिक कार्यो में महिलाएं पुरूषों के सहभागी, अर्धागंनी बनकर महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। किन्तु यह भी सर्वविदित है कि भारतीय इतिहास में महिलाओं की स्थिति समय, काल परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तन हुआ है, अत: वैदिककालीन समाज में महिलाओं को प्राप्त स्वतंत्रता और समानता कालान्तर में वे पुरूष प्रधान समाज में शोषित और दोयम दर्जे बनकर रह गयी। अत: छत्तीसगढ़ की महिलाओं की स्थिति को भारतीय इतिहास के संदर्भ में समझने की आवश्यकता है। छत्तीसगढ़ के इतिहास के विभिन्न कालखंडो में नारी विभूतियों ने अपने कार्यो से नारी समाज को गौरान्वित किया है। रामायण काल में मर्यादा पुरूषोत्तम राम की माता कौशल्या दक्षिण–कोशल की राजकुमारी थी। छत्तीसगढ़ लोक गाथाओं में फुलकुॅवर, अहिमन रानी, रेवा रानी प्रमुख नारी पात्र है। माता अमरौतिन, माता सफुराबाई, मिनीमाता, दयावती, नगरमाता बिल्हीबाई, राजमोहिनी देवी, पद्मश्री तीजनबाई, पद्मश्री फुलबासन आदि ने विविध क्षेत्रों में सक्रिय भूमिका निभा कर महिला समाज के लिए अनुकरणीय उदाहरण एवं छत्तीसगढ़ के लिए प्रेरणास्त्रोत बनी।

छत्तीसगढ़ 01 नवम्बर सन् 2000 को भारतीय संघ का 26 वॉ राज्य बना। नि:संदेह छत्तीसगढ़ की महिलाए आज विविध क्षेत्रों में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। स्वतंत्रता के पश्चात् महिला शिक्षा को बढ़ावा मिलने से छत्तीसगढ़ की महिलाओं की व्यावसायिक गतिविधियों में वृद्धि हुई है। किन्तु राजनीतिक सहभागिता अभी भी जनसंख्या के अनुरूप नहीं है। संसद और विधानसभा में छत्तीसगढ़ की महिलाओं की उपस्थिति उनकी जनसंख्या के अनुरूप नही है। महिलाओं को विकास की मुख्यधारा से जोड़े बिना किसी समाज का सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक विकास की कल्पना संभव नहीं है।

लोकसभा में छत्तीसगढ़ की महिलाओं का प्रतिनिधित्व – भारत में प्रथम आम चुनाव सन् 1951–52 में हुआ था। स्वतंत्रता के पश्चात् अब तक 16 आम चुनाव सम्पन्न हो चुके है। लोकसभा निर्वाचन में छत्तीसगढ़ की महिलाओं का प्रतिनिधित्व अत्यंत कम है। श्रीमती मीनाक्षी देवी, मिनीमाता (1952,1957,1962,1967 एवं 1971) सर्वाधिक पॉच बार निर्वाचित हुई थी। श्रीमती केशर देवी (1962), श्रीमती रजनीगंधा (1967), श्रीमती पद्मावती (1967), श्रीमती पुष्पादेवी सिंह (1980), श्रीमती छबिला देवी नेताम (1996), श्रीमती करूणा शुक्ला (2004), सुश्री सरोज पाण्डेय (2009) एवं श्रीमती कमला देवी पाटले (2009 एवं 2014) में लोकसभा सदस्य निर्वाचित हुई। इस प्रकार स्पष्ट है कि अब तक प्रदेश में मात्र 09 महिलाओं ने 16 बार लोकसभा में निर्वाचित हुई। उसी प्रकार उच्च सदन राज्यसभा में छत्तीसगढ़ से श्रीमती वीणा वर्मा (1988), श्रीमती कमला मनहर (2004), श्रीमती मोहसिना किदवई (2004–10 एवं 2010–16) एवं श्रीमती छाया वर्मा (2016–22) महिला प्रतिनिधि राज्यसभा सदस्य निर्वाचित हुई। श्रीमती इग्रीड मैक्लाउड लोकसभा में इंग्लो इंडियन समुदाय की ओर से नामित सदस्य थी।

लोकसभा में छत्तीसगढ़ की महिलाएं– (देखे आगे पृष्ठ पर)

छत्तीसगढ़ विधानसभा में महिलाओं का प्रतिनिधित्व – छत्तीसगढ़ का प्रदेश के रूप में अस्तित्व 01 नवम्बर 2000 को हुआ। पुनर्गठन के पश्चात् छत्तीसगढ़ विधानसभा सदस्यों की संख्या 90 है। छत्तीसगढ़ राज्य के प्रथम विधानसभा (मध्यप्रदेश विधानसभा निर्वाचन– 1998 के अनुसार) में महिला विधायकों की संख्या मात्र 05 थी। राज्य के प्रथम मंत्री परिषद् में

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति शास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, धरमजयगढ़, जिला – रायगढ़ (छ.ग.) भारत

श्रीमती गीता देवी सिंह एकमात्र महिला थी। उल्लेखनीय है कि स्वतंत्रता के पश्चात् 01 नवम्बर 1956 को विंध्य, बुंदेलखंड, छत्तीसगढ़ महाकौशल एवं मध्यभारत को समाहित करके मध्यप्रदेश का गठन किया गया था। मध्यप्रदेश विधानसभा में छत्तीसगढ़ से श्रीमती इंदू सिंह, श्रीमती कमला देवी सिंह, श्रीमती गंगा पोटाई, श्रीमती पद्मादेवी सिंह, श्रीमती रश्मि सिंह, श्रीमती गीता देवी सिंह, श्रीमती करूणा शुक्ला आदि महिला विधायक रही। नवोदित राज्य में अब तक हुए विधानसभा निर्वाचन में 15 प्रतिशत से अधिक महिला विधायक नहीं निर्वाचित हुई है।

छत्तीसगढ़ विधानसभा में महिलाओं की भागीदारी- (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

पंचायती राज व्यवस्था में छत्तीसगढ़ की महिलाओं का प्रतिनिधित्व – यद्यपि राष्ट्रीय एवं राज्य राजनीति में छत्तीसगढ़ की महिलाओं की भागीदारी उनकी जनसंख्या के अनुरूप सुनिश्चित नहीं हो पाई है। वही छत्तीसगढ़ की राजनीति का एक सकारात्मक पक्ष यह भी है कि स्थानीय संस्थाओं (पंचायत एवं नगरीय निकायों) को संवैधानिक दर्जा मिलने के बाद त्रि-स्तरीय स्थानीय संस्थाओं एवं निकायों के निर्वाचनो में महिला प्रतिनिधियों की संख्या में उत्तरोत्तर वृद्धि हो रही है। 73 वाँ संविधान संशोधन अधिनियम 1992 में एक तिहाई पद तथा 110 वाँ संविधान संशोधन अधिनियम-2009 के द्वारा पंचायती राज संस्थाओं में 50 प्रतिशतपद महिलाओं के लिए आरक्षित किया गया है। इसके परिणाम- स्वरूप प्रदेश में महिला पंचायत प्रतिनिधियों की संख्या में वृद्धि हो रही है। आरक्षित पदो के अलावा सामान्य सीटों से भी महिलाएं निर्वाचित हो रही है जो महिला सशक्तीकरण एवं राजनीतिक सहभागिता के नये युग की शुरूआत के साथ-साथ भविष्य में आधी आबादी की भागीदारी उनकी जनसंख्या के अनुरूप सुनिश्चित होने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।

छत्तीसगढ़ पंचायत निर्वाचन- 2010 में महिलाओं का प्रतिनिधित्व(सारणी देखे)

छत्तीसगढ़ पंचायत निर्वाचन- 2015 में महिलाओं का भागीदारी(सारणी देखे)

छत्तीसगढ़ के जिला पंचायत अध्यक्षों में महिलाओं की भागीदारी(सारणी देखे)

निष्कर्ष – इस प्रकार स्पष्ट है कि समृद्ध एवं सशक्त समाज एवं समग्र विकास हेतु स्त्री- पुरूष दोनों की समान रूप से भागीदारी सुनिष्चित हो। प्रदेश में महिला आबादी के अनुरूप संसद और विधानसभा में प्रतिनिधित्व नहीं मिल पाई है। प्रदेश के रूप में अस्तित्व में आने के पश्चात् छत्तीसगढ़ के कुल 11 लोकसभा सीट में से किसी भी आम-चुनाव में 02 से अधिक महिला सांसद निर्वाचित नहीं हुई है। तथा कुल 90 विधानसभा क्षेत्र में 15 प्रतिशत से अधिक महिला विधायक निर्वाचित नहीं हुई है। वही पंचायती राज व्यवस्था लागू होने के पश्चात् वर्तमान में 50 प्रतिशत से अधिक महिलाएं निर्वाचित हो रही है। इतनी बड़ी संख्या में प्रदेश की पंचायतों में महिलाओं की संख्या में हो रही वृद्धि ने पंचायती राज व्यवस्था एवं महिला आरक्षण की सार्थकता को सिद्ध कर रहा है तथा यह महिला सशक्तीकरण एवं भविष्य में आधी आबादी की भागीदारी उनकी जनसंख्या के अनुरूप सुनिश्चित होने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम है। अत: आवश्यकता है कि वर्षो से प्रतिक्षारत् महिला आरक्षण (संसद और विधानमंडलों में एक तिहाई महिला आरक्षण) को मूर्त रूप देकर देश और प्रदेश की आधी आबादी को लोकतांत्रिक व्यवस्था एवं नीति और निर्णय निर्माण में सच्चे अर्थो में भागीदारी बनाने की दिशा में यह महत्वपूर्ण और सार्थक कदम होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. फड़िया बी.एल. एवं जैन पुखराज: भारतीय शासन एवं राजनीति, साहित्य भवन प्रकाशन, आगरा
2. गुप्ता, कमलेश कुमार (2005) भारतीय महिलाएं- शोषण, उत्पीड़न एवं अधिकार, बुक इन्क्लेव, जयपुर
3. सिंह सीमा (2010) पंचायतीराज और महिला सशक्तिकरण, प्रभात प्रकाषन, नई दिल्ली प्रथम संस्करण
4. बंदोपाध्याय डी. एवं मुखर्जी अमिताभ (2007) महिला पंचायत सदस्यों का सशक्तिकरण, राज पब्लिकेशन, नई दिल्ली
5. डॉ. नारायण इकबाल, भारतीय शासन एवं नगरीय जीवन, शिवलाल अग्रवाल एंड कम्पनी, आगरा
6. प्रतिवेदन छत्तीसगढ़ राज्य निर्वाचन आयोग रायपुर का पंचायत परिणाम
7. योजना (मासिक) , नई दिल्ली
8. कुरूक्षेत्र (मासिक), नई दिल्ली

लोकसभा में छत्तीसगढ़ की महिलाएं

लोकसभा	वर्ष	निर्वाचन क्षेत्र	निर्वाचित महिला प्रतिनिधि	प्रतिशत
13 वीं	1999-2004	11	01	9.09
14 वीं	2004-2009	11	02	18.18
15 वीं	2009-2014	11	01	9.09
16 वीं	2014-2019	11	01	9.09

छत्तीसगढ़ विधानसभा में महिलाओं की भागीदारी

लोकसभा	वर्ष	निर्वाचन क्षेत्र	निर्वाचित महिला प्रतिनिधि	प्रतिशत
प्रथम	2000-2003	90	05	5.5
द्वितीय	2003-2008	90	06	6.6
तृतीय	2008-2013	90	13	14.44
चतुर्थ	2013-2018	90	10	11.11

छत्तीसगढ़ पंचायत निर्वाचन– 2010 में महिलाओं का प्रतिनिधित्व

वार्ड पंच		सरपंच		जनपद पंचायत सदस्य		जिला पंचायत सदस्य	
कुल	महिला	कुल	महिला	कुल	महिला	कुल	महिला
145790	79663	9724	5116	2783	1569	321	190

छत्तीसगढ़ पंचायत निर्वाचन– 2015 में महिलाओं का भागीदारी

वार्ड पंच		सरपंच		जनपद पंचायत सदस्य		जिला पंचायत सदस्य	
कुल	महिला	कुल	महिला	कुल	महिला	कुल	महिला
155939	86008	10971	5561	2973	1595	402	223

छत्तीसगढ़ के जिला पंचायत अध्यक्षों में महिलाओं की भागीदारी

2005		2010		2015	
कुल	महिला	कुल	महिला	कुल	महिला
16	06	18	09	27	17

****

महिलाओं के अधिकारों से सम्बन्धित अधिनियम - एक विश्लेषण

डॉ. मीनाक्षी पँवार *

प्रस्तावना – मानव बुद्धिमान व विवेकपूर्ण प्राणी है और इसी कारण इसको कुछ ऐसे मूल तथा अहरणीय अधिकार प्राप्त रहते है, जिसे सामान्यतया मानव अधिकार कहा जाता है। चूंकि ये अधिकार उनके अस्तित्व के कारण उनसे सम्बन्धित रहते है। अत: वे उनमें जन्म से ही निहित रहते है। इस प्रकार मानव अधिकार सभी व्यक्तियों के लिए होते है, चाहे उनका मूल वंश, धर्म, लिंग तथा राष्ट्रीयता कुछ भी हो। ये अधिकार सभी व्यक्तियों के लिए आवश्यक हैं क्योंकि ये उनकी गरिमा एवं स्वतन्त्रता के अनुरूप है तथा शारीरिक, नैतिक, सामाजिक और भौतिक कल्याण के लिए सहायक होते है। ये इसलिए भी आवश्यक है क्योंकि ये मानव के भौतिक तथा नैतिक विकास के लिए उपयुक्त स्थिति प्रदान करते है। इन अधिकारों के बिना सामान्यत: कोई भी व्यक्ति अपने व्यक्तित्व का पूर्ण विकास नहीं कर सकता।

मानवाधिकार के क्षेत्र में व्यक्ति के कुछ ऐसे समूह है, जो अब भी उपयुक्त रूप से सुरक्षित नहीं है, यथा महिलाएं, जिनके अधिकारों की रक्षा विश्व समुदाय के लिए एक चुनौती है। समाज का बहुत बड़ा भाग इनसे गठित होता है। इसके अधिकारों की रक्षा इसलिए भी आवश्यक है कि कोई भी आर्थिक और सामाजिक विकास मानव अधिकारों के लिए सम्मान की आधार रेखा के बिना विद्यमान नहीं रह सकता हैं।[1] इनके अधिकारों का उल्लंघन समाज के प्रबल वर्ग द्वारा समय-समय पर किया जाता रहा है। अत: सभ्य एवं सुसंस्कृत समाज के लिए भी महिलाओं की रक्षा का समुचित प्रबन्ध आवश्यक है।

लिंग पर आधारित भेदभाव ऐतिहासिक घटना सदियों से रही हैं। यह सरकारों और विधि की विशेषता पूरे इतिहास के दौर में रही हैं।[2] लिंग पर आधारित अन्तर और अस्वीकार्य असमानताएं लगभग सभी देशों में आज भी जारी है। महिलाओं के साथ भेदभाव एवं उन्हें हाशिए पर कर दिए जाने का कार्य बड़ी दक्षता तथा सम्मानजनक ढंग से किया जाता है। अत: महिलाओं से सम्बन्धित मुद्दे वैश्विक और सार्वभौमिक है।

संयुक्त राष्ट्र घोषणा-पत्र, मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा एवं मानव अधिकारों की दो अन्तर्राष्ट्रीय प्रसंविदाओं द्वारा लिंग पर आधारित भेदभाव के विरूद्ध स्थापित सामान्य मानक पर जोर देते हुए अनेक अन्तर्राष्ट्रीय अधिनियम संयुक्त राष्ट्र तथा विशिष्ट अभिकरणों के तत्वावधान में अंगीकार किए गए है, वे इस प्रकार है –

महिलाओं के राजनीतिक अधिकारों पर अभिसमय, 1952 – महिलाओं के राजनीतिक अधिकार पर अभिसमय, 1952 संयुक्त राष्ट्र की महासभा द्वारा 20 दिसम्बर, 1952 को अंगीकार किया गया।[3] यह 7 जुलाई, 1954 से लागू हुआ। यह अभिसमय संयुक्त राष्ट्र चार्टर के घोषणा पत्र में दृढ़तापूर्वक प्रतिपादित पुरूषो एवं महिलाओं के समान अधिकारों के सिद्धांत को ठोस रूप प्रदान करता है।[4]

विवाहित महिलाओं की राष्ट्रीयता पर अभिसमय, 1957 – विवाहित महिलाओं की राष्ट्रीयता का अभिसमय, संयुक्त राष्ट्र की महासभा ने 1957 में अंगीकार किया था।[5] यह अभिसमय 11 अगस्त, 1958 को लागू हुआ। यह अभिसमय, जहाँ तक विवाहित महिलाओं के राष्ट्रीयता का प्रश्न है, महिलाओं और पुरूषों के बीच समानता के सिद्धांत को स्थापित करने का प्रयत्न करता हैं।

समान पारिश्रमिक अभिसमय, 1951 – समान पारिश्रमिक अभिसमय, अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की सामान्य सभा द्वारा 29 जून, 1951 को अंगीकार किया गया था, जो 23 मई, 1953 को लागू हुआ। यह सिद्धांत की पुरूषों तथा महिलाओं को समान कार्य के लिए समान पारिश्रमिक मिले, जो शांति संधि, 1919 में अंगीकृत सामान्य सिद्धांतों में से एक था। समान कार्य के लिए समान पारिश्रमिक के सिद्धांत को अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की उद्देशिका में भी मान्यता मिली है। [6]

महिलाओं के विरूद्ध सभी प्रकार के भेदभावों की समाप्ति पर अभिसमय, 1979 – महिलाओं के विरूद्ध सभी प्रकार के भेदभावों की समाप्ति पर अभिसमय, 1979 को संयुक्त राष्ट्र की महासभा ने 18 दिसम्बर, 1979 केा अंगीकार किया गया।[7] यह अभिसमय 3 सितम्बर, 1981 को प्रवृत्त हुआ। 11 अगस्त, 2006 तक इसमें 185 राज्य पक्षकार बन चुके हैं।

महिलाओं के विरूद्ध भेदभाव की समाप्ति पर समिति के लिए ऐच्छिक नयाचार, 1999 – संयुक्त राष्ट्र महासभा ने 7 अक्टूबर 1999 को महिलाओं के विरूद्ध सभी रूपों में भेदभाव की समाप्ति के लिए अभिसमय पर ऐच्छिक प्रोटोकाल को अंगीकार किया, जिसमें लैंगिक भेदभाव, यौन-शोषण एवं अन्य दुरूपयोग से पीड़ित महिलाओं को तथा महिलाओं के विरूद्ध भेदभाव की समाप्ति के लिए प्रोटोकॉल के राज्य पक्षकारों के विरूद्ध सक्षम बनायेगा। यह प्रोटोकॉल 22 दिसम्बर, 2000 को विधिवत् प्रवृत्त हो गया। 27 नवम्बर, 2007 तक इसमें 90 राज्य पक्षकार बन चुके हैं।[8]

महिलाएँ तथा विश्व मानवाधिकार सम्मेलन – उपर्युक्त अभिसमयों के अतिरिक्त संयुक्त राष्ट्र द्वारा प्रत्यायोजित अन्तर्राष्ट्रीय महिला दशक (1976-1985) के दौरान तीन सम्मेलन, पहला 1957 में मेक्सिकों सिटी में, दूसरा 1980 को कोपेनहेगेन में तथा तीसरा 1985 में नैरोबी में आयोजित किया गया तथा चौथा विश्व महिला सम्मेलन वर्ष 1995 में बीजिंग में हुआ, जिसके द्वारा महिलाओं के सम्बन्ध में बहुत अधिक जानकारी हुई है ओर जो राष्ट्रीय महिला आन्दोलनों एवं अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय के बीच अमूल्य कड़ी का आधार बना। नैरोबी सम्मेलन में वर्ष 2000 तक महिलाओं के लिए आगामी दृष्टि सम्बन्धी रणनीति प्रस्तुत की गयी थी, किन्तु अधिकांश क्षेत्रों

* प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शहीद भीमानायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

में उसका सम्यक रूप से क्रियान्वयन नहीं किया गया, फिर भी शिक्षा, स्वास्थ्य एवं रोजगार के क्षेत्र में उन्नति के स्पष्ट चिन्ह् प्रतीत होते है।

इन चारों अन्तर्राष्ट्रीय महिला सम्मेलन के बाद 1997 में नई दिल्ली में 29 सितम्बर से 1 अक्टूबर, 1997 तक **'वीमेन्स पॉलिटिकल वाच'** नामक गैर सरकारी संगठन ने संयुक्त राष्ट्र संघ और राष्ट्रीय महिला आयोग के सहयोग से विश्व सांसद सम्मेलन नई दिल्ली में आयोजित किया। इसका उद्देश्य महिलाओं की सत्ता में भागीदारी बढ़ाना तथा इस भागीदारी को कैसे सुनिश्चित किया जाए और इसे कैसे उत्तरोत्तर बढ़ाया जाए? इसी संदर्भ में 10 फरवरी, 1997 को भारत की राजधानी दिल्ली में अंतर संसदीय सम्मेलन व महिला राजनैतिक भागीदारी बढ़ाने के संदर्भ में सम्मेलन का आयोजन किया गया। इन सम्मेलन में 80 देशों के 250 प्रतिनिधियों ने भाग लिया। इसमें स्त्री-पुरूष भेदभाव समाप्त करने और नारी को सत्ता में भागीदारी देने की वकालत की गई।

भारतीय संविधान में महिलाओं के अधिकारों से सम्बन्धित अधिनियम – भारत ने संविधान के अनुच्छेद 14 के अन्तर्गत महिलाओं को समान अधिकार दिया है, जो यह उपबन्ध करता है कि राज्य धारण के क्षेत्र के अन्तर्गत किसी व्यक्ति को कानून के समक्ष समानता से इन्कार नहीं करेगा। संविधान का अनुच्छेद 15 यह भी उपलबन्ध करता है कि प्रत्येक महिला नागरिक को दुकानों, सार्वजनिक भोजनालयों, होटलों और सार्वजनिक मनोरंजन में प्रवेश करने का अधिकार होगा। साधारण जनता के प्रयोग में आने वाले कुओं, तालाबों, स्नान घरों, सड़कों के उपयोग के लिए महिलाओं पर कोई निर्बन्धन नहीं होगा। अनुच्छेद 17 यह प्रतिपादित करता है कि राज्य के अधीन किसी पद पर नियोजन या नियुक्ति से सम्बन्धित विषयों में महिलाओं के लिए अवसर की समानता होगी।

भारत में महिलाए समानता के अधिकार का उपभोग करती है, किन्तु उनकी स्थिति में और भी सुधार करने के लिए संविधान के अनुच्छेद 15(3) में यह उपबन्ध किया गया है कि राज्य महिलाओं के लिए विशेष उपबन्ध कर सकता है। फलस्वरूप समान स्तर प्राप्त करने के लिए और महिलाओं के विरूद्ध भेदभाव हटाने के लिए बहुत से विधिक उपबन्ध किए गए हैं। जैसे पंचायतों [9], तथा नगर पालिकाओं [10] में उनके पक्ष में 33 प्रतिशत सीटों का आरक्षण कर दिया गया है। यह संशोधन भारत में स्त्रियों के सामाजिक तथा आर्थिक विकास के लिए बहुत बड़ा कदम माना जाता है। संविधान प्रत्येक नागरिक पर यह भार भी डालता है कि यह महिलाओं के सम्मान के विरूद्ध भेदभाव की प्रथा का त्याग करें।[11]

संसद द्वारा 1990 में महिला राष्ट्रीय आयोग अधिनियम निर्मित किया गया। जिसने महिला राष्ट्रीय आयोग की स्थापना की, आयोग महिलाओं के शीघ्र तथा उचित विकास करने की शक्तियाँ रखता हैं।[12]

महिलाओं के अधिकार से सम्बन्धित अन्य मुख्य अधिनियम – भारतीय संविधान में विधिक अनुच्छेदों में महिलाओं के अधिकारों को महत्व दिया गया है। भारतीय संविधान तथा विभिन्न दण्ड संहिताओं में भी कई ऐसे नियम, विनियम, अधिनियम आदि बनाए गए है, जिनकी सहायता से महिलाओं के हितों की रक्षा की जा सकती है। महिलाओं के सहायतार्थ **अनेक अन्य मुख्य अधिनियम निम्नानुसार है –**

1. बाल-विवाह, अवरोध अधिनियम,1929 (संशोधन1978)[13]
2. मुस्लिम विवाह-विच्छेद अधिनियम, 1939 [14]
3. कारखाना अधिनियम, 1948 (संशोधन 1976) [15]
4. चलचित्र अधिनियम, 1952 [16]
5. विशेष विवाह अधिनियम, 1954 [17]
6. हिन्दू (विधवा पुनर्विवाह) अधिनियम, 1956 [18]
7. महिलाओं एवं लड़कियों के अनैतिक व्यापार पर रोक अधिनियम, 1956 [19]
8. अनैतिक व्यापार (निवारण) अधिनियम, 1956 (संशोधन 1986)[20]
9. हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 [21]
10. भारतीय दण्ड संहिता, 1960 [22]
11. दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 (संशोधन 1984, 1986) [23]
12. गर्भ का चिकित्सकीय समापन अधिनियम, 1971 [24]
13. दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 [25]
14. स्त्रियों का अषिष्ट प्रस्तुतीकरण (प्रतिषेध) अधिनियम, 1986 [26]
15. अपराधिक कानून (संशोधन) अधिनियम, 1986 [27]
16. सती निवारण अधिनियम, 1987 [28]
17. घरेलू हिंसा से महिलाओं का संरक्षण अधिनियम,05 [29]

निष्कर्ष – महिलाओं के अधिकारों के उपर्युक्त उपाय संविधान के उपबन्धों, उसकी भावना के अनुरूप है। भारतीय संविधान ने जिन समानता का लक्ष्य रखा है, वह अन्य देशों में समानता के सिद्धांत से भिन्न है। समानता से भारतीय संविधान का तात्पर्य केवल शाब्दिक या विधिक समानता नहीं है। भारतीय संविधान ने जिस समानता का लक्ष्य रखा उसके अनुसार प्रत्येक व्यक्ति की राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक समानता की प्रत्याषा है। यह तभी सम्भव है। जब समाज में स्त्री-पुरूष राजनीतिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से समान हो। इस लक्ष्य को साकार करने के लिए संविधान के निर्माताओं ने उचित ही सोचा था कि समाज में महिलाओं को विशेष संरक्षण की आवश्यकता होगी। इसी उद्देश्य को ध्यान में रखकर सरकार ने उपर्युक्त अधिनियम पारित किए है। इन अधिनियमों से संसद एवं सरकार का आश्य एवं उद्देश्य प्रकट होता है कि वह संविधान के निर्माताओं की आषाओं को पूरा करने के लिए दृढ़ प्रतिज्ञ है, परन्तु भारत में मुख्य समस्या विधि के प्रवर्तन की है। इस बात को स्वीकार करना पड़ेगा कि हमारे देश में प्रवर्तन व्यवस्था बड़ी दुर्बल है। यदि कोई मामला न्यायालय चला जाता है, तो उसके निस्तारण में बहुत समय लगता है। अत: संविधान के निर्माताओं, संविधान की प्रस्तावना तथा सम्बन्धित उपबन्धों के अनुरूप भारतीय समाज में समानता के सिद्धांत के क्रियान्वयन एवं महिलाओं के कल्याण को सुनिष्चित करने के लिए हमें अपनी प्रवर्तन व्यवस्था में सुधार करना होगा। [30]

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. ए.एस. आनन्द, भारत के मुख्य न्यायाधीश, मानव अधिकार दिवस के आयोजन पर दिए गए भाषण से, राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग द्वारा प्रकाशित ह्युमन राईट्स समाचार, जनवरी, 1999, पृष्ठ 1
2. प्रो. फ्रैसिस वैलेट, ऐन इन्ट्रोडेक्शन टू द स्टडी ऑफ ह्यूमन राईट्स, पृ. 10
3. महासभा संकल्प संख्या 640(ii), दिनांक 20 दिसम्बर, 1952
4. यूनाईटेड नेशन्स एक्सन इन द फील्ड ऑफ ह्यूमन राईट्स (1974), पृ. 51
5. महासभा संकल्प संख्या 1040(XI) दिनांक 21 जनवरी, 1957
6. जी.ए. जान्सन, इन्टरनेशनल लेबर आर्गेनाईजेशन (1970), पृ. 255
7. महासभा संकल्प 34/180, दिनां 18 दिसम्बर, 1979 द्वारा।

8. डॉ. वाई.एस. शर्मा, डॉ. विमलेन्दू तायल, मानव अधिकार, यूनिवर्सिटी बुक हॉउस प्रा.लि. जयपुर, 2011, पृष्ठ 100-105
9. अनुच्छेद 243-घ, संविधान (तिहत्तरवाँ संशोधन) अधिनियम, 1992 द्वारा निर्दिष्ट।
10. अनुच्छेद 243-न संविधान (चौहत्तरवाँ संशोधन) अधिनियम , 1992
11. अनुच्छेद 51क (इ) संविधान (बयालीसवाँ संशोधन) अधिनियम, 1976
12. डॉ. एच.ओ. अग्रवाल, मानव अधिकार, सेन्ट्रल लॉ पब्लिकेशन्स, इलाहाबाद, 2008, पृ. 109
13. पहली बार 1929 में बाल विवाह पर रोक लगाने हेतु एक अधिनियम पारित किया गया, जिसे पूर्ण रूप से प्रयोगात्मक रूप देने एंव जिसके प्रावधानों का शक्ति के साथ पालन किया जाने के उद्देश्य से सन् 1978 में व्यापक संशोधन किए गए और इन संशोधित अधिनियम द्वारा 21 वर्ष से कम उम्र के विवाह पर रोक लगाई गई है।
14. सन् 1939 के पूर्व तलाक देना मुस्लिम पुरूष का एक निरंकुश अधिकार था। पहली बार सन् 1939 में इस अधिनियम द्वारा पत्नी को भी तलाक देने सम्बन्धी कुछ अधिकार प्रदान कराए गए।
15. इस अधिनियम में कहा गया कि यदि किसी कारखाने या उद्योग धंधे में स्त्रियों की संख्या 30 से अधिक होगी तो प्रबंन्धक को वहां एक शिशु-गृह (क्रेंच) की व्यवस्था करनी होगी ताकि काम के घण्टों के दौरान महिलाएँ अपने बच्चों को शिशु गृह में छोड़ सके।
16. धारा 5(ख) में फिल्मों को प्रमाणित करने के लिए मार्गदर्शक सिद्धांत है, जिसमें भारत के फिल्म सेंसर बोर्ड द्वारा ऐसी फिल्मों पर रोक लगायी जाएगी, जिनमें महिला मर्यादा भंग होती हो एवं उन्हें अश्लील मुद्रा में दिखाया गया है।
17. इस अधिनियम के अन्तर्गत कोई महिला अपना धर्म परिवर्तन किए बिना किसी भी धर्म के व्यक्ति से विवाह कर सकती है।
18. इस अधिनियम में 'विधवाओं को भी अपना सम्पूर्ण जीवन खुषी, हर्षोल्लास एवं पवित्रता के साथ जीने का एवं पुनर्विवाह पुरूषों की तरह करने का अधिकार है।'
19. संविधान के अनुच्छेद 23 एवं 24 शोषण के विरूद्ध अधिकार है, जो मानव दुर्व्यहार और बलात श्रम का विरोध करता है। महिलाओं के क्रय विक्रय को खत्म करने के लिए संसद ने 1956 में यह अधिनियम पारित किया जिसका संशोधन किया गया और इसका नाम बदलकर अनैतिक व्यापार (निवारक) अधिनियम 1956 कर दिया गया है।
20. यह महत्वपूर्ण कानून 1956 में बनाया गया। 1986 में इसमें संशोधन कर इस अधिनियम के अनुसार महिलाओं के प्रति यौन-शोषण करने का संज्ञेय अपराध माना गया है।
21. इस अधिनियम द्वारा महिलाओं को पैतृक सम्पत्ति में अधिकार दिया गया है। जिसे विधिक कार्यवाही के माध्यम से प्राप्त किया जा सकता है।
22. भारतीय दण्ड संहिता, 1960 में भी महिलाओं पर होने वाले अत्याचार एवं निर्दयता के विरूद्ध सजा देने की व्यापक रूप से व्यवस्था की गई है।
23. दहेज मानव मात्र एक कलंक एवं कुप्रथा मानते हुए 1961 में प्रधानमंत्री पं. जवाहरलाल नेहरू ने 'दहेज प्रतिषेध अधिनियम 1961' के नाम से पारित करवाया, जिसका एक मात्र उद्देश्य दहेज प्रथा को समाप्त करना था।
24. यह अधिनियम प्रारंभिक रूप से महिलाओं के स्वास्थ्य की रक्षा करने वाला कानून है। इसके तहत महिलाए किसी महिला चिकित्सक या विशेषज्ञ की मार्फत गर्भ समापन करवा सकती है। संबंधित कागजात गुप्त रखे जायेंगे।
25. दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 के निहित उन प्रावधानों की विस्तार से चर्चा की गई है जो कि महिलाओं के लिए विशेष रूप से बनाए गए हैं एवं जो अत्यंत आवश्यक, उपयोगी एवं प्रयोगात्मक होकर महिलाओं के लिए हितकारी है।
26. इस अधिनियम के द्वारा किसी भी माध्यम से स्त्री शरीर के अष्लील चित्रण पर पूर्णतया प्रतिबंध लगा दिया गया है।
27. इस अधिनियम के द्वारा भारतीय दण्ड संहिता में संशोधन करके उसमें धारा 49-ए जोड़ी गई है।
28. सती निवारण अधिनियम 1987 की धारा 3, 4, 5 एवं 17 में सती कर्म करने के प्रयत्न के लिए कारावास या जुर्माना या दोनों की सजा का प्रावधान है।
29. इस अधिनियम का उद्देश्य ऐसी महिलाओं को उनके घरों, बाजारों और कार्य परिसर में होने वाली शारीरिक, मौखिक तथा आर्थिक प्रताड़ना से सुरक्षित करना है।
30. डॉ. एस.के. कपूर- मानव अधिकार व अन्तर्राष्ट्रीय विधि, सेन्ट्रल लॉ एजेन्सी इलाहाबाद, 2006

****

आतंकवाद एक वैश्विक चुनौती के रूप में - एक विश्लेषण

डॉ. वसुधा आवले *

प्रस्तावना - आतंकवाद यह कोई सिद्धांत या विचाराधारा नहीं वरन् एक तरीका, एक प्रकार, एक उपकरण है, जिसके माध्यम से वैश्विक स्तर पर भय, हिंसा बल प्रयोग द्वारा आतकी वातावरण बनाने का प्रयत्न किया जाता है। आज पूरी दुनिया आतंक के साये में जीने को मजबूर है। आज आतंकवादियों के हमले से विश्व का कोई भी भाग सुरक्षित नहीं दिखाई देता है। आतंकवाद विकसित एवं सम्पन्न सम्राज्यवादी राष्ट्रों की वह नाजायज संतान है, जिसका काम विश्व के विकासशील राष्ट्रों में विध्वंस तथा विखण्डन करना मात्र है और ऐसे कृत्यों के लिए इनके संगठनों को हर प्रकार की सहायता धनबल, शस्त्रबल उपलब्ध कराया जाता रहा है यही कारण है कि इन संगठनों के उद्भव व विकास का स्त्रोत अज्ञात होते हुए भी ये संगठन व इनकी गतिविधियाँ सारे विश्व में अबाध गति से फलफूल रही है।

वर्तमान में नस्ली, मजहबी और सांस्कृतिक वर्चस्ववादी आतंकवाद बढ़ रहा है। आतंकवाद की शक्ल में दृश्य-अदृश्य छाया युद्धों का अन्तहीन सिलसिला चल पड़ा है। भारत सहित दक्षिण एशियाई देश तो लगातार इसमें झुलस रहे हैं वरन विश्व की महाशक्ति अमेरिका भी इसका अपवाद नहीं रहा है। आतंकवाद रूपी दावानल जल्दी थमेगा इसके आसार दूर-दूर तक दिखाई नहीं दे रहे हैं। आज आतंकवाद का वैश्वीकरण हो गया है।

आतंकवादियों के लक्षण व उद्देश्य -

- आतंकवाद कुछ गिने चुने लोगों द्वारा संगठित नियोजित तथा जानबूझकर किया जाना वाला प्रायोजित हिंसात्मक कृत्य है।
- यह एक राजनीति से प्रेरित हिंसा है, जिसका एक मात्र उद्देश्य वर्तमान शासन व्यवस्था को उखाड़ फेंकना या चुनौती देना है।
- यह सदैव गैर कानूनी व अमानवीय तथा लोकतंत्र विरोधी गतिविधियों में लिप्त रहते है।
- इनकी राजनीति बहुत ही सुनियोजित एवं गोपनीय तरीके से बनाई जाती है व अत्यधिक परिष्कृत एव आधुनिक हथियारों का प्रयोग किया जाता है।
- आतंकवादी अपनी माँगे मनवाने हेतु नागरिकों पर मानसिक दबाव डालने व शारीरिक कष्ट देने हिंसा का प्रयोग करते हैं।
- आतंकवादियों के निशाने, भीड़-भाड़ युक्त नागरिक इलाके, कोई विशेष समुदाय के व्यक्ति,सशस्त्र सैनिक, मॉल, पर्यटन स्थल, आदि होते हैं।
- आतंकवादियों का उद्देश्य तस्करी करना, नशीले पदार्थो की अवैध बिक्री, चोरी छिपे आधुनिक हथियारों की खरीदी, विदेशी देशों से सहायता प्राप्त करना, नकली नोटों का प्रसार कर अर्थव्यवस्था को चौपट करना, उत्पीड़न व शोषण के विरूद्ध संघर्ष करना।

आतंकवाद के कारण -

- आतंकवाद को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका राजनीतिक स्वार्थों की पूर्ति, राजनीतिक भ्रष्टाचार, अपराधियों को राजनीतिक संरक्षण देना, विदेशी शक्तियों व पड़ोसी शत्रु राष्ट्रों द्वारा राजनीतिक अस्थिरता उत्पन्न करना उग्र आतंकवादी संगठनों को राजनीतिक प्रश्रय देना, आर्थिक सहायता करना व धनाढ्यों के वैभव व शौक शौकत को देखकर नवयुवक वर्गों द्वारा वैभव प्राप्त करने के गलत तरीकों को अपनाने की रही है।
- सामाजिक पिछड़ापन, अन्धविश्वास, परम्पराएं, धर्मान्धता व अशिक्षा का बोलबाला आदि स्थितियाँ नवीनता को स्वीकार नहीं करती, ऐसे में धर्म, परम्परा के नाम पर चालाक व पढ़े लिखे लोग उन्हे आतंकी कार्यवाहियों में संलग्न कर लेते हैं।
- आतंकवाद को प्रोत्साहित करने का एक बड़ा कारण गरीबी व बेरोजगारी है। भूख से तड़पता पेट गुनाह करने को मजबूर हो जाता है। विश्व में आतंकवाद पनपने के पीछे भूख, अभाव, शोषण व उपेक्षा प्रमुख है। आर्थिक असमानता, क्षेत्र विशेष का पिछड़ापन, वर्ग विशेष का आर्थिक शोषण, आर्थिक अपराधों में वृद्धि, पूँजी पतियों को अनैतिक तरीकों से लाभ पहुंचाना आदि सहायक है।
- आतंकवाद का सबसे भयावह पहलू आतंकवादी धर्म के नाम पर कायरतापूर्ण और घृणित अपराध कर रहे हैं। आतंकवादी की यह प्रवृत्ति प्रकृति के नियमों का खुला उल्लंघन है, जो जीवन दे नहीं सकता उसे जीवन लेने का कोई अधिकार नहीं है। ये विश्वस्तर पर धार्मिक, साम्प्रदायिक हिंसा फैलाकर मानव जाति का अस्तीत्व ही समाप्त करना चाहते हैं। अफगानिस्तान के तालिबान और जम्मू-कश्मीर में अराजकता फैलाने वाले आतंकवादियो को बालपन से ही शस्त्र चलाने, युद्धविद्या, दूसरे धर्मो के अनुयायियों,उनकी सभ्यता, संस्कृति और लोकतंत्र के प्रति घृणा का पाठ पढ़ाना व अपने धर्म से सम्बधित मदरसों में उग्रवाद का प्रशिक्षण दिया जाता है तथा बाल मस्तिष्क में ऐसे घृणा के बीज बो दिए जाते है जिससे अलगाव, हिंसा विद्रोह व विद्वेष की भावना विकसित होने लगती है।
- बहुजातीय और बहुसांस्कृतिक समाजों में सांस्कृतिक श्रेष्ठता की उग्र भावना, कुछ राष्ट्रों द्वारा अपनी संस्कृति को दूसरे राष्ट्रो पर थोपने के कारण उग्रवाद आज सम्पूर्ण विश्व में अपने पैर फैला रहा है और आतंकवादी गतिविधियों को बढ़ावा मिल रहा है। कट्टर धार्मिक प्रशिक्षण केन्द्र , स्वधर्म सर्वोपरिता की भावना, धर्म के नाम पर नैतिकता विहीन

* सहायक प्राध्यापक (राजनीतिशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, उमरानाला, जिला - छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत

कार्य आदि आतंकवाद के जन्म में सहायक है।

- वर्तमान में आतंकवाद के वैश्वीकरण का प्रमुख कारण सूचना प्रौद्योगिकी द्वारा सुलभ आधुनिक सुविधाओं जैसे मोबाईल, सम्प्रेषण तकनीकि की वैश्विक व्यवस्था (GSM) ई-मेल, सेलफोन व ग्लोबल पोजीशन सिस्टम (GPS) का सरलता से उपलब्ध होना है व इनके कारण सुरक्षा जाँच एजेसियों की नजरो से बचने के रास्ते भी आसान बन गए हैं।

प्रमुख आतंकवादी सक्रिय संगठन –

- आतंकवाद के वैश्विक व राष्ट्रीय स्तर पर सक्रिय संगठनों में प्रमुख अलकायदा (ओसामा बिन लादेन) जमात ए इस्लाम, लश्कर ए तोयबा, हिजबुल पार्टी ऑफ गॉड, जैश-ए-मोहम्मद, ब्लैक पैंथर, टाइगर्स ऑफ दि गल्फ, अलबदर, अल-जेहाद समूह, हामास इस्लामिक रोसिस्टन्स आंदोलन, सेन्डिरो लुमीनोसो आदि है।

आतंकवादियों द्वारा अपनाए जाने वाले साधन –

- आतंकवादी हिंसात्मक तरीकों व आपराधिक गतिविधियों जैसे - विस्फोट, विमान अपहरण, हत्याएं। आक्रमण, फिरौती वसुलना, भय दिखाकर कार्य करवाना आदि साधनों का सहारा लेते हैं।
- आतंकवाद की भावना दर्शाने के लिए वे विद्रोह, बलप्रयोग, दंगे करवाना, हिंसा की धमकी, गोरिल्ला युद्ध, व्यक्तिगत हिंसात्मक कृत्य, स्कूल व कालेजों को निशाना बनाकर आतंकवादी वातावरण निर्मित करते हैं।
- आतंकवादियों द्वारा अत्याधुनिक हथियार जैसे - ए.के.-47, ए.के.-56 राइफलें, आर.डी.एक्स विस्फोटक, टाईम बम , मानव बम, मिसाईलें, छोटे राकेट लाँचर, नाभिकीय, जैविक व रासायनिक हथियारों के माध्यम से जहरीली गैसे फैलाना आदि साधनों का प्रयोग किया जाता है।
- आतंकवादी भय निर्मित करने हेतु ब्लेक मैलिंग, आगजनी, पीने के पानी को दूषित करना, खाद्य पदार्थों में जहर घोलना आदि प्रयोग करते हैं।
- आतंकवादी को प्रशिक्षण देना, उनमें झूठ व नफरत फैलाना व मन में बदले की भावना पैदा करना, धर्मान्धता, जिहाद की भावना भरना आदि कृत्य किए जाते हैं।

आतंकवाद की अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति – अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर परमाणु अप्रसार आतंक, भूमण्डलीकरण के नाम पर आर्थिक आतंक, पर्यावरण प्रदूषण व मानवाधिकार के नाम पर अमेरिका ने सम्पूर्ण विश्व में आतंक फैला रखा है व अपने आर्थिक हितों के लिए अमरिकी संस्था सी.आई.ए. के माध्यम से वहाँ की विभिन्न सरकारों द्वारा विश्व के पचास से अधिक क्रुर सत्तापलटु सैनिक अधिकारी, तानाशाहों व अलोकतांत्रिक शासकों को समर्थन व संरक्षण दिया है।

11 सितम्बर 2001 को आतंकवादियों द्वारा अमेरिका के वर्ल्ड ट्रेड सेन्टर और पेंटागन की इमारतों को ध्वस्त करने और हजारों लोगों को मौत के मुंह में धकेल देने की घटना के कारण अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के पूरे समीकरण बदल गए है जो अमेरिका अपने को विश्व की एक मात्र महाशक्ति, सर्वश्रेष्ठ परमाणु ताकत सम्पन्न राष्ट्र, सबसे बड़ी आर्थिक शक्ति, बहुत बड़ा कुटनीतिज्ञ मान रहा था। विश्व के सामने मजबूर सा हो गया है विगत कुछ वर्षो में अमेरिका के अतिरिक्त लंदन तथा जोर्डन में 2005 में बम विस्फोट, अमेरिका के ही बोस्टन मैराथन रूट पर 2013 में किया गया आतंकी विस्फोट तथा फ्रांस, जर्मनी, जापान, भारत व एशियाई राष्ट्रों में अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद ने भय, हिंसा, व अराजकता का वातावरण निर्मित किया है।

एक ओर एशिया महाद्वीप में एक से एक बड़े महापुरूषों ने जन्म लिया है, तो दूसरी ओर दुनिया के क्रुरतम आतंकवादी भी इसी धरती पर पैदा हुए है। एशिया महाद्वीप में चारों ओर फैले आतंकवाद ने आज लोकतंत्र की अस्मिता पर खतरा पैदा कर दिया है। पश्चिमी एशिया में इजराइल के दो शहरों में फिलीस्तिनी आतंकवादी समूह हमास के आत्मघाती दस्तों द्वारा हमला, इजरायल द्वारा फिलिस्तिनी शहरों जैनिंग व गाजापट्टी पर हमला, श्रीलंका में तमिलों व सिंहलियों के मध्य संघर्ष नेपाल में माओवादी कम्युनिस्टों की दहशतगर्दी, बांग्लादेश में आतंकी हमले, अफगानिस्तान में तालिबान विरोधियों में 'नार्दन एलायंस' के नाम से आतंकवादी हमले तथा अल्जीरिया, सूडान, मिस्त्र,तुर्की, जोर्डन, लीबिया, ईरान, ईराक आदि देशों में भी आतंकवादी वातावरण पनप रहा है।

सोवियत संघ के विघटन के बाद मध्य एशिया में इस्लामिक आतंकवाद ने पैर जमाना प्रारंभ किया। चेचन्या को केन्द्र बनाकर रूस के प्रमुख शहरों पर एकाएक बम विस्फोट कर इनकी कार्यवाहियों ने रूस को सैनिक कार्यवाही के लिए बाध्य किया, चीन भी आतंकवादियों से अछुता नहीं है।

नार्कोआतंकवाद 21 वीं सदी में सक्रिय होता जा रहा है। इसके अंतर्गत नशीले पदार्थो के क्रय-विक्रय करने वाले व्यापारियों को आतंकवादी गुटों द्वारा नार्कोटिक्स या ड्रग्स सुलभ कराना (कोकीन, अफीम, कन्नाबीस, हीरोइन), अवैध तरीके से तस्करी को बढ़ावा देना, अवैध अप्रवास को प्रोत्साहन जिससे राष्ट्रों की युवा पीढ़ी व मानव संसाधन व्यापक रूप बर्बाद हो रहे हैं।

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर आतंकवाद को रोकने हेतु संयुक्त राष्ट्र के माध्यम से जिसके अंतर्गत सितम्बर 2006 में वैश्विक आतंकवाद रोधी रणनीति, सार्क सम्मेलनों में आतंकवाद विरोधी, घोषणा पत्र व अमेरिका व युरोपीय राष्ट्रों द्वारा भी आतंकवाद विरोधी प्रयास किए जा रहे हैं।

आतंकवाद का भारतीय परिदृश्य – दक्षिण एशिया में भारत आतंकवाद से सर्वाधिक अधिक प्रभावित राष्ट्र है। सीमापार से आतंकवादी घटनाओं में वृद्धि तथा विदेशी हस्तक्षेप ने भारत में अस्थिरता और अशान्ति को बढ़ाने में पूरजोर प्रयास किए हैं, भारत में सक्रीय आतंकवाद को प्रमुख दो वर्गो में विभाजित कर प्रथम सीमापार से आतंकवाद व दूसरा नक्सली आतंकवाद को व्यक्त किया जा सकता है।

भारत में आतंकवादी की सबसे सक्रिय गतिविधियों का केन्द्र जम्मू कश्मीर रहा है। आज भी भारत इस क्षेत्र में पाक प्रायोजित आतंकवाद से जूझ रहा है। पाकिस्तान द्वारा 'आपरेशन टोपाक' नामक योजना बनाई जिसके माध्यम से तीन स्तरों में, **प्रथम स्तर** पर कश्मीर में विद्रोह करना, आतंकी प्रशिक्षण देना, संचार व्यवस्था को विध्वंस करना सीमा क्षेत्रों पर कब्जा करने की नीति। **दूसरे स्तर** पर भारत पाक सीमा पर तनाव बनाए रखना व श्रीनगर, बारामूला, पठानकोट, कारगिल, लेह, लद्दाख को लक्ष्य बनाकर सैनिक मुख्यालय, व सुरंगों दूरदर्शन केन्द्र, हवाई पट्टियों को नष्ट करना। **तीसरे स्तर** पर जेहाद के माध्यम से कश्मीर को आजाद कराना। इस समस्या के अन्तर्राष्ट्रीयकरण को बढ़ावा देना, इन स्तरों को कार्यरूप में परिणित करते करते पाकिस्तान स्वयं आतकवादी प्रशिक्षण केन्द्र राष्ट्र बन गया है।

आज भारत में लश्कर-ए तोयबा, अलकायदा, जैस-ए-मुहम्मद, लिट्टे, सिमी जैसे 31 से अधिक संगठन सक्रिय है व उनके द्वारा पाक की गुप्तचर शाखा आई.एस.आई. के इशारे पर जैसे-कारगिल संकट 1999, 13 दिसम्बर 2001 को भारतीय संसद पर आतंकवादी हमला, जुलाई 2006 में मुम्बई

के ट्रेनों में विस्फोट, 26 नवम्बर 2008 को मुम्बई के ताज होटल, ओबेराय होटल में आतंकी उत्पाद, गुजरात में साम्प्रदायिक दंगे, अक्षरधाम मंदिर पर हमला, पठानकोट हमला 2016, उरी हमला 2016 आदि घटनाओं से भारत को निरंतर जूझते रहना पड़ रहा है।

भारत में नक्सलवाद एक नासूर बनकर उभर रहा है। जिसने भारत के कई राज्यों को प्रभावित किया है। झारखण्ड में माओवाद की चपेट में। उड़ीसा लालरंग में, आन्धप्रदेश में उड़ीसा व छत्तीसगढ़ से लगी सीमा वाले दंडकारण्य इलाके में, महाराष्ट्र में गढ़चिरौली, बिहार में, छत्तीसगढ़, मध्यप्रदेश आदि स्थानों पर इनका प्रभाव रहा है।

भारत द्वारा इन आतंकवादी व नक्सलवादी गतिविधियों पर नियंत्रण करने हेतु 'हिमायत स्कीम' सर्जिकल स्ट्राइक, रोशनी परियोजना लागू कर प्रयास किये जा रहे हैं।

आतंकवाद को रोकने हेतु उपाय व सुझाव –

- आतंकवादी समस्याओं को अन्तर्राष्ट्रीय व राष्ट्रीय स्तर पर राजनीतिक स्वार्थों से ऊपर उठकर, समस्याओं को टालने या लम्बित करने के स्थान पर विचार विमर्श व आम सहमति से हल किया जाना चाहिए।
- आतंकवाद को नियंत्रित करने हेतु शासन व जनता के मध्य व्यापक सहयोग होना चाहिए। जिससे आम नागरिकों को आतंकवाद के भयंकर व दीर्घकालिन परिणामों की जानकारी देकर उनमें जनजागृति पैदा करना व आतंकवाद से भयभीत न होकर उनके विरूद्ध लड़ने की इच्छा शक्ति जागृत करने की प्रेरणा प्राप्त हो सके।
- आतंकवाद को खत्म करने हेतु अन्तर्राष्ट्रीय व राष्ट्रीय स्तर पर प्रगतिशील शिक्षा की आवश्यकता है। जिससे छात्रों का संपूर्ण मानसिक व नैतिक उत्थान हो सके जिससे वे क्रोध के वशीभूत होकर आतंकवाद का मार्ग न अपनायें वे देश की उन्नति व विकास में सहयोग प्रदान कर अपने कर्तव्यों का निर्वाह कर सकें।
- आज आतंकवाद का वैश्वीकरण हो जाने के कारण इस समस्या का समाधान विश्व स्तर पर राष्ट्रों द्वारा आतंकवाद के विरूद्ध एकजुट होकर ऐसा वातावरण निर्मित करना चाहिए जिससे उसे समूल नष्ट किया जा सके क्योंकि यह चुनौती किसी एक देश की नहीं बल्कि पूरी मानव जाति की है।
- गरीबी व बेरोजगारी दूर करने हेतु राष्ट्रों द्वारा प्रतिवर्ष करोड़ों व्यक्तियों के लिए रोजगार की व्यवस्था करनी होगी व आर्थिक असमानता की भावना को कम करना होगा जिससे सामाजिक व आर्थिक अन्याय दूर हो सके।
- राष्ट्रों की सरकारों द्वारा आतंकवादियों के साथ किसी प्रकार का समझौता नहीं करना चाहिए व आतंकवादी गुटों के क्रिया–कलापों की सूचना एकत्र कर जानकारी देना व घुसपैठ पर नियंत्रण के तकनीकी साधनों में सुधार लाना चाहिए।

अन्त में जिन परिस्थितियों में मानव मन बर्बरता और उन्माद से भर जाता है। उन परिस्थितियों को समाप्त करना होगा। सार्थक विश्व व्यापी योजनाओं, दृढ़ राजनीतिक व प्रशासकीय इच्छा शक्ति व क्षमता, दूरदर्षिता व धैर्य के सहारे एक जुट होकर आतंकवाद का जड़ से सफाया किया जा सकता है। आतंकवाद के विरूद्ध लड़ाई में हम थकेंगें नहीं, रूकेंगें नहीं और अन्त में विजय मानव जाति की होगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. मेजर जनरल विनोद सहगल, अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद, प्रभात प्रकाशन, दरिया गंज नई दिल्ली।
2. प्रतिमा चतुर्वेदी, नक्सलवाद आतंक या आन्दोलन, वायर्किंग बुक्स पब्लिकेशन्स 22 गोदाम जयपुर।
3. रामदेव भारद्वाज, अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति और समसामयिक राजनीतिक मुद्दे, मध्यप्रदेश ग्रन्थ अकादमी भोपाल।
4. जितेन्द्र सिंग, दक्षिण एशिया में आतंकवाद की समस्या, महिप बुक डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली।
5. जे.एन. दीक्षित, भारत की विदेशनीति और आतंकवाद, ज्ञान पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।
6. कृष्णानंद शुक्ला, भारत पाक सम्बन्ध, राज पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
7. अर्चना शर्मा व जी.जी. ललित, भारत की आन्तरिक सुरक्षा को खतरा, मोहित, पब्लिकेशन दरिया गंज, नई दिल्ली।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) January to March 2017, Vol. I

भारत में महिलाओं के कानूनी अधिकार दशा व दिशा (मानवाधिकार के संदर्भ में)

डॉ. प्रविता सिंह *

प्रस्तावना – प्रत्येक विकसित समाज के निर्माण में स्त्री एवं पुरुष दोनों की सहभागिता आवश्यक है परंतु यह एक विडम्बना ही है कि समाज में उन्हें समानता का स्तर शायद ही कभी प्राप्त हुआ है। देश के संविधान में यह व्यवस्था की गयी है कि राज्य किसी भी नागरिक के विरुध धर्म, वंश, लिंग जाति, जन्म स्थान अथवा अन्य किसी भी आधार पर विभेद नहीं करेगा इससे महिलाओं को शिक्षा के क्षेत्र में प्रगति के समान अवसर उपलब्ध तो होने लगे लेकिन सदियों से शैक्षिक रुप से पिछड़ी दशा में रही महिलाओं को पुरुषों के समान लाना अभी भी संभव नहीं हो सका इस स्थिति का चित्रण करते हुए मैथिली शरण गुप्त ने लिखा है।

'अबला जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी
आँचल मे है दूध और आंखो मे पानी '

भारत में महिलाओं का अतीत बहुत गौरवपूर्ण था, उन्हें समाज में आदर की दृष्टि से देखा जाता था। उन्हें समाज में सम्मान भी दिया जाता था उनको गृह लक्ष्मी माना जाता था किन्तु कालांतर में उनमे काफी परिवर्तन आया उनकी स्थिति दयनीय हो गई उनको केवल दासी और भोग्या के रुप में देखा जाता था।

भारत में स्वाधीनता के बाद बनाए गए भारत के नए संविधान में महिलाओं को पुरुषों के बराबर का अधिकार दिया गया तथा उनके विकास के लिए उन्हें पूर्ण संविधानिक संरक्षण प्रदान किया गया।

अत: एक पुरुष को शिक्षित करने से पहले एक महिला को शिक्षित करना उचित रहता है क्योंकि एक महिला के शिक्षित होने का अर्थ है, एक परिवार का शिक्षित होना।

महिलाओं के कानूनी अधिकार – हमारा संविधान भारत के सभी नागरिकों को सामाजिक आर्थिक व राजनीतिक न्याय प्रदान करने की मंशा की घोषणा करता है। भारतीय संविधान द्वारा सभी नागरिकों को छ: मूल अधिकार प्रदान किए गए है –

1. समानता का अधिकार 2. स्वतंत्रता का अधिकार 3. शोषण के विरोध का अधिकार 4. धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार 5. शिक्षा और संस्कृति का अधिकार 6. संवैधानिक संरक्षण का अधिकार।

कामकाजी महिलाओ के अधिकार – हर महिला कहीं न कहीं काम करती है, वह घर का काम तो करती ही है, अक्सर वह पैसा कमाने के लिए घर से बाहर भी काम करती है, काम करने वाली महिलाओं को मालूम होना चाहिए कि उनके कुछ मूल अधिकार बनाए है, ये मूल अधिकार भारत के संविधान मे दिए गए है, जिन्हें अमल में लाने के लिए सरकार ने अलग–अलग कानून बनाये है।

ये कौन से अधिकार है।

1. काम करने वाली हर महिला या पुरुष को काम करने के लिए वेतन या मजदूरी मिलनी चाहिए।
2. यह वेतन या तनख्वाह कम से कम उतनी ही होनी चाहिए, जितनी सरकार ने तय की हो यानि न्यूनतम मजदूरी मिलनी चाहिए।
3. बराबर के काम के लिए बराबर पैसा मिलना चाहिए यानि एक ही काम के लिए एक जैसे काम के लिए पुरुष के बराबर पैसे मिलने चाहिए कम नहीं।
4. महिलाओं को गर्भावस्था व प्रसूति से संबंधित कुछ अधिकार दिए गए है।

महिला किन–2 आधारों पर तलाक ले सकती है।

1. पति द्वारा व्याभिचार या दूसरे के साथ संभोग
2. परित्याग – यदि पति बिना वजह के पत्नी को छोड़कर चला जाता है। क्रूरता – धर्म परिवर्तन, असाहय पागलपन सात साल तक लापता रहना।

खर्चे पानी – (भरण–पोषण) की व्यवस्था।

संपत्ति का अधिकार –

1. हर महिला को अपने लिए अपने नाम से संपत्ति खरीदने और रखने का अधिकार है।
2. हर महिला को यह हक है कि वह अपनी कमाई के पैसे वह खुद ले। वह उन पैसो से जो भी करना चाहे कर सकती है।
3. महिलाओं को यह भी अधिकार है कि पुरुषों की तरह वे भी संपत्ति खरीदे या बेचें।

(हिन्दु दत्तक तथा भरण–पोषण अधिनियम 1956)

महिलाओं की दशा और दिशा – किसी भी सभ्य समाज की स्थिति उस समाज में स्त्रियों की दशा देखकर ज्ञात की जा सकती है स्त्रियों की स्थित ही वह सपना है, जो समाज की दशा और दिशा को स्पष्ट करती है। प्राचीन समय समाज से लेकर आज के आधुनिक कहें जाने वाले समाज तक स्त्रियां उपेक्षित ही रही है, आखिरकार स्त्रियों की इस उपेक्षा के पीछे कौन सी परिस्थितियां उत्तरदायी है ? आखिर ऐसी कौन सी रुढ़िया मान्यताएं आडंबर और बेड़िया स्त्रियों को जकड़े हुए है, जिससे वे समाज के दबे कुचले वर्ग का एक बडा भाग होकर रह गयी है ? आखिर कही इनके पीछे मानव जनित परिस्थितियों का एक भीषण समंदर तो नहीं है ? सवाल बहुतेरे है और उनके जबाव भी लेकिन जो बात छूट रही है, वह है, इन सवालो का समुचित निदान। आज के आधुनिक कहे जाने वाले समाज में स्त्रियों को बाजार की वस्तु बना दिया गया है आज फिल्मे बनती है, तो उसमे भी जो दिखता है, वही बिकता है का फार्मूला ही फिट होता है। समाज में नैतिक मूल्यों, गरिमा, भद्रता और

* अतिथि विद्वान (राजनीति विज्ञान) नवीन शासकीय महाविद्यालय, चंदिया, जिला - उमरिया (म.प्र.) भारत

शिष्टता से कोसों दूर चला गया है अब इस समाज में मर्यादा और मर्यादित जीवन सिर्फ एक दु:खद स्वप्न बनकर रह गया है। बाल विवाह, सती प्रथा, वेष्यावृत्ति, बहुओं को दहेज के लिए जलाकर मार देना और न जाने कितने अपराध सरकारी प्रयासो के बावजूद इस समाज की जड़ो में गहरे तक जम चुके है।

इस प्रकार के अनेको उपाय अपनाकर शोषण के नए-नए तरीके अपनाएं जाते है और सरकारी प्रयास खुद में उलझकर रह जाते है परंतु सच्चाई यह भी है कि केवल सरकारी प्रयासों या कानून से तब तक किसी समस्या का हल सक्रिय और जागरुग न हो सरकार ने महिलाओं की सुरक्षा के लिए अनेको कानून बनाएं उन्हें लागू और नित नए-2 कानूनो का निर्माण भी कर रही है। दहेज, हत्या, बलात्कार, सतीप्रथा और घरेलू हिंसा जैसे विभिन्न प्रकार के कानून महिलाओं की सुरक्षा के लिए बनाए गए।

घरेलू हिंसा से महिलाओं का संरक्षण अधिनियम 2005 नाम से यह अधिनियम 14 सितंबर 2005 को भारत के राजपत्र में प्रकाशित किया गया, प्रारंभ मे इस अधिनियम की प्रतियॉ राज्य के मुख्य सचिवो और पुलिस अधिकारियों के पास प्रचार प्रसार के लिए भेजी गयी, संसद के दोनों सदनो ने इस अधिनियम 2005 में ही स्वीकृति दे दी थी और 14 सितंबर 2005 को राष्ट्रपति की भी स्वीकृति इसे प्राप्त हुई और महामहिम ने इस पर हस्ताक्षर किए। कुछ कारको से इसे लागू करने में विलंब हुआ। 26 अक्टूबर 2006 से इसे लागू किया गया। घरेलू हिंसा से महिलाओं का संरक्षण अधिनियम में महिलाओं को घरेलू हिंसा से बचने के लिए विभिन्न प्रावधान किए गए है, प्रथम इस कानून मे घरेलू हिंसा की जो परिभाषा दी गयी है। उसमे वास्तविक दुर्व्यवहार अथवा शारीरिक यौन, शाब्दिक, आर्थिक दुर्व्यवहार की धमकी और भावनात्मक उत्पीड़न को शामिल किया गया है, महिला की गरिमा को ठेस पहुंचना, बच्चे न होने अथवा पुत्र के जन्म न लेने पर ताने मारना और अपमानित करना भी इस कानून के प्रावधानों में शामिल है। द्धितीय इसमें पीड़ित महिला के ससुराल अथवा संयुक्त परिवार मे रहने के अधिकार का उपबंध भी किया गया है। चाहे ऐसे घर या परिवार पर महिला का स्वामित्व हो अथवा न हो। आज मानव जाति के समक्ष सबसे बड़ी समस्या सम्मानपूर्वक जीवन यापन की है। पग-पग पर वह तिरस्कृत, असुरक्षित एवं उत्पीड़ित है, मानव जाति पर जितने कहर इन दिनों ढाये जाने लगे है उतने शायद पहले कभी सुनने को नहीं मिले। सर्वाधिक पीड़ित तो आज नारी है, नारी उत्पीड़न की घटनाएं द्रोपती के चीर की तरह बढ़ रह है। तन्दूर मे जलती नारी देह उत्पीड़न और बलात्कार की आग मे झुलस रही है। वर्तमान में मानवाधिकार का जितना उल्लघन हुआ है शायद पहले कभी नहीं हुआ।

भारतीय संविधान और महिलाएं की स्थिति - ऐतिहासिक अवलोकन किया जाए तो न्याय समानता एवं अधिकारो के लिए प्रथम महिला अधिकार सम्मेलन वर्ष 1848 मे अमेरिका में ही सपन्न हुआ तथापि इसके पूर्व गर्भपात निरोधक अधिनियम (1803) ब्रिटेन सतीप्रथा का समापन (1829) भारत विधवाओ का पुनर्विवाह (1856) भारत जैसे प्रयास किए जा चुके थे किन्तु इन प्रयासो में समाज सुधारको एवंज न आंदोलनो का प्रत्यक्ष प्रभाव था न कि स्वयं महिलाओ का।

वर्ष 1840 से ब्रिटेन एवं अमेरिका में मताधिकार हेतु महिलाओं के आंदोलन की परिणति नेशनल वूमेन सफरेज एसोसिएशन (1869 अमेरिका) के रुप में हुई जिसका विश्वव्यापी प्रभाव यह रहा कि महिलाओं को प्रथम बार मताधिकार का अधिकार (न्यूजीलैण्ड-1893, अमेरिका-1920, ब्रिटेन-1928) प्राप्त हुआ। वस्तुत: औद्योगिक क्रांति और दो विश्व युद्धो में महिलाओ की दयनीय स्थिति में विश्व समुदाय का भी मनव्यथित हुआ। अत: संयुक्त राष्ट्र संघ की (1945) स्थापना के साथ महिलाओं के लिए क्रांतिकारी प्रयास भी प्रारंभ हुए। यह संयुक्त राष्ट्र संघ ही था। जिसने सर्वप्रथम महिलाओं की दयनीय स्थिति मे सुधार के लिए एक महिला आयोग (कमीषन ऑन द स्टेटस आफ वूमेन्स, 1946) की स्थापना की संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार घोषणा पत्र 1948 के अनुच्छेद 1,2,3,4,5,7,9 विशेषत: महिला अधिकारों को व्यापक और सशक्त बनाते है। संयुक्त राष्ट्र महासभा ने दिसबंर 1952 में महिलाओं की राजनीति अधिकार संबंधी अभिसमय अंगीकार किया। जिस पर विश्व के 40 देशो ने अपनी सहमति व्यक्त की, पुन: विवाहित महिलाओं की राष्ट्रीय संबंधी अभिसमय महासभा द्धारा अंगीकृत किया गया जो 11 अगस्त 1958 से प्रभावी भी हो गया। अनुच्छेद 3 में (महिला की) सुरक्षा का अधिकार सम्मिलित किया गया ळें सुरक्षा का अधिकार सम्मिलित किया गया है -

1. जीवन का अधिकार 2. समानता का अधिकार 3. स्वतंत्रता का व्यक्तिगत सुरक्षा का अधिकार।

भारत के संविधान का अनुच्छेद 42 महिलाओं के लिए प्रसूति सहायता की व्यवस्था करता है। इस अनुच्छेद के अनुसार राज्य काम की न्याय संगत और मानवोचित दशाओं को सुनिश्चित करने के लिए उपबंध करेगा राज्य के इस नीति निर्देशन तत्व का क्रियान्वित करने के लिए संसद ने प्रसूति प्रसुविधा अधिनियम 1961 पारित किया। यह अधिनियम शिशु जन्म से पूर्व और पश्चात् भी कतिपय कालाविधियों मे महिलाओं के नियोजन को विनियमित करने तथा प्रसूति प्रसुविधा और कतिपय अन्य प्रसुविधाओं का उपबंध करने के लिए पारित किया गया।

संविधान का अनुच्छेद 39 (घ) पुरुषों और स्त्रियों दोनों के लिए समान वेतन दिए जाने का उपबंध करता है इस अनुच्छेद के निर्देशो के अनुपालन मे संसद ने समान पारिश्रमिक अधिनियम 1976 पारित किया। सांविधानिक प्रावधानो की कड़ी में संविधान का 73वा और 74वा संशोधन जो 1992 में किया गया आता है। इसके माध्यम से जहां तक महिलाओं के अधिकार का प्रश्न है पंचायतो और नगर पालिकाओ के लिये स्थानो का आरक्षण किया गया है।

संविधान का अनुच्छेद 51 (क) (ङ) जो मूल कर्तव्यो से संबंधित है भारत के प्रत्येक नागरिक पर यह कर्तव्य अधिरोपित करता है कि ऐसी प्रथाओं का त्याग करे जो स्त्रियों के सम्मान के विरुद्ध है।

महिलाओं की भागीदारी को कारगर बनाने के प्रयास एवं सुझाव -

भारतीय समाज में महिलाओं का स्थान सर्वोपरि है, ये राष्ट्र निर्माण की प्रक्रियाओ में अहम भूमिका निभाती है। वर्तमान में तो देश के सर्वोच्य पद राष्ट्रपति के पद पर महिला राष्ट्रपति श्रीमती प्रतिभा देवीसिंह पाटिल विराजमान है किन्तु जब तक महिलाएं जागरुक नहीं होगी तथा राष्ट्रीय विकास की धारा में अपनी सक्रिय भूमिका तथा भागीदारी नहीं निभायेगी तब तक राष्ट्र का सर्वागीण विकास संभव नहीं है। उनकी भागीदारी को सुनिश्चित करने हेतु सुझाव इस प्रकार है।

1. महिलाओं को शिक्षित करना।
2. उचित प्रशिक्षण।
3. जागरुकता पैदा करना।
4. समग्र महिला पंचायत।
5. समाज मे सम्मान।
6. सामाजिक एवं कानूनी सुरक्षा।

7. परिवार का सहयोग।
8. आर्थिक सहायता/मनोदय।
9. भेदभाव कम हो।

हमारी संस्कृति में नारी समाज मे पूज्यनीय एवं आदरणीय रही है परिवार में यदि सुशिक्षित नारी है, तो वह अपने परिवार के प्रति अपना दायित्व पहचानने और निभाने के लिए जागरुक रहती है। वह समाज के सुधार के विषय मे भी सोचती है, उसकी सन्तान अशिक्षित नहीं रहती है। अत: यदि आज हमे समाज की दशा सुधारनी है तो नारी को शिक्षित बनाना होगा। भारतीय समाज मे नारियों को कई प्रकार की आर्थिक सामाजिक राजनीतिक एवं शैक्षणिक समस्याओ का सामना करना पड़ता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. महिला एवं बाल विकास के नूतन आयाम, प्रकाश नारायण नाराजी - 107
2. सुरक्षा संस्कृति, लेख द्वारा रमेश चंद्र दीक्षित - पृष्ठ 21-22
3. क्राइम इन इण्डिया 1990 नेशनल क्राइम रिकार्ड ब्यूरो नई दिल्ली
4. स्त्रोत महिला सहायता प्रकोएट उ0प्र0 पुलिस से प्राप्त आकड़े।
5. भारतीय संविधान पृ.सं. एवं प्रथम संशोधन अधिनियम 1951 की धारा 2 द्वारा जोड़ा गया है।

****

भारत-अमेरिका संबंध-उभरती साझेदारियां

डॉ. वीणा बरड़े *

प्रस्तावना – वर्ष 1947 में भारत को स्वाधीनता मिलने के बाद से ही भारत-अमेरिका संबंध को दोनों देशों और दोनों प्रजातंत्रों के मिलन और सभ्यतागत समानता ढूढने के निरंतर प्रयास के रूप में देखा जा सकता है, जबकि अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर दोनों के हित अक्सर टकराते रहते हैं। दोनों के बीच वास्तविक संबंधों की संभावना वर्ष 1989 से सोवियत संघ के विघटन और तथाकथित शीत युद्ध के समाप्त होने के बाद ही पनप पायी।

अमेरिका को यह बात समझ में तो आ गई थी कि चूंकी भारत अब एक उभरती हुई ताकत हैं, इसलिए उसे नाभिकीय तकनीक व शस्त्र संपन्न देशों की सूची से बाहर-बाहर रखना संभव नहीं है और भारत को अब वैश्विक आर्थिक व सुरक्षा व्यवस्था में शामिल करना ही होगा। चाहे इसके लिए स्थापित सत्ता समीकरणों को झटका ही क्यों न देना पड़े। शीत युद्ध के दौरान निर्गुटवादी विश्वसनीय नहीं माना जाता था। इससे भी बुरी बात यह थी कि 1971-72 में बांग्लादेश की मुक्ति के समय जब अमेरिका-चीन से सोवियत संघ का साथी समझा जाता था, बदलते वैश्विक परिदृश्य में अधिक परिपक्व होती। भारतीय अर्थव्यवस्था के कारण भारत को एक साथी बनाने का आकर्षण स्पष्ट परिलक्षित होता हैं।

राष्ट्रपति बिल क्लिंटन के कार्यकाल में जब अमेरिका रणनीतिक सहयोग के लिए आर्थिक संबंधों को बढ़ा रहा था भारतीय बाजार की विशालता और क्षमता ने उसका ध्यान आकर्षित किया। इससे प्रेरित होकर ही वर्ष 1995 में वाणिज्य सचिव रॉन ब्राउन्न द्वारा राष्ट्रपति व्यापार विकास मिशन की शुरूआत की गई। वर्ष 1990 से भारत-अमेरिका संबंधों की गति और दिशा में काफी परिवर्तन आया। 9/11 के हमले के बाद वर्ष 2000 में राष्ट्रपति क्लिंटन ही भारत यात्रा और उसके तुरन्त बाद वर्ष 2001 में प्रधानमंत्री वाजपेयी की अमेरिका यात्रा के बाद नई वैश्विक चुनौतियों का सामना करने में अमेरिका भारत को एक आवश्यक साथी के रूप में देखने लगा। इसमें राष्ट्रपति बुश की वह अवधारणा भी काम कर रही थी। जिसके अनुसार एशिया में चीन के उभार को रोकने में एक मजबूत भारत की महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती थी। इन दो महत्वपूर्ण घटनाओं ने अमेरिका नीति को नई दिशा दी।

तत्पश्चात भारत और अमेरिका के बीच संयुक्त कार्य समूहों की रचना और उच्च स्तरीय आदान-प्रदान का विस्तार होना शुरू हो गया। इस पृष्ठभूमि में वर्तमान सरकार के अमेरिका के साथ संबंधो का देखा जाना चाहिए। भारत-अमेरिका संबंधो में सुधार की गति धीमी रही क्योंकि अमेरिका अपने वित्तीय और बैंकिंग समस्या और यूरो क्षेत्र की समस्याओं से जूझ रहा था और भारत भी आर्थिक मामलों मे निर्णयहीनता की अपनी समस्याओं से दो-चार हो रहा था।

मौजूदा प्रधानमंत्री ने जब अपना कार्यकाल शुरू किया तो उस समय भारत-अमेरिका संबंध एक प्रकार से ठहराव की अवस्था में थे। दोनों ही देशों में एक बड़े परिदृश्य को सामने रखने की बजाय व्यक्तिगत हितों के प्रभाव में निर्णय लिए जा रहे थे। भारत ने दोहा व्यापार वार्ता में अपने खाद्य सुरक्षा के मुद्दो के तरजीह नहीं दिए जाने के कारण विरोध प्रकट किया था। भारत द्वारा कड़े परमाणु मुआवजा कानून बनाए जाने से अमेरिका अपमानित महसूस कर रहा था। अमेरिका इसे उपकरण आपूर्तिकर्ताओं पर अतिरिक्त शर्त के रूप में देख रहा था जिसे की पूरा नही कर सकते थे या करना नही चाहते थे। अमेरिका संसद भारत में हो रहे तथाकथित बौद्धिक अधिकारों के उल्लंघन पर सक्रियता दिखा रही थी। भारत की चिंता थी कि अमेरिका के वीसा प्रतिकूल रवैये से भारत के आई.टी. कर्मचारी पर दुष्प्रभाव पड़ रहा हैं। टकराव के ऐसे अनेक मुद्दे पैदा हो रहे थे। यह वह समय था जब दोनों देशों के नेताओं द्वारा व्यवस्थाओं को फिर से बहाल करने के लिए ऊपर से नीचे तक हस्तक्षेप किया जाना आवश्यक हो गया था।

सितम्बर 2014 में प्रधानमंत्री की अमेरिका यात्रा और राष्ट्रपति बराक ओबामा की जनवरी 2015 में भारत यात्रा ने परस्पर संबंधों में गति प्रदान की। ओबामा अपने कार्यकाल में दो बार भारत आने वाले और भारत के गणतंत्र दिवस पर मुख्य अतिथि होने वाले पहले अमेरिकी राष्ट्रपति हैं।

पिछले एक वर्ष में भारत अमेरिका संबंध में काफी सुधार आया हैं। सितम्बर 2014 में वाशिंगटन वार्ता में सभी मद्दो पर ध्यान दिया गया था। व्यापार के मुद्दे पर सुनिश्चित किया गया कि वस्तु और सेवाओं के दिपक्षीय व्यापार के पांच गुना बढ़ाकर 100 अरब डॉलर किया जाएगा। इसके लिए आधारभूत सुविधाओं के विकास की भी संस्तुति की गई।

इस संबंध में भावी रणनीति बनाने के लिए एक उच्च स्तरीय बौद्धिक सम्पदा समूह की स्थापना की गई। विनिर्माण में नवाचार और कौशल विकास में नई सहभागिता के लिए संवाद बढ़ाने का प्रस्ताव रखा गया।

आतंकवाद का सामना करने के मुद्दे पर दोनों देशों ने अपने संकल्प को दोहराया और कहा कि सम्मिलित और ठोस उपाय कितने आंतकियों के सुरक्षित ठिकानों को नष्ट करना शामिल हैं। किए जाने अत्यंत आवश्यक हैं। पाकिस्तान को केन्द्र बनाकर कार्यरत् सभी आतंकी समूहो के नाम लिए गए जिसमें भारत में काम करने वाले लश्कर-ए-तौएबा और दाऊद समूह भी शामिल हैं। मुम्बई पर हुए 26/11 के हमले के अपराधियों का पाकिस्तान द्वारा प्रत्यर्पण कराए जाने का भी उल्लेख किया गया। सामूहिक प्रयास और पाकिस्तान के लिए एक चेतावनी थी।

जनवरी 2015 में राष्ट्रपति बराक ओबामा का भारत यात्रा में तीन दस्तावेज साझा रूप से जारी किए गए। उनके 2014 में जारी दस्तावेजो में

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय महाविद्यालय, धामनोद (म.प्र.) भारत

अनेक विषयों का विस्तार किया गया था और रणनीतिक धारणाओं के संरूपण का प्रयास भी था। एक ऐसा ही विशेष दस्तावेज हैं, मैगी घोषणा पत्र। यह घोषणा पत्र अंतर्राष्ट्रीय सुरक्षा क्षेत्रिय और वैश्विक शांति, स्थिरता व समृद्धि के लिए साझा रणनीतिक दृष्टि की व्याख्या करता हैं। ये बड़े ही उदात्त लक्ष्य है, जिसको पाने के लिए अतीत में भी भारत महत्वपूर्ण भूमिका निभाता रहा है। इसके बाद यह घोषणा पत्र साझा मूल्यों जैसे कि लोकतंत्र, मानवाधिकार आदि की चर्चा करता है। यह जलवायु परिवर्तन से सामना करने, स्थिर विकास करने जैसे कर्तव्यों की बात करता है और नियमबद्ध तथा पारदर्शी बाजार का भरोसा दिलाता है। यह वर्तमान रणनीतिक संवाद को रणनीतिक व वाणिज्यिक संवाद में बदलता है। और दोनों देशों के प्रमुखो का और सुरक्षा सलाहकारो के बीच हॉटलाईन स्थापित किए जाने पर जोर देता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डॉ.बी.एल फड़िया – भारत और अन्तर्राष्ट्रीय संबंध।
2. प्रभुदत्त शर्मा – अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति।
3. रहीतसिंह – विदेशी मामलो के जानकार–डी.बी. स्टार 08 अगस्त 2014
4. वेदप्रताप वैदिक – भारतीय विदेश नीति परिषद के अध्ययन आर्टिकल दैनिक भास्कर 27 सितम्बर 2014
5. इंटरनेट से प्राप्त जानकारी के अनुसार।

****

श्री अरविन्द घोष के दार्शनिक एवं नैतिक विचारों का अध्ययन

डॉ. पी. के. चतुर्वेदी *

प्रस्तावना – श्रीअरविन्द घोष ने आध्यात्मवाद तथा भौतिकवाद दोनों को स्वीकार किया तथा समन्वयात्मक दृष्टिकोण अपनाया । उन्होंने आत्मा(चैतन्य) और पदार्थ दोनों की सत्ता को स्वीकार किया। वे पाश्चात्य सांस्कृतिक प्रभाव में पले बढ़े थे किन्तु भारतीय संस्कृति,धर्म तथा दर्शन का उन पर इतना अधिक प्रभाव पड़ा कि वे एक महान शिक्षाविद्, कवि, रहस्यसाधक और तत्व चिन्तक के रूप में विख्यात हुऐ।

तत्व विचार – श्री अरविन्द का दृष्टिकोण योग की अनुभूतियों से अभिभूत अद्धेतवादी दृष्टिकोण था। उनके तत्व विचार परम्परागत विचारों से भिन्न है। उनके अनुसार ब्रह्मा एक व निरपेक्ष है। वह अनिर्वचनीय तथा अचिन्तनीय है और वह सबकी अन्तरात्मा भी है। यहाँ पर ब्रह्म सभी कुछ है। अचेतन में चेतन है, अनेक में एक है किन्तु उसे शब्दो में नहीं बॉधा जा सकता । अत: परब्रह्म एकत्व तथा अनेकत्व से परे न सत् है न असत् है। चेतन है न अचेतन, न आनन्द है न निरानन्द और न निराकार है न साकार। इस प्रकार अरविन्द की दृष्टि में ब्रह्म एक विलक्षण इन्द्रियातीत परमसत्ता है। वह अनभिव्यक्त है पर वह सत् चित् और आनन्द रूप है। वह मात्र सत्, चित् या आनन्दरूप अलग-अलग नहीं है बल्कि वह सच्चिदानन्द रूप में एक है। वह इन तीनों का एक समष्टिरूप है और सब प्राणियों में व्याप्त एक अन्तरात्मा है।

ईश्वर तथा अतिमानस विषयक विचार – श्री अरविन्द के अनुसार ईश्वर ब्रह्म का प्रथम रूप है।वह ब्रह्मा की प्रथम सत्ता हैं। ब्रह्मा सृष्टिकर्ता है और सृष्टि रचना करने के कारण वह ईश्वर कहलाता है। ईश्वर सर्वव्यापक सर्वज्ञ और सर्वशक्तिमान है। ईश्वर के रूप में ब्रह्मसर्जक है। अत: ईश्वर अतिमानस है। यह समस्त जग्त ईश्वर का ही एक विकास मात्र है। ईश्वर अनेक में एक है। वह सत् भी है और संभूति भी । यह पृथ्वी इसी ईश्वर की रचना है। सृष्टि के लिए एक चेतना-शक्ति की आवश्यकता है। वह शक्ति ईश्वर की असीम शक्ति है। एक सृष्टा के रूप में यह ईश्वर ही अतिमानस है। ईश्वर इस रचनात्मक जगत का स्वामी है। वह इस जगत का सृजन , रक्षण और पालन करता है। परब्रह्म होने के कारण ईश्वर निरपेक्ष है। यह निरपेक्ष ही सब कुछ है और सब कुछ निरपेक्ष में है। ईश्वर परम पुरूष भी है। इस परमपुरूष के ही दो रूप हैं आत्मा और जगत् । ब्रह्म की द्वितीय सत्ता आत्मा है। इसके दो रूप हैं- बाह्य आत्मा और चैत्य आत्मा । ब्रह्मा की तृतीय सत्ता पुरूष है। पुरूष एक दृष्टा तथा साक्षी के रूप में विद्यमान रहता है। यह पुरूष वैयक्तिक सत्ता है, परन्तु पुरूष अनेक होते हुए भी एक है क्योंकि वह मूलत: ब्रह्मा रूप ही है। इस प्रकार ब्रह्मा के तीन रूप ईश्वर अत्मा और पुरूष हैं। वे पृथक-पृथक सत्ताऐं नहीं हैं। बल्कि एक परब्रह्म के ही अनेक रूप है।

माया प्रकृति और शक्ति – श्री अरविन्द के अनुसार ब्रह्मा के आनन्द रूप में सत्-चित् भी समाहित हैं। सच्चिदानन्द स्वरूप ब्रह्म तीन नहीं एक है। चित्,सत् से पृथक नहीं है, अपितु यह चेतनात्मक जगत् और सत् सब चित् रूप है। यह जड़ जगत भी चित्त हैं । चित में सृजन है । यह जड जगत चित् का अभाव नहीं है, बल्कि अभिव्यक्ति है। इस प्रकार जड और चेतन दोनों ही चित् के रूप हैं। जड़ जगत में जो चेतन है, वह मानसिक चेतन नहीं हैं बल्कि वह शक्ति है, जिसे श्री अरविन्द्र ने चित्शक्ति की संज्ञा दी है। चित् शक्ति का प्रथम रूप माया है। माया के रूप में चित-शक्ति आत्मा को आवृत करती है। चित् शक्ति का द्वितीय रूप प्रकृति है, जो दृश्य, अचेतन त्रिगुणात्मिका और क्रियाशील है। चित्शक्ति का तृतीय रूप शक्ति है। यह ईश्वर की वह शक्ति है, जो असीम है।

नैतिक आदर्श – श्री अरविन्द ने नैतिकता का मूलाधार धर्म को माना है। यह कठोर नैतिक नियमों पर बल देता है। इन नैतिक नियमों के परिपालन से धार्मिक नैतिक व्यवस्था कायम रहती है। धर्म ही सत्य तक पहुॅचने का मार्ग प्रशस्त करता है। धर्म ही मानव प्राणी को बुद्धिमान, शुभ और शुद्ध बनाता है। श्री अरविन्द के अनुसार नैतिकता के लिये वैयक्तिकता और स्वतंत्रता परमावश्यक हैं। स्वतंत्र व्यक्ति ही नैतिक उत्थान की दिशा में प्रगति तथा संघर्ष कर पाता है।

कर्म पुनर्जन्म एवं मुक्ति – श्री अरविन्द के अनुसार कर्म तथा कर्मफल व्यापक रूप में व्यक्तियों को प्रभावित करते है। व्यक्ति के कर्म उसकी नैतिक एवं आध्यात्मिक स्वतन्त्रता के द्योतक हैं। मनुष्य अपने भाग्य का स्वयं निर्माण करते है। कभी कभी व्यक्ति दूसरों के कर्मफल में भागी बनते हैं और कभी-कभी दुसरे व्यक्ति उसके कर्मफल में भागी बनते हैं । जो व्यक्ति जैसा बोता है, वैसा ही करता है।

आत्मा, कर्म को अपने साधन के रूप में प्रयोग करती है। पुनर्जन्म व्यक्ति के कार्यानुसार होता है। शुभ कर्मो से अच्छी योनि में जन्म होता है। जबकि अशुभ कर्मो से निकृष्ट योनि में जन्म लेकर कष्ट झेलने पडते है।

श्री अरविन्द के अनुसार मनुष्य स्वंतत्र होकर कर्म करता है और कर्मफल भोगता है, इसलिए वह मुक्ति का भी अधिकारी है। मानव का अतिमानव की ओर बढ़ना ही मुक्ति का द्वार है। अंहकार मुक्ति का अवरोधक तत्व है। इसे नियन्त्रित करने और उससे ऊपर उठने के लिए व्यक्ति को स्वंय प्रयास करना चाहिये। अभीत्सा त्याग और समर्पण के अभ्यास से मानव, अतिमाव या ब्रह्मा रूप धारण कर सकता है। श्री अरविन्द के दर्शन में यही मुक्ति है।

निष्कर्ष – श्री अरविन्द घोष के दर्शनिक एवं नैतिक विचारों में परम्परावादिता एवं आधुनिकता तथा आध्यात्मवाद एवं भौतिकवाद का अद्भुत समन्वय है। उनका चिन्तन अनुभूतिमय हैं एवं उनके विचारों में मौलिकता है। उन्होंने जीवन के विविध पक्षों पर अपनी विलक्षण शैली में जो गम्भीर प्रकाश डाला है, वह आज भी विचारणीय और अनुकरणीय है। उनके अनुसार मानव का अतिमानव की ओर बढना ही मुक्ति का द्वार है। वास्तव में इसी में मनुष्य जाति के भविष्य की सम्भावनाऐं छिपी हुई है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. द लाइफ दिवाइन – श्री अरविन्द ।
2. ऐस्से ऑन गीता डिवाईन – श्री अरविन्द ।
3. द फाउडेशन्स ऑफ इंडियन कल्चर –श्री अरविन्द ।
4. द सिन्थेसिस ऑफ योगा – श्री अरविन्द ।
5. सावित्री – श्री अरविन्द ।

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय महाविद्यालय, हाटपीपल्या, जिला - देवास (म.प्र.) भारत

कठ्ठीवाड़ा रियासत का इतिहास

डॉ. बलराम बघेल *

प्रस्तावना – सम्पूर्ण कठ्ठीवाड़ा राज्य विन्ध्याचल के अंतिम छोर की पर्वत श्रेणियों से तथा घने जंगल से आच्छादित है। यहाँ का सौन्दर्य अद्भुत तथा जलवायु स्वास्थ्य वर्धक है। इसलिए यह म.प्र. का चेरापूंजी व झाबुआ जिले का कश्मीर कहा जाता है। अतीत से ही यह छोटे राज्य का क्षेत्र वर्तमान में यह विकासखण्ड के रूप में विकसित है तथा म.प्र. सरकार ने इसे आरक्षित वन क्षेत्र घोषित किया गया है। यहाँ की जलवायु की विशेषता यह है कि ग्रीष्मकाल में अत्यधिक गर्मी बढ़ने पर भी वनों से आच्छादित होने के कारण यहाँ ठण्डक महसूस की जाती हैं। कभी–कभी यहाँ अधिक ठण्ड पड़ती है।

कठ्ठीवाड़ा राज्य की उत्तर सीमा पर गुजरात राज्य के पंचमहल जिले बारिया स्टेट तथा दक्षिण और पश्चिम् में रेवाखण्ड एजेन्सी की छोटी उदयपुर रियासत तथा पूर्व में अलीराजपुर रियासत स्थित थी। कठ्ठीवाड़ा राज्य गैर सलामी राज्य था।[1]

कठ्ठीवाड़ा राज्य सेन्ट्रल इण्डिया की भोपावर एजेन्सी के अन्तर्गत एक छोटा सा गैर सलामी राज्य था। 1947 ई. में आज़ादी के पूर्व स्वतंत्र रियासत के रूप में अस्तित्व में था तथा यह राज्य होलकरों के अधीन कर दिया गया था। किन्तु स्वतंत्रता के पश्चात् अन्य रियासतों की तरह यह राज्य भी भारत संघ में शामिल कर मध्य भारत राज्य बनाया गया तथा तब से इसका स्वतंत्र अस्तित्व समाप्त हो गया।

यहाँ का राजवंश यादव राज घराने के राजपूत है। इनका सम्बन्ध जुनागढ़ काटियावाड़ा राज्य घराने से है। इनका मूल वंश ब्राम्हण के अत्री ऋषि की पत्नी माँ अनसुया के वंशज माने जाते है। अत्री ऋषि का लड़का चन्द्रमा हुआ, जिससे सम्बन्ध जोड़ते हुए ये चन्द्रवशीय राजपूत कहलाएँ। इस यादव कुल के मेथिया राजा ने अपना राज्य जूनागढ़ में कायम किया तथा राज्य करते रहे। उनकी कई पीढ़ियाँ बीतने पर इस राज घराने में प्रतापी राजा राहगीरजी जूनागढ़ में हुई। राहगीर जी के 45 लड़के थे, उनमें से 24वाँ लड़का रतनसिंह था। रतनसिंह ने अपनी बहादुरी से कई जगह राज्य कायम किया।[2]

वर्तमान कठ्ठीवाड़ा में काठिया नामक भील केवड़ा गाँव में निवास करता था, यह भील राजा था, केवड़ा में घने जंगल होने से किसी की भी इस क्षेत्र पर कब्जा करने की हिम्मत नहीं थी। इसी गांव में हरिशंकर नामक ब्राम्हण भी निवास करता था। उसकी लड़की अत्यंत सुन्दर होने के कारण काठिया भील ने स्वयं उसके विवाह के लिए ब्राम्हण को विवश किया। अत: ब्राम्हण ने अपनी सुपुत्री के बचाव के लिए केवड़ा गाँव से पश्चिम् की ओर छोटा उदयपुर (गुजरात) में देवहाट नामक गांव की ओर प्रस्थान किया। देवहाट में महाराजा हरिसिंह का शासन था, उपरोक्त घटना का हाल ब्राम्हण हरिशंकर ने महाराजा हरिसिंह को सुनाया, यह वृतान्त सुनकर महाराजा ने ब्राह्मण को देवहाट में शरण दी, तथा महाराजा हरिसिंह ने अपनी सेवा लेकर केवड़ा गाँव के काठिया भील पर चढ़ाई की। दोनों की सेना के मध्य घमासान युद्ध हुआ, किन्तु काठिया भील की सेना क्षेत्रीय युद्ध लड़ती रहती थी, जिसने वह हरिसिंह के सेना के आगे टिक न पाई और पराजित हो गए। युद्ध में भील राजा मारा गया, तब उसकी धर्म पत्नी घनड़ीबाई ने हरीसिंह से वरदान माँगा कि मेरे खानिन्द की मृत्यु के पश्चात् इस क्षेत्र में उनका नाम रहना चाहिए, अत: महाराणा ने उनकी बात को मानकर काठिया भील के नाम पर केवड़ा गाँव के स्थान को कठ्ठीवाड़ा रखा। तब से यह क्षेत्र कठ्ठीवाड़ा के नाम से जाना जाता है।[3]

सन् 1463 ई. में हरिसिंह ने काठिया भील को मारकर कठ्ठीवाड़ा राज्य कायम किया, जिसमें 84 गाँव भी शामिल थे। उस समय राज्य में भील, भीलाला व पटलियाँ जनजाति के लोगों का निवास था। राज्य पूरी तरह से अशिक्षित था। वहाँ की प्रजा को लूटना, चोरी करना एवं लकड़ियाँ बेचकर अपना भरण पोषण करती थी। महाराणा हरिसिंह ने राज्य में उत्तर प्रशासन, लूटमार से बचाने एवं अराजकता के दमन हेतु एक भील सेना का गठन किया, जिसमें राजा के लोगों को रखा गया था।

कठ्ठीवाड़ा रियासत 68 वर्ग कि.मी. क्षेत्र में फैली थी, 1941 की जनगणना के अनुसार राज्य की कुल जनसंख्या 6689 थी, जिसमें 3511 पुरूष तथा 3178 महिलाएँ थी। कठ्ठीवाड़ा राज्य में जिन्होंने मूलत: जन्म लिया उनकी कुल जनसंख्या 5178 थी, जिनमें 2769 पुरूष तथा 2409 महिलाएँ थी। जिसमें 1511 लोक कठ्ठीवाड़ा के बाहर जन्में थे तथा 855 लोग मध्य भारत से आए थे। मध्यभारतीय लोगों ने आलीराजपुर, बड़वानी, छतरपुर तथा गुजरात प्रान्त के छोटा उदयपुर से आए थे।[4]

कठ्ठीवाड़ा में कुल 32 आबाद गांवों में 1,375 आवासगृह थे। सन् 1901 की जनगणना के अनुसार कठ्ठीवाड़ाकी कुल जनसंख्या 3,325 थी, जबकि 1941 में 6,689 हो गई थी। इस प्रकार राज्य में 40 वर्षो में 2867 जनसंख्या की वृद्धि हुई थी।[5]

कठ्ठीवाड़ा जागीर राज्य के अन्तर्गत छोटा सा राज्य था, जिसका क्षेत्रफल 68 वर्ग कि. मी. था किन्तु प्रशासनिक व्यवस्था सुचारू रूप से चलाने के लिए राजाओं ने राज्य को जागीरों के रूप में विभाजित कर दी थी । जागीरें शासकों के द्वारा सामंतों, भाई–बन्धुओं को दी गई भूमि होती पूर्व में शासक की स्थिति सामंतों में से प्रथम होती थी किन्तु बाद में शासक के सम्बन्धों बदलाव आ गया।

राज्य में छोटी–छोटी 5 मुख्य जागीरे रही, जो राज्य के शासकों ने अपने भाई–बन्धुओं को समय–समय पर जीवन निर्वाह या उनकी सेवाओं से प्रसन्न होकर प्रदान की जाती थी। ये निम्नानुसार है 1) जूना कठ्ठीवाड़ा

* सहायक प्राध्यापक (इतिहास) शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

2) सयड़ा 3) खामड़का 4) भोलवाट 5) मोटी बड़ोदू।[6]

अंतत: 15 अगस्त 1947 का स्वर्णिम स्वतंत्रता दिवस आया। देशी रियासतों का भारतीय संघ में संविलियन करने की योजना बनाकर लोकप्रिकय शासन की मांग की जा रही थी। 20 जनवरी,1948 को राज्य की काउंसिल में जनता के तीन लोकप्रीय मंत्रियों को लिया गया। 28 मई, 1948 को झाबुआ राज्य मध्य भारत संघ में विलिन हो गया। इस प्रकार 16 जिलों वाले मध्य भारत में झाबुआ, अलीराजपुर, जोबट, कट्ठीवाड़ा, पेटलावद एवं मथवाड़ को मिलाकर झाबुआ जिला बना। जो रियासतों की राष्ट्रीय गठबंधन का परिणाम है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. आलीराजपुर स्टेट गजेटियर लुआर्ड कृत पृष्ठ 1
2. कठ्ठीवाड़ा के वंशजों उंकारसिंह एवं शिवराजसिंह से रियासतकालीन उपलब्ध फाइल पृ.1
3. कठ्ठीवाड़ा के वंशजों उंकारसिंह एवं शिवराजसिंह से रियासतकालीन उपलब्ध फाइल पृ.2
4. सेन्ट्रल इंडिया सेन्सज सीरिज, 1941, वाल्युम VI कठ्ठीवाड़ा होल्कर प्रेस इंदौर 1943 पृष्ठ 1
5. सेन्ट्रल इंडिया सेन्सज सीरिज, 1941, वाल्युम VI कठ्ठीवाड़ाहोल्कर प्रेस इंदौर 1943 पृष्ठ 1
6. सेन्ट्रल इंडिया सेन्सज सीरिज, 1941, वाल्युम VI कठ्ठीवाड़ाहोल्कर प्रेस इंदौर 1943 पृष्ठ 5

****

माँ नर्मदा के आराधक सन्त दादा धुनीवाले

डॉ. मधुसूदन चौबे *

प्रस्तावना – सन्त दादा धूनीवाले का बाल्यावस्था का नाम माधव था। उनके जन्म के बारे में कोई सूचना उपलब्ध नहीं है। उनके अनुयायियों की मान्यता है कि वे चार रूपों में प्रकट हुए थे। वे सदैव धूनी रमाकर तपस्या करते थे। पवित्र अग्नि या धूनी ही उनकी आराध्य शक्ति थी। इसीलिये वे दादा धूनीवाले के नाम से विख्यात हुए। आज भी उनके खण्डवा आश्रम में धूनी प्रज्जवलित है। वे निमाड़ के महान संत रहे हैं। प्रस्तुत शोध पत्र के माध्यम से उनके व्यक्तित्व और उपदेशों का अध्ययन किया गया है।

पारिवारिक स्थिति एवं प्रारंभिक जीवन – दादा धूनीवाले का इतिहास उनकी सात वर्ष की अवस्था से मिलता है। वे एक अनाथ की तरह सामने आते हैं। उनके माता-पिता एवं अन्य परिजनों तथा उनकी सामाजिक-आर्थिक दशा का कोई लिपिबद्ध या वाचिक विवरण उपलब्ध नहीं है।

वे कुशाग्र बुद्धि के प्रतिभाशाली बालक थे। सन्त गौरीशंकर महाराज के सम्पर्क में आने के बाद का उनका प्रारम्भिक जीवन ज्ञानार्जन में व्यतीत हुआ। उन्होंने काशी में रहकर वेद, उपनिषद, आरण्यक, पुराण, महाकाव्य एवं अन्य शास्त्रों का गहन-गम्भीर अध्ययन किया।

दीक्षा – दादा धूनीवाले के गुरु सन्त गौरीशंकर महाराज थे। उन्होंने पहली बार सात वर्ष की आयु में श्री गौरीशंकर महाराज के दर्शन ग्वालियर में किए थे। उस समय गुरु गौरीशंकर महाराज साधुओं की जमात के साथ नर्मदा परिक्रमा पर निकले हुए थे। यह जमात प्राय: परिक्रमारत् रहती थी। इसे एक परिक्रमा पूरी करने में बारह वर्ष की अवधि लगती थी। परिक्रमा के दौरान सन्त गौरीशंकर महाराज तपस्या, कर्मकाण्ड एवं वेदपाठ की दीक्षा देते हुए त्रिपुरारि से धर्म संकट से मुक्त करने की प्रार्थना किया करते थे।

दादा धूनी वाले का चित्र

जब गुरु गौरीशंकर महाराज निवास कर रहे थे तभी वहां एक सात वर्षीय बालक आया। उसने साधुओं के मुख से हर-हर नर्मदेय का घोष सुनकर साधुओं से पूछा ये नर्मदा माता कौन है? बालक के अभूतपूर्व मुखमण्डल से प्रभावित होकर साधुगण उसे महन्त गुरु गौरीशंकर के पास ले गए। महाराज ने जब बालक से नाम पूछा तो बालक खामोश खड़ा रहा । तब महाराज ने बालक को माधव नाम दिया और अपनी जमात में शामिल कर लिया और कुछ दिनों में बालक महाराज का प्रिय हो गया। कुछ समय बाद जमात के साधु रेवानंदजी ने महावाक्योपदेश कराया और उनका नाम माधव से कृष्णानंद रखा गया।

साधना – काशी में अध्ययन पूर्ण करके वे जमात में लौट आए। उन्होंने गुरु सेवा को अपनी साधना का आधार बनाया। वे गुरुजी के साथ ही जमात के अन्य साधुओं की भी खूब सेवा करते थे। नर्मदा के प्रति उनके मन में विशेष श्रद्धा थी। वे सगुण साकार के अनुयायी और मातृदेवी के भाव से नर्मदा की आराधना करते थे। एक किंवदन्ती है कि उनकी पूजा से प्रसन्न होकर नर्मदाजी ने उन्हें शक्ति प्रदान की थी। जब रात में जमात के साधु सो जाते तब वे नर्मदा से कनस्तरों में जल लाते थे एवं अग्नि चैतन्य कर बड़े-बड़े कड़ाहों में उस जल से पकवान तैयार कर लिया करते थे।

वे सस्वर स्तुति करते थे। वे अच्छे गायक थे। उन्होंने वेदानां सामवेदा अस्मि की उक्ति चरितार्थ किया। वे इतनी मिठास से गाते थे की जमात वाले सन्त आनंद में डूब जाते थे।

सन्त गौरीशंकर महाराज ने कृष्णानंद को अपनी जमात का महंत बनाकर 11 दिसंम्बर, 1888 को होशंगाबाद के निकट स्थित कोकसर ग्राम में समाधि ले ली। गुरु महाराज के समाधिष्ट होने के बाद उनका मन जमात की ओर से हट गया और वे एकांत साधना की ओर उन्मुख हुए। वे नर्मदा के किनारे ग्राम खांडोन से कुछ दूर पीपल के वृक्ष तले ध्यान लगाने लगे।

इसके उपरान्त उन्होंने अग्नि की दिव्य शक्ति की अनुभूति की और उसकी उपासना करने लगे। जल और अग्नि की साधना कर उन्होंने सृष्टि के दो प्रमुख तत्वों की साधना की है। अग्नि की साधना के कारण वे धूनीवाले के नाम से लोक विख्यात हो गए। उम्र के अन्तिम पड़ाव में वृद्धावस्था का सम्मानसूचक संबोधन दादा इसके साथ जुड़ गया।

कार्य क्षेत्र – दादा धूनीवाले ने मालवा और निमाड़ के अनेक क्षेत्रों में धर्म सेवा की है। इनमें कोकसर, तुमड़ो, खांडोन, सांईखेड़ा, बरेली, आवलीघाट, बुधनी, होशंगाबाद, खातेगाँव, इन्दौर, बड़वाह, खंडवा आदि मुख्य हैं।

रचनाएँ – दादा धूनीवाले गायन में निपुण थे। उन्होंने अपने मनोभावों को भजनों में रूपांतरित कर सम्प्रेषित किया। उनकी शिक्षाएँ एवं भजन 'दादा वचनावली' के नाम से संकलित किए गए हैं। उन्होंने हिन्दी भाषा को रचना

* सहायक प्राध्यापक (इतिहास) शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

का आधार बनाया है।

उपदेश – सन्त दादा धूनीवाले ने नर्मदा की असीम महिमा बताई। वे नर्मदा परिक्रमा के लिए सदैव सभी को प्रेरित करते थे। नर्मदा के पौराणिक महत्व की व्याख्या करते हुए। वे इसे स्वच्छ बनाए रखने का आह्वान करते थे। उनका कथन था कि नर्मदा कुंवारी नदी है तथा गंगा और यमुना भी वर्ष में एक बार इसमें स्नान कर स्वयं को उज्ज्वल बनाए रखती थी।

उन्होंने गुरु भक्ति का उपदेश दिया। वे कहते थे कि गुरु की कृपा से काँच भी मणि बन जाता है और अयष् स्वर्ण में रूपांतरित हो जाता है। गुरु की अनुकम्पा प्राप्त करने के लिए सेवा का मार्ग सबसे सरल एवं प्रभावषाली होता है। दिन-प्रतिदिन की छोटी-छोटी विपत्तियों एवं समस्याओं के निदान के लिए गुरु को कष्ट नहीं देना चाहिए। ईश्वर से साक्षात्कार के परम लक्ष्य की प्राप्ति के लिए गुरु को माध्यम बनाया जाना चाहिए।

उन्होंने मानव से मानव के प्रति ममत्व रखने का आग्रह किया। मनुष्यों के मध्य रहकर ही हम जीवन व्यतीत करते हैं। हमारे विचार एवं आचरण परिवेश को उन्नत बनाए रखने वाले होना चाहिए। सभी का भला करने के उपरान्त स्वयं का भला करने की कामना होनी चाहिए। मन, कर्म या वचन से किसी को क्षति नहीं पहुँचानी चाहिए। अच्छा मनुष्य बनकर ही ईश्वर की प्राप्ति की जा सकती है। अर्थात् प्रभु से भेंट करने की पहली सीढ़ी मानवीयता का विकास करना है।

अनुयायी – दादा धूनीवाले एक चमत्कारिक सिद्धात्मा के रूप में ख्यात हो गए थे, अत: उनके अनुयायियों की संख्या बहुत अधिक थी। अपनी समस्याओं का समाधान खोजते सैकड़ों व्यक्ति प्रतिदिन उनके दर्शन के लिये उपस्थित होते थे।

भंवरीलाल उनके अनन्य शिष्य हुए। अपने माता-पिता के देहान्त के पश्चात् अठारह वर्ष की आयु में भंवरीलाल बैतुल जिले के बाबई के सांईखेड़ा में दादा धूनीवाले के आसन पर पहुँचे थे। भेंट के पश्चात दादाजी ने आपको एक सूखी बाटी खाने को दी और कहा अब झंडे के नीचे जाकर बैठ जाओ और हम तुम्हें एक साल तक यहीं रखेगें। इसके बाद भंवरीलाल बिना खाए पिए झंडे के नीचे बैठे रहे। दादा ने भंवरीलाल की गुरु की आज्ञापालन के प्रति लगन से प्रभावित होकर उन्हें अपने शिष्य के रूप में स्वीकार कर उन्हें हरिहरानंद नाम दिया। दादाजी का शिष्यत्व प्राप्त होते ही भंवरीलाल को अलौकिक शक्तियों मिली। बाद में वे छोटे दादाजी के नाम से प्रसिद्ध हुए।

निर्वाण – जनश्रुति के अनुसार धूनीवाले दादा ने अपने जीवन में तीन बार समाधि ली। हर बार समाधि लेने के बाद वे फिर अवतरित हुए। उन्होंने अन्तिम समाधि 4 दिसम्बर, 1930 को खंडवा में भवानी मन्दिर के निकट ली। इस स्थल को दादाजी दरबार के नाम से जाना जाता है। छोटे दादाजी को उनका उत्तराधिकारी घोषित किया गया। उन्होने 12 वर्षो तक खंडवा में दादाजीधाम का संचालन किया और चौबीस घण्टे धूनी रमाकर तपस्या करते रहे। धूनी ही आपकी आराध्य शक्ति थी। उसी धूनी की भभूत से आपने अनेकों चमत्कार किए। 4 फरवरी 1942 को उनका महानिर्वाण हुआ। उनकी समाधि बड़े दादाजी की समाधि के निकट बनाई गई।

मूल्यांकन – दादा धूनीवाले मेधावी थे और उन्होंने काशी में अध्ययन किया था। स्पष्ट है कि शास्त्रों के ज्ञाता थे और भावाभिव्यक्ति में सक्षम। धूनीवाले दादाजी एवं छोटे दादाजी शिर्डी के सांई बाबा, शेगांव के गजानन महाराज, नागपुर के बाबा ताजुद्दीन एवं मुंबई के हाजी अली समकालीन संत थे। निमाड़ में श्रद्धालु बड़े दादाजी को भगवान शिव का एवं छोटे दादाजी को विष्णु का अवतार मानते हैं। वर्तमान में पूरे भारत में उनके भक्तजन विद्यमान हैं। देशभर में फैले लगभग 27 आश्रम खण्डवा के मुख्य आश्रम से जुड़े हुएहैं। गुरु पूणिमा के दिन खण्डवा में प्रति वर्ष विशाल मेले के रूप में भव्य आयोजन होता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

प्राचीन भारतीय कला में गणपति प्रतिमा निर्माण उद्भव एवं विकास

डॉ. मनीषा पाण्डेय *

प्रस्तावना – भारतीय संदर्भ में यदि हम मूर्ति पूजा एवं मूर्तिकला की उत्पत्ति एंव प्राचीनता का अनुशीलन करें तो हमें इसके प्रमाण प्रथम, सिन्धु सभ्यता एवं वैदिक साहित्य से प्राप्त होते है। सिन्धू घाटी में पर्याप्त मात्रा में लिंगाकार पाषाण प्राप्त हुए, जिनका संबंध लिंग पूजा से बैठाया गया है। मिट्टी की असंख्य मुहरें जिन पर मानव आकृतियाँ बनी है। उन्हें मैके महोदय ने गृहदेवता माना है।

साहित्यिक साक्ष्यों में तत्संबंधी विवरण हमें वैदिक संहिताएँ, आरण्यक, ब्राम्हण और उपनिषद आदि प्रमुख है। बाजसनेइ संहिता में रूद्र को नीले गले, लालमुख एवं चमड़े को धारण करने का उल्लेख मिलता है।

वैदिक साहित्य के पिछले भाग अर्थात ब्राह्मणों तथा आरण्यकों के 'रिवल' अंशों एवं गृहसूत्रो से हमें देव प्रतिमाओं एवं मंदिरों के स्पष्ट उल्लेख मिलते है। पर्यावश पंचर्विश या ताण्ड्यब्राह्मण के पिछले अंश षड़विषब्राह्मण में अद्भत ब्राह्मण के नाम से दिव्य एवं शकुनापशकुनो का उल्लेख है। जिसमें देव मूर्तियों के नाचने, रोने, थूकने आदि क्रियाओं को घोर अपशकुनों के अन्तर्गत गिनाया गया है। इसका स्पष्ट उल्लेख 'पारस्कर' गृहसूत्र में मिलता है।

प्राचीन एवं नवीन संयुक्तिकरण के उदाहरण हमें पौराणिक साहित्य लिंगपुराण, मत्स्यपुराण, महाभारत इत्यादि में स्पष्टत: मिलते है। संयुक्तिकरण का यह क्रम ऐतिहासिक युगों तक बराबर चलता रहा, अशोक के शिला लेखों में इसके स्पष्ट प्रमाण मिलते हैं। कि उसने जम्बूद्धीप के अभिन्न देवताओं को स्वीकृत कर लिया है।

मूर्तिपूजा के प्राचीन उल्लेख को देखा जाए तो जिस प्रकार हिन्दू देवता संघ का विकास हो रहा था, उसी प्रकार प्रतिमा पूजन का विकास होने लगा, और उत्तार सूत्रकाल मे प्रतिमा पूजन के उल्लेख प्रचुर मात्रा मे मिलने लगे।

मूर्तिकला का विकास मूर्तिकला के प्राचीनतम अवशेष सिंघु सभ्यता से प्राप्त होते है, निर्माण सामग्री की दृष्टि से सिन्धु घाटी से प्राप्त मूर्तियों के तीन प्रकार है।

(1) मृणमूर्तियाँ (2) पाषाणमूर्तियाँ (3) धातु मूर्तियाँ

ऋववेद में देवों के लिए देवानारथ नृपेशस शब्द का प्रयोग मिलता है। वरूण को सुनहला कवच पहने प्रदर्शित किया गया है।

मौर्यकाल – वैदिक काल के पश्चात मूर्तिकला के इतिहास में मौर्ययुगीन मूर्तिकला का अपना एक महत्वपूर्ण स्थान है। यह कला शैली संरचना और भावों की दृष्टि से विशिष्ट है।

शुंग कालीन कला – शुंगकालीन कला का भारतीय कला के इतिहास में महत्वपूर्ण स्थान है।

शुंगकालीन मूर्तिकला के केन्द्र सारे भारत में मिलते है। जिसमें साँची, भरहुत, बोधगया और मथुरा प्रमुख है। इस काल की मूर्तिकला में जनजीवन का चित्र बड़े सहज रूप से प्रस्तुत किया है।

कुषाणकाल – कुषाण शासको का काल भारतीय कला की क्रियाशीलता का काल है। इस समय कुषाणों के संरक्षण में दो शैलियों का विकास हुआ। जिन्हें मथुरा और गंधार शैली के नाम से जाना जाता है।

गुप्तकाल – यह युग संरचना और भाव संबोध की दृष्टि से मूर्ति कला का पूर्ण प्रतिनिधित्व करता है। इस युग की मूर्तिकला पूर्ववर्ती एवं परवार्ती कालो की कल से अपना अलग स्थान तय करती हुई उस स्थान तक पहुंची जहाँ वह राष्ट्रीय अनुकृतियों भावो और आदर्शो के अलावा धार्मिक और सांस्कृतिक आंदोलन तथा आध्यात्मिक तत्वों की सफल संरक्षिका के रूप में उभरी है।

पालकालीन मूर्तिकला – इस काल की प्रमुख विशेषता यह थी कि मूर्तियों के निर्माण में चिकने काले रंग के कसौटी वाले पत्थरों तथा धातुओं का प्रयोग किया गया था।

चंदेल काल – इस काल का मूर्ति निर्माण और मूर्तियों का उत्कृष्ट नमूना खजुराहो के मंदिरों में देखा जा सकता है। जो मंदिर चंदेल शासको के प्रभुत्व में निर्मित हुए थे।

इस प्रकार देखा जा सकता है कि मध्यकाल के आते–आते मूर्तिकला का सर्वांगीण विकास हो चुका था। और मूर्ति निर्माण की अनेक शैलियाँ विकसित हो चुकी थी।

गणेश प्रतिमा का शिल्प शास्त्रीय विधान एवं स्वरूप – पांचवी एवं छठी शताब्दी के पश्चात् गणपति की पूजा भारतीय समाज में प्रारम्भ हुई और पुराणों में वर्णित ध्यान के आधार पर गणेश की प्रतिमा उत्कीर्ण की जाने लगी।

विष्णु धर्मोत्तार आदि आगम ग्रंथों में गणेश के चर्तुभुजी स्वरूप का वर्णन मिलता है। उनके हाथों में शंख, चक्र, कृपाण विद्यमान है। पाश तथा अंकुश भी दिखाई पड़ता है। युग्म मूर्ति को शक्ति गणेश भी कहते है। गणेश की बैठी प्रतिमा का पूजन समाज में होता है। इसी कारण भारत में आसन पर बैठी प्रतिमाएं प्राप्त हुई है।

स्थानक प्रतिमा – गणेश की खड़ी मूर्तिया अमंग रूप में है। वह कभी निभंग दिखाई पड़ती है।

नृत्य गणपति – नृत्य शब्द का प्रयोग यह प्रकट करता है कि गणेश नाचते हुए दिखाए गए है।

पुराणों, आगमो तथा शिल्पग्रंथो में गणपति प्रतिमा को अनेक रूपों में प्रदर्शित करने का विधान निश्चित किया गया है। प्राचीनतम गणपति प्रतिमाओं का उल्लेख बराहमिहिर के वृहत् संहिता से प्राप्त होता है। जिसके अनुसार एकदंती गजमुख और लंबोदर गणपति को परशु तथा कंद मूलधारी

* अतिथि विद्वान (इतिहास) नवीन शासकीय महाविद्यालय, चंदिया, जिला - उमरिया (म.प्र.) भारत

प्रदर्शित करना चाहिए।

दक्षिण भारतीय अंशुभदभेदागम् और सुप्रभेदागम में भी गणपति प्रतिमा विधान का उल्लेख है, जो पौराणिक विवरण के समान है।

परवर्ती लक्षण ग्रंथों में गणपति के अन्य अनेक प्रतिमा प्रकारों का भी उल्लेख है। जिन्हें विविध रूपों में दिखने का विधान है। इन प्रतिमा प्रकारों में हेरम्ब् गणेश, छिप्र गणेश, बाल गणेश, गजानन, बक्रतुण्ड गणेश, उच्छिष्ट गणेश, उन्मत्त गणेश, नृत्य गणेश, नागेश्वर, बीज गणेश, शक्ति गणेश आदि प्रमुख है।

बाल गणपति – शिल्परत्न के अनुसार बाल गणपति देवता शिशु की भांति निरूपित होता है। मूर्ति हस्ति सिर एवं चर्तुभुज होती है। इसके हाथों में आम्र, कदली, कटहल एवं गन्ना होना चाहिए। हस्तिकर में त्रिफल धारण किए हो, मूर्ति का रंग अरूणाम हो।

तरूण गणपति – क्रियाक्रमद्योति के विवरणानुकूल तरूण गणेश के हाथ में पाश, अंकुश, त्रिफल, जम्बूफल, तिल एवं वांसयष्टि होता है।

भक्ति विध्नेश्वर – भक्ति विध्नेश्वर की मूर्ति चर्तुभुज होती है।

वीर विध्नेश – वीर विध्नेश की षोड़शमुखी मूर्ति है। जिसके हाथों में वेताल, शक्ति, धनुष, वाण, खड़ग, खेटक, खटवांग, मुगदर, गदा, अंकुश, नाग, पाशशूल, कुन्त, परशु तथा ध्वज होता है।

शक्ति गणपति – जब गणेश हरितादेवी का आलिगंन करते हुए या देवी के साथ बैठे हुए बनाए जाए तो उसे शक्ति गणेश की संज्ञा दी जाती है। यह मूर्ति विभिन्न रूपों में प्राप्त होती है।

इसी प्रकार, प्रसन्न गणपति, ध्वज गणपति, उन्मत उच्चिष्ट गणपति, विध्नराज गणपति, भुवनेश गणपति, नृत्य गणपति, हरिद्रा गणपति, भालचन्द्र आदि मिलते है। इस प्रकार अपने प्रलम्ब कर्ण के कारण सूर्य कर्ण तथा एक ही दन्त से सम्पन्न होने के कारण एकदन्त गणेश के स्वरूप का भी विवरण उपलब्ध होता है।

पौराणिक साहित्य में गणेश को इतना महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है, कि उनके नाम से गणेश पुराण और मुद्गल पुराण नाम दो पुराणों की रचना की गयी है। गणेश पुराण में उनके एक हजार नामों की सूची दी गयी है। मत्स्य पुराण, पद्म पुराण, वामन पुराण, स्कन्ध पुराण और शिव पुराण में उल्लेख हैं कि गणेश का जन्म पार्वती के शरीर के मैल से हुआ है। जबकि लिंग पुराण, वामन पुराण और ब्रह्म पुराण में इनके जन्म का संबंध शिव और पार्वती दोनों से माना गया है। ब्रह्मवैवर्त पुराण में उल्लेख है कि गणेश का जन्म पार्वती के व्रत के फलस्वरूप हुआ है।

गणेश की मूर्तियों को साहित्यिक साक्ष्यों में वर्णित ललितासन, अर्धपर्यकासन, महाराजलीलासन और कभी–कभी योगासन एवं वीरासन में निर्मित किया गया है। खड़ी हुई मूर्तियों में गणेश को समभंग, द्विभंग और त्रिभंग मुद्रा में दिखाया गया है।

प्राचीन संस्कृत साहित्य में गणेश की उत्पत्ति एवं महात्म के अनेक आख्यान उपलब्ध होते हैं। जिनसे स्पष्ट है कि गणेश प्राचीनकाल में तो महत्वपूर्ण देव थे। परन्तु पूर्व मध्यकाल एवं मध्यकाल में और भी शक्तिशाली देव के रूप में प्रतिष्ठित हुए। उन्हें विध्नहर्ता एवं प्रथम पूज्य देव कहा जाने लगा। इस बात का प्रमाण प्राचीन एवं मध्यकालीन कला के माध्यम से स्पष्ट होता है। प्राचीन संस्कृत साहित्य में गणेश का जो स्थान था वह पूर्व मध्यकाल एवं आधुनिक काल में भी प्रतिष्ठित है।

सनातन साधन पद्धति के गणेश एक महत्वपूर्ण कड़ी हैं। साधना और सिद्धि के गणेश प्रथम सोपान है। इसी लिए सभी धार्मिक अनुष्ठानो एवं मांगलिक कार्यो में सर्वप्रथम सिद्धिदाता गणेश का आवाह्न पूजन किया जाता है।

गणपति 'एकदन्त' कहे जाते हैं, 'एक' शब्द माया बोधक है तथा 'दन्त' शब्द सत्ताधारक माया चालक ब्रह्म का द्योतक है।

गणपति को वक्रतुण्ड कहा जाता है, यह मनोवाणीयम जगत् सर्वजनों के लिये समभाव से अनुभव गम्य है। गणपति को शूर्पकर्ण कहा जाता है। उनके कान सूप की तरह है, इस स्वरूप से भी उनके परमात्मा स्वरूप का परिचय हमें होता है।

गणपति का वाहक मूषक हैं, इसलिए उन्हें मूषक वाहन कहा जाता है, 'मूषक' ईश्वर तत्व का घोतक के समान होता है। गणपति को मोदक प्रिय है।

निष्कर्ष – इस प्रकार गणपति के स्वरूप का प्रत्येक अंग किसी न किसी विशेषता के लिये है। जो उन्हें ब्रह्म स्वरूप प्रतिपादित करता है। इन्हीं सब नियम और आधार पर प्रतिमा लक्षण और शिल्प शास्त्र का विकास हुआ तथा इन्हीं प्रतिमा लक्षणों और शिल्प शास्त्र के आधार पर मूर्तियों और प्रतिमाओं के विकास की परम्परा का विकास हुआ।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

संगीतज्ञ और काव्यशास्त्री संत हरिदास

डॉ. मधुसूदन चौबे *

शोध सारांश – सबके कल्याण को अपने जीवन का ध्येय बनाने वाले सच्चे संतों ने विश्व को आध्यात्मिक स्वरूप प्रदान किया है। भारत भूमि संतों की धरा है। संतों ने स्वयं के भौतिक सुखों का परित्याग कर सर्वजन के सुख के लिए कार्य किया। ऐसे ही संतों में हरदा के संत हरिदास भी सम्मिलित हैं। उनका प्रभाव निमाड़ क्षेत्र में बहुत रहा। वे संगीत और काव्यशास्त्र में निष्णात थे। उन्होंने अनेक भजनों की रचना की, जिनका कला पक्ष और भाव पक्ष उच्च कोटि का है। उनकी शिक्षाएं आज भी प्रासंगिक हैं। प्रस्तुत शोध पत्र में संत हरिदास के जीवन चरित्र और उपदेशों का अध्ययन–विवेचन किया गया है।
शब्द कुंजी – संत, भक्ति आंदोलन, अनामी संप्रदाय, काव्यशास्त्र, ।

प्रस्तावना – मध्यप्रदेश के दक्षिण–पश्चिम भाग में इन्दौर संभाग में निमाड़ एक स्वतंत्र भौगोलिक उप प्रदेश के रूप में स्थित है। 1 नवम्बर, 1956 को मध्यप्रदेश के निर्माण के समय निमाड़ को दो भागों में विभक्त किया गया– 1. पश्चिमी निमाड़ एवं 2. पूर्वी निमाड़। खरगोन को पश्चिमी निमाड़ का एवं खण्डवा को पूर्वी निमाड़ का जिला मुख्यालय बनाया गया। 25 मई, 1998 को सिंहदेव आयोग की अनुशंसा को क्रियान्वित करते हुए मध्यप्रदेश में 16 नये जिले बनाए गए, जिनमें से एक बड़वानी निमाड़ क्षेत्र में है। निमाड़ी बोली वाले क्षेत्र में प्राचीनकाल से लेकर आज तक अनेक उदात्त विचार और कर्म वाले व्यक्तित्व हुए, जिन्हें संत की संज्ञा दी गई। ऐसे ही संतों में हरिदास जी भी सम्मिलित हैं।

शोध प्रविधि – प्रस्तुत शोध पत्र का स्वरूप ऐतिहासिक और सामाजिक है। इसे तैयार करने के लिए मानविकी में प्रचलित प्रमुख शोध प्रविधियों साक्षात्कार, प्रश्नावली, क्षेत्र अवलोकन, प्राथमिक एवं द्वितीयक साहित्यिक स्रोतों के अध्ययन और विश्लेषण को अपनाया गया है।

उद्देश्य – इस शोध पत्र के लेखन का मुख्य उद्देश्य संत हरिदास जी की जीवनी का अन्वेषण करते हुए उनके जीवन वृत्त का लेखन करना है। संत के रूप में उनके विकास को समझते हुए उनकी शिक्षाओं का संकलन कर दस्तावेजीकरण करना है, ताकि उन्हें पढ़कर पाठक अपने उन्नयन का मार्ग प्रशस्त कर सके।

1. प्रारंभिक जीवन – संत हरिदास स्वामी का मूल नाम हरिसिंह था। उनका जन्म ग्राम रेलवाँ (जिला–हरदा) में हुआ था। उनके पिता मेवाती राजपूत थे। इनके पिता का नाम ज्ञात नहीं हो सका है। माता पार्वतीबाई धार्मिक वृत्ति की महिला थी।

इनका परिवार राजपूत परिवार था, जिसकी समाज में प्रतिष्ठा थी। पिता बड़ी भू–सम्पदा एवं पशुधन के स्वामी थे। मजदूरों की सहायता से कृषि कार्य किया जाता था। परिवार में धर्म के प्रति गहरी आस्था थी। माता पार्वतीबाई अपना अधिकांश समय पूजा–आराधना में व्यतीत करती थी। यही गति इनके बड़े भाई रामलाल की भी थी। वे प्राय: ध्यान में मग्न रहते थे। कालान्तर में उनके बड़े भाई वीतरागी होकर सन्तत्व ग्रहण किया था। इनकी भीकू बाई नामक एक बड़ी बहन भी थी।

हरिसिंह का प्रारम्भिक जीवन लाड़–प्यार में व्यतीत हुआ। वे सात्विक घरेलू परिवेश में पल्लवित हुए। उनके व्यक्तित्व के विकास के लिए शिक्षा की समुचित व्यवस्था की गई। सामान्य शिक्षा के साथ–साथ उन्हें संगीत का ज्ञान प्राप्त करने का अवसर भी प्राप्त हुआ। वे काव्य शास्त्र' और संगीत के सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक पक्ष में निष्णात हो गए थे। उनका स्वर सुरीला था और वे एकतारा तथा अन्य वाद्ययन्त्र बजाने में निपुण थे।

2. दीक्षा एवं साधना – हरिसिंह ने श्री सीताराम महाराज से दीक्षा ग्रहण की। दीक्षा के उपरान्त उनका नाम हरिदास हो गया। उन पर सन्त अफजल तथा उनकी परम्परा के अनामी सन्तों का भी गहरा प्रभाव था। दीक्षा ग्रहण करने के पश्चात् वे साधना तथा सद्विचारों के प्रचार–प्रसार में रत हो गए। सन्त हरिदास निर्गुण निराकार के साधक थे। वे आध्यात्मिक उन्नति के मार्ग में इन्द्रीय आकर्षणों को सबसे बड़ी बाधा मानते थे, अत: उन पर विजय प्राप्त करने के लिए कठोर साधना करते थे।

3. कार्यक्षेत्र – सन्त हरिदास का कार्यक्षेत्र हरदा था। यहाँ पर सन्त अफजल द्वारा बड़वानी में स्थापित अनामी सम्प्रदाय की एक शाखा स्थापित की गई थी। सन्त हरिदास इसी शाखा के महन्त थे। इस शाखा के सम्बन्ध में उल्लेख आता है– 'कबीर साहब बंदीछोड़ की वैष्णवी सम्प्रदाय की श्री सतनामी गादी स्थान सनावद जिला निमाड़ की प्रथम शाखा शुभस्थान हरदा मोहल्ला शुक्रवारा श्री जैन दिगम्बर मंदिर के दक्षिणी त्रिकूट पर गादी सुशोभित है।'[2] हरदा की शाखा वैष्णव सम्प्रदाय की होकर सतनामी गादी के नाम से जानी जाती है।

4. रचनाएँ – वे काव्य रचना और शास्त्रीय संगीत में कुशल थे। अपनी रचनाधर्मिता के सम्बन्ध में उनका स्वयं का कथन है– 'मैं न तो विद्वान हूँ और न मैं अपने को आदेश और शिक्षा देने का अधिकारी समझता हूँ। मैं तो अपने मन के विनोद के लिए कुछ समय श्री गुरु गोविन्द गाायन में लगाने का प्रयत्न मात्र करता हूँ।'[3] उन्होंने शास्त्रीय रागों पर आधारित पाँच सौ पदों की रचना की। 'श्री अनुभव भजनावली' में उनके 252 भजन संग्रहित हैं। उन्होंने निमाड़ी, हिन्दी एवं संस्कृत में लेखन किया है।

उनके अधिकांश पद महाठगनी माया के प्रति सचेत करते हैं। यहाँ उनका एक प्रसिद्ध पद उद्धृत किया जा रहा है –

* सहायक प्राध्यापक (इतिहास) शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

तुने जग बिलमायो, माया ठगोरी।
भौंह कमान, बाम दोउ नैना, घूँघट ओट छिपायो री।
सुंदर वदन मंद मुसकावन, कटि गति देख जीव उलझेरी।
ज्ञानी ध्यानी जिन बस कीने, तीन लोक पीस डारी।
तापस ऋषि मुनि छल मारी, मुनि नारद की बुधि बिसरी।
अतिबला अबला कर बोले, देखो हृदय विचारी।
इंद्रा दिक पद पतन कियो है, यह नागन कारी।
कहे हरिदास शरण सतगुरु की, वचन कहे हितकारी।
अब कृपा करो जगठगनी, भवजल उतारांगा पारी।[4]

उनकी रचनाएँ सुगठित, सुललित, भाव तथा अर्थ सौष्ठव से परिपूर्ण हैं और भाषा विषय के प्रतिपादन में समर्थ है। उनकी मान्यता थी कि कविता ऐसी लिखी जानी चाहिए जो सभी उलझनों को मिटा दे, मन को प्रसन्न करे, लयबद्ध हो तथा ज्ञान और वैराग्य उत्पन्न करती हो।

5. उपदेश – वे गुरु कृपा के बिना भवसागर के पार उतरना असम्भव मानते थे। उनके अनुसार भक्ति के माध्यम से गुरु की कृपा प्राप्त की जा सकती है।

वे इस मान्यता से सहमत थे कि साधना के मार्ग में नारी रूपी माया सबसे बड़ा अवरोध है। उन्होंने नारी का 'ठगोरी' के रूप में चित्रण किया है। उक्त उल्लेखित पद में उन्होंने लिखा है कि नारी अपने सौन्दर्य और आकर्षण से ऋषि-मुनियों, इन्द्र आदि को पथ भ्रष्ट कर देती है। उन्होंने साधना के पथ पर चलने वाले व्यक्तियों को नारी रूपी माया से सावधान रहने का उपदेश दिया।

वे समझाते थे कि नारी के शरीर के जिन अंगों को सुन्दरता का पर्याय माना जाता है, वह हमारा भ्रम है। शरीर गंदगी का ढेर है–

रंगत रेत से भयो मलिन तन, तापर जड़ियो चाम।
ऊपर सेनी चिलउचिकनाई, भीतर अलान।।
जो मुख को चंदा कर माने, थूक लार लिपटान।
चम्पक बरणी कहत बावरे, भरी दुर्गंध महान।।[5]

भारत की उदात्त सांस्कृतिक परम्पराओं से प्रभावित सन्त हरिदास ने देशवासियों द्वारा पाश्चात्य वेशभूषा, शिक्षा, व्यवहार आदि अपनाये जाने पर भी चिन्ता व्यक्त की है। इस सम्बन्ध में उनका एक बहुत रोचक पद इस प्रकार है–

प्यारा हिन्द हुआ बरबाद, यहाँ फैशन के आए से।
धोती न जयहिन्द कर दी, पैंट-पजामे से।
साफा तो गम खाकर बैठा जुल्फे रखाने से।
वीरों की मरदमी रफू हुई मूँछे मुड़ाने में।
चप्पल ने क्या चाल दिखी, जवानी बाने से।
टोपी तो खूँटी पर बैठी, गुंडडई आ जाने से।
मुख पर हाल हुई जनानी बिन्दी लगाने से।[6]

6. अनुयायी – हरदा कस्बे और उसके आसपास के क्षेत्रों के निवासी सन्त हरिदास के अनुयायी थे। बड़वानी, नागझिरी, सनावद, बरुड़ आदि गुरुगादी केन्द्रों में भी सन्त हरिदास का प्रभाव था। आज भी हरदा जिले में उनके भजन भक्ति भाव के साथ गाए जाते हैं।

6. मूल्यांकन – सन्त हरिदास के निर्वाण की तिथि का उल्लेख करने वाला कोई साक्ष्य उपलब्ध नहीं है। सन्त हरिदास बहुमुखी प्रतिभा से सम्पन्न थे। वे परम गुरु भक्त और संयमी साधक थे। विभिन्न भाषाओं पर उनका समान अधिकार था। उनकी उत्कृष्ट रचनाएँ साहित्य की अमूल्य धरोहर है। उनके उपदेशों ने असंख्य लोगों का पथ आलोकित किया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. मध्यप्रदेश – विस्तृत अध्ययन, लेखक – पूर्णेन्दु कुमार, प्रकाशक – अरिहन्त पब्लिकेशन्स (इ) प्राइवेट लिमिटेड, मेरठ, संस्करण – 2008 पृष्ठ – 86
2. श्री अनुभव भजनावली, रचयिता – सन्त हरिदास, प्रकाशक – सतनामी शाखा, हरदा, संस्करण – प्रथम, पृष्छ 02
3. वही, पृष्ठ – 01.
4. श्री अनुभव भजनावली, रचयिता – सन्त हरिदास, प्रकाशक – सतनामी शाखा, हरदा, संस्करण – प्रथम, पृष्छ 19
5. वही, पृष्ठ – 21
6. नर्मदांचल के सन्त कवि, लेखक – बाबूलाल सेन, प्रकाशक – माहिष्मती प्रकाशन, महेश्वर, संस्करण – 1995, पृष्ठ – 77

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) January to March 2017, Vol. I

तीव्र आर्थिक विकास के लिए 'लेस-केश' व्यवस्था आवश्यक

प्रो. ऋचा एव. मेहता *

शोध सारांश – वर्तमान में भारत में लगभग 2 प्रतिशत लेनदेन इलेक्ट्रॉनिक साधनों से होता है एवं 98 प्रतिशत लेन देन में नगद का प्रयोग किया जाता है। यह 98 प्रतिशत नगद लेन देन अर्थव्यवस्था में काला धन बढ़ाने, भ्रष्टाचार बढ़ाने, करचोरी बढ़ाने के जिम्मेदार माने जाते है।

इसलिए भारत में लेस केश अर्थव्यवस्था अत्यंत आवश्यक है परन्तु यह व्यवस्था देश की जनसंख्या की शिक्षा एवं लेसकेश की सुविधाओं को देखते हुए अत्यंत चुनौतीपूर्ण भी है। भारत के संदर्भ में हम लेस केश अर्थव्यवस्था का विश्लेषण निम्न तीन भागों में कर सकते है –

1. **लेस केश अर्थव्यवस्था के लाभ –** कालेधन एवं भ्रष्टाचार पर रोक, रियल एस्टेट के मूल्यों में कमी, कल्याण योजनाओं का लाभ केवल पात्र लोगों को, नकली नोट के चलन पर रोक, अनुत्पादक समय में कमी आदि।
2. **लेस केश अर्थव्यवस्था के मार्ग में आने वाली चुनौतियाँ –** अशिक्षित जनसंख्या, इंटरनेट की अपर्याप्त सुविधा, जनता की मानसिकता, डिजिटल तकनीक से अनभिज्ञता, सस्ते एवं उच्च स्तर के मोबाइल की कमी आदि।
3. **लेस केश अर्थव्यवस्था लागू करने के लिए आवश्यक कदम –** बैंकिंग सेवाओं का विस्तार, इंटरनेट की सुविधाओं का विस्तार, सायबर क्राइम पर रोक के लिए कड़े कानून, डिजिटल भुगतान की सुरक्षा व्यवस्था सुदृढ़ किया जाना आदि।

लेस केश अर्थव्यवस्था के लाभ एवं इस व्यवस्था को स्थापित करने में आने वाली चुनौतियों दोनों के अध्ययन से यह स्पष्ट है कि लेसकेश अर्थव्यवस्था किसी भी देश के लिए अत्यंत आवश्यक है। भारत में लेसकेश व्यवस्था होने तथा कर सुधारों के माध्यम से कर का राजस्व बढ़ेगा जो देश की अर्थव्यवस्था को तेजी से बढ़ाने में मदद करेगा।

प्रस्तावना – 8 नवंबर 2016 को 8.15 मिनिट पर भारत के प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदीजी ने मुद्रा के विमुद्रीकरण (Demonitisation) के तहत् 500 व 1000 रू के नोट के लीगल टेन्डर नहीं रहने की घोषणा की। यह डीमोनेटाइजेशन काले धन को समाप्त करने, जाली करंसी रोकने, भ्रष्टाचार रोकने, आतंकवाद की कमर तोड़ने, कर दायरा एवं कर संग्रह बढ़ाने के उद्देश्य से किया गया। 500 एवं 1000 रू. के नोट देश में चलने वाली कुल मुद्रा का 86 प्रतिशत थे। इनके लीगल टेन्डर नहीं रहने के कारण इस घोषणा के अगले दिन से ही लेन देन के लिए नकद की किल्लत प्रारंभ हो गई। 500 एवं 1000 रू. के नोट जमा कराने एवं लेन देन के लिए नकद निकालने के लिए पूरे देश में बैंकों के बाहर बड़ी-बड़ी लाइनें लगना प्रारंभ हो गयी। नकद की कमी के कारण देश की जनता को अत्यंत असुविधा हुई। बैंकों के बाहर लाइनों में लगने पर कई लोगों की मृत्यु भी हुई, करोड़ों कार्य दिवस नष्ट हुए, अर्थव्यवस्था में मंदी आयी, बेरोजगारी बढ़ी, स्कंध बाजार दूसरे ही दिन 6 प्रतिशत लुढ़क गया। विपक्ष ने बिना तैयारी के किया गया निर्णय बताया एवं जनता को अत्यधिक परेशानी को कारण बताते हुए संसद की कार्यवाही पूर्ण रूप से अवरूद्ध कर दी। परन्तु इस नकद की आपाधापी में जनता ने लेन देन के लिए नकद के अलावा अन्य साधनों का उपयोग प्रारंभ किया। यही से पहले केश लेस अर्थव्यवस्था किए जाने पर सरकार का दबाव बढ़ने लगा। परन्तु जैसे ही केश लेस अर्थव्यवस्था की कठिन चुनौतियाँ सामने आयी सरकार द्वारा लेस केश अर्थव्यवस्था पर जोर दिया जाने लगा। लेसकेश व्यवस्था का अर्थ आर्थिक लेन देनों में नगद का प्रयोग कम से कम हो तथा अधिकांश भुगतान डिजिटल साधनों (इलेक्ट्रॉनिक साधनों) जैसे बैकिंग कार्डस, मोबाइल वालेट, पाइंट आफ सेल (पीओएस मशीन), इंटरनेट बैंकिंग, मोबाइल बैंकिंग आदि से हो।

वर्तमान में भारत में लगभग 2 प्रतिशत लेन देन इलेक्ट्रॉनिक साधनों से होता है एवं 98 प्रतिशत लेन देन में नगद का प्रयोग किया जाता है। यह 98 प्रतिशत नगद लेन देन अर्थव्यवस्था में काला धन बढ़ाने, भ्रष्टाचार बढ़ाने, करचोरी बढ़ाने के जिम्मेदार माने जाते है। भारत की लगभग 125 करोड़ जनता में से लगभग 3 करोड़ करदाता अर्थात् लगभग 2 प्रतिशत जनता आयकर का भुगतान करती है। किसी भी विकासशील देश में प्रत्यक्ष कर (जैसे आयकर) का संग्रह अप्रत्यक्ष करों से अधिक होना चाहिए क्योंकि प्रत्यक्ष कर का भार अमीरों पर अधिक एवं गरीबों पर कम पड़ता है, जबकि अप्रत्यक्ष करों का भार देश के अमीर गरीब वर्ग पर समान रूप से पड़ता है। भारत जैसे गरीब देश में आयकर जैसे प्रत्यक्ष कर का संग्रह अधिक होना चाहिए। नगद लेन देन के कारण कर चोरी का अनुमान केवल इस बात से लगाया जा सकता है कि देश में वर्ष 2015-16 में केवल 15 लाख करदाताओं ने 10 लाख से अधिक आय का विवरण दाखिल किया, जबकि देश में 10 लाख से अधिक कीमत की 27 लाख कारें बिकी एवं घर खरीदने के लिए 25 लाख से ऊपर का लोन लेने वालों की संख्या भी 10 लाख से अधिक आय बताने वाले करदाताओं से अधिक थी। इस स्थिति में सरकार का तर्क यह था कि लेस केश व्यवस्था को बढ़ावा देने से आयकर एवं अन्य करों की चोरी कम होगी तथा कर संग्रह बढ़ेगा जिससे अर्थव्यवस्था को तेजी से विकसित होने के लिए मदद मिलेगी। भारत में लेस केश अर्थव्यवस्था अत्यंत आवश्यक है परन्तु यह व्यवस्था देश की जनसंख्या की शिक्षा एवं

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, सोनकच्छ, जिला - देवास (म.प्र.) भारत

लेस केश की सुविधाओं को देखते हुए अत्यंत चुनौतीपूर्ण भी है। भारत के संदर्भ में हम लेसकेश अर्थव्यवस्था का विश्लेषण निम्न तीन भागों में कर सकते है –

1. लेस केश अर्थव्यवस्था के लाभ।
2. लेस केश अर्थव्यवस्था के मार्ग में आने वाली चुनौतियाँ।
3. लेस केश अर्थव्यवस्था लागू करने के लिए आवश्यक कदम।

1. लेस केश अर्थव्यवस्था के लाभ – लेस केश व्यवस्था से भारत में निम्न लाभ होंगे जो अर्थव्यवस्था गति बढ़ाने में सहायक होंगे –

- आर्थिक लेन देन में नगद का अधिक मात्रा में प्रयोग भ्रष्टाचार एवं कालेधन को बढ़ावा देता है। भारत में कालाधन की तीन स्थितियों है। कालेधन का जन्म, कालेधन का उपयोग एवं कालेधन का संग्रह। कालेधन के उपयोग एवं संग्रह करने पर आयकर छापे मारकर कार्यवाही करता है परन्तु इनकी संख्या बहुत कम है। परन्तु मुख्य समस्या कालेधन के जन्म की है जिस पर अभी तक कोई बड़ी कार्यवाही नहीं हुई न कानून बनाए गए है। जबकि सबसे आवश्यक यह है कि कालेधन को पैदा होने से रोका जाए तो आगे स्थिति अपने आप नियंत्रण में आ जाएगी। कालेधन को पैदा करने से रोकने के लिए नगद व्यवहार कम हो ऐसे कानून बनाना आवश्यक है।
- लेस केश व्यवस्था कर अपवंचन को कम करती है। जब अधिकांश व्यवहार इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों से होगा तो विक्रय एवं आय से संबंधित करों की चोरी पकड़ी जाएगी। इस तरह केश लेस व्यवस्था से करों की चोरी पर लगाम लगेगी।
- केश लेस व्यवस्था में मध्यम एवं दीर्घ अवधि में भूमि एवं भवन अर्थात रियल इस्टेट के मूल्यों में कमी होगी क्योंकि रियल इस्टेट के अधिकांश सौदों में लगभग 40 प्रतिशत हिस्से का लेन देन नगद होता है, जो कालाधन है।
- वित्तीय वर्ष 2015 में रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया को 27 बिलीयन नकद जारी करने एवं उसका प्रबंध करने में व्यय करना पड़ा। लेस केश व्यवस्था में इस व्यय में अच्छी खासी बचत होगी।
- देश के साधन विहिन जनता के लिए चलायी जाने वाली कल्याण योजनाओं का फायदा सीधे तौर पर उनके बैंक खातों में पैसा जमा होने के कारण उन्हें ही मिलेगा। भुगतान करना और प्राप्त करना आसान होगा, पारदर्शी होगा तथा वास्तव में जरूरतमंद व्यक्ति को योजनाओं का लाभ मिलेगा। मनरेगा गैस सबसिडी, किसानों को सबसिडी सीधे बैंक खातों में क्रेडिट होने से केवल पात्र लोगों को धनराशि प्राप्त हुई है।
- भारत में बड़े मूल्य के नोटों में नकली नोट का चलन बहुत अधिक मात्रा में है, जो अर्थव्यवस्था पर ऋणात्मक प्रभाव डालता है। लेस केश व्यवस्था से इस समस्या पर लगाम लगेगी।
- लेस केश व्यवस्था से एटीएम की संचालन लागत कम होगी।
- स्वास्थ्य की दृष्टिकोण से भी मुद्रा का चलन कम होने की आवश्यकता है। एक अध्ययन के अनुसार भारत के अधिकांश नोटों पर रोगों के जीवाणु बड़ी मात्रा में उपस्थित है।
- भारत में बिजली, टेलीफोन, पानी तथा अन्य बिलों के नकद भुगतान में लम्बी–लम्बी लाइने लगती है, जिसमें देश के उत्पादक समय की बरबादी होती है। लेस केश व्यवस्था में लोगों को लाइनों में लगने की आवश्यकता नहीं होगी। जिससे एक ओर तो देश का उत्पादक समय बढ़ेगा दूसरी ओर इन सेवाओं का भुगतान वसूल करने की लागत भी कम होगी।
- मूडी की एक रिपोर्ट के अनुसार इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों से भुगतान होने पर मुद्रा का चलन वेग तेज होगा। जिससे देश के सकल घरेलू उत्पाद में .8 प्रतिशत की तथा विकसित बाजारों के कारण .3 प्रतिशत की वृद्धि होगी।
- उपरोक्त कारणों के अतिरिक्त कुछ अन्य लाभप्रद प्रभाव अर्थव्यवस्था पर होंगे। जैसे जनता की क्रेडिट रेटिंग तय करना आसान होगी जिससे भविष्य में कर्ज लेने में सुविधा रहेगी। मनी लॉड्रिंग एवं कर चोरी कठिन होती जाएगी। नकद के कम प्रयोग से चोरी, कपट की जोखिम कम होगीं।

2 भारत में लेस केश व्यवस्था के मार्ग में आने वाली चुनौतियाँ – भारत में लेस केश व्यवस्था के समक्ष बहुत सी चुनौतियाँ है जो निम्न प्रकार है –

- भारत में एक अध्ययन के अनुसार जनसंख्या का 50 प्रतिशत भाग जोड़ घटाव कर सकने जितना भी शिक्षित नहीं है। ऐसी दशा में डिजिटल भुगतान (इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों) से करना इनके लिए कठिन होगा।
- देश में इंटरनेट कनेक्शन की स्थिति संतोषप्रद नहीं है। कई बार भुगतान करते समय इंटरनेट की लिंक फेल हो जाती है एवं डिजिटल भुगतान करना कठिन हो जाता है। कई जगह इंटरनेट की गति कम होने के कारण भुगतान में विलंब होता है। ऐसे में लोग परेशान होकर नगद भुगतान करना पसंद करते है।
- वर्तमान सरकार ने जनधन योजना के तहत् बड़ी संख्या में बैंक खाते खुलवा दिए है परन्तु इनमें से अधिकांश संचालित नहीं किए जाते हैं। लोग केवल सबसीडी एवं आर्थिक मदद प्राप्त करने के लिए ही इनका उपयोग करते है।
- व्यापारियों को एक बहुत बड़ा वर्ग नकद आधारित व्यवस्था में रहना चाहता है क्योंकि वे अकाउंटिंग तथा कर व्यवस्था से बचना चाहता है। ये लोग लेस केश व्यवस्था के संसाधन को बसाने में पैसा नहीं लगाना चाहते।
- अधिकांश डेबिट एवं क्रेडिट कार्डधारकों को डर है कि कार्ड का अधिक उपयोग करने पर उनसे अधिक चार्ज लिया जाएगा।
- अधिकांश जनता कार्ड का उपयोग करने के लाभ नहीं जानती है।
- भारत में लोग डिजिटल पेमेन्ट को सुरक्षित नहीं मानते है। नेट बैंकिंग फ्राड के कारण यह बात भी सामने आई है कि भारत में डिजिटल बैंकिंग व्यवस्था की समुचित सुरक्षा व्यवस्था नहीं हैं।
- भारत में डिजिटल पेमेन्ट के लिए सस्ते एवं उच्च स्तर की सुविधाओं वाले मोबाइल फोनों की भी कमी है।
- देश के ग्रामीण एवं पिछड़े क्षेत्रों में बैंकों की संख्या बहुत कम है।
- भारत में तीन जनरेशन रहती है, इसमें से पहली दो जनरेशन जिनका जन्म 1950 से 1990 के बीच हुआ हैं, वे तकनीक के इस्तेमाल में कठिनाई महसूस करते है। इनको डिजिटलाइजेशन व्यवस्था में लाना अत्यंत चुनौतीपूर्ण कार्य है।
- डेबिट एवं क्रेडिट कार्ड से भुगतान पर बैंकों के चार्ज एवं क्रेडिट कार्ड पर ब्याज की दर बहुत अधिक है।
- नगद व्यवहार लम्बे समय से करते रहने के कारण अधिकांश लोग नगद व्यवहार के अभ्यस्त हो गए है, वे स्वेच्छा से डिजिटलाइजेशन पर जाना नहीं चाहते।

- भारत में डिजिटलाइजेशन के मार्ग में एक बाधा भाषा की भी है। अधिकांश डिजिटल भुगतान में अंग्रेजी भाषा का उपयोग होना है। कुछ एप हिन्दी में उपलब्ध जरूर है परन्तु वे प्रभावशाली नहीं है।
- कार्ड द्वारा भुगतान के लिए पी.ओ.एस. मशीनों की अभी भी भारत में बहुत कमी है। अभी केवल बड़ी दुकानों में ही पी.ओ.एस. मशीन चलन में है।

3. केश लेस व्यवस्था लागू करने के संबंध में सुझाव – लेस केश व्यवस्था बनाने के रास्ते में बहुत सी कठिनाइयाँ या चुनौतियाँ है। परन्तु भारत को विकसित राष्ट्रों की पंक्ति में लाना है तो इन चुनौतियों का सामना करते हुए लेस केश की दिशा में देश को अग्रसर करना आवश्यक है। लेस केश व्यवस्था लागू करने के संबंध में निम्न सुझाव उपयोगी हो सकते है –

- देश के जिन क्षेत्रों में बैंकिंग सुविधाएँ पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है वहाँ पर नगद लेन देन को सीमित करने के लिए कानून बनाए जाएं तथा उनका कड़ाई से पालन हो तथा जिन क्षेत्रों में बैंकिंग सुविधाएँ पर्याप्त न हो वहाँ पर्याप्त सुविधा उपलब्ध होने तक नगद लेन देन की स्वतंत्रता दी जाएं।
- गांवों एवं पिछड़े क्षेत्रों में पर्याप्त बैंकिंग सुविधाएँ स्थापित होने तक शहरी क्षेत्रों में लोगों को डिजिटल भुगतान के फायदो बताकर डिजिटल भुगतान के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए। इस ओर सरकार के प्रयास प्रारंभ हो चुके है।
- सरकार द्वारा प्रशिक्षण केन्द्रों की स्थापना की जाएं, जहाँ लोगों को डिजिटल पेमेन्ट एवं इंटरनेट चलाने का प्रशिक्षण मुफ्त में दिया जाएं।
- डेबिट कार्ड से भुगतान करने पर सर्विस चार्ज कम किया जाना चाहिए जिससे छोटे से छोटा दुकानदार पी.ओ.एस. मशीन लगाकर भुगतान लेने के लिए प्रेरित हो तथा ग्राहक भी कार्ड से भुगतान करने के लिए प्रेरित हो।
- सिनेमा, रेल्वे, हवाई जहाज आदि की ऑनलाइन बुकिंग कराने पर लिया जाने वाला सेवा शुल्क कम किया जाना चाहिए।
- सभी प्रकार के दो पहिया वाहन एवं कारों का क्रय डिजिटल भुगतान से ही करने का कानून बनना चाहिए। महंगी इलेक्ट्रॉनिक वस्तुओं का भुगतान भी डिजिटल ही होना चाहिए तथा साथ में पेन नंबर भी आवश्यक होना चाहिए। यदि प्रत्येक पेनकार्ड पर वर्ष में करदाता द्वारा क्रय की गई इन आयटमों की राशि सरकार को ज्ञात होगी तो कर चोरी पर भी अंकुश लगेगा। सोने चाँदी एवं अन्य कीमती धातु के आभूषण एवं वस्तुओं का क्रय-विक्रय केवल डिजिटल भुगतान द्वारा ही होना चाहिए।
- भारत में कार्यरत प्रत्येक बैंकों के लिए ग्रामीण एवं पिछड़े क्षेत्रों में बैंक की शाखाएँ एक निश्चित सीमा तक खोलने का कानून बनाना चाहिए जिससे पूरे देश में बैंकिंग सेवाओं का विस्तार हो एवं डिजिटल भुगतान संभव हो सके।
- इंटरनेट की सुविधा बढ़ाने, बाधारहित करने तथा सस्ता करने के प्रयास होने चाहिए।
- जनता को डिजिटल भुगतान के फायदे बताए जाने चाहिए।
- डिजिटल भुगतान की सुरक्षा की व्यवस्था सुदृढ़ की जानी चाहिए।
- साइबर क्राइम रोकने की समुचित व्यवस्था की जानी चाहिए।
- जनता को जो नकद भुगतान की अभ्यस्त हैं, उन्हें कुछ समय के लिए डिजिटल भुगतान पर कटौती की सुविधा दी जानी चाहिए ताकि वे डिजिटल भुगतान ज्यादा से ज्यादा करें। सरकार ने कुछ भुगतान पर कटौती देने की घोषणा भी की है।

लेस केश अर्थव्यवस्था के लाभ एवं इस व्यवस्था को स्थापित करने में आने वाली चुनौतियों दोनों के अध्ययन से यह स्पष्ट है कि लेस केश अर्थव्यवस्था किसी भी देश के लिए अत्यंत आवश्यक है। भारत में लेस केश व्यवस्था होने तथा कर सुधारों के माध्यम से कर का राजस्व बढ़ेगा जो देश की अर्थव्यवस्था को तेजी से बढ़ाने में मदद करेगा। परन्तु चुनौतियों को देखते हुए अल्पअवधि में लेसकेश व्यवस्था संभव नहीं लगती परन्तु लेस केश व्यवस्था किए जाने के प्रयास होने प्रारंभ हो गए है जो अर्थव्यवस्था के लिए अत्यंत सुखद साबित होंगे। भारत के सकल घरेलू उत्पाद का 70 प्रतिशत हिस्सा गैर शहरी क्षेत्रों से आता है यदि यह लेस केश व्यवस्था से आएगा तो इसका अर्थव्यवस्था को बहुत भारी लाभ होगा। कोई भी देश बिना चुनौतियों का सामना किए समृद्ध नहीं बन सकता। अत: भारत में भी इन चुनौतियों का मुकाबला कर देश को लेस केश अर्थव्यवस्था बनाने का पुरजोर प्रयास करना चाहिए जिससे हमारी अर्थव्यवस्था तेजी से विकसित हो सकें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. 8 नवम्बर 2016 के बाद के समाचार-पत्र एवं टीवी न्यूज के आधार पर।

****

महिला उत्पीड़न एवं मानव अधिकार

डॉ. सुधा लाहोटी *

प्रस्तावना – प्रकृति ने नारी को अपार करूणा और प्रेम से विभूषित करके धरा पर भेजा है। इसलिए वह माँ है। 'माँ' जिसके ममत्व की अजस्त्र धारा का प्रत्येक कण महान है। यदि वह जननी नही होती तो सृष्टि का संपादन कैसे होता, और कैसे संभव होता समाज का सृजन। नारी ही सृष्टि का मूलाधार है।

सृष्टि में ईश्वर ने नर और नारी के बीच शारीरिक असमानता प्रदान कर दोनों को एक दूसरे के पूरक एवं सहयोगी बनाने का प्रयास किया, किंतु स्वार्थी और प्रभुत्व सम्पन्न मनुष्य ने दोनों के बीच सामाजिक और आर्थिक असमानता उत्पन्न कर समाज में असतुंलन को जन्म दिया है।

संविधान ने सभी को समानता, स्वत्रंता एवं सम्मान का अधिकार दिया है। विशेष तौर पर महिलाओं के सम्मान की सुरक्षा के लिए अनेक अधिकार प्रदान किए साथ ही अधिकारों की प्राप्ति हेतु कानूनों का निर्माण किया–

घरेलू हिंसा के खिलाफ अधिकार, काम पर उत्पीड़न के खिलाफ अधिकार, समान वेतन का अधिकार, मुफ्त कानूनी मदद का अधिकार, संपत्ति पर अधिकार, रात में गिरफ्तार न होने का अधिकार, मातृत्व संबंधी लाभ के लिए अधिकार, नाम न छापने का अधिकार, प्रत्येक कार्य में पिता के साथ माता का नाम, स्त्रियों का पुरोहित कार्य में लगना, महिला आरक्षण, नि:शुल्क कन्या शिक्षा, विधवा पेंशन, बचत कार्यक्रमो में विशेष प्रोत्साहन इत्यादि।

संविधान का अनुच्छेद 21 स्वतंत्रता के साथ जीने का अधिकार देता है। उच्चतम न्यायालय ने अपने एक निर्णय में कहा था कि जीवित रहने का अधिकार केवल शारीरिक अस्तित्व तक ही सीमित नहीं है बल्कि मानवीय गरिमा के साथ जीवित रहने का अधिकार भी इसके परिक्षेत्र में आता है।

घरेलू हिंसा से संरक्षण अधिनियम 2005 के तहत पत्नी कोर्ट में आवेदन देकर पति से विभिन्न धाराओं के अन्तर्गत सभी खर्च प्राप्त कर सकती है। यह अधिनियम संविधान में दिए गए महिलाओं के अधिकारों को प्रभावी रूप से दिलवाने के लिए बना है।

इतने कानून होने के बावजूद महिलाओं के साथ हो रहे अत्याचार, यौन शोषण, बलात्कार, भ्रूण हत्या, घरेलू हिंसा जैसे अमानवीय अपराधों का ग्राफ तेजी से बढ़ रहा है। वर्तमान समय में महिला उत्पीडन का सबसे चिंतनीय और गंभीर स्वरूप यौन शोषण के रूप में देखने को मिल रहा है।

ऐतिहासिक साक्ष्यों के अनुसार 9वीं, 10वीं शताब्दी में बाल विवाह, पर्दा प्रथा, सती प्रथा जैसी कुरीतियां समाज में फैल गई थी ये प्रथाएं अशिक्षा, दबी मानसिकता एवं समाज में स्त्रियों की अपने अधिकारों के प्रति उदासीनता की भावना के कारण व्याप्त हुई। मध्यकाल में बाह्य आक्रमण और देश की कमजोर होती आर्थिक स्थिति के कारण महिलाओं की स्थिति दिन प्रतिदिन और खराब होने लगी। मुगल काल में धार्मिक क्षेत्र में मीरा बाई को जो यातनाएं दी गई, वह समाज में नारी के प्रति अपनाए गए दृष्टिकोण को उजागर करती हैं। यह वही समय था जब राजस्थान प्रान्त में लड़कियों को जन्म के समय ही मार दिया जाता था। समाज में नारी उत्पीड़न देखकर संभवत: माँ स्वयं यह सोचती होगी कि प्रतिदिन मरने से अच्छा है। एक बार मर जाना और इसीलिए अनचाहे या स्वेच्छा से अपनी ममता का गला घोंटकर ऐसे दुष्कृत्य में शामिल हो जाती थी।

पितृ सत्तात्मक परिवारों में पुरूष मुखिया होता है। सम्पत्ति पर अधिकार वंशनाम सभी में पुरूष अग्रणी है। परिवार में समाज में पुत्र की माँ होना गर्व दिलाता है। महिला द्वारा अन्य महिला को दूधो नहाओं, पूतो फलों अथवा पुत्रवती भव जैसे आर्शिवचन का दिया जाना यह प्रगट करता है कि पुत्र परिवार की रीढ़ है। कन्या जन्म उपेक्षित है।

नवरात्र में एक दिन कन्या पूजन कर देवी का स्थान प्रदान करने वाले समाज में यौन उन्मत्त और क्षुब्ध मानसिकता वाले व्यक्ति सदैव अवसर की तलाश में लगे रहते हैं। अवसर प्राप्त होते ही उनका पशुवत व्यवहार का चेहरा दिखाई देता है। एक बलात्कारी पुरूष समाज में स्वच्छन्द घूमता है किन्तु बलात्कार की शिकार स्त्री से बार–बार शाब्दिक बलात्कार होता है।

भारतीय समाज की विडम्बना है कि जिसे जननी कहा जाता है उसके सम्मान के साथ खिलवाड़ करने से पहले एक बार भी नहीं सोचा जाता। उसके साथ एक वस्तु की भांति व्यवहार किया जाता है। कभी भी किसी भी तरह अपने मनचाहे तरीके से उसका उपयोग किया जा सकता है। बिना यह सोचे कि इस बर्ताव से उसका अस्तित्व, उसका वर्तमान और उसकी इच्छाएँ किस तरह प्रभावित होगी। आंकड़े बताते हैं, कि छेड़छाड़ से लेकर यौन अत्याचार की घटनाएं लगातार बढ़ रही है, असुरक्षा बढ़ी है।

हमारे धर्म ग्रंथ, खाप पंचायतें, कट्टर पंथी संगठन भी अपनी बंदिशों और फैसलों से महिलाओं की असुरक्षा में वृद्धि करते हैं। देश की राजधानी दिल्ली की सड़क हो या सायबर सिटी बेंगलूरू की, आज भी महिलाऐं सुरक्षित नहीं हैं। 10वीं में 92 प्रतिशत् अंक हासिल करने वाले लड़की जिसने अन्याय और झूठ से लड़ने की तालीम ली हो, वह यदि कट्टर पंथियों से लड़ने की बजाय अपने कदम पीछे खींच लेती है, तो समाज में पढ़ी–लिखी और अनपढ़ बेटियों में कोई विशेष अन्तर नहीं रह जाता है।

ऐसे कई मामले चिन्हित किए जा सकते हैं– शिक्षक का छात्रा से कुकर्म, भाई ने किया दुराचार, गर्भवती हुई दुराचार की शिकार गूंगी–बहरी युवती, दहेज के लिए पत्नी को घर से निकाला, बेटी होने पर पत्नी को भेजा मायके, अधेड़ ने किया 3 साल की मासूम से दुष्कर्म, पिता ने किया बेटी का उपभोग, नाबालिग से दुराचार, सार्वजनिक स्थानों पर भी नहीं है सुरक्षा, सजा में लग जाते हैं वर्षो, परिचितों पर भी नहीं कर सकते हैं भरोसा।

महिला के सपने, सपने ही रह जाते हैं। महिला आज के दौर में जिस

* प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.) भारत

प्रकार हिंसा का शिकार हो रही है, वह समाज व सरकार दोनों के लिए चुनौती है।

यौन उत्पीड़न एवं बलात्कार के लिए किसी एक कारण को दोषी नहीं ठहराया जा सकता है। सख्त कानून एवं पारम्परिक धार्मिक संस्कारों के माध्यम से इन सामाजिक बुराईयों से मुक्ति मिल सकती है। जरूरत है, सरकार और समाज दोनों मिलकर जिम्मेदारी निभाऐं।

सुझाव–

- स्त्रियों के प्रति अपने परम्परागत दृष्टिकोण को बदलने के लिए पुरूषों में जागरूकता लाना।
- दृश्य एवं श्रव्य संचार साधनों के उपयोग से जनमानस की सोच को सकारात्मक दिशा प्रदान करना।
- शिक्षा का विकास करना।
- महिला स्वैच्छिक संगठनों को मजबूत करना।
- महिलाओं को आत्मरक्षा संबंधी (जूड़ो कराटे) प्रशिक्षण देना।
- महिलाओं के लिए होस्टल की व्यवस्था करना।
- कार्य स्थल से घर तक सुरक्षित पहुंचाने की व्यवस्था की जाना।
- अपराधिक न्याय व्यवस्था में आवश्यक बदलाव करना।

महिलाओं की स्थिति में सुधार के लिए विभिन्न सरकारी और कानूनी प्रयास तभी सफल हो सकते हैं, जब सम्पूर्ण समाज की सोच, पूर्वाग्रह, रवैया जैसी धारणाओं में भी बदलाव आये। इसके लिए जरूरी है जनचेतना लाई जाये।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. समाचार पत्र – दैनिक भास्कर, दैनिक जागरण, पत्रिका, नव दुनिया
2. रचना – म.प्र. शासन उच्च शिक्षा विभाग एवं म0प्र0 हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल का समवेत उपक्रम।
3. नई सहस्त्राब्दी का महिला सशक्तिकरण–डॉ0 वीरेन्द्र सिंह यादव।
4. अवधारणा, चिन्तन एवं सरोकार आमेगा पब्लिकेशन्स दरिया गंज दिल्ली।
5. महिला सशक्तिकरण चुनौतियां एवं रणनीतियां – डॉ. राकेश द्विवेदी पूर्वाशा प्रकाशन भोपाल।

****

गुदना एक सामाजिक पक्ष-जनजातियों के संदर्भ में

डॉ. रंजीता वास्केल *

प्रस्तावना – 'गुदना एक प्रकार की चुभन हैं' आज भी आदिवासी क्षेत्र विज्ञान की आधुनिक उपलब्धियों से अछूते हैं। संस्कृति के वर्तमान स्वरूप से अपरिचित हैं। यह अवश्य हुआ हैं कि आदिवासी आदिमानव से थोड़ा अधिक विकसित जीवन व्यतीत कर रहे हैं। आदिवासी हमारे राष्ट्रीय जीवन के प्रमुख अंग हैं। सदियों से पिछड़े होने के कारण ये राष्ट्र की सामान्य जीवन धारा से अलग पड़कर प्रगति की दौड़ में पीछे रहे गए हैं। आधुनिक दृष्टिकोण से अन्य पिछड़े हुए इन मानव समुदायों के लिए जनजाति शब्द का प्रयोग होता हैं। इनके परिवार समूहों के संगठन का एक निश्चित नाम होता हैं वे किसी निश्चित भू-भाग में रहते हैं। भारतीय संविधान में अनुसूचित जनजातियों को विशेष सुरक्षा तथा सुविधाए दी गई हैं।

गुदना सामाजिक स्थिति को दर्शाता हैं, गुदना का होना किसी ऐसे सामाजिक प्रतीक के समान होता हैं। जिससे सामाजिक स्थिति अभिव्यक्त होती हो, जैसे ब्राम्हाणों द्वारा कर्ण छेदन, मुंडन, जनेऊ धारण आदि या फिर विवाहित महिला द्वारा मांग में सिंदूर भरना इसी प्रकार से गोंड जनजाति में गुदना सामाजिक परम्परा हैं। गुदना का प्रकार स्थायी इसलिए भी होता हैं क्योंकि इस प्रक्रिया से त्वचा पर स्थायी निशान छपते हैं, जो समय के साथ न तो धुंधले पड़ते है और न ही किसी प्रकार से मिटाया जा सकता हैं। गुदना को सामाजिक परम्परा के रूप में भी देखा जाता हैं। इसलिए यह आवश्यक हैं कि किसी भी प्रकार के प्रतीक को स्थायी बनाया जा सके क्योंकि इसकी सामाजिक स्वीकृति हैं।

गुदना किसी निश्चित समय एवं पृथक-पृथक समय के नियमों से बंधा हुआ नही हैं किसी विशेष स्थान, व्यक्ति एवं समय के द्वारा भी गुदना प्रभावित हो सकता हैं। गुदना के लिए विश्लेषण के पश्चात यह निष्कर्ष निकाला जा सकता हैं कि कुछ विशेष अवधि में गुदना प्राय: उत्तरदाता द्वारा किया जाता हैं। इन विशेष अवधि को बाल्यकाल, युवाकाल, मध्य आयु, वृद्धा अवस्था एवं अन्य विशिष्ट समय अथवा स्थान के रूप में बाटकर देखा जा सकता हैं। इन कालों में प्राय: गुदना करने वाले सारे उत्तरदाता गुदना कर लेते हैं।

गुदना के कुछ आधार तो त्वचा की स्थिति पर निर्भर करती हैं जैसे त्वचा पर बहुत मुलायम एवं वृद्धि के समय गुदना कर पाना अत्यंत कठिन होता हैं त्वचा के शिथिल होने के पश्चात भी गुदना कर पाना संभव नही होता, गुदना के उत्तरदायी यह जैविकीय कारक होते हैं, अन्य कारको जैसे आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक कारक भी उत्तरदायी होते हैं, इनमें धार्मिक कारक सर्वप्रथम होता हैं। गुदना एक प्रकार की चुभन हैं। जिसके बुरे प्रभाव को परे रखा जा सकता हैं क्योंकि यह स्थायी होती हैं। ऐसी मान्यता हैं कि गुदना से काले जादू को उस व्यक्ति के शरीर पर वास करने में अलग रखती हैं।

गोदना में प्रयुक्त सामग्री के अन्तर्गत सुई एवं रंग, हल्दी पावडर, सरसों का तेल आदि हैं। गुदना प्राय: दो प्रकार से कराई जाती हैं प्रथम सांचे के माध्यम से, द्वितीय प्रकार में सुई के माध्यम में निश्चित आकृति को पहले शरीर के वांछित भाग में पेन या अन्य किसी रंगीन लेखनी से तैयार करने के पश्चात उस आकृति के ऊपर सुई से रंग चुभोकर धीरे-धीरे शरीर में चुभाया जाता हैं।

सुई शरीर में अधिक गहराई में न जाने पाए केवल अनुमान से इतनी गहरी (केवल ऊपरी सतह) पर ही चुभाया जाता हैं ताकि शरीर से रक्त का बहाव न होने पाए तथा शरीर में घाव या अन्य प्रकार का कोई दोष उत्पन्न न हो पाए।

वर्तमान से पहले जब ग्रामीण क्षेत्रों में हाट बाजार पास में नहीं हुआ करते थे। ऐसी स्थिति में रंग की समस्या का निदान भी जनजातिय समुदाय ढूंढ निकालते थे। प्रथम तरीका – रंग के लिए कृषि उपज रमतीला (तिलहन) के बीज को मिट्टी के पात्र में भूनकर, कुटकर, जलाकर धूंए को मिट्टी के पात्र पर उल्टा रखकर कार्बन को एकत्र करके सरसों का तेल मिलाकर काजल बनाया जाता था तथा पानी से घोल बनाकर काला रंग तैयार किया जाता था फिर दूसरा तरीका- बल्लर (सेम) की फली के पत्ते का रस निकालकर नुकीली सुई से छेद करके रंग लगाया जाता था इससे हरा रंग उभर कर आता था जो बहुत आकर्षक लगता था।

वर्तमान में गोदना इलेक्ट्रिक मशीन के द्वारा भी कराया जाता हैं। जो कि बर्तन आदि में नाम लिखने वाली मशीन की तरह होता हैं, जो कि एक निश्चित गति से चलायमान होता हैं तथा अनुभवि व्यक्ति के द्वारा ही इससे गोदने का कार्य किया जाता हैं। इसमें 'वीटा टयूब' का प्रयोग गोदने के लिए किया जाता हैं।

गुदना के प्रभावशील होने के कारण इसमें सकारात्मकता एवं नकारात्मकता दोनों का समायोजन होता हैं। लोगों की मान्यता हैं कि गुदना का प्रयोग जादू के हानिकारक प्रभाव को दूसरो पर एवं दूसरो के द्वारा हानिकारक प्रभाव से बचाने के लिए किया जाता हैं।

गुदना सामाजिक मूल्यों के अंगो में से हैं कुछ लोग हिन्दू मूल्यों जैंसे जीवन एक चक्र हैं एवं पुर्नजन्म होता हैं के आधार पर गुदना का परिभाषित करते हैं। कुछ लोग केवल एक निशान के तौर पर देखते हैं कुछ अपने स्थान एवं स्थिति को सुनिश्चित करने के लिए पुनर्जन्म में पहचान के रूप में पालन करते हैं। सामाजिक दबाव भी परम्पराओं के निर्वाह के लिए महत्वपूर्ण होता हैं, कुछ लोग चेहरे पर सुंदरता की अभिव्यक्ति के रूप में देखते हैं, कुछ इसे जेवरो के विकल्प के रूप में देखते हैं।

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, धामनोद (म.प्र.) भारत

गुदना का प्रचलन कालांतर में सर्वाधिक कम हुआ हैं और ना ही परम्परा स्वरूप में अभिव्यक्त होती हैं, परिस्थिति अनुसार कुछ विशेष परिवारों में इसका प्रयोग होता हैं। नगरीकरण, औद्योगिकरण, महिलाओं की स्थिति, आर्थिक संपन्नता आदि के फलस्वरूप गुदना के प्रचलन में नकारात्मक प्रभाव पड़ा हैं लेकिन हम पश्चिमीकरण की बात करे तो गुदना अब 'टेटू' के रूप में उभर कर प्रचलन में आया हैं एवं समाज के युवा वर्ग इसे बड़े चाव से फैशन के तौर पर अपना रहे हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. मुकर्जी, रविन्द्रनाथ – भारतीय समाज और संस्कृति, विवेक प्रकाशन जोधपुर–1964
2. शांति मुड्डा – गुदना औंर मान्यतायें, चौमासा भोपाल आदिवासी लोककला परिषद–1977
3. तिवारी, शिवकुमार एवं कमल शर्मा – म.प्र. के जनजातियां भोपाल हिन्दी ग्रंथ अकादमी–1994

****

जनजाति में विवाह संस्कार (उत्तर बस्तर कांकेर हल्बा जनजाति के विशेष संदर्भ में)

डॉ. बसंत नाग *

प्रस्तावना – विवाह एक समाजिक संस्था है, जिसका अस्तित्व विश्व के सभी समाजों में किसी न किसी रूप में विद्यमान है। विवाह नर-नारी के संबंधों का ही प्रतीक नहीं बल्कि सृष्टि के भावी विकास की आधार भूमि है। इसलिए विवाह संसार के किसी भी समाज की समाजिक व्यवस्था, समृद्धि तथा विकास की आधारभूत आवश्यकता है। किसी न किसी रूप में मानव जाति वैवाहिक सूत्रों को सामाजिक आधारशिला के रूप में विवाह को विशुद्ध सामाजिक समझौते के रूप में स्वीकारा जाता है। तो किसी समाज में विवाह को पवित्र एवं अध्यात्मिक बंधन के रूप में स्वीकृति प्राप्त है। भारतीय समाज सदियों से पवित्र संस्कार, अध्यात्मिक बंधन मानता है। जो लौकिक और पर लौकिक गति का प्रतीक है। प्रसिद्ध परिवार शास्त्री वेस्टर मार्क के अनुसार- विवाह एक या अधिक पुरूषों का एक या अधिक स्त्रियों के साथ होने वाला वह संबंध है। जिसे प्रथा या कानून स्वीकार करता है और जिसमें विवाह करने वाले व्यक्तियों के और उसमें पैदा हुए संभवित बच्चों के एक दूसरे के प्रति होने वाले अधिकारों एवं कर्तव्यों का समावेश होता है।

(Marrige is a relation of one or more men and women which is recogrized by custom or law involives certain right and duties both in the case of the parties entering in union and in the case of children born of it")

उक्त विचार से स्पष्ट है कि विवाह स्त्री और पुरूष का स्थायी यौन संबंध है। जिसे समाज के द्वारा मान्यता दिया जाता है और इनका मुख्य दायित्व गृहस्थ के कर्तव्यों का पालन करना है। विवाह मानव जाति का एक ऐसा संस्कार है, जो एक ओर भावी संतति को जन्म देता है। सृष्टि के विकास का मार्ग प्रशस्त करता है, तो दूसरी ओर नर-नारी के परस्पर संबंध को निश्चित कर मानव सभ्यता और संस्कृति को प्रतिस्थापित करता है।

अध्ययन क्षेत्र का परिचय – बस्तर का जनजीवन और उनका परम्परावादी प्रवाह अपनी सांस्कृतिक जीवन की अविरलता को आज भी अक्षुण्ण बनाए है। बस्तर लोक संस्कृति का संवाहक क्षेत्र जहाँ आज भी पुरातन संस्कृतियां विद्यमान है। बस्तर में गोंड, हल्बा, भतरा, मुरिया, माड़िया, दोरला, वरजा आदि जलजातियाँ पाएजाते है। छ.ग. राज्य का सबसे लंबा राष्ट्रीय राजमार्ग क्र. 30 बस्तर संभाग के चार जिलों कांकेर, कोण्डागांव, जगदलपुर, एवं सुकमा से होते हुए विशाखापट्टनम तक जाता है।

अध्ययन क्षेत्र उत्तर बस्तर कांकेर जनजाति बाहुल्य क्षेत्र है। उत्तर बस्तर कांकेर का गठन 25 मई 1998 को हुआ था। यहाँ जिला मुख्यालय राजस्व, पुलिस एवं जिला पंचायत है। कांकेर की कुल जनसंख्या 748941 है, जिनमें नगरीय जनसंख्या 76759 तथा ग्रामीण जनसंख्या 671834 है। जनघनत्व 105 व्यक्ति प्रति वर्ग कि.मी.। साक्षरता 70.3 प्रतिशत। पुरूष साक्षरता दर 80 प्रतिशत तथा महिला साक्षरता दर 60.6 प्रतिशत है। इस क्षेत्रे में हल्बा और गोंड जनजाति पाये जाते है।

अध्ययन का उद्देश्य –

1. विवाह के स्वरूप का अध्ययन करना।
2. विवाह में होने वाले परिवर्तन का अध्ययन करना
3. वैवाहिक रस्मों का अध्ययन करना।
4. आधुनिकीकरण के प्रभावों का अध्ययन करना।
5. विवाह के वर्तमान स्वरूप का अध्ययन करना।

शोध प्रविधि – साक्षात्कार निर्देशिका द्वारा तथ्यों का संग्रह किया गया है। यहाँ ग्रामीण और नगरीय क्षेत्र के हल्बा जनजातियों को उत्तरदाता के रूप में चयन किया गया है। उत्तरदाताओं का चयन उद्देश्यपूर्ण निर्देशन द्वारा की गयी है। 100 उत्तरदाताओं में 50 पुरूषों और 50 महिला सम्मिलित है।

उत्तर बस्तर कांकेर के जनजातियों में विवाह संस्कार अन्य समाजों के तरह होते हुए भी उनसे अलग दिखाई देता है, यहां पर युवक और युवतियों को जीवन साथी चुनने की स्वतंत्रता है क्यों कि विवाह के पूर्व दोनों की राय ली जाती है,जब दोनों सहमत होते है, तब विवाह की रस्म अदा की जाती है। जनजातियों में कुल वधु की तलाश की जाती है। शुभ मुहुर्त देखकर बात-चीत करने लड़के के घर जाते है, कन्या के पिता जब आने का कारण पूछते है, तो कहा जाता है कि आपके घर फूल है, यदि कन्या के माता-पिता को रिश्ता स्वीकार करना होता है मद्य की कुछ बुंदे अर्पित की जाती है,अगर रिश्ता तय करना नहीं होता है, तो कह दिया जाता है। कि अभी फूल तोड़ने लायक नही है इस तरह प्रारंभिक रस्म फलदान जिन्हें मंद तरपनी या महला कहा जाता है। सगाई की रस्म इसके पश्चात की जाती है दिन निश्चित कर बारात वधु के घर जाती है। जिसे सगाई बारात कहते है। वर पक्ष के लोग कन्या पक्ष के यहां चाँवल, दाल, गुड़, नमक, मिर्च, तेल, साड़ी, माता के लिये साड़ी लेकर दस बीस लोग बाजा-गाजा के साथ जाते है।

सगाई के पश्चात् विवाह की तिथि तय की जाती है, फिर लगन की तिथि तय की जाती है। लगन व (विवाह) कार्य को संपादित कराने के लिए प्रमुख व्यक्तियों का चयन किया जाता है। गोड़ जनजाति में खरी डालना कहते है। इस दिन ढेड़हा एवं दोषी (पुरोहित) के नाम निश्चित की जाती है। खरी डालने की विधि इस प्रकार है-ग्राम के बुजुर्ग एवं बैगा बटी (एक कांसे का पात्र) में पानी लेकर बैठ जाते है, उसके पास चाँवल के साबूत दाने और उड़द के दाने रखे होते है।

बैगा मंत्र पढ़कर, छीर घांस की डंठल से बटकी के पानी को हिलाता है, तत्पश्चात पास रखे उड़द और चाँवल के दाने को पानी में गिरा दिया जाता है। यदि दोनों दाने बटकी के तल पर जाकर मिले जाते है, तो विश्वास किया

* सहायक प्रध्यापक (समाजशास्त्र) भानुप्रतापदेव शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कांकेर (छ.ग.) भारत

जाता है कि वर एवं वधु के संबंध अटल रहेंगे। इसी प्रकार विवाह कार्य में दायित्व निभाने वाले व्यक्तियों के लिए भी यह विधि अपनायी जाती है। जिनके नाम में डाले गएदाने मिल जाते है उन्हें यह कार्य सौंपा जाता है। दिन निर्धारण के लिए भी दिन का नाम लेकर दाने छोड़े जाते है। जिस दिन अथवा वार के नाम पर दाने मिल जाते है। वह दिन का नाम लेकर दाने छोड़े जाते है जिस दिन अथवा वार के नाम पर दाने मिल जाते है। वह दिन लगन के लिए के लिए निश्चित कर दी जाती है। तिथि तय होने के बाद सगे संबंधियों को निमंत्रण दे दिए जाते है। अध्ययन क्षेत्र उत्तर बस्तर कांकेर के हल्बा एवं गोंड़ जनजाति में विवाह संस्कार से संबंधित रस्मों का विवरण अधोलिखित है –

हल्बा जनजाति में प्रचलित विवाह संस्कार – हल्बा जनजाति के विवाह संस्कार हिन्दुओं के विवाह संस्कारों की तरह ही है। लड़के लड़कियों में कोई भेद नहीं किया जाता। सबसे पहले विवाह के लिए लड़की का हाथ लड़के वाले मांगते है। वर पक्ष के लोग इनके लिए वधूमूल्य भी देते है। हल्बा समाज में दो प्रकार के विवाह होता है –

1. **बड़ा विवाह** 2. **छोटा विवाह**

बस्तर अंचल में माहला की रस्म से वैवाहिक कार्यक्रम प्रारंभ होता है। अन्य समाजों में अंगूठी पहनाकर सगाई की रस्म अदा किया जाता है, उसी प्रकार की यह रस्म है। विवाह योग्य पुत्र होने पर और वधु का चयन होने के पश्चात माहला जाने का कार्यक्रम संपादित किया जाता है। निश्चित तिथि को वर के पिता अपने संबंधियों के साथ कन्या के घर चाँवल, दाल, कपड़ा व मूर्गा लेकर जाते है, वर पक्ष की आर्थिक स्थिति का मूल्यांकन सामाग्री से होता है। कन्या पक्ष के घर माहला आने वालों के सम्मान में भोज का आयोजन होता है। माहला व खर्चा निर्धारण के पश्चात् मुहूर्त निकालने का समय आता है। मुहूर्त निकालने का कार्य ब्राम्हण के द्वारा नहीं किया जाता बल्कि हल्बा समाज के लोग मुहूर्त निकालते है, जो पीढ़ी दर पीढ़ी इस कार्य को करते आ रहे होते है, जिसे पंजियार (दोषी) कहा जाता है। पंजियार अर्थात पंजी देखने वाला शुभ लग्न के साथ–साथ शुभ स्थान का भी निर्धारण करता है। विवाह के समय वर–वधु कहां पर और किस दिशा की ओर मुंह करके खड़े होंगे यह पंजियार ही निर्धारित करता है। पूर्व निर्धारित स्थान पर ही वर वधू को खड़ा किया जाता है, पंजियार हल्बा समाज का एक महत्वपूर्ण व्यक्ति होता है। पंजियार विवाह स्थल पर उपस्थित नहीं रहता क्योंकि उनका उपस्थित रहना प्रतिबंधित है। हिन्दुओं के प्रभाव में आकर वर पक्ष वधु के यहाँ बारात लेकर जाते है, अन्य जनजातियों में वधु पक्ष के लोग वधु के साथ वर के घर जाते है। छोटे विवाह में कन्या को वर के घर लाया जाता है और महुआ के मंडप में विवाह की रस्म होता है। पंजियार द्वारा पूर्व निर्धारित स्थान पर वर और वधु को खड़ा किया जाता है। दोनों के मध्य चादर डालकर परदा बनाया जाता है। जिस प्रकार हिन्दु विवाह पद्धति में दमाद की भूमिका महत्वपूर्ण होती है, उसी प्रकार हल्बा जनजाति भी दमाद को महत्व दिया जाता है। वर का जीजा वर को निर्देश देता है और वह उन्हीं के निर्देशों के अनुसार कार्य करता है। विवाह स्थल पर दो दीपक जलाए जाते है उनकी लौ को एकाकर किया जाता है। दो दिल मिल रहे है, इस भाव का प्रदर्शन होता है। निश्चित समय पर (पंजियार दोषी) द्वारा निर्धारित वर वधु के बीच का परदा हटाया जाता है। परदा हटने पर वर और वधु अपने अपने हाथ से चाँवल एक दूसरे पर फेंकते हैं। जिस लग्न मारना कहा जाता है। तत्पश्चात वस्त्रों पर गांठ लगाया जाता है। वर की धोती का एक सिरा वधु की साड़ी के छोर (आंचल) से बांधा जाता है, जो वर वधु को अटूट बंधन में जोड़ देता है। जीवन के सुख–दु:ख में साथ–साथ चलने के भाव सन्निहित रहता है। इसके पश्चात् फेरे लिए जाते है। सात फेरे के पश्चात् विवाह संस्कार संपन्न होता है।

धरमटीका – माता–पिता, मामा–मामी, चाचा–चाची आदि वर वधु के चरणों को पवित्र जल से धोकर चरणामृत ग्रहण करते है और सामर्थनुसार बेटी को भेंट देते है। पीला चाँवल टीककर वर वधु को शुभ आर्शीवाद देते है। विवाह की रस्म देश, काल एवं आर्थिक आधार पर निर्भर करती है। जनजाति समाज में भी विवाह एक विशिष्ट पद्धति के द्वारा सम्पन्न होता है। विवाह के पूर्व लड़के, लड़कियों का सहमति होना आवश्यक है। इनमें अत: विवाह को मान्यता दिया जाता है। जन–जातियों के वैवाहिक रस्मों में भिन्नता दिखाई पड़ता है, क्योंकि जिन गोड़ों की आर्थिक स्थिति उच्च है, जो राजगोड़, राजसत्ता में रहे लोग है या जिनका संपर्क हिन्दु समाज से हुआ है और आचार व्यवहार में हिन्दु समाज के सनिकट आ गये है, उनके यहाँ वैवाहिक संस्कारों को ब्राम्हण या पुरोहित के द्वारा संपादित किया जाता है। जबकि सामान्यत: जनजातियों में विवाह के रस्म, रीति, विधि परम्परागत ढंग से संपन्न किया जाता है। विवाह संपन्न कराने में पंडित की आवश्यकता नहीं पड़ती। ग्रामीण लोग वर वधु के फूफा–फूफी, बहन बहनोई एवं युवा युवतियों का वैवाहिक रस्मों में विशेष स्थान होता है।

निष्कर्ष – उत्तर बस्तर कांकेर के जनजातियों के विवाह के मूलस्वरूप में 58 प्रतिशत परिवर्तन आ गया है। इनके विवाह के रीति रिवाज में हिन्दु धर्म के रीति रिवाजों का समावेश हो गया है। 43 प्रतिशत हल्बा जनजाति ब्राम्हणों द्वारा विवाह के रस्मों को पूरा कराते है। प्राचीन परम्परागत लोकगीतों की जगह आधुनिक लोकगीतों का समावेश हो गया है। 69 प्रतिशत हल्बा विवाद फिल्मी गीतों पर अपने वैवाहिक रस्मों का संपादन करते है। आधुनिकीकरण का प्रभाव नगरीय क्षेत्रों में 86 प्रतिशत है। ग्रामीण क्षेत्रों में 78 प्रतिशत है। अत: स्पष्ट है। कि शिक्षा एवं आधुनिकीकारण की प्रक्रिया ने विवाह के मूल स्वरूप को परिवर्तित कर विवाह के नये स्वरूप को प्रतिस्थापित कर दिया है। लेकिन प्राचीन मान्यतायें आज भी 13 प्रतिशत बदले हुए स्वरूप में विद्यमान है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. ठाकुर पं. केदारनाथ – बस्तर भूषण।
2. जगदलपुरी लाला – बस्तर इतिहास एवं संस्कृति।
3. तिवारी व्ही.के. – भारत की जनजातियां हिमालया पब्लिशिंग हाऊस मुम्बई।
4. सोढ़ी मानकूराम – बस्तर का बदलता का स्वरूप।
5. बेहार रामकुमार – छत्तीसगढ़ी संस्कृति और विभूतियां छ.ग. शोध।

****

बेटा-बेटी में तुलना- समाज का अहम मुद्दा

डॉ. साधना व्यास *

प्रस्तावना – वर्तमान समय में बदलते समाज में बेटियाँ बेटों के समान हर क्षेत्र में अपनी भूमिका निभा रही है। भले ही वह चिकित्सा, इंजीनियरिंग, शिक्षा, न्याय, पुलिस, राजनीति आदि कोई भी क्यों न हो बेटियों ने हर स्थान पर अपनी महत्वपूर्ण भागीदारी की है, किन्तु यदि समाज की सच्चाई को ईमानदारी से स्वीकार किया जाए तो स्पष्टत: बेटा-बेटी में तुलना आज भी बरकरार है। आज के तकनीकी युग में जहाँ आधुनिकता एवं साक्षरता के आधार पर बेटा-बेटी के समान होने की दलीले दी जाती है, वहीं बेटी के प्रति ऐसा व्यवहार प्रदर्शित किया जाता है, जो उन्हें बेटों की तुलना में निम्न स्थान दिलवाता है। आज भी बेटा न होने पर अफसोस प्रदर्शित किया जाता है एवं कितने ही उच्च शिक्षित परिवारों में 40-45 की उम्र के पश्चात् भी बेटों के जन्म को लेकर माँ की कोख में ही बेटियों की हत्या कर दी जाती है। सन् 2011 की जनगणना के अनुसार 1000 पुरूषों पर 918 स्त्रियों का अनुपात है जो काफी कम है। इसी समस्या को दृष्टिगत रखते हुए प्रस्तुत शोध आलेख की रचना की गई है।

भारतीय संस्कृति में पितृसत्तात्मक परंपरा प्रारम्भ से ही सर्वोचित मानी गई है। लड़कियों के साथ भेदभाव करना हमारी सोच में आदतन समाया है जो दैनिक जीवन में हर क्षेत्र जैसे शिक्षा, स्वास्थ्य, पौष्टिक आहार, शारीरिक गतिविधि जैसी अनिवार्य जरूरतों में देखा जा सकता है।

बेटा एवं बेटी में भेदभाव तथा बेटी के जन्म को रोकने के लिए भारतीय समाज में कुछ कारण उत्तरदायी हैं, जो अधिकांश लोगों के दिलों में घर कर चुके हैं। यदि उन पर गहराई से चिंतन किया जाए तो शायद इस समस्या का कोई हल निकाला जा सकता है एवं उसके पैदा होने की खुशी को महसूस किया जा सकता है –

- प्राचीन मान्यताओं एवं रूढ़ियों पर अंधभक्ति होने से समाज के अधिकांश लोगों की यह सोच वंश को आगे ले जाएगा एवं इसीलिए बेटी को इस संसार में आने से रोक दिया जाता है, स्वयं स्त्री भी बेटी को जन्म देना नहीं चाहती एवं उसका झुकाव बेटे की ओर ही होता है। अत: सबसे पहली आवश्यकता लोगों की सोच में बदलाव लाने की है। यदि बेटी को भी वारिस बनने का मौका दिया जाए एवं उत्तराधिकार के सारे अधिकार मिले तो यह समस्या कम की जा सकती है, बेटी की माता-पिता के प्रति संवेदनाएँ उनके वंश के नाम को तुलनात्मक रूप से ज्याद अच्छे से आगे बढ़ा सकती है।
- दूसरा एक कारण है कि बेटी की परवरिश में सुरक्षा का भी ज्यादा ध्यान रखना पड़ता है, वर्तमान समय में जो उनके प्रति बर्बरता बढ़ने लगी है एवं वे समाज के ही एक ऐसे हिस्से की हवस का शिकार होने लगी है, जिनमें मानवीयता एवं संवेदनाएँ नाममात्र की भी नहीं रही है। समाचार पत्र एवं मीडिया के अन्य साधनों के माध्यम से नित्य इस तरह की खबरें अचंभित तो करती ही है, साथ ही अंदर तक झकझोर देती हैं। यदि यह बर्बरता नहीं रूकी एवं इसके विरूद्ध सख्त कार्यवाही के कदम शासन एवं अन्य संरक्षणकारी संस्थाओं के यदि नहीं उठे तो बेटी के जन्म लेने में निरंतर कमी आएगी। इसे रोकने के लिए शासन को कठोर नियम अपनाने पडेगें। साथ ही स्वयं पुरूष वर्ग को स्त्री के प्रति सम्मान की भावना भी पैदा करना आवश्यक होगा। जिससे वे उसे महज उपभोग की वस्तु न समझें।

इन सबसे भी अधिक लड़कियों को स्वयं अपनी रक्षा करना आवश्यक है। इसके लिए उन्हें आत्मरक्षा जैसे प्रशिक्षण प्राप्त करना जरूरी है एवं पुलिस विभाग के नियमों की जानकारी भी होना आवश्यक है, साथ ही संबंधित टेलीफोन नम्बरों की जानकारी होना भी बेहद जरूरी है। जिससे उनके साथ गलत हरकत यदि हो तो त्वरित कार्यवाही की जा सके। इसमें उनके अभिभावकों का समुचित सहयोग होना आवश्यक है, तभी बेटियाँ निर्भीक होकर जी सकती है।

- एक महत्वपूर्ण कारण बेटी का विवाह भी है, जिसमें दहेज के रूप में किये जाने वाले खर्च में माता-पिता की सोच है कि उन्हें अपना संचित धन एवं बचत सब कुछ लुटा देना पड़ेगा। यह समस्या भी बेटी के जन्म होने पर मिलने वाली खुशियों को कम कर देती है।

दहेज प्रथा का विरोध करके एवं आपसी सूझ-बूझ से इस समस्या को हल किया जा सकता है। समाज में ऐसी सोच को विकसित करना जरूरी है जिसमें बेटी को उसकी योग्यता के आधार पर ही अपनी बहू बनना स्वीकार्य हो।

बेटे एवं बेटी में भेद का एक बड़ा कारण यह भी है कि बेटा ही माता-पिता की मृत्यु के समय चिता को अग्नि देकर एवं अन्य क्रिया कर्म सम्पन्न करके उन्हें मोक्ष दिलवा सकता है एवं इसीलिए बेटे की चाह की जाती है किन्तु यह केवल एक कल्पना मात्र ही है। वर्तमान शिक्षित एवं संभ्रांत समाज में इस सोच को बदलना भी आवश्यक है, वैसे पिछले कुछ वर्षों में इस सोच में परिवर्तन भी आया है एवं बेटियाँ भी इसमें बराबर की भागीदार बनी है लेकिन फिर इसे और ज्यादा विस्तार देना आवश्यक है।

- बेटा-बेटी में समान व्यवहार न होने का कारण यह भी माना जाता है कि बेटे ही माता-पिता को वृद्धावस्था में सुरक्षा दे सकते है एवं वे उसके पास ही रह सकते है लेकिन यह सोच भी निरर्थक है। वर्तमान में बेटे के स्थान पर बेटी ही माता पिता से भावनात्मक रूप से ज्यादा जुड़ी हैं एवं उनकी देखभाल भी तुलनात्मक रूप से अधिक अच्छे से करती पाई जाती हैं। अत: इस धारणा को भी समाज में परिवर्तित करना आवश्यक है, तभी बेटी का अस्तित्व बना रहेगा।

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) बी.एल.पी. शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महू (म.प्र.) भारत

उपरोक्त सभी कारणों पर यदि विचार किया जाए तो इस बात की आवश्यकता महसूस होती है कि हमें समाज की खोखली विचारधाराओं, मान्यताओं एवं परम्पराओं को परिवर्तित करना होगा एवं इसके लिए हर स्तर पर सार्थक प्रयास जरूरी है। बेटी की भावनाओं को ठेस न पहुंचाते हुए सम्मान देना होगा। तभी उसका अस्तित्व बना रहेगा एवं वह स्वयं को 'बेटा' कहे जाने वाले संम्बोधन स्वीकार कर अपनी पहचान बना सकेगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. समाजिक संस्थाएँ - राम आहुजा।
2. समाज कल्याण पत्रिका।
3. समाजवादी दृष्टि - साप्ताहिक समाचार पत्र।

****

Cropping Pattern In Bilaspur District

Dr. Kajal Moitra * Dr. Bimala Nonda Mondal ** Sanjit Kisku ***

Abstract - Cropping pattern means the proportation of area various crops at a point of time. The crop statistics published by the governments are used to denote the cropping patterns.

Cropping pattern in India has undergone an evolutionary process. In subsistence farming when there was no commercialization there was hardly any surplus for sale, as the production was mainly used for household consumption. Most small farms belonged to this category.

In simple word cropping pattern means the production of area under various crops at a point of time. It is dynamic concept because no cropping pattern can be said to be ideal for all times to a particular region. It changes in space and time with a view to meet requirements and is governed largely by the physical as well as cultural and technological factors.

Key words – Cropping pattern, Dynamic concept, requirements, technological factors.

Introduction - Agriculture is counted as the chief economic occupation of the state. According to a government estimate, net sown area of the state. According to a government estimate, net sown area of the state is 4.828 million hectares and the gross sown area is 5.788 million hectares. About 80 % of the population of the state is rural and the main livelihood of the villagers is agriculture and agriculture-based small industry.

Bilaspur district has 453562 hectares cultivable land, out of which, 373426 hectares are being used for agriculture. District is rich in irrigation facilities. Single crop land in the district is 363101 hectares whereas double crop land 129400 hectares. At present, 330748 families are engaged in farming and allied activity. Average total sown in kharif is 338526 hecteres and Rabi 183583 hectares.

Object of the Study- The main objectives of the present study is analyzed the cropping pattern of the study area and identify problems and prospects of land use and agricultural pattern of the study area.

Data Collection & Methodology - The analytical method have been used in study. The secondary data have been used in this study, which have been taken from District census hand book, 2011, tehsil office of Bilaspur district. Statistical office Bilaspur and Agriculture department, Bilspur. And other government offices.

Study Area - Bilaspur district is located in Eastern part of Chhattisgarh and fall within, latitude 21'47" to 23'8" and longitude 81'14" to 83'15". Bilaspur district is surrounded by Koriya district in north, Shahdol District of Madhya Pradesh in South[Raipur district in East and Korba, Janjgir-Champa district in west. The total area of bilaspur is approximately 6.377 Sq. km. after the bifurcation of old Bilaspur district in their districts (New Bilaspur, Korba and Janjgir-Champa District).

The New Bilaspur district is hilly towards North and place in south Secondly, the northern part of Bilaspur is quite cold and hot as we move towards southern part. The maximum temperature of Bilaspur district is 45^0. Cen. And average rain fall is 1220 mm. approximately major rivers which surrounds Bilaspur district are agear, Mani year and Arpa.

In 2011, Bilaspur had population of 2,663,629 of which male and female are 1,351,574 and 1,312,055 respectively. Population density is 322 people per sq. km. Average literacy date is Bilaspur in 2011 use 70.78% compared to 63.51 to 2001.

Analysis -

Major Crops -The distribution of crops and farm activities is everywhere influenced by environmental controls. In some environments farming is favored by climate, soil, relief so that very little effort is needed to raise the crops. In the Bilaspur district mostly all crops production depends on the monsoon rain fall as the irrigation facility is almost restricted in few pockets only. Hence only 49.40% of the total geographical area is used for net sown. Areas under various crops are presented in the following section (Table No.) :

Food grains -

Paddy - In the study area rice probably feeds more people

* Associate Proffesor (Geography) Dr. C.V.Raman University, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA
** M.Phil (Geography) Dr. C.V.Raman University, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA
*** Research Scholar (Geography) Dr. C.V.Raman University, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA

than any other cereals. It cultivation is done both on heavy clay or clay loams. It is also grown on alluvial red and laterite soils. Area under paddy cover is seen high in Bilha, Masturi, Kota and Bilaspur development tehsils, where paddy grown about above 75% of gross cropped area of the development tehsils. Masturi, Bilaspur and Bilha tehsils situated in plain and fertile area so the cultivation of paddy found high but Kota development tehsil falls under high annual rainfall area so here also paddy grown in abundance.

Wheat - In the Bilaspur district wheat production and cultivation is not very much important. High area under wheat found in Bilha and Gourela and Pendra tehsils. In these tehsils area under wheat cultivation is found above 4.0%. In rest of the tehsils low percentage of area is engaged in wheat cultivation due to less irrigation facilities.

Table (See in the last page)

BILASPUR DISTRICT : MAJOR CROP AREA (Graph See in the last page)

Diagram

X – axis = 1 block = 1000 Ha

Y – axis = 1 block = Crop

Source :- District Statistical Hand book 2011
Bilaspur District C.G.

Other cereals - Beside paddy and wheat few other cereals are also important in the cultivation scenario of the study area. Most important among them are:

Maize - In the Bilaspur district under the all cereals maize occupies the second place after paddy cultivation. It has more significance in the northern Bilaspur tribal area. High area under maize cultivation found in Marwahi, Gourela and Pendra tehsil respectively where above 3.0% area cover under maize cultivation.

Kodo – kutki - This crop is a type of millets. There are inferior food grains which serve as food stake for the poorer people. Kodo – Kutki is one of such food. Kodo – kutki is grown above 3.00% of gross cropped area in the Marwahi. Lowest area under Kodo – kutki is found towards the plain area.

Pulses - In the Bilaspur district all pulses are grown about 24.39% of gross cropped area. Main variety of pulses grown in district is tewra, chana, tuar, urad etc. Tewra is grown in the plain of Bilaspur district but it is very rare in northern area of the district. Tuar and chana is grown highest in the Gourela tehsil but it is very low in the Masturi and Pendra tehsils. Gram has found in the Kota and Goureal tehsils where it is grown above 4.00% of the gross cropped area.

Tewra - Tewra is the most important among all the pulses in the district. This crop production is varies significantly from place to place. Total area under this crop is 28565 hectare which is about 10.1% of the gross cropped area. High cultivation of tewra is found in the tehsils Masturi, Takhatpur and Kota where tewra grown above 8.0% of the gross cropped area.

Urad- In the Bilaspur district total area under sown urad crop is 1733 hectares which is about 0.61% of gross cropped area. High area under Urad cropped found in the Gourela, Pendra and Marwahi tehsils.

Oilseeds - It is used for extracting oil for edible purpose. It contains about 30-40% oil, which is stored in the seeds. Oilseeds are grown in 7866 hectare land of Bilaspur district. High area under oilseeds found in the Marwahi, Gourela and Pendra development tehsils where it is grown above 5.0% of gross cropped area.

Vegetables - Vegetables are very much essential for human body as they are full of vitamins and minerals. In the Bilaspur district total area under vegetables is found 6176 hectares which is about 2.17 % of gross cropped area of the district. High area under vegetable cultivation is found in the Bilha development tehsil due to presence of big market.

Fruits and Fibre - In the Bilaspur district total area under fruits and fibres is found 982 hectares which is about 0.34% of the gross cropped area. Mango, Guava, Banana etc are main fruits. These fruits are grown mostly in the plains of Bilaspur.

Shows the per hectare yield of major crops of Bilaspur District. Percent of Rice area is very high. Highest Rice area is seen in Masturi Tehsil of Bilaspur District. Lowest production of Rice, Gourela Tehsil.

Conclusion - Chhattisgarh is said bowl of rice from Agriculture point of view, means rice production in the state is to the amount that express amount is exported. But it we think of Punjab. It also has excess production, but only that of rice. There wheat and Potatoes are also produced in excess.

A small state like Punjab and such a wonderful advancement in Agriculture.

Twentieth century is the country of scientific advancements which is hearing to its end. The development in sciences day by day is almost parallel to advancements in Agriculture sciences. But Chhattisgarh is as it was.

Use of land in general and agricultural land in particular depends on the physical, socio economic status as well as characteristics of farmers. Adoption of modern methods, techniques and input varies not only spatially and temporally but it also varies from community and from person to person. Social structure is third dimension of the reality.

Conventionally the study area has an association of intensive subsistence cropping system with predominance of paddy. Very recently few modification as well as up gradation takes place in the following aspects:

Farm Mechanization (Fm) - It means utilization of machinery to perform the farm activity. In the context of labor crisis such mechanization evolves as good alternatives as they save both time and labor force. In the table fact has been provided in this regards.

Utilization of high yielding seed (HYs) - It is the impact of so called green revolution that Indian farmer are interested to farm with high yielding variety. Like any other region of India, at present the farmers of the study area also use a high amount of high yielding seed. Following table proves this fact very well.

Use of chemical fertilizer (Fc) - It is thought that the use

of chemical fertilizer has a direct influence on production of crops. Various synthetic fertilizers provides ample nutrient to the cropping field as well as helps in multi cropping. With the help of following table status of chemical fertilizer utilization is explored.

Expansion of irrigation facility (Ir)

Several integrated project have been taken in the study area to bring more amount of land under the irrigation facility. Construction of new well also improves the scenario little bit extra. These are well explained by the respective table.

Infrastructural input (See)

References :-

1. Sandarbh Chhattisgarh (2001) : Deshbandhu Newspaper, Raipur
2. Dr. Kamlesh S. R. : Chhattisgarh : Ek Bhogolic Adhyayan,Vasundhara Publication, Gorakhpur
3. Dr. Tiwari, V.K. (2001) : Chhattisgarh : Ek Bhogolic Adhyayan, Himalaya Pub. Mumbai
4. Dr. Tripathi and Dr. Chandrakar : Chhattisgarh Atlas 2003 Sharda Pub. Bilaspur.
5. Husain Majid (2010) : "Agricultural Geography." Rawat Publication. PP-188-190
6. Santra,S.C. (2001) : "Environmental Science" New central Book agency (P)Ltd., Calcultta, P.P. 944-955
7. Sharma, D.D.& Ram : "Environmental implication of lansuse/ N. (2009) landcover changes in solan district, Himanchal Pradesh, Geograpical Review of India, vol. 71,,no.-3 PP 287-296
8. Das. P. (1985) : "Agricultural science" Oriental book Company Pvt. Ltd. Kolkatta.
9. Gole,U. (1980) : "Agricultural Intensity and "Agricultural Efficiency, a Geographical analysis in Raipur Disttrict" Vol. 2006, P1,9-16
10. Mandal R.b. (1985) : "Land utilization: Thesis and Practical concept publishing company, preface, Delhi
11. Mohammad N (1992) :"Socio-economic Dimensions of Agriculture," Concept Publishing Company, New Delhi, Vol- 3
12. Mohammad N (1992): "Land use and Agricultural planning, concept Publishing Company, New Delhi, Vol 4
13. Mukharjee S.N. (1967) : "Agricultural land use Planning in Howrah" Geographical review of India,Vol-xxxix P.P.1

Table

Bilaspur District : Major Crop Area (in hec.)

Tehsils	Rice	Wheat	Other	Other	Chana Tur Urad	Tewra & Other	Fruit Vegetable	Total
Masturi	44582	775	127	127	323	6969	1041	54163
Bilha	22562	825	115	115	474	4735	767	29723
Takhatpur	35391	8248	775	775	3392	9351	2008	59779
Kota	29688	765	1149	1149	816	3645	708	38018
Pendra	12641	709	936	936	756	353	267	16670
Gourela	16146	920	1529	1529	1099	526	413	22270
Marwahi	18663	280	3936	3936	1094	382	425	27256
Bilaspur	2503	1117	70	70	273	4977	1519	33952
Dist total	205376	13639	8637	8637	8227	30938	7148	281831

Source - District Statistical Hand book 2011, Bilaspur District C.G.

Infrastructural input

Fm	HYs	Fc	Ir
No. of tractors -2462 No. of pumps –6946	Area under HYs in hectare - 503661	Nitrogen consumption – 31759 m ton	Area under irrigation – 35%No. of well and tube well - 11155

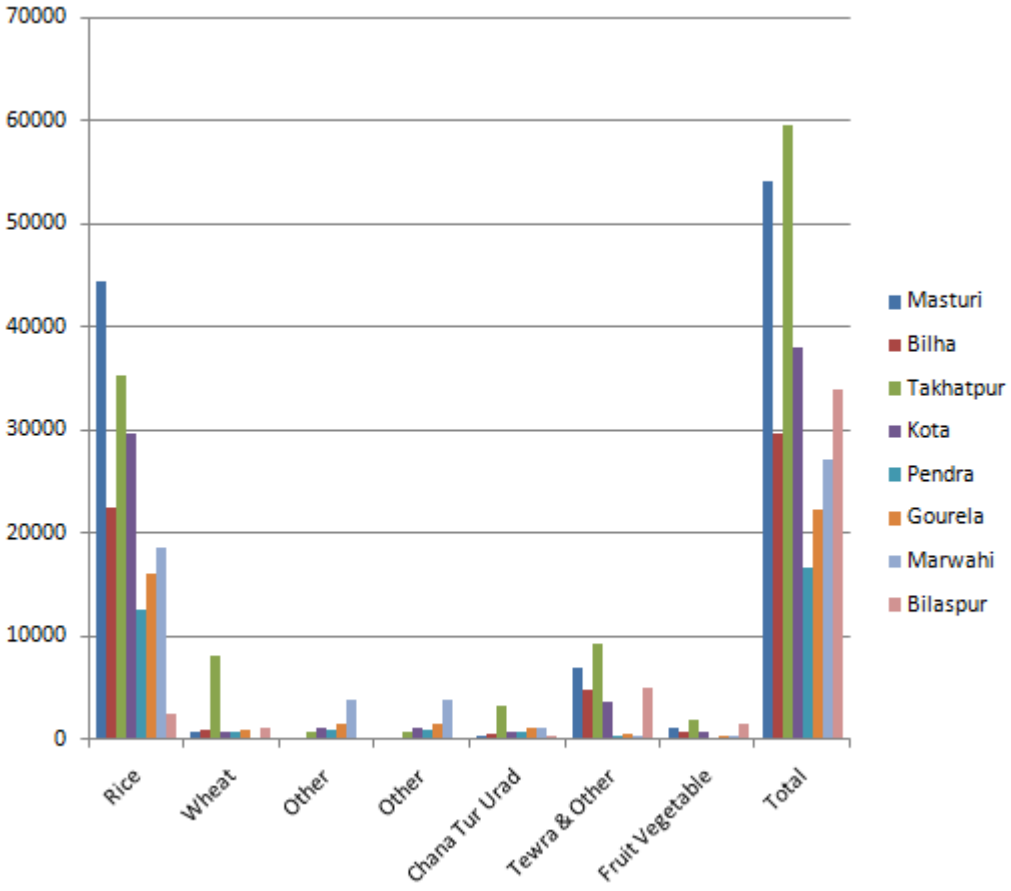
70000
60000
50000
40000
30000
20000
10000
0
Rice
Wheat
Other
Other
Chana Tur Urad
Tewra & Other
Fruit Vegetable
Total
Masturi
Bilha
Takhatpur
Kota
Pendra
Gourela
Marwahi
Bilaspur

****

Landuse And Agricultural Pattern Of Bilaspur District

Dr. Kajal Moitra * Mahtab Alam ** Sanjit Kisku ***

Abstract - Land use is an important aspect of graphic studies particularly relevant to agricultural geography. The utilization of land for different purposes indicates an intimate relationship between prevailing ecological conditions and man. The efficient use of land depends on the capacity of man. The efficient use of land depends on the capacity of man to utilize the land and manage it in proper perspective.

Land is a natural and free gift of nature. Land use is the surface utilization of all developed and vacant land on a specific point at a given time and space. The basic resource of a nation is land. Productive land is the source of human substance and security. Development of any place or country in all respects depends upon the land.

Land use means the use of land. The term may defined as the putting of a pared land for any purpose. Land use is the use actually made of any pared of land.

Key Words – Land, agricultural geography, Nidicates.

Introduction - Land use involves the management and modification of natural environment or wilderness in to built environment such as settlement and semi- natural habitats such as arable fields, pastures and managed woods.

Land classification is the suitemates arrangement of land on the basis of certain similar mainly to identify and understand their fundamental utilities intelligently and effectively.

Land utilization pattern provide the area figures, showing distribution of the total geographical area of the country into its various uses. The detailed statistics of land utilization in India which mainly givesarea of land put to different uses in almost continuously available since 1884.

Land utilization means dividing the land into different categories according to a single factor or a set of factors.

The Utilization of land for different purposes indicates an intimate relationship between prevailing ecological conditions and man.The efficient use of land depends on the capacity of man to utilize the land manage it in proper perspective.

Study Area - Bilaspur district is located in Eastern part of Chhattisgarh and fall within, latitude 21'47" to 23'8" and longitude 81'14" to 83'15". Bilaspur district is surrounded by Koriya district in north,

Shahdol District of Madhya Pradesh in South[Raipur district in East and Korba, Janjgir-Champa district in west. The total area of bilaspur is approximately 6.377 Sq. km. after the bifurcation of old Bilaspur district in their districts (New Bilaspur, Korba and Janjgir-Champa District).

The New Bilaspur district is hilly towards North and place in south Secondly, the northern part of Bilaspur is quite cold and hot as we move towards southern part. The maximum temperature of Bilaspur district is 45^0. Cen. And average rain fall is 1220 mm. approximately major rivers which surrounds Bilaspur district are agear, Mani year and Arpa.

In 2011, Bilaspur had population of 2,663,629 of which male and female are 1,351,574 and 1,312,055 respectively. Population density is 322 people per sq. km. Average literacy date is Bilaspur in 2011 use 70.78% compared to 63.51 to 2001.

Objectives of the study - The main objectives of the present study is as To identify land use pattern of the study area.

Collection of data, and Research Methodology – The analytical method have been used in study. The secondary data have been used in this study, which have been taken from District census hand book, 2011, tehsil office of Bilaspur district. Statistical office Bilaspur and Agriculture department, Bilspur. And other government offices.

We used various type of statistical method for the calculation of Data. We used maps diagrams for the graphical presentation of data.

Analysis – The study area shows different categories of land use pattern as shows in Appendix. All the types are individually dealt with in following sections:

Forest area - The total area under forest is 1105.38 km^2 representing 23.29% out of total geographical area of the

***Associate Professor (Geography) Dr. C.V. Raman University, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA**
****M.Phil (Geography) Dr. C.V. Raman University, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA**
*****Research Scholar Dr. C.V. Raman University, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA**

district. In the district, distributions of forest are found uneven as stated below -

High distribution- In the Bilaspur district highest density of forest is found in Gourela (53.08%) and Pendra (40.77%) tehsils. In these tehsils maximum undulation and mountainous surface are found so the area under forest is highest.

Moderate distribution - This type is found in Marwahi (38.65%) and Kota (38.10%) tehsils. Here some area is under the coverage of forest. As the area has mixed relief ranging from hill to plain, so the forest coverage type is also moderate.

Low distribution - This category observed in Masturi, Bilha, Takhatpur and Bilaspur tehsils. All these tehsils situated mostly in plain and cultivated area, so the lowest area under forest is found here.

Land not available for cultivation - The are under land not available for cultivation signifies land included settlement, roads, railways or under water bodies. This land use type found uneven distribution as following:

High distribution - Highest area under the category, land not available for cultivation is seen in Bilaspur and Kota tehsils. In these tehsils, this type of land is found more than 10% of total geographical area.

Moderate distribution - Moderate area represents by Masturi, Bilha, Marwahi and tehsils. This type of land is found in 8% and 10% of total geographical area.

Low distribution - Lowest area under the type land not available for cultivation is found in the Takhatpur, Gourela and Pendra Tehsils. In these tehsils this type of land found less than 8% of total geographical area.

Other uncultivated excluding fallow - This type of land found in the district measuring 475.08 km^2, which is about 10.01% of total geographical area of the district. But this type of land unevenly distributed in the region. For the study it may be divided into following category:

High category - In this category Bilha and Takhatpur tehsils are included. Land found under this category above 15% of geographical area of the respective tehsils.

Moderate Category - This type of land is found in the Masturi and and Bilaspur tehsils. In these development tehsils this type of land is found between 10%-15% of geographical area of the tehsils.

Low Category - This category is found under Kota, Pendra, Gourela and Marwahi blocks. In these development tehsils this type of land is found below 10% of geographical area of the tehsils.

Cultivated waste land - Cultivated waste is that land which is available for cultivation but remains unused due to unknown reason. This type of land not being used at present due to such constraints as lack of water logging, salinity or alkalinity of soils, soil erosion or an unfavorable physiographic position, human negligence etc. Bilaspur district has 141.87 km of cultivation waste land which is 2.98% of the geographical area of the district. But this type of land distributed uneven as following categories:

High category - Masturi, Bilha and Takhatpur tehsils are included in this category. This type of land use pattern found above 3% of geographical area of the respective tehsil.

Moderate category - This type of land is found in the Kota, Pendra, Bilaspur and Marwahi tehsils. In these development tehsils such type of land found between 2%-3% of geographical area.

Low category - Gourela blocks fall in this category. In this tehsil cultivable waste land is found below 2% of geographical area of tehsils.

Fallow land - This type of land category includes all that land which was used for cultivation, but is temporarily out of cultivation. Fallow land divided into two categories. If any cultivated land is fallow for one year is called current fallow land, but when it is left uncultivated from one year to five years that is called old fallow land. In the Bilaspur district fallow land is found about 246.68 km^2, which is near about 5.19% of the total geographical area of the district. This types of land unevenly distributed in the whole district as shown below:

High Category -In this category included Bilha and Marwahi tehsils. This type of land is found above 8% of geographical area of the development tehsil.

Moderate category - This type of land found in Masturi, Pendra and Takhatpur tehsils. Here such land use category is exists between 5% - 8% of geographical area of the tehsils.

Low category - Gourela, Bilaspur and Kota blocks fall in this category. In this development tehsil type of land is found below 5% of geographical area of the tehsils

Net sown area -Net sown area is very important in agricultural production. Because all crops growing activity are largely depends upon this type of land. So there is an urgent need to increase the net sown area according to growth of population of any area. This type of land is actually stand for area under various crops. But there is little scope for increasing area under this category due to natural limitations such as topography, soils, climate etc. Bilaspur district have 2344.98 Km^2 land under this category which is about 49.40% of total geographical area of the district. In the district this type of land distribution is uneven. Such land use type may be divided in to following category:

High net sown area -This category included three development tehsils. Their names are Masturi, Bilha and Takhatpur. In these tehsils the net sown area found more than 60% of the total geographical area. All these tehsils are situated in the fertile plain land.

Moderate net sown area - In this category included the two development tehsils. Their names are Pendra and Bilaspur. Here share of net sown area is found between 40 to 60% of the total area of the tehsils.

Low net sown area - In this category three tehsils Kota, Gourela and Marwahi are found. All of them are having below 40% net sown area of the geographical area. These tehsils have minimum facility of the irrigation and highest area under forest, so the net sown area found lowest. Under

this category the northern hilly and very low fertile land are present.

Table 1.1
Land use Pattern of Bilaspur District 2011

Land use	Area	Percentage
Forest	1105.38	23.29
Land not for cultivation	431.06	9.03
Other excluding follow	475.08	10.010
Cultivable waste	141.87	2.98
Fallow	246.68	5.19
Net sown	2344.98	49.40

Source - Land Record Office 2011 Bilaspur Distt. C.G.

References :-

1. Husain Majid (2010) - "Agricultural Geography." Rawat Publication. PP-188-190
2. Santra,S.C. (2001) - "Environmental Science" New central Book agency (P)Ltd., Calcultta, P.P. 944-955
3. Sharma, D.D.& Ram -"Environmental implication of lansuse/ N. (2009) landcover changes in solan district, Himanchal Pradesh, Geograpical Review of India, vol. 71,,no.-3 PP 287-296
4. Das. P. (1985) - "Agricultural science" Oriental book Company Pvt.Ltd. Kolkatta.
5. Gole,U. (1980) - "Agricultural Intensity and "Agricultural Efficiency, a Geographical analysis in Raipur Disttrict" Vol. 2006, P1,9-16
6. Mandal R.b. (1985)- "Land utilization: Thesis and Practical concept publishing company, preface, Delhi
7. Mohammad N (1992) - 'Socio-economic Dimensions of Agriculture," Concept Publishing Company, New Delhi, Vol- 3
8. Mohammad N (1992) - "Land use and Agricultural planning, concept Publishing Company, New Delhi, Vol 4
9. Mukharjee S.N. - "Agricultural land use Planning in (1967) Howrah" Geographical review of India,Vol-xxxix P.P.-1
10. Usendi, N & Singh - "Chhattisgarh" Arihant publications Sweta (2009) - (India) Limited PP-140

****

अपोह के विकास में बौद्ध दार्शनिकों का योगदान

डॉ. अर्चना कुमारी *

प्रस्तावना – बौद्धदर्शन के मौलिक सिद्धान्तों में अपोहवाद एक प्रमुख सिद्धान्त हैं। अपोहवाद बौद्धदर्शन के सिद्धान्तों का एक अंग है, तो यह कहना उचित होगा। इस प्रकार बौद्धदर्शन के सम्पूण दर्शन को एक सूत्र में कहना चाहे तो कह सकते हैं कि बौद्धदर्शन अनित्य दु:ख तथा अनात्म में समाहित है। बुद्ध ने क्षणिकवाद तथा प्रतीत्यसमुत्पाद (कार्य–कारण सिद्धान्त) है। इसी प्रतीत्यसमुत्पाद लेकर ही नागार्जुन ने शून्यवाद को विकसित किया। नागार्जुन ने अनित्यवाद के आधार पर ही कहा कि 'कही भी कोई सत्ता न स्वत: है न परत:, न स्वत: परत: दोनों और न बिना हेतु के ही।' बौद्धदर्शन में अनित्यवाद की स्थापना के लिए यह आवश्यक था कि सभी वस्तुओं को अनित्य समझा जाय। बुद्ध ने अनात्मवाद, प्रतीतयसमुत्पाद, दु:खवाद, अनित्यवाद या क्षणिकवाद की स्थापना की तथा आगे उनके अनुयायिओं ने इस सिद्धान्तों का विकास किया, किन्तु बुद्ध के अनित्यवाद के समक्ष सबसे बड़ी कठिनाई 'जाति' या 'सामान्य' का सिद्धान्त था। इसका कारण यह है कि यदि बौद्ध व्यक्ति के अतिरिक्त 'जाति' या 'सामान्य' की सत्ता स्वीकार करते हैं, तो 'अनितयवाद' की स्थापना कैसे हो सकती है? अत: बौद्धों ने सोचा कि 'जाति' या 'सामान्य' का निराकरण (खण्डन) कर दिया जाए। अब यहाँ यह प्रश्न उठता है कि सामान्य का खण्डन करते है, तो हमें उनके वस्तुओं में एकता का आभास या ज्ञान कैसे होगा ? अत: बौद्धों ने एक ऐसे सिद्धान्त का प्रतिपादन किया जिसमें 'जाति' या 'सामान्य' का खण्डन भी हो जाता है। अत: बौद्धों ने जिस सिद्धान्त से जाति या सामान्य का खण्डन किया और अनेक वस्तुओं में एकता की ,उसी को अपोहवाद के सिद्धान्त की संज्ञा दी।

जिस प्रकार शब्दगोचर अर्थ के तात्विक स्वरूप को लेकर प्राचीनकाल से विचार चला आ रहा है कि 'वेद शब्द रूप है और परमार्थ के ज्ञापक है' यही वेद की मुख्य वैदिक परम्परा थी। इसी कारण व्याकरण, मीमांसक एवं वेदान्ती शब्द को नित्य मानते आए है। अर्थ के विषय में उनमें भेद है। प्राचीन व्याकरण जाति,गुण क्रिया एवं यदृच्छा रूप उपाधियों में शब्द की चतुर्विध प्रवृत्ति मानते थे। मीमांसक अर्थ को जातिरूप मानते थे। इन मतों के विरूद्ध नैयायिक शब्द को अनित्य मानते थे और उसके अर्थ को जाति एवं आकृति से युक्त व्यक्ति से अभिन्न 'जात्याकृतिव्यक्तय:पदार्थ' न्यायसूत्र (2–2:65)। इसलिए बौद्धों के लिए सभी कुछ क्षणभंगुर होने के कारण जाति अथवा सामान्य अवस्तु हो जाते हैं। गुणों से पृथक द्रव्य,क्रिया से पृथक कारक, अवयवों से पृथक अवयवी इनकी सत्ता भी बौद्ध स्वीकार नहीं करते।फलत: व्यवहार में अथवा न्यायदर्शन में स्वीकृत नित्यानित्य,विशेषणविशिष्ट अनेक संसृष्टपदार्थो का विश्व बौद्धो के लिए वास्तविक न बनकर शाब्दिक बन जाता है।साथ ही साथ शब्दों के अर्थ वस्तु – जगत के अन्तपाती न होकर काल्पनिक बन जाता हैं। शब्द और कल्पना नित्य–सहचर हैं और उनका विश्व वास्तविक जगत पर आरोपित है। वस्तुओं के अनुभव को हम अनादि स्वरूप के अनरूप साचों मेंढाल कर समझ सकते है,याद करके व्यक्त करते है। इन सांचों अथवा विकल्प का वास्तविक से परम्परा सम्बन्ध बना रहता है।इसी कारण शब्द व्यवहार में उपयोगी होते हुए भी वस्तु–स्वरूप से अछुते रहते हैं।जहाँ वस्तु अद्धितीय और विध्यात्मक होती है, शब्द केवल परस्पर व्यावृत्त द्धन्द्धों को प्रतिबिम्ब करते हैं। सारांश यह है कि 'अपोह कामूल अर्थ निषेध या निराकरण (व्यावृत्ति) माना गया है।'बौद्ध विचारकों के अनुसार शब्द निश्चित पदार्थो के वाचक नहीं है, बल्कि ऐसे अन्य पदार्थो का निराकरण करते हैं, जिनका ध्यान भूल से मन में आ जाता है। 'गाय' शब्द से घोडे आदि अन्य पदार्थों का निराकरण (अपोह) हो जाता है। इस निराकण के कारण हम अनुमान करते है कि 'गाय' शब्द गायरूपी पदार्थ का निर्देश करता है।[1]यहाँ अपोहवाद का स्वरूप स्पष्ट हो जाता है। फिर भी अपोह के स्वरूप को और अधिक स्पष्ट करने के लिए यह कहा जा सकता है कि 'आस्तिक दर्शनों ने शब्द और अर्थ के सम्बन्ध से अर्थज्ञान का निराकरण किया है, परन्तु नास्तिक सिद्धान्तों के समर्थन होने के कारण बौद्धदार्शनिक शब्द और अर्थ में कोई सम्बन्ध नहीं मानतेय'। उनके मतानुसार शब्द से अर्थ का ज्ञान का प्रकार यह है–जैसे 'गाय' शब्द गाय पशु का बोध नहीं कराता, अपितु 'अपोह' अर्थात अन्य की व्यावृति (निषेध निराकरण),जैसे अश्व आादि करता है।तदन्तर इस अपोह (निषेध) के द्धारा व्यावृति (निषेध) होने पर अनुमान से यह ज्ञान प्राप्त करते हैं कि यह गाय है।[2] बौद्धदर्शन के अपोहवाद का अभिप्राय जाना जाय तो यही कहा जा सकता है कि अपने से भिन्न का निषेध करते हुए विधि (स्वीकारात्मक वाक्य)की स्थापना। जैसे गाय है, कहने पर गाय के भिन्न का निषेध करते हुए गाय के अर्थ की स्थापना।जैसे गाय नहीं है ऐसा नहीं है इस प्रकार विभिन्न दार्शनिकों ने अपोह के विकास में अपने भिन्न–भिन्न मत दिया है।

बौद्धदार्शनिक दिङ्नाग के अनुसार अपोह का अर्थ – अपोहवाद के प्रवर्तक आचार्य दिङ्नाग कहते है कि अपोह एक प्रकार का वस्तु शुन्य प्रज्ञप्तिवाद ही है। विकल्प और नाम एक ही भूमि को आवृत करते हैं क्योंकि विकल्पात्मक विचार की एक नाम योग्य विचार के रूप में परिभाषा दी गई है – एक ऐसे विचार के रूप में जो नाम के साथ एकीभूत हो सकता है। दिङ्नाग कहते हैं कि नाम विकल्पों से उत्पन्न होते हैं और इसके विपरित भी नाम से उत्पन्न होते है।[3] दिङ्नाग का प्रसज्य – प्रतिशेध का सिद्धान्त – प्रमाण समुच्चय के पंचम परिच्छेद में दिए हैं कि शब्दों से निष्कृट सिद्धन्त ज्ञान (सिद्धन्त:) अनुमान से भिन्न नहीं होते। वास्तव में कोई नाम केवल विरूद्ध

* यु0जी0सी0 वुमेन्स पोस्ट डाक्टोरल फेलो (दर्शन एवं धर्म विभाग) काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी (उत्तरप्रदेश) भारत

अर्थ के प्रतिशेध द्वारा ही अपने अर्थ को व्यक्त कर सकता है जैसे उत्पत्तिमान शब्द अपने अर्थ को केवल नित्य अथवा उत्पत्ति रहित वस्तुओं के विभेद द्वारा ही व्यक्त कर सकता है।[4] दिङ्नाग का सिद्धान्त शब्दों ये निष्कृट ज्ञान अनुमान से भिन्न नहीं हो, यह परोक्ष ज्ञान है, ज्ञान वास्तव में या तो साक्षात अथवा परोक्ष या तो इन्द्रियों से उत्पन्न अथवा बुद्धि से उत्पन्न या प्रत्यक्ष अथवा अनुमान विकल्प हो सकता है। शब्दों के ग्रहीत ज्ञान साक्षात नहीं होता, संवेदना नहीं होता।

दिङ्नाग का कथन है कि शाब्दिक ज्ञान साक्षात् नहीं,बल्कि अनुमानात्मक सापेक्षित और अपोहात्मक होता है। दिङ्नाग यथार्थववादियों के इस सिद्धान्त का खण्डन करते है कि सामान्य एक विशेष में स्थित वास्तविक सत्ता है और इसका इद्रियों के द्वारा साक्षात प्रत्यक्ष होता है। सामान्य विशेषों की एक अनन्तता को आवृत करता है,जिसका साक्षात प्रत्यक्ष नहीं हो सकता। दिङ्नाग आचार्य नैयायिक के इस सिद्धान्त को भी अस्वीकृत करते हैं कि नाम वस्तुओं की तीन विधाओं अमूर्त सामान, मूर्त सामान और विशेष को व्यक्त करते हैं। विशेष सर्वथा अनभिलाप होता है। मूर्त सामान्यों का अमूर्त सामान्यों से विभेद नहीं करना चाहिए।दोनों ही सामान्य है और दोनों ही अमूर्त है।नाम तो सामान्यों को व्यक्त करते हैं किन्तु हमारे मन में यह प्रश्न उठता है कि किस प्रकार के सामान्यों का? ये सामान्य हमारे बुद्धि में होते है-इनका निर्माण कल्पना शक्ति से होता है। ये प्रतिषेधात्मक, सापेक्षित तथा अपोहात्मक होते हैं। अत: दिङ्.नाग मानते हैं कि शब्दों द्वारा उत्पन्न ज्ञान विरूद्ध के प्रतिषेध की विधि अर्थात प्रतिषेधात्मक अथवा अपोहात्मक रूप से सत् का ज्ञान प्राप्त करता है।[5]

दिङ्नाग के 'प्रमाण समुच्चय' ग्रन्थ के वृत्तिकार जिनेन्द्रबुद्धि दिङ्नाग के वक्तव्य को इस प्रकार स्पष्ट करते हैं कि जाति न कोई वास्तविक सत्ता है और न ही अनुगत प्रतीति का हेतु है। वे पदार्थ की भाँति जाति को सत् न मानकर भ्रम और विकल्पमात्र मानते हैं। उनके अनुसार विशेषों में कोई सामान्य एकत्व नहीं। ये हमारी कल्पनाशक्ति को उद्दीप्त करते हैं और एक-एक ऐसे अभेद प्रतिभास की रचना करते हैं, जो विकल्प विज्ञान बन जाता है, यही विशेष और सामान्य के बीच एकत्व को प्रस्तुत करता है। विकल्पों की इस शक्ति का स्वभाव इस तथ्य में निहित है कि वह वैयक्तिक रूपों के भेद इस विशुद्ध आन्तरिक प्रतिभास को अज्ञानी मनुष्यों द्वारा एक बाह्य वस्तु समझ लिया जाता है।इसका इस तरह विस्तार किया जाता है कि यह अनेक विभिन्न व्यक्तियों को आवृत्त करें, उन्हें बाह्य जगत् में प्रक्षिप्त रूप से प्रस्तुत करे और उन्हें हेतु के प्रभावोत्पादकता से युक्त है। वह सत् जो सामान अकारों के आधार को व्यक्त करता है, विरूद्ध के प्रतिषेध के अतिरिक्त और कुछ नहीं। इनसे परिणामों में एक ऐसा एकत्व उत्पन्न होता है जो उसी परिणाम को उत्पन्न नहीं करते।एक ही उद्दीपन उद्दप्त करने वाली वस्तुएँ अनुभवातीत भ्रम का कारण बन जाती है और एक ऐसे व्यापक आकार की रचना करती है, जिसका एक सामान जैसा रूप होता है, इस प्रकार सामान्य एक आन्तरिक उत्पाद है जो भ्रामक रूप से एक बाह्य रूप में प्रकट होता है।

धर्म कीर्ति के अनुसार अपोह का अर्थ - धर्मकीर्ति ने दिङ्नाग के इस अपोह सिद्धान्त को क्रम से विकसित किया है और यथार्थवादियों के प्रहार से बचाया।स्वलक्षण ही ज्ञान का विषय है।एक ही स्वलक्षण का स्वरूप और और पररूप अध्यवसित होने के कारण एक ही पारमार्थिक प्रमेय दो व्यावहारिक प्रमेयो में विभक्त हो जाता है। जब कुमारिल ने दिङ्नाग के अपोहवाद का खण्डन किया तो धर्मकीति ने कुमारिल के अक्षेपों को दृष्टि में रखते हुए अपने ग्रन्थ प्रमाणवार्तिक (यह ग्रन्थ प्रमाण समुच्च की व्याख्या है) में आवश्यक सुधार करते हुए अपोहवाद को नए रूप में प्रस्तुत किया जहाँ दिङ्नाग का मत निषेधात्मक है, वहाँ धर्मकीर्ति के मत स्वीकारात्मक है। जयन्त भट्ट ने न्यायमंजरी में धर्मकीर्ति के मत का उल्लेख है 'बौद्ध मत के अनूसार ज्ञान विकल्पात्मक है, अन्य की व्यावृति निषेध न बाह्य है और न आभ्यान्तर अपितु ज्ञान और वस्तु से पृथक है। यह न बाहर है, न अन्दर अतएव इसको मिथ्या कहते है यदि दोनों यहीं है तो इसका क्या स्वरूप है, आरोपित विकल्पात्मक आकार मात्र'।

मोक्षाकर गुप्त के अनुसार अपोह का अर्थ - धर्मकीर्ति के समर्थन मोक्षाकर गुप्त धर्मकीर्ति के अपोहविषयक सिद्धान्त की व्याख्या देते है कि यह अपोह क्या है ? अध्यवसाय या निश्चय के अनुसार बाह्य घट आदि अर्थ अपोह कहे जाते हैं क्योंकि इनसे अन्य विजातिय अर्थ का अपोहन (दूरीकरण) होता है अथवा अपोहन की 'अपोह' है-इस व्याख्या के अनुसार यथातत्तव, निवृत्ति मात्र प्रसज्यरुप ही अपोह है।[6]यहा शंका होती है कि यथाध्यवसाय (निश्चयानुसार) विधि ही है, तब इससे केवल विषय ही आता है। अपोह से युक्त विधि मान्य नहीं है। गाय की प्रतीति होने पर सामर्थ्य से अन्य का अपोह गौ आदि अर्थ को निर्धारण होता है, यह जो निवृत्ति जो अपोहवादियों का मत है-वह ठीक नहीं है, क्योंकि व्यवहार के समय पहले विद्यमान में भी प्रतीति के विषय में क्रम नहीं दिख पड़ता। यह मानना ठीक नहीं होगा कि पहले पहले विधि को समझ कर बाद में अन्य अपोह की जानकारी करता है। अथवा अपोह को समझकर बाद में अन्य-अपोह की जानकारी करता है। इसलिए गाय की जानकारी ही अन्य अपोह की जानकारी कही जाती है।[7] मोक्षाकर गुप्त धर्मकीर्ति के समर्थन में आगे कहते है कि जिस प्रकार प्रत्यक्ष का प्रसज्यप्रतिबोध रुप अभाव का ग्रहण, अभाव विकल्प की उत्पादन शक्ति ही है, उसी प्रकार विधि विकल्पों का भी उनके अनुरुप अनुष्ठानशक्ति ही अभाव ग्रहण कही जाती है। ऐसा न मानने पर तो यही होगा कि कोई गाय बांधने को कहेगा तो दूसरा व्यक्ति घोड़े को बांध देगा। इससे यह ज्ञात हुआ कि बाह्य के निश्चय से ही शब्द के वाच्य का व्यवस्था होती है।[8]

जिनेन्द्रबुद्धि (700 ई.), शान्तरक्षित (743 ई.) तथा कमलशील (749ई.) के अनुसार अपोह का अर्थ - जिनेन्द्रबुद्धि के अनुसार अपोह का अर्थयह बताया गया है कि 'अपोह प्रत्येक सत्ता का निषेध नहीं है।' यह बुद्धि द्वारा कल्पित मानसिक प्रतिबिम्ब का निषेध करता है, न कि स्वलक्षण का, जो उसका आधार है। शान्तरक्षित और कमलशील भी जितेन्द्र बुद्धि के इस अर्थ का समर्थन करते है। उनके अनुसार एक अपोह के उदाहरण के लिए गाय का तत्त्व एक दूसरे अपोह अर्थात् अश्व के तत्त्व से भिन्न है। कमलशील के अनुसार वस्तु का मानसिक प्रतिबिम्ब अपोह का मुख्य अर्थ है और अन्य वस्तुओं के मानसिक प्रतिबिम्बों की व्यावृत्ति उसका गौण अर्थ है।[9]

शान्तरक्षित द्वारा धर्मकीर्ति के सिद्धान्त का पुनर्गठन - यह स्पष्ट है कि शान्तरक्षित और कमलशील का सिद्धान्त दिङ्नाग और धर्मकीर्ति के मत से पूर्णतया भिन्न नहीं है किन्तु कुछ मतभेद दृष्टिगोचर होता है। यद्यपि यह मत दोनों के सिद्धान्तों का है कि सभी सामान्य ज्ञान मानस-कल्पना और भ्रम है, असत्य है। फिर भी शान्तरक्षित यह नहीं मानते कि शब्द सदैव निषेधात्मक अर्थ का ही वाचक है, जैसा कि दिङ्नाग और धर्मकिर्ति का कथन है। शान्तरक्षित शब्दार्थ को दो भागों में बॉटते है। वह शब्दों के अर्थ को अनुक्रम से विध्यात्मक और अतद् निषेधात्मक युक्त कहते है, जिसे धर्मकिर्ति ने स्वीकार नहीं किया है। धर्मकिर्ति निषेध का प्रत्यक्ष ग्रहण करते है, जबकि दूसरे मत में विध्यात्मक प्रतीति वाला है। उद्योतकर के इस प्रश्न पर कि अपोह विध्यात्मक है या निषेधात्मक [10] शान्तरक्षित उत्तर देते है कि

यह न तो विध्यात्मक है, न ही निषेधात्मक। न ही भिन्न है और न ही निरस्तित्व । न एक और न अनेक।[11]वस्तुत: यह उसमें नहीं रहता है जिससे यह प्रतीत होता है।[12]क्योंकि यह पूर्ण विध्यात्मक नहीं है, यह निषेधात्मक भी नहीं है क्योंकि यह विध्यात्मक रुप में प्रतीत होता है। अत: यह स्पष्ट है कि यह वक्तव्य अपोह के पूर्णतया विध्यात्मक, अतद् निषेधात्मक, एक और अनेक होने पर प्रतिषेधक है। शान्तरक्षित कुमारिल भट्ट के इस मत को भी मानते है कि शब्दार्थ एक विध्यात्मक प्रतीति युक्त है क्योंकि ऐसा मानने से उसको असत्य ठहराना सरल हो जाता है। परन्तु साथ ही वे अतद् निषेधात्मक अर्थ का भी अनुमान करते है। इस निषेधात्मक अर्थ का परोक्ष रुप में ग्रहण होने पर ही शब्द का ज्ञान हो पाता है। इसकी अनुपस्थिति में शब्दार्थ ग्रहण संभव नहीं हो सकेगा। अत: शान्तरक्षित ने कहा कि हमने यह कभी स्वीकार नहीं किया कि किसी शब्द का अर्थ निषेध मात्र होता है तथा शब्द प्रत्यक्षत: स्वलक्षण है और परोक्षत: अन्य व्यावृत्ति। स्पष्ट है कि शान्तरक्षित दिङ्नाग की अपोह विषयक शुद्ध एवं पूर्ण अतद् निषेधात्मक अर्थ की प्रतिज्ञा को भंग कर देते है।

रत्नकीर्ति (1000 ई.) का विशिष्टापोहवाद का अर्थ – यर्थाथवादियों (वाचस्पतिमिश्र आदि) की अपोह विषयक आलोचना का उत्तर देने के लिए रत्नकीर्ति ने 'अपोहसिद्धि' में अपोह की एक नई परिभाषा प्रस्तुत की है। उनके अपोह का अर्थ 'विशिष्टापोह' है और शब्द का अर्थ है–'अन्य व्यावृत्ति विशिष्ट अपोह'। रत्नकिर्ति का मूल मन्तव्य यह है कि अपोह न केवल स्वीकारात्मक और न केवल नकारात्मक है, वरन् यह अन्यापोह 'विशिष्ट विधि है। कुछ लोगों के अनुसार रत्नकीर्ति का अपोहवाद विशिष्टापोह रामानुज के 'विशिष्टाद्वैतवाद' की तरह है। अद्वैतवाद के समानान्तर जिस प्रकार विशिष्टाद्वैत आदिमत है, उसी प्रकार रत्नकीर्ति ने 'विशिष्टाद्वैत' सिद्धान्त का निरुपण किया है। 'अपोहसिद्धि' में अपने विचार का निरुपण करते हुए लिखा कि हम अपोहवाद से केवल विधि (स्वीकार) को ग्रहण नहीं करते और न केवल अन्य की व्यावृत्ति (अस्वीकार निषेध) अपितु निषेध और विधि दोनों साथ–साथ ही होते हैं। यह है अन्यापोहविशिष्ट विधि अर्थात् गाय कहने पर गाय भिन्न का निषेध करके गाय का ज्ञान करना। रत्नकीर्ति ने यह भी स्पष्ट किया है कि निषेध और विधि (स्वीकृति) ये दोनों ज्ञान के आगे पीछे नहीं होते अपितु एक साथ होते है।[13]

पूर्वपक्ष जाति को सिद्ध करने के लिए यह अनुमान देते है कि विशिष्ट का ज्ञान विशेषण के ज्ञान के बिना नहीं होता है। उदाहरण के लिए दण्डी का ज्ञान दण्ड के ज्ञान के बिना नहीं होता। 'यह गाय है' यह विशिष्ट ज्ञान है, इसलिए यह गोत्वरुपी गविशेषण के बिना नहीं हो सकता। रत्नकिर्ति समाधान देते है कि विशेषण – विशेष्यभाव में वास्तविक भेद न होकर काल्पनिक भेद है। घट स्वरुपवान है, इत्यादि के समान पिण्ड गोत्व जातिमान है इस उदाहरण में भी परिकलित भेद का आश्रय लेकर विशेष्य विशेषणभाव इष्ट है और इसका कारण यह गाय है यह व्यवहार अ–गो–व्यावृत्ति जिसका विशेषण है, ऐसे अर्थ का अनुभव होता है। इसको सामान्य ज्ञान नहीं मान सकते। क्योंकि व्यक्ति के प्रत्यक्ष होने पर उससे नित्य सम्बद्ध जाति का प्रत्यक्ष नहीं होता। इसलिए यह दृष्यानुपलब्धि भी जाति का अभाव सिद्ध करती है। [14] अन्त में रत्नकीर्ति स्पष्ट करते है कि शब्दों के द्वारा अर्थ मुख्य रुप से कहा जाता है और अपोह उसमें गौण रुप से गम्य होता है।

निष्कर्ष रुप में यहीं कहा जा सकता है कि बौद्धों के अपोहवाद का उदय उनके क्षणभङगवाद की पुष्टि के लिए हुआ। जाति के नित्य, भावभूत पदार्थ न मानने का उनका कारण यह है कि उनके क्षणभङगवाद के अनुसार सब कुछ क्षणिक है, अस्थायी है, बौद्ध जब अनुगत प्रतीति के कारण 'सामान्य' नामक पदार्थ को नहीं मानते तो वे अपोह की कल्पना करके एकाभार प्रतीति की समस्या समाधान ढूंढते है। अपोह –तद्भिन्न–भिन्नत्व। अर्थात् घट भिन्न सम्पूर्ण जगत् उससे भिन्न–फिर घट ही होगा। इसलिए प्रत्येक घट अतद्व्यावृत्त या तद्भिन्न से भिन्न है। अतएव सामान्य का अर्थ 'अपोह' से निकल जाता है। दिङ्नाग विशेषों में कोई सामान्य सत्ता नहीं मानते। शाब्दिक ज्ञान साक्षात न होकर अनुमानात्मक, सापेक्षित और अपोहात्मक होता है। बुद्धि अपने अर्थ का विधान किसी भिन्न का प्रतिषेध या अपोहन द्वारा ही करती है। धर्मकीर्ति ने दिङ्नाग के सिद्धान्त को विकसित करते हुए शब्द के दो अर्थों का भी बहिष्कार किया कि शब्द प्रत्यक्ष रुप से न तो अर्थ का कथन करता है और न ही परोक्ष रुप से विपरीत अर्थ का निषेध भी करता हैं। उनके मत में विधि रुप अर्थ की सत्ता निषेधात्मक अर्थ के ग्रहण पर ही सम्भव है। आगे चलकर शान्तरक्षित और उसके टीकाकार कमलशील ने कुमारिल भट्ट के आक्षेपों का उत्तर देते हुए अपोहवाद के रुप में किंचित परिवर्तन किया। उन्होंने अपोह को प्रसज्य–प्रतिवेध रुप न मानकर पर्युदास रुप माना उन्होंने पूर्वमत की भाँति अर्थ को पूर्ण निषेधात्मक न मानकर प्रत्यक्ष में विधिरुप और उस विधिरुप के द्वारा अनुक्रमण से अतद्निषेधात्मक रुप अर्थ माना। तदनत्तार नैयायिकों और मीमांसकों के अधिक प्रहारों को झेलते हुए बौद्ध दार्शनिक रत्नकीर्ति ने अपोह को अत्द् निषेध रुप और विधि रुप दोनों को माना। उन्होंने अपोह की अपेक्षा 'विशिष्टपोह' की स्थापना की। विशिष्टपोह अर्थात् अन्य के अपोहन या व्यावर्तन से युक्त विधि–ही शब्दार्थ है। इस प्रकार रत्नकीर्ति ने अपने पूर्वाचार्यों के मत के विरुद्ध विधि को प्रत्यक्ष रुप में स्वीकार कर अपोहवाद को अन्तिम रुप प्रदान किया। इस प्रकार अपोह के विकास में बौद्ध दार्शनिकों ने अपना–अपना योगदान दिया।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डॉ0 राधा कृष्णन, भारतीय दर्शन, भाग 2 पृ0 90
2. डॉ0 कालिदेव द्विवेदी, अर्थ विज्ञान और व्याकरण दर्शन पृ0 211
3. Budhist logic ,stcherbarske.P.459
4. वही पृ0न0 459
5. वही पृ0न0 461 471
6. बौद्धिक भाषा पृ0न0 84
7. बौद्धिक भाषा पृ0न0 84
8. वहीं।
9. भारतीय दर्शन पृ0 न0 244 45 डॉ0 देवराज सम्पादक डॉ0 छोटेलाल।
10. न्याय दर्शन 2/2/66।
11. न्याय वार्तिक पृ0 न0 673
12. तत्त्व संग्रह कारिका, 1188
13. वहीं 1189
14. भारतीय दर्शन सम्पादक डॉ0 देवराज पृ0 244 45
15. अपोहसिद्धि पृ0 60

****

Role Of Women And Their Presentation-In The Plays Of Eugene O' Neill's 'The Iceman Cometh', 'Long Day's Journey Into Night' And 'A Moon For The Misbegotten'

Harasankar Maity * Dr. G. Rajasekaran **

Abstract - Responsibilities, limitations on personal freedom and even death may become synonymous with femininity. If females appear at all, their passing is momentary. A dead woman poses no threat – the hero avoids the danger of domestication completely. In European literature, when a woman appears, she is often depicted as a version of the Madonna, a statue to whom one prays for favors or forgiveness: Lear carries on the dead Cordelia, and Othello kills but enshrines his Desdemona. The dead woman haunts ghoulishly many western masterpieces, the precursors to the spectral portrayal of woman in the works of Eugene O'neill. In "Long Day's Journey Into Night", despite the male Tyrone's desperate attempts and desires , they cannot transform Mary Tyrone into a happy housewife. She may take on the role, but her heart is just not in the performance, due to her morphine addiction. In the course of the play she disintegrates, with drawing from the audience and her family into her world of dreams. In effect , she becomes a ghost
Key words - Role of woman as mirror, women in European literature, phallocentrcism , patriarchy , petit object a, woman as mother and whore, jouissance

Introduction - Evelyn Hickman in O' Neill's "The Iceman Cometh" (1936),plagues her husband Hickey before and after her death , so much so that her presence suffocates Hickey. Sometimes authorial inadequacies came weak female characterisation . Females are objectified , alienated to the realm of the other because they "are not men". Consequently female representation or her participation in the polarised discourse of patriarchy is troublesome at best . The need for an origin , a center at which life began is also at the heart of the myth of autonomy , at the center of phallocentricism.

Female representation is like "sleeping beauty"; she slumbers mutely , but when she stirs, disturbing the fairy world , she is quickly married off , reappropriated by the handsome , phallocentric prince .

Luce Irigaray , presents a feminine critique of Lacan , Freud ,and patriarchy on their own terms . She interrogates patriarchy on the basis of patriarchy , a tactic disturbing , disrupting and challenging phallogocentricism . She argues that because women are commodities in a male market place , any resistance creates anxiety on the sexual stock exchange – when the object previously assumed mute , speaks ,there is trouble and perhaps , change . Here the role is of the petit object a , object of desire having a limited relationship to language . Casting the female in the role of the mirror is an accurate image for the general objectification of woman,by placing woman in this role as mirror,men may once again experience the comfort of coherency,but they also experience the ambivalence towards the mirror "woman".

In the plays of Eugene O'neill, many men impose traditional expectations upon the female characters, usually dividing women into the two opposing categories: mothers and whores.

In Eugene O'neill "Long Day's Journey Into Night" (1956) and "A Moon For The Misbegotten" (1947), the male characters look to mother figures for sustenance with varying degrees of success. Eugene O'neill "The Iceman Cometh" (1936) illustrates worlds in which men exist predominantly without women, while women rarely appear on the scene, they are still a vital presence in these plays. In his three plays "The Iceman Cometh" with other two plays, most of the male characters behave as Eugene O'neill himself did. They too desire reassurance by way of reflection. O'neill's men attempt to impose order, structure and meaning onto their personal chaos – and their women – with little success. For men , such as these, their attempts to attain security results in the creation of a male wasteland, a desert - like existence in which nothing changes and nothing is created. In the plays and perhaps O'neill's own life, mirrors do not provide an oasis or the necessary reassurance many men seek, so they turn to the next best thing – their female companions. In O'neill's works and others, women often provide suitable means of reflection because "within the context of a phallocentric system of representation, the woman is reduced to mirroring the man." (Berg 17)

The Iceman Cometh - With The Iceman Cometh, Eugene

*Research Scholar, CMJ University, Shillong (Meghalaya) INDIA
**Professor, Bharathiar University, Coimbatore (Tamil Nadu) INDIA

O'Neill creates an urban, male wasteland. Most of the occupants of Harry Hope's saloon have lost their women in some way or another, and after meeting these men, it is not difficult to understand why their women have gone. The men are dirty, drunk, and destitute. Their hobbies include joking with one another; drinking, and waiting the arrival of Hickey, a second-rate salesman who usually brings better booze and a few more jokes, Judging from what the men say about their women, however, the females were not much better. The women from their pasts are demons, mothers, whores, or some odd combination of all three characteristics—a triad which may lead readers to recall O'Neill's own mother or his third wife, Carlotta Monterey O'Neill. The women of their present are not only "tarts," they are stale tarts, whores who "arouse no one to lust" (Bogard 416).

This urban wasteland, however, appears to be a patriarchal paradise—lots of booze, a few tarts, and no wives to give the men a difficult time. Despite this masculine "bliss," the men create the feminine for themselves either through drink, each other, or their pipe dreams, O'Neill's phrase for their fantasies of the past, present, and future. In effect, the male response to a world without women is to manufacture various versions of women, admittedly often idealized versions. Without women actually present, the men create females as they would like them to be—mothers or whores, perfect mirrors. Even with this great degree of control over their females, however, women continue to haunt the men in the saloon, creating the anxiety the men try to wash away through cheap liquor. In this way, The Iceman Cometh exposes the limitations and futility of each man's attempt to coerce and control either the woman in his life or her image. Many of the female characters are denied access to the bar, The Iceman cometh accentuates the "kind of Alaska" the women inhabit. We never hear them speak or hear their "side" of the story. The men control their memories, so they apparently control the women in their personal histories. and this control generally results in classifying and stereotyping women. Because the men support one another's pipe dreams so well , however, they do not even need females to function as mirrors. They play the feminine role for each other, rarely disturbing the smooth surface of their dreams.

Long Day's journey Into Night - In Long Day's journey Into Night(1956), Eugene O, Neill presents his audiences with a reassuring setting, much like that of his light-hearted Ah Wilderness! (1933): a family happily vacations at their New England summer home. Gone are the Skid-row bums, the dingy table, and the tarts of The Iceman Cometh. I their place are the "happily married" Mary and James Tyrone, joking about domestic topics such as her weight-gain and his snoring. When their adult sons, Jamie and Edmund, arrive, they tell a humorous tale about their poor, Irish tenant, Shaughnessy, who makes a fool out of their wealthy neighbor Harker, a Standard Oil wasp. All seems well, but beneath this familial and secure exterior lurks the same desperation that was present in The Iceman Cometh.

Unlike The Iceman Cometh, a central female character appears on stage, possibly due to-O'Neill's own dualistic attitudes towards women—only whores appear in saloons; "nice" women remain at home. The play quickly makes it clear, however, that such distinctions are not entirely accurate, for Mary, a seemingly average New England housewife, is addicted to morphine—an addiction generally associated with whores.3 Like the absent, female characters in The Iceman Cometh, Mary disrupts traditional, feminine roles. Like Rosa Parritt whose commitment to political activism violates Don's and Larry's expectations, Mary Tyrone also challenges her family's expectations concerning the way in which a mother "should" behave .

In Long Day's Journey Into Night, Mary Tyrone establishes her difference on stage. Unlike the "tarts" in The Iceman Cometh, her appearance, moreover, does not indicate that she is "one of the boys" or her complicity in their traditional expectations of women. Just as Cora creates "gaps" within Hickey's monologue, Mary interrupts the discourse of her male counterparts.

While Pinter's play illustrates one woman's integration into patriarchy, Long Day's Journey Into Night dramatizes one woman's disintegration.

Like Evelyn Hickman, Mary's "Alaska" allows her the freedom to torture her family, usually by preying upon the men's stereotypical expectations.

A Moon for the Misbegotten - While casting women in stereotypical roles ruins a family in Long Day's Journey Into Night, it promises salvation in A Moon for the Misbegotten. In his final play, O'Neill creates, for the first and last time in his career, a "wholly admirable central character"—Josie Hogan (Raleigh 235). She is the perfect O'Neill woman: strong, clear-headed, motherly, and asexual. In order to attain this status, however, Josie has had to banish her sexual desire for Jamie Tyrone. Ironically, Josie must be frigid in order to avoid "the kind of Alaska" O'Neill's other women occupy. As the play demonstrates, Josie's sacrifice makes salvation attainable for herself and Jamie Tyrone. She becomes "the" Madonna, a pure and compassionate woman, who grants Jamie the maternal forgiveness he has been searching for all his life. By banishing her sexuality and personal wishes, Josie creates a fruitful "kind of Alaska." Unlike the destructive and barren "Alaska" of Evelyn and Mary, Josie's "Alaska" is an oasis in the male wasteland.

Many would argue that O'Neill's presentation of Josie is a pipe dream. For Luce Iragaray, all woman must "sacrificed" as Josie "sacrificed" as a result of their inscription into phallocentric discourse. Because woman are the object of desire, they are not only denied desire, but even the question of female desire defies representation. The famous Freudian question, "what does woman want?" can never be articulated, never answered. According to Jacques Lacan, the happy conclusion of female desire, orgasm or jouissance does not exist and [which] signifies nothing. There is a jouissance proper to

her and of which she herself may know nothing, except that she experiences it—that much she does know. She knows it of course when it happens. It does not happen to all of them. (Feminine Sexuality 145)

Given this framework, Josie becomes an allegorical "Everywoman," with her "sacrifice" paralleling the sacrifice all women make in a phallocentric system. O'Neill's play, however, is much more than a reenactment of this feminine denial. Unlike saran and Iragaray, O'Neill represents the "sacrifice" as a sign of hope. While the psychoanalytic critics argue that the denial only suppresses women, keeping the phallocentric machinery in order, O'Neill's play illustrates that Josie's renouncement is not only conscious but it creates positive results in the lives of Jamie and Josie.

Admittedly, O'Neill may be a victim of phallocentric logic. As a male he must justify the feminine sacrifice. But the play accentuates and recognizes Josie's desire. Female desire is presented, and Jamie's inability to fulfill that desire emphasizes his, not Josie's, weakness. The female subject desires, but the male is incapable of accepting feminine sexuality. Further, rather than blaming the phallocentric system for Josie's frustrations, Jamie Tyrone bears much of the responsibility for thwarting Josie's sexual expression. In the end, the play raises her to the level of female myth, a woman to be revered and honored, for she has forgiven Jamie; she has faced the abyss and survived. John Henry .Raleigh likens her to a Celtic warrior woman, "who is the spiritual vehicle who conveys the soul of the dead to rebirth in a later generation" (235). This mythic interpretation of a female character, however, does not necessarily permit her access to the male world, any more than her role as the whore did. Both roles remove women from the world—one by elevating, the other by debasing women. If given the choice, though, the transcendental representation is a refreshing change. In A Moon for the Misbegotten, the mother who destroyed herself and her sons is still present, but she is calmed by yet another female, an earthy angel of mercy. In the end, Josie may remain with her father—perhaps O'Neill's own wish for his daughter—but she has attained some sense of personal dignity and strength. Unlike the women in The Iceman Cometh who haunt their men from their imprisonment behind the glass, unlike the women like Evelyn and Mary Tyrone in Long Day's Journey Into Night who use the mirror to torture their men, Josie looks into the mirror, sees her needs and the needs of Jamie. She then chooses to help him by playing the role of the Madonna, a role which offers her the ability to remain present in the male world. Consequently, unlike the other women, Josie is the most fully "present" female character in the O'Neill canon: she need not hide her feminine side by refusing to play the role of mother or whore. Instead, she uses the role of the Madonna to find love and an expression of her feminine nature. Admittedly, she must play by the rules of the patriarchy, but she is no longer the comical "whore." She is the ideal O'Neill woman, a woman who offers a glimmer of hope in the masculine wasteland.

References :-

1. Bogard, Travis. Contour in Time : The Plays of Eugene O'Neill.
2. Chothia, Jean. Forging a Language : A Study of the Plays of Eugene O'Neill . Cambridge: Cambridge UP, 1979 .
3. Davis, Robert conn., ed. Lacan and Narration : The Psycholanlytic Difference in Narrative Theory . Baltimore : Johns Hopkins, UP , 1983.
4. Falk, Doris . Eugene O'Neill and the Tragic Tension : An Interpretive Study of the Plays. New Brunswick : Rutger UP , 1958.
5. Floyd, Virginia , ed. Eugene O'Neill : A World view. New York : Ungar , 1979 .
6. Manhiem, Michael . Eugene O'Neill's New Language of Kinship.
7. O'Neill, Egugene. "Desire Under the Elms." The Plays of Eugene O'Neill .Vol . I New York : Vinatge Books, 1982 . 203-272.
8. Tornqvist, Egil . A Drama of Souls : Studies in O'Neill's

****

Oldman Is No Man's Land - As Also Depicted In Rohinton Mistry's, 'The Family Matters'

Dr. Manisha Joshi *

Introduction - To name the few most dominant arenas, where India has been standing apart and superior, to the rest of the world are its deep rooted culture & traditions, reverence and respect for the elders and so on from the times of "The Mahabharat" and "The Ramayan" the place and authority of the elders in the family has always been held exemplary.

Almost about 50 years back too, the denial of the authority of the elders, not only of the family but even of the neighborhood was criminal. Their decision was final and their very presence or existence in the family, a blessing. However, a noticeable change has been witnessed in the past few years with the sudden rise in the number of "Old age Homes" in the country. Consequently, there is a telling of insecurity experienced by the aged in the society. This facet of life has very realistically been presented before us by, one of most promising writers of the 21st century in English i.e., Rohinton Mistry, born in 1952, Bombay now Mumbai in a Parsee family, but migrated to Canada in 1974. He has been a recipient of many prestigious literary awards like "Hart House Literacy Prizes". "Canadian Fiction Magazine's "Tales from Ferozshah Baag", "Such a long Journey" (Short-listed for Booker Prize), "A fine Balance" (also short-listed Booker Prize), & "Family Matters" in 2002 (short-listed for Man Booker Prize).

Mistry's "The Family Matters" though based on the Parsee family & highlights their culture, also gives a very vivid picture of the dilapidated condition of the old and aged in the country in general. Though Mistry has emigrated to Canada, the story is centralized in Mumbai.

The story revolves round the protagonist, Nariman Vakeel, a 79 year old man, who is as described by Mistry, "Kurled and twisted rendered Bird-like by age"[1] (Pg. 1) Nariman, a retired English Professor, has in this youth been in love with Lucy, a non-parsee. The relationship is out-rightly rejected by this parents, as they insisted him on marrying only a Parsee girl. All his efforts to convince his parents, proved futile and finally had to abide by his parents wishes. He gets married to a parsee widow, Yasmeen, mother of two children. Coomy and Jal, at the age of 42. Nariman and Yasmeen were blessed with a baby girl and named her Roxana. All his efforts to crush his strong emotions for Lucy, are rekindled when, after a few years Lucy reappers in his life and starts working as a helper in the neighboring house. The antagonism between the two females, Yasmeen and Lucy kept rising, finally resulting in an accidental death of both of them, leaving, Nariman an isolated person with two unmarried step-children Coomy and Jal in his seven room flat in Chateau felicity and Roxana, now married to Yazaad & living with her two kids in the two room flat, which was a marriage-gift to her by her father Nariman. After the demise of Yasmeen and Lucy, with on one around Nariman had a fixed routine, his regular evening walks was much disliked by Coomy,a strong-headed, ill-tempered female, who never let an opportunity pass for "Plaguing" him with rules "to govern every aspect of his shrunken life"[2] (Pg.1)

At the age of 79, Nariman somehow felt, a vague pang of abandonment as, old age already being one of the biggest curse, and to add to it he was a patient of osteoporosis, Parkinson's disease and hypertension. As if this had to be just the beginning, for on one such evening strolls, Nariman fell down and broke his ankle. It is from here, where the journey of woes of this old man begins, Nariman was completely bedridden and was absolutely at the mercy of Coomy and Jal.

The humiliation and torture of this old man begins with the requirements of his basic needs liked nature's call, bathing, shaving, sponging, needing talcum powder and so on Next, despite doctor's specific instruction of using bed-pan for Nariman, Coomy bought a sort of enameled wash basin, (Sort of commode) something very inconvenient and painful for Nariman. The feeling of helplessness and insecurity is very vividly noticed when, despite all the inconvenience Nariman says, "Whatever is most convenient for you is fine with me. I'm such a burden already.[3] (Pg. 4)

The old man, was given bath only twice a week, even there were specific rules made regarding his meals, clothes, dentures, use of radiogram and that too as a constant reminder that, it was all for his good.

The instances of agony experienced by this old man, are scattered throughout the novel. After showing remarkable patience, Nariman gathered all his courage to ask for such petty things like, asking for his dentures to be washed, which had not been cleaned for five days. To which, Coomy complains grudgingly & to add to it, washes it with the detergent powder, whose bitterness could later be felt by Nariman and yet he keeps mum since the day of his return from the hospital (i.e. almost five days) Nariman had neither been given bath nor his clothes been changed. He was not even offered a wet towel or talcum powder. The poor man was so scared that on one night he was almost shivering and had wanted the fan to be switched off but, he

*Professor (English) Govt. M.L.B. P. G. Girls College, Fort, Indore (M.P.) INDIA

dared not ask any one for help. "Once again he was grabbed in the knowledge of helpessness".[4] (Pg. 5)

The way in which Mistry has painted the painful experiences of Nariman, today, it is almost the universal suffering of old-age all – around. The physical trauma experienced by Nariman, and the inhuman, torturous dealing of Coomy had its impact upon the psyche of this old man, for Coomy grabbed every opportunity to pinch him by reminding him of even such petty things like the expenses on ration – cards, medicines his sugar intake, the stinking room and so on. Nariman, at night wept and suffered the pangs of depression.

The shrewd Coomy, encashed this pathetic condition of her step-father and decides to off burden herself by sending Nariman to Roxana on the pretext of Nariman 'needing a change' She also was of the firm opinion, that Roxana had the equal responsibility to take care of her father.

When Nariman was being shifted to Roxana's house, the expression of eagerness on his step-children's faces was clearly visible. He did not blame them for it, but blamed his parents, of whom he thought (36 years ago). "The marriage arrangers, the willful manufacturers of Misery".[5] He feels "They had survived long enough to perform their duty but not to witness the misfortune it would foster".[6] (Pg. 6)

Before the arrival of Nariman to Roxana's house, Mistry describes the happy & congenial atmosphere of her house despite the limited accommodation and financial hang-ups. Roxana, is the one character, who proves to be a respite from the otherwise suffocating atmosphere of the novel, trying to balance masterly between her bed-ridden father on the one hand and her kids and husband on the other. And now, when Nariman had literally been kicked out by Coomy and Jal to Roxana, it obviously places renewed strains on the family relations.

Here again though, Yezaad was certainly perturbed and expressed his deep grudges for his extra liability, traces of kindness, love, humanity fellow-feeling, love for elders and family members is evidently noticed by the small gestures of Morad and Jehangir, Roxana's young sons. Jehangir feeding his grandpa is like a gush of fresh breeze in the otherwise arid life of Nariman. Roxana felt – "She was witnessing something sacred and her eyes refused to relinquish the precious moment, for she knew instinctively that it would become a memory to cherish, to recall in difficult times when she needed strength."[7] (Pg. 6)

Despite Roxana's efforts of attending both to the family and her father, the strain in the relationship between the husband and wife was quite obviouis. For Yezaad, making adjustments with bed-ridden Nariman, his bed-pan, stinking room, financial constrains of this four members family, in a congested two room flat with himself as the only earning member was simply too much. The frustration and helplessness of this old-man is heart wrenching, where he is well within the hearing range of his daughter and son-in-law's discussions and fights regarding him. For the helpless and guilt-ridden Nariman, "Life was a nightmare in two months, days in bed with his stinking body, frightened and shivering."[8] (Pg. 9)

Coomy who was fastidious in caring but the cruelty & vulgarity of mind crossed all limits. Scared that she'd have to take Nariman back to Chateau felicity, she hammered the ceiling of the rooms of the apartment, to express her incapability of shifting him from "Pleasant Villa". To which Jal says "…….so treat your eyes! Happy? Ruined house and ruined relations with our only sister.[9] (Pg. 9)

At Roxana's house also Yazaad was always grumbling rude and straight forward and refused point-blankly whenever Nariman was in an urgency to go to toilet in Roxana's absence. Yezaad did not allow Morad and Jahangir also to assist their grandpa, or even let them touch his bed-pan or the bottle for urination. As for Roxana, she had always thought that there was nothing more blessed than, to serve the poor, the old and the weak. But Yezaad openly expressed his displeasure. He almost loses his temper when despite, all precautions and self control taken by Nariman, he had to call Roxana for the nature's call. Before Yezaad left for his work Roxana always reminds Yezaad that old-age is inevitable and that, their children too, could turn their back on them. To which Yezaad says, that he would make proper arrangements and wouldn't be penniless and be such a load on his kids, when he is old. Though much softer and milder, yet the off and on caustic comments or the pinching actions of Coomy and Yezaad are certainly painful. Nariman well realizes, that basically, he is the major cause of the strained relationship whether between, husband and wife or brother and sister, is extremely touching and painful. The irony is that, Nariman though physically handicapped is mentally still very alert, he even tries to compensate in his own small way. By trying to help his grand sons in their home-work.

Another character, who is like a ray of hope in this dark novel, is Daisy Ichhaporia, whose violin playing is like a soothing balm on the lacerated soul of Nariman. She though not a relation and only an acquaintee is ever ready to entertain Nariman with her music-with the passage of time even, Yezaad's attitude towards his father-in-law softens.

Ironically, the isolation and ailments of Nariman is, actually the isolation and humiliation suffered by the millions of aged in the same country, where, mythological stalwarts like Bhishma existed and had the blessing of "Ichha Mrityu," force us to meditate that if, the same is granted today, how many would wish to survive ever after late 50's.

References :-

1. Rohinton mystery, "Family matters", Mcclelland and Stewert, 2001. Canada, India, pg 1.
2. Ibid., pg 1.
3. Ibid., pg 4.
4. Ibid., pg 5.
5. Ibid., pg 6.
6. Ibid., pg 6.
7. Ibid., pg 6.
8. Ibid., pg 9.
9. Ibid., pg 9.

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

Rabindranath Tagore And Mohammad Iqbal As Poets Of Indian Renaissance

Dr. Kehkashan Khan *

Introduction - Rabindranath Tagore and Allama Iqbal are great legends in the history of Indian poetry .Their literary creativity and poetic genius is remarkable as well as astonishing. Though they wrote in different languages, there are many striking similarities between these two great souls. Their poetry transcends time and space and it is not easy to draw a line between the earthly and the heavenly thought in it.

Rabindranath Tagore, one of India's most cherished renaissance figures, put us on the literary map of the world when his Gitanjali was awarded the Nobel prize for literature in 1913. He visited many countries like France, England, Germany, Sweden and Italy and received high honours and delivered speeches to witness his vision and universality of his message. He is a maker of modern Indian literature and modern mind and civilization. The spirit of Indian nationalism is displayed in varied colours and contours in the poetry of Tagore. His poetry inspired millions of Indians to fight the alien rulers. It was a fight with the pen against sword, and India is proud to have her national anthem 'Jana Gana Mana' composed by the greatest poet of the country. With the songs composed by Tagore on their lips and national flags in their hands thousands of his countrymen joined the procession. Tagore in the following lyric prays for the victory of his nation.

"The call has sped over all countries of the world and men have gathered around thy seat.
The day is come.
But where is India?
Does she still remain hidden, lagging behind?
Let her take up her burden and march with all. Send her, mighty God, thy message of victory,
O Lord ever awake!"[2]

IN Urdu poetry Iqbal is placed second to Ghalib. Iqbal wrote in Urdu & Persian. His first poem was Asrar-e – Khudi(secrets of self) which was published in 1915. The book found readers in Iran, Afganistan, Russia & Turkey. When R.A. Nicholson translated it into English in 1920, Iqbal became known in England and America too. Later on the poem was translated into German &Italian. This brought him recognition in the form of knighthood in 1922. Sarojini Naidu called Iqbal 'The poet laureate of Asia'.

Iqbal had started out as an Indian nationalist. His poetry is full of patriotic fervor and a pride for India's ancient civilization. He celebrated India's multiculturalism, called Lord Ram 'Imam-e-Hind' and India 'The land of Chishti and Nanak'. In his poem 'Himala', he pays a tribute to the Himalayas as India's protector. This marks the patriotic phase of Iqbal's poetry.

"Aye Himala! Aye faseel-e-kishwar-e-hindustan
Choomta hai teri peshani ko jhuk kar asmaan
Tujh mei kuch paida nahin derina rozi kei nishaan
Tu jawan hai gardish-e-shamo sehar kedarmiyan"[2]
O Himalaya' O rampart of the realm of India
Bowing down, the sky kisses your forehead
You do not show any signs of ageing
You are young in the midst of day and night's alteration"

In his well known song **'Tarana-e-Hind'**, **'Sare Jahan se Achchha Hindustan hamara'** he says:

"Mazhab nahin Sikhata apas mein bair rakhna
Hindi hein ham watan hai Hindustan hamara".[3]
Religion does not teach us to keep mutual fraction
We are Indians and belong to the same nation.

Similarly, Tagore in his poem **'where the Mind is without Fear'** wishes that his country may awake in that heaven of freedom;

"Where world has not been broken up into fragments by narrow domestic walls;
Where words come out from the depth of truth
Where tireless striving stretching its arms towards perfection;
Where the clear stream of reason has not lost its way into the dreary desert sand of dead habit."[4]

These poets were also great lovers of nature. Nature and its objects exercised a potent influence on Tagore and Iqbal. They have presented nature in all her splendor and glory. In the following lines Tagore illustrates the light which is a symbol of joy of God in the act of creation. This light fills the entire nature with joy and beauty.

"Ah, the light dances, my darling, at the centre of my life ; the light strikes , my darling , the chords of my love the sky opens, the wind runs wild, laughter passes over the earth.
The butterflies spread their sails on the sea of light.
Lilies and jasmine surge up on the crest of the waves of light.
The light is shattered into gold on every cloud, my darling and it scatters gems in profusion."[5]

*Asst. Professor (English) Govt. M.L.B. Girls P.G. College, Indore (M.P.) INDIA

Iqbal in his poem jazb-e-Darun(inner vision) shows how nature is the manifestation of god's creation.

"Yeh kainat chhupati nahin zameer apna
ke zarre-zarre mein hai Zoq-e-Aashkarai
Kuchh aur hi nazar aata hai karobar-e- jahan
nigah-e-shauq ho agar shareek-e-binai"
The universe does not suppress its conscience
Every particle gives a zestful expression.
You see the world in a different light
If your eyes possess an inner vision."[6]

In the following lyric Tagore shows God is immanent and pervasive. He objectifies himself through the countless objects & phenomena of nature.

"The same stream of life that runs through my veins night and day runs through the world and dances in rhythmic measures.

It is the same life that shoots in joy through the dust of the earth in numberless blades of grass and breaks into tumultuous waves of leaves & flowers.
It is the same life that is rocked in the ocean cradle of birth & death, in ebb and flow".[7]

Iqbal in his poem 'Jugnu' finds a reflection of the greatness and glory of God in the objects of nature. He says:

"Saya diya shajar ko, parvaaz di hawa ko
Pani ko di rawani, maujon ko bekali di
Husn-e-azl ki paida har chiz mein jhalak hai
Insan mei wo sukhan hai ghunchey mei wo chatak hai
Ye chand asman ka shaiyer ka dil hai goya
Wan chandani hai jo kuch, yan dard ki kasak hai"[8]

Trees are gifted with shade, winds with wingless flight
Water is gifted with flow, waves with restless delight.
We glimpse ethereal beauty in every object
For humans it is speech, in buds it is the waft
Moon in the sky is reflection of poet's heart
But what is lightning in the sky, reveals a paintful thought.

These poets are the harbringers of message of truth, beauty, peace, love and universal brotherhood.
Tagore in his poem shows his concern for the entire world and humanity in this poem.

"The world today is wild with the delirium of hatred
The conflicts are cruel and unceasing in anguish
Crooked are its paths, tangles its bonds of greed.
All creatures are crying for a new birth of thine
O thou of boundless life,
Save them, rouse thine eternal voice of hope,
Let love's lotus with its inexhaustible honey open its petals in thy light".[9]

Emphasizing the influence of love Iqbal says:

"A point of pure light is called Khudi,
Is a spark of life, under a covering of our clay
By love it becomes lasting,
More living, more burning, more glowing
Love enkindles its intrinsic worth
And evolves its hidden potentialities
Its nature acquires fire from love
And learns to beautify the world by love
Learn, therefore, the art of love and seek a beloved heart
Seek to acquire the eye of the prophet Noah and The patience of Job".[10]

Iqbal and Tagore had visited many countries of Europe. Tagore in his youth was known as the Shelley of Bengal. He strove all his life for a synthesis of the East and the west. In art, philosophy & religion, Tagore saw the urgent necessity of a union between the orient and the occident.

"Let me say that I have no distrust of any culture because of its foreign character. the European culture has came to us, not only with its knowledge but with its velocity. Then again let us admit that modern science is Europe's great gift to humanity for all time to come".[11]

What Rabindranath objected was the disproportionate space western ideas and world view occupied in the modern Indian mind and hampered the opportunity to create a new combination of truths.

Struck by Europe's vitality, Iqbal came to admire the philosophies of Nietzsche & Bergson. "The western people", he wrote, "are distinguished in the world for their power of action; and for this reason a study of their literature & philosophy is the best guide to an understanding of the significance of life". In his poem 'Khidr Raah', he conveys the following message

"Uth ke ab daure jahan ka aur hi andaaz hai
Mashriq-o-Maghrib mein tere daur ka aghaaz hai"[12]

Wake up now that the way of the world has changed
It is the beginning of a new phase in the east & west.

Thus, these two great poets gave the message of union of minds and bond of love through their work. They were freedom fighters, humanists and advocates of international brotherhood. They championed the cause of justice for the oppressed and the weak of the world.

References :-

1. Rabindranth Tagroe . Selected Poems , 2002 New Delhi : Rupa Co.p.35
2. Khwaja Tariq Mehmood , "Poetry of Allama Iqbal", (New Delhi : Star Publications , 2014).P.13
3. Ibid, P.27
4. Rabindra Tagore , 'Galitanjali'.(New Delhi : Wisdom Tree,2007).P.29
5. Ibid,P-42
6. Khwaja Tariq Mehmood ,Poetry of Allama Iqbal , (New Delhi:Star publications, 2014).P.167
7. Rabindranath Tagroe,'Gitanjali '.P.48
8. Khwaja Tareeq Mehmood ,'Poetry of Allama Iqbal (New Delhi : Star Publications 2014).P.100
9. Rabindranath Tagore . Selected Poem . vol 5 (New Delhi : Rupa Co .2001)P.21
10. Zafar Anjum , 'Iqbal',(Random House Publishers 2014). P.26
11. Letter to Andrews,Undated , April 1921
12. Zafar Anjum,'Iqbal',(Haryana : Random House Publishers) – 2014

Critical Study Of English Literature

Dr. Rashmi Nagwanshi *

Introduction - Criticism means judgment, and the literary critic is regarded primarily as an expert who brings a special faculty and training to bear upon a piece of literary art, examines its merits and defects and pronounces a verdict upon it. Criticism deals with poetry, the drama, the novel even with criticism itself.

Addison undertakes a systematic criticism of Paradise Lost. But he proceeds upon a plan very different from that advocated by Scherer. He does not seek a "right understanding" of Milton's poem in "an analysis of the writer's character and the study of his age." His method is to "examine it by the rules of epic poetry, and see whether it falls short of the Iliad and the AEneid in the beauties which are essential to that kind of poetry." How are we to discover these "rules" of epic poetry? How are we to learn in what "the beauties which are essential" to it actually consist? By the careful study of Homer, Virgil, and Aristotle, by the tests which they furnish our English poet must stand or fall. Now, it must not of course be forgotten that, in this particular instance, a certain justification for the critic's procedure may be found in the fact that Milton avowedly fashioned his work upon the structural principles of the classic epic, and that the canons applied by Addison were such there for as, in the main, he himself would have been willing to accept.

There is thus a vital difference between the trail of Milton by "the rules of epic poetry" and the trial of Shakespeare by the canons of the classic drama. The dogmatic narrowness of the method is none the less apparent in many places; as when the critic finds fault with Milton's "fable" – as Dryden had done before him – because "the event is unhappy," while Aristotle had laid it down as a general rule that an epic poem should end happily; and when he complains of Milton's allegories that they "rather savor of the spirit of Spenser and Ariosto, than of Homer and Virgil." It is therefore the more curious to notice that in one case Addison recognizes in passing the principle of development in literature and the consequent impossibility of taking even Aristotle's dicta as definitive – "in this and some other very few instances," he writes, in concluding his survey of Milton's characters, "Aristotle's rules for epic poetry, which he had drawn from his reflections upon Homer, cannot be supposed to square exactly with the heroic poems which have been made since his time, since it is evident to every impartial judge his rules would still have been more perfect could he have perused the AEneid, Which was made some hundred years after his death." This incidental admission, prompting as it does the further question, would not Aristotle's rules has been even more perfect still could he have perused not only the AEneid but also Paradise Lost, is manifestly fatal to the whole conception of finality in literature, and therefore to the fundamental assumptions on which Addison's criticism rests.

Johnson's criticism is equally instructive. As Macaulay says, he "took it for granted that the kind of poetry which flourished in his own time, which he had been accustomed to hear, praised from his childhood, and which he had himself written with success, was the best kind of poetry." This far as he depended at all upon criteria or precedents for his judgment, it was in this poetry that he sought them. Tacitly, if not expressly, it was to this poetry that he always appealed. The result was that he could see little meaning or merit in any poetry belonging to a different class. He thus failed to rise to the greatness of Shakespeare and Milton, was grossly unjust to Gray, and almost consistently opposed and ridiculed every movement in literature in which as in the ballad revival of the later eighteenth century-he detected any signs of revolt against what was for him the orthodox literary creed.

Issued in it, we shall soon be led to realize that it has at the same time and her claim upon our attention. Arnold's Essays in Criticism, for example may appeal to us, to begin with, only as aids to the fuller approbation of words worth or Byron, of Shelley or Keats. But apart from the help they may given us in the may apart therefore from their subordinate significance as means to an end, they have a substantial value of their own as an expression of the critic himself-of his personality, thought, methods, aims. Even if we should find Arnold's utterances on this or that poet unsatisfying, even if they prove of little or no service to us as means to an end, they will still remain interesting as his utterances; and what is true is regard to Arnold is equally true, of course, in regard in all great critics. This implies that criticism, though it may be conceived primarily as an instrument in the study of literature, is not to be received as an instrument only. It is itself a form of literature, and as such it deserves to be considered for its own sake.

*Asst. Professor, Govt. College, Junnordeo, Distt. - Chhindwara (M.P.) INDIA

In the study of the literature of criticism we shall naturally follow the lines already indicated for the study of literature in general.

References:-

1. William Henry Hudson: An Introduction to the study of English Literature, surjeet publications, Delhi, India, 2008
2. George Sainsbury : Critical study of English Literature Vishvabharti Publication, New Delhi, 2009
3. William Henry Hudson : An Introduction to the study of English Literature Indian Publishing house, Jaipur, 2010

****

Treatment Of Nature In Tennyson's Poems

Twishampati De *

Abstract - In the contemporary era , we have found many poets. Among them, Tennyson stands supreme . He has specially worked for Victorian era. He has surely achieved a prominent place in the history of English poetry .He is a notable poet of Victorian age who also studied Nature with minuteness of detail and accuracy of observation .Although Tennyson handles nature in his poems but he does not acquire the prominence like words worth and Keats as a poet of nature.

Key words - Nature, spiritual significance, natural description, mortality, religion, science, poetry, magnificent landscape, soothing and stormy nature.

Introduction - Tennyson has drawn and coloured Nature pictures with the conscious care of pictorial artist .He believes with Coleridge that we interpret the mood of Nature according to our mood and that nature is happy or otherwise. During the Romantic Nature was regarded as a phenomenon to which one could turn for guidance, spiritual sustenance and psychic restoration .Tennyson's belief often led him to describe and develop a human in terms of Natural Phenomena. For instance, in the "Lotus-eater's" the indolence of the sailors is elaborated with reference to the pausing of streams, the lingering of the sun, the swooning of the languid air etc.

Tennyson , Browning and Arnold lost an all embracing enthusiasm for Nature like the romantic poets .In the most cases the influence of nature was on them wholesome and salutary and symptomatic of spiritual unity of the universe .The Victorians not able to maintain the confidence and optimist possible for the Romantics on the other hand ,as we shall see , science natured a love for Nature in some ways as intense, as anything that one can recognize in previous centuries ,but on the other hand , by stressing the mechanical and chemical aspects of natural process , it took away the magic and left no room for spiritual direction .However, now we can channelize the poems of Tennyson where he takes interest for Nature . "In Memoriam" is one of the most outstanding poem that serves immense evidence of Tennyson's great interest in and love for Nature .In this poem , there is calm and tranquil morning with the faded leaves , silvery gossamers , the crowded farms , ambrosial air , towering sycamore , bats went round in the fragrant skies , the trees laid their dark arms about the field , the grey old orange , the lonely field , the ship walk up the windy world etc. The pictures of nature in this poem give pleasure and sorrow, because the poet shows that moonlight not only falls upon the poets' bed but also on the dead friend's grave in the church. Often the natural objects evoke a mood of sadness rather than joy because they emphasize human mortality. In a famous passage (85), for instance, the classical procession of Nature underlines human sorrow.

The soothing and the stormy aspects of Nature is evident through these lines ——

"Dumb is that tower which spake so loud,
And high in haven the streaming cloud,
And on the downs a rising fire:
And raise, o moon, from yonder down,
Till over down and over dale
All night the shinning vapours sail
And pass the silent –lighted town".("In Memoriam")

At the very outset, in section 2 of "In Memoriam" , Tennyson turns to Nature for consolation by identifying himself with it in one of his greatest passages

"Old yew ,which graspeth at the stones ……
……..
And gazing on thee, sullen tree,
Sick for thy stubborn hardihood
I seen to fail from out my blood
And grow in corporate in thee".

"In Memoriam" is full of magnificent landscapes which is evident through these lines…..

"Calm is the morn without a sound,
Calm as to suit a calmer grief
And only through the faded leaf
The chestnuts pattering to the ground"

In "Lotos Eaters", the landscape and scenery are symbolic of inner feelings of the mariners. There is a description of ample Nature-pictures like lingering Sunset ,the crimson light of the setting sun , the snow of peaks ,

*Research Scholar (English) Dr. C. V.Raman University, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA

the leaf , the apple and the flower grow , ripen and fall silently . Infact, Nature like the inhabitants of this island has eaten of the indolent of Lotos fruit. In "Locksley Hall", the poet addresses the nostalgic feeling by expressing the natural pictures.

Nature plays many roles in Tennyson's poetry. Occasionally, she is beguiling and sensuous, as in the "Lotos Eaters". In that poem, the men sojourning on the isle are entranced by their natural surroundings and do not want to return to their normal lives. Nature is also a reminder of the vitality of life and existence: other times Nature is used as a metaphor for death (see "Break, Break, Break "for life and "Crossing The Bar" for death). Finally, Nature can also be chaotic, hostile, and indifferent to Man. The casual way discards species and wreaks havoc leads the poet to conclude that life might be meaningless.

References :-

1. -Tennyson's In memoriam under wikipedia and Victorian web homepage, section In Memoriam A.H.H.Grief and the Continuation of Life, author Tatiana Kuzmowycz.
<http://en.wikipedia.org/wiki/In_Memoriam_A.H.H. >and <http://www.victorianweb.org/authors/tennyson/im/kuzmowycz12.html >
Home: www.wikipedia.org and www.victorianweb.org 08/02/2007
2. Victorianism under victorianweb homepage, section Victorianism as a Fusion of Neoclassical and Romantic Ideas and Attitudes, author George P. Landow.
<http://www.victorianweb.org/vn/abrams1.html >
Home: www.victorianweb.org 08/02/2007
3. In memoriam text under wikipedia.org home page
<http://en.wikisource.org/wiki/In_Memoriam_A._H._H>
Home: www.wikipedia.org 7/05/2007
4. Tennyson's In memoriam under victorianweb homepage, section An Introduction to In Memoriam, author George P. Landow.
<http://www.victorianweb.org/authors/tennyson/im/intro.html>
Home: www.victorianweb.org 09/02/2007
5. Tennyson In memoriam under Victorianweb homepage, section On Borrowed Time: Cycles of Narrative, Nature, and Memory in the work of Tennyson and Eliot, author Sarah Eron.
<http://www.victorianweb.org/authors/tennyson/im/eron35.html>
Home: www.victorianweb.org 07/05/2007
6. Tennyson under victorianweb homepage, section Nature in Wordsworth and Tennyson, author David Stevenson.
<http://www.victorianweb.org/previctorian/ww/nature4.html>
home: www.victorianweb.org 11/02/2007

Further Readings -

1. T.J. Wise, *A Bibliography of the Writings of Alfred, Lord Tennyson,* 2 volumes (London: Privately printed, 1908).
2. Charles Tennyson and Christine Fall *Alfred Tennyson: An Annotated Bibliography* (Athens: University of Georgia Press, 1967).
3. Nancie Campbell, *Tennyson in Lincoln: A Catalogue of the Collections in the Research Centre,* 2 volumes (Lincoln, U.K.: Tennyson Research Centre, 1971-1973).
4. Hallam Tennyson, *Alfred Lord Tennyson: A Memoir,* 2 volumes (New York & London: Macmillan, 1897).
5. Tennyson, ed., *Tennyson and His Friends* (London: Macmillan, 1911).
6. Charles Tennyson, *Alfred Tennyson* (New York & London: Macmillan, 1949).
7. Andrew Wheatcroft, *The Tennyson Album: A Biography in Original Photographs* (London, Boston & Henley, U.K.: Routledge & Kegan Paul, 1980).
8. Robert Bernard Martin, *Tennyson: The Unquiet Heart* (New York: Oxford University Press/Oxford: Clarendon Press/London: Faber & Faber, 1980).
9. Jerome H. Buckley, *Tennyson: The Growth of a Poet* (Cambridge: Harvard University Press, 1960).
10. A. Dwight Culler, *The Poetry of Tennyson* (New Haven & London: Yale University Press, 1977).
11. John Olin Eidson, *Tennyson in America: His Reputation and Influence from 1827-1858* (Athens: University of Georgia Press, 1943).
12. James R. Kincaid, *Tennyson's Major Poems: The Comic and Ironic Patterns* (New Haven & London: Yale University Press, 1975).
13. W.D. Paden, *Tennyson in Egypt: A Study of the Imagery in His Earlier Work* (Lawrence: University of Kansas Press, 1942).
14. Valerie Pitt, *Tennyson Laureate* (London: Barrie & Rockliff, 1962).
15. Ralph Wilson Rader, *Tennyson's "Maud": the Biographical Genesis* (Berkeley, Los Angeles & London: University of California Press, 1963).
16. Christopher Ricks, *Tennyson* (New York & London: Macmillan, 1972).
17. Edgar F. Shannon, Jr., *Tennyson and the Reviewers: A Study of His Literary Reputation and the Influence of the Critics upon His Poetry, 1827-1851* (Cambridge: Harvard University Press, 1952).
18. Paul Turner, *Tennyson* (Boston & London: Routledge & Kegan Paul, 1976).
19. John Batchelor, *Tennyson: To Strive, To Seek, To Find* (London: Chatto & Windus, Random House, 2012; New York: Pegasus, Norton Group, 2013).

****

समकालीन हिन्दी कविता और वैचारिक चुनौतियां

डॉ. स्वामीराम बंजारे 'सरल' *

प्रस्तावना – भारतीय संस्कृति के सूखते हुए स्त्रोतों को सृजनात्मक स्तर पर बचाए रखने के प्रयासों से दो दशक की चुप्पी के बाद जनवरी 1993 को समकालीन कविता का आरंभ हुआ। कवि कुमार कृष्ण तथा शरत् आदि की कविताओं में समकालीन कविता आंदोलन की शुरूआत मानते हुए डॉ.रविचन्द्र तथा डॉ.हरि शर्मा ने इक्कीसवीं सदी में विकसित होने वाले इस नए काव्यान्दोलन की वकालत की।

समकालीन कविता से परिचित करवाने के लिए आलोचक डॉ.रविचन्द्र का वक्तव्य उदधृत करना अनुचित न होगा। उन्होंने समकालीन हिन्दी कविता को 'भूकविता का जोखिम' शीर्षक के अंतर्गत स्पष्ट किया है– भू– का अर्थ है पृथ्वी, जमीन, धरा, मिट्टी, भूमिखण्ड। अर्थात वह भूखण्ड, वह भूमि, वह मिट्टी, वह धरा, वह पृथ्वी जो 'स्वाधीन' भारत की सरहदों के भीतर है। 'भू' – शब्द का अर्थ मात्र उसकी भौगोलिक उपस्थिति, उसके आकार–प्रकार से नहीं है और न ही 'भू' शब्द का अर्थ पदार्थ मिट्टी के रासायनिक विश्लेषण से है 'भू' एक सक्रिय जीवन्त और संघर्षशील संरचना है। भू का संरचनात्मक ढांचा स्वाधीन भारत की भूमि के भीतर और उसके ऊपर हो रही प्रत्येक हलचल परिवर्तन और क्रियाशीलताओं से निर्मित हुआ है। भारतीय भूमि पर भारतीय लोगों का जीवन कैसा चल रहा है ? भारतीय जीवन में किस प्रकार की हलचलें क्रियाशील है। 'भू' शब्द एकार्थी होता हुआ भी 'अनेकार्थी' है।

सन 1970 तक हिन्दी कविता में अनेक काव्यान्दोलनों का उन्मेष हुआ है। छायावाद, प्रगतिवाद, प्रयोगवाद, नई कविता, अकविता किस्म–किस्म की कविता आदि काव्यान्दोलन विदेशी प्रभावो से उपजे और सातवें दशक के अन्त तक इन काव्यान्दोलनों का पटाक्षेप हो गया। सन् 1970 तक आते–आते कुछ भारतीय कवियों ने कविता संबंधी अपनी अवधारणाएं पुष्ट कर ली थी यह वह काल है जहां पर हिंदी कविता पूर्ववर्ती कविता से भिन्न होती है। भाषा और संवेदना के आधार पर कविता में बुनियादी परिवर्तन के लक्षण और संभावनाएं इस काल में दिखलाई पड़ती है। समकालीन कविता वह है जिसमें भारत की सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, आर्थिक और लोक परिवेश की अनेक जटिलताएं प्रतिबिम्बत हों और जिसमें जीवन के विकास के संकल्प और स्वर विद्यमान हो। कृष्ण कुमार, शरत और इन्द्रबहादुर सिंह आदि के अतिरिक्त बीसवीं सदी के अंतिम दशक के निम्न कवियों ने वर्तमान समकालीन कविता का इतिहास बनाया है। मंगलेश, डबराल, अरूण कमल, नरेन्द्र जैन, परमानन्द, श्रीवास्तव, पकंज सिंह, उदयप्रकाश, राजेश जोशी, विश्वनाथप्रसाद तिवारी, मानबहादुर सिंह, विजेन्द्र, भारत यायावर, लीलाधर जगूडी, कुमार विकल, देवेन्द्र कुमार, सोमदत्त, सुभाष शर्मा, अब्दुल बिस्मिलाह, ज्ञानेन्द्र पति, ऋतुराज आदि कवि छायावदोत्तर काव्य को 'लोक संवेदना' से संपृक्त कर कथ्य और शिल्प की दृष्टि से उसे इक्कीसवीं शताब्दी की परिस्थितियो के अनुकूल आकार देकर विकसित करने के लिए यत्नशील हैं।

सन् 1973–74 में चन्द्रभूषण तिवारी ने आरा से एक 'वाम' नामक पत्रिका निकाली थी। इसके दूसरे अंक में अलोक धन्वा की चर्चित कविता जनता का आदमी प्रकाशित हुई थी। चारों ओर इस कविता की खूब चर्चा हुई थी। इसी के आगे पीछे छपीं विष्णु नागर की मैं फिर कहता हूं' चिड़िया नामक बुकलेट की कविताएं कविता के दृश्य में आ रहे परिवर्तन की सूचना दे रही थी। भारतीय समाज के संरचनात्मक ढांचे और उसके मूल अन्तर्विरोधों की ज्यादा विश्लेश्णात्मक समझदारी इन कविताओं में बिना कोई हो–हल्ला किए प्रकट हो रही थी। जाने पहचाने हाड़–मांस के चरित्र कविता में आ रहे थे। इस कविता में हमारे बोलने बतियाने के ढंग थे। हमारी बोली बानी थी लेकिन पहली बार शायद यह हिंदी कविता का ऐसा दौर था। जिसने न तो अपने से तत्काल पहले की कविता का निषेध किया न अपनी पहले की परम्परा का/ सत्तर के बाद का भारतीय जनतंत्र और सांस्कृतिक परिदृश्य ही आठवें दशक की कविता का मुख्य एजेण्डा था। इस काल की कविता, कविता के बने बनाए खांचों से बाहर आ रही थी। सिर्फ मूल्य के स्तर पर नहीं अपने भाषिक और शैलीगत व्यवहार में भी यह जनतांत्रिक कविता थी।

आपातकाल के दौर में कवि मनमोहन की एक कविता की बहुत चर्चा हुई–

आ राजा का बाजाबजा।
यूँ खलील खाँ फाख्ताएँ नहीं लौटेंगी और बिल्ली आ गई है मुंडेर पर।

मनमोहन एक कठिन समय को कैसे अपनी कविता में आपरेट करते हैं यह देखना बहुत कारगर हो सकता है। मनमोहन की एक कविता है 'विस्मृति' इसकी पहली पंक्ति है

एक दिन उसने पानी को स्पर्श करना चाहा और इसी कविता की अंतिम पंक्ति है पानी की कोई स्मृति अब उसके पास नहीं है। हर चीज का स्पर्श बदल रहा है क्योंकि स्पर्श से ऊपरी अलग हो चुका है। और सिर्फ प्यास रह गई है। यह एक प्रौद्योगिकीय समय का दृश्य है –

जिस तरह प्लास्टिक और पॉलिथीन हमारी नई सभ्यता है
जो अजर अमर हो गई है,
चर्बी हमारी नई कल्चर है
जो इतनी नई भी नहीं है

आप देख सकते हैं यह हमारी आंखों के आस–पास सहज ही जमा हो जाती है।

या गालों पर
या गलपुड़ों में उतर जाती है।

यह प्लास्टिक और पॉलीथीन की नई सभ्यता है, इसमें प्लास्टिक और पॉलीथीन दोनों अजर–अमर है। मनमोहन मुहावरों को सीधे इस्तेमाल नहीं करते, मुहावरा पंक्ति के अन्दर छिपा होता है, थोड़ा ऑका–बॉका होकर और पंक्ति को पढ़ते ही वह हमारी स्मृति में कौंध जाता है। 'चर्बी चढ़ना' ऐसा ही एक मुहावरा है और आंखों में चर्बी चढ़ना' भी। नई सभ्यता और संस्कृति के सन्दर्भ में इन मुहावरों के अर्थ मनमोहन की कविता में और अधिक व्यापक

* विभागाध्यक्ष (हिन्दी) भा. देव शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कांकेर (छ.ग.) भारत

हो जाते हैं। मनमोहन टेढ़े ढंग के राजनीतिक कवि हैं। बहुत साधारण सी दिखती चीजों या घटनाओं के हमारे मन और स्मृति पर पड़ने वाले प्रभाव और हमारे व्यवहार में होने वाले परिवर्तन के बहुत बारीक ब्यौरे उनकी कविता में दर्ज होते हैं। प्लास्टिक की खुशामद जैसी कविता हमारे जैसे बहुत कम में हमारे पूरे व्यवहार का रूपक बन जाती हैं–

स्मृतियां मिट जाएगी
लेकिन प्लास्टिक रहेगा
और वे स्मृतियां जो प्लास्टि की बनी है।

इसी कविता में आगे की पंक्तियाँ है–

यों इस्तेमाल करो और फेंक दोय
यह प्लास्टिक की ही संस्कृति है

लेकिन मनमोहन इसे भी स्पष्ट करने से नहीं चुकते कि यह सिर्फ प्लास्टिक की कुछ चीजों पर ही लागू होती है, पूरे प्लास्टिक पर नहीं।

आठवें दशक के जिस राजनीतिक और सांस्कृतिक दृश्य को मनमोहन ने अपनी कविता का एजेण्डा बनाया, वर्तमान दृश्य उसका सबसे भयावह विस्तार है। यह खुले साँड की तरह दौड़ते मुक्त बाजार का समय है। पॉलीथीन और प्लास्टिक की सभ्यता का समय है। 'यूज एण्ड थ्रो की' संस्कृति का समय है। संस्कृति में यह समय एक धार्मिक विद्रूप की तरह हो रहा है।

कितना महान सांस्कृतिक दृश्य है
हत्याकांड सम्पन्न करने के बाद हत्यारा भीड़ भरे
घाट पर आता है
और संस्कृति में धारावाहिक स्त्रोत बोलता हुआ
रूकी हुई यमुना में रासायनिक जहर में
सौ मन दूध गिराता है।

भारतीय संस्कृति नाम की इस कविता में ही एक पंक्ति है, हमारे विकास ने जो जहर छोड़ा जमीन की तहों में बस गया है।'इस पंक्ति में हमारे समय में विकास की अवधारणा को लेकर हो रही नई बहस की अनुगूंज को सुना जा सकता है।' हिन्दुत्व को ही जिस संस्कृति का पर्याय बनाया जा रहा है। उसके भयावह दृश्य को कार्तिक स्नान कविता में भी देखा जा सकता है।

नब्बे के दशक में विनय दुबे का एक काव्य संग्रह प्रकाशित हुआ जिसका नाम था 'खलल'। विनय के तीसरे दौर की कविताओं में एक खास परिवर्तन आया। जो गुस्सा, चिढ़ या क्षोभ था उसके साथ कभी–कभी उसकी जगह विनय के काव्य–कौतुक, एक खिलंदड़पन एक ह्यूमर के लिए कविता में जगह बनाई है। उनकी कविता का मुख्य एजेण्डा दैनिक जीवन है। एकदम आस–पास का जीवन दृश्य। प्रकृति हो या ब्रह्माण्ड वे सबको अपने दैनिक जीवन के कार्यकलापों में शामिल कर लेते है। विनय दुबे की एक कविता है तब कविता सब कहाँ होगी दिल्ली के बाद –

मेरे लिए वहाँ से शुरू होती है कविता
वहां से जहॉ मुख्य चौराहा है इस शहर का
और चौराहे के बाई तरफ एक दुकान है
पान की दुकान और एक बिजली का खम्भा
पान की दुकान पर सुबह शाम और दोपहर
बजती रहती है विविध भारती की प्रसारण सेवा
मेरे लिए वहाँ से शुरू होती है कविता।
वहाँ से जहां चौराहे के दाई तरह की सड़क
जाती है स्टेशन, भीड़ भरी शहर की मुख्य सड़क
कविता की दूसरी पंक्ति होती है यहाँ और
कविता की तीसरी पंक्ति शुरू होती है
जहाँ शाम के लगभग साढ़े चार बजे
दिल्ली जाने वाली पंजाब मेल
प्लेट फार्म नम्बर एक से निकलती है।

इस तरह विनय दुबे समकालीन समाज के भय,
आतंक और ह्यूमर को एक दूसरे का बगलगीर बनते हुए हमारे समय की भयावहता को मगनीफाई कर देते
हैं। उनकी कविता की कुछ पंक्तियां देखिए –

गोभी को गोभी/कत्ल को कत्ल / और मत कहो अन्याय को अन्याय
या कविता का कविता /
और अगर नहीं रह सकते हो / कहे बगैर / तो भटे को शायद भटा /
पतंग को शायद पतंग / कीड़े को शायद कीड़ा / सच को शायद सच /
और कविता को शायद कविता कहो।
ऐसा करने से / शायद बच सकते हो तुम
लेकिन इतना समझ लो / कि बचने / और शायद बचने में फर्क है।
तुम शायद / नहीं भी बच सकते हो।

विनय दुबे की कविता सजग और अगम्भीर दिखने का स्वांग करती है।

सुदीप बनर्जी की कविता के केन्द्र में नागरी आदमी की विडम्बना है। 'जख्मों के कई नाम' में वे ज्यादा मुखर दिखाई देते हैं। वे आज के समय की पुनरूत्थानवादी, जातिवादी और विशेष रूप से धार्मिक पाखण्डवाद के प्रति आक्रमक हैं। उनमें मनुष्य विरोधी राजनीति, बढ़ते हुए उपभोक्तावाद और धार्मिक कठमुल्लेपन के प्रति तीखा आक्रोश है और बेचैन असहायता का स्वर भी।

यहाँ जख्मों के कई नाम है। लंदन सिर्फ एक नाम है। लेकिन आदमजातों और आदमखोरों के इस जमाने में जहां नदियाँ सूख रही हैं, वही एक बूढ़ी औरत खिड़की के बाहर टोह लेकर हैरान आंखों से बरगद को देखती है और दूसरी और कपड़े–लत्ते की मैली गेंद एक /गिरती है। अयोध्या की क्षत–विक्षत छाती पर।

फिर तो तुम्हारा पूरा दिन है
मास है, साल है, सदियाँ हैं
पूरा इतिहास है रथ यात्राओं के लिए
राम रखता है सबको फिर भी
राम की रखवाली का तुम्हारा दावा
हमें तस्लीम, इसी वक्त मत मांगों
मुचलका हमसे हमारे नेकचलन का
इस वक्त करोड़ों माताएं रोटी बेल रही है
करोड़ो पिता लौट रहे हैं
खेतों, कारखनों, दफ्तरों से रही सही रोशन को
अपने अजीजों के खातिर निसार करने
तुम्हारे लिए पड़ा है पूरा जमाना बस इसी वक्त
थोड़ी सी मोहलत दो खुदा के वास्ते
यह मुद्दआ मत उठाओ
कि राम का मंदिर कहाँ बनना है।

धाार्मिक पाखण्डवाद की आड़ में हिन्दूवादी राजनीति का यह चेहरा अनेक आधुनिकतावादी देख सकने में असमर्थ हैं। सुदीप बनर्जी धार्मिक उन्माद के पीछे छिपी राजनीति को उजागर करने का उन्हें बेनकाब करने का कोई अवसर नहीं छोड़ते।

कविता अपने आसपास देखे–सुने जीवन की चीजों, जगहों और लोगों

को पुनर्आविष्कृत करती है। जीवन को दर्ज करना, केवल घटनाओं को, राजनीतिक, सामाजिक स्थितियों को ही दर्ज करना नहीं है।

अस्सी के दशक में आए युवा कवियों में देवीप्रसाद मिश्र, लीलाधर मंडलोई और ब्रदीनारायण जैसे कुछ ही कवियों की कविता ने अपने प्रचलित अप्रचलित पौराणिक लोक या आदिम मिथकों से नए सम्बन्धों को तलाशने की कोशिश की थी। 90 के दशक की रानजीति ने मिथक के साथ कविता में सहज विकसित हो रहे। इस सम्बन्ध को एक हद तक आहत किया। 90 का दशक भारतीय समाज में वर्चस्व की राजनीति के लिए मिथक और मिथकीय आख्यानों का खतरनाक उपयोग का समय रहा है। बद्रीनारायण की कविता लोक मिथकीय सन्दर्भो और जन इतिहास के अवसर ही अलक्षित या विस्मृत कर दिए जाने वाले पात्रों और उनके जीवन व्यवहार के ब्यौरों से एक महाजाति की दमित सच्चाईयों के छोटे-छोटे आख्यान रचती है। अवदमित और उपेक्षित के प्रति गहरी पक्षधरता उसके पूरे काब्य व्यवहार में विन्यस्त है।

विश्वकर्मा पूजा पर कविता में बद्रीनारायण एक साथ मिथकीय, ऐतिहासिक और समकालीन संदर्भो को एक दूसरे से गूंथकर वर्चस्व की राजनीति के कुचक्र का पाठ तैयार करते हैं- लोहे की गन्ध को जानने वाले सबसे कुशल लौहारों के हाथों से सभ्यता की इस सबसे महत्वपूर्ण खोज पर वर्चस्व की शक्तियों ने कब्जा किया और फिर उसे सत्ता प्राप्ति का हथियार बनाया।

कवि बद्रीनारायण इसे वर्तमान संदर्भो के साथ व्यापक अर्थ देते हुए कहता है-

लोहा जिसकी स्तुति में रचे गए हैं कई श्लोक
उसी से सुदर्शन चक्र बना था जिससे मारा गया था
विंध्य पर्वत में सुदाम
सुना है कि सुदाम सम्पूर्ण आर्यावर्त में
लोहे का सबसे अच्छा कारीगर था
और यह हत्या पूरी सभ्यता में लोहे से की गई
पहली हत्या थी।
इसी से मारा गया था उनका लोहासुर
और यह लोहे से की गई दूसरी हत्या थी
तीसरी बार तो इससे मारे गए थे अनेक
इसीसे बधिकों ने खूबसूरत चिड़ियों और
हुलस्ती हिरणियों को मारा था
इसी से वह तलवार बनी थी, जिससे शम्बूक का सर काटा था।

सत्ता के लिए शासक सर्जक मनुष्य के द्वारा अविष्कृत वस्तु और उसकी कृति को अधिग्रहीत करके उसी अविष्कृत वस्तु से सबसे पहले अविष्कार करने वाले की हत्या करता है। वह प्रकृति पर अधिकार प्राप्त करता है और आख्यानों से सर्जक अन्वेषक और कुशल कारीगारों को बहिष्कृत करने के लिए सुर और असुर का पाठ तैयार करता है। मिथकीय संदर्भो की इस कविता में बद्रीनारायण अचानक वर्तमान इतिहास के कई संदर्भो को समेट लेता है-

इसी से बना था और खंजर जिसे अमीना बी की कोख में
उतार दिया था
इसी से बन्दूक की नली बनी थी
जिससे भोजपुर में मारे गए थे नगीनाराम
और सत्तर के दशक में पूरी गंगा घाटी में हुए नर संहारों में
यह महत्वपूर्ण हथियार साबित हुआ था।
जिसने यहां के जीवन में किया था महत्वपूर्ण परिवर्तन
और आततायियों का राज कायम किया था।

इस उद्धरण में आततायियों द्वारा सत्ता प्राप्त करने के लिए किए गए बर्बर नरसंहारों के ब्यौरे ही नहीं है, इसके अन्तर्पाठ में सवर्ण ओर अवर्ण के विमर्श को भी देखा जा सकता है। यह छोटी सी कविता हमारी सभ्यता का ऐसा आख्यान है, जिसमें शासक द्वारा सर्जक के कौशल को छीने जाने वाले और अपनी सत्ता लिप्सा के लिए अनुकूलित किए जाने के वृत्तान्त को बहुत कम शब्दों में रच दिया गया है। बद्रीनारायण की इन कविताओं में लगातार गहराते अवसाद को पढ़ा जा सकता है लेकिन ये सिर्फ अवसाद की कविताएं नहीं है, इनमें लगातार दु:ख सहते मनुष्य के प्रतिरोध के स्तर को ओर बार-बार इंगित किया गया है।

इसी तरह लीलाधर मंडलोई की कविता में आए अंडमान की जनजातियों का निराकार पुलगा भी एक लोक जनजातीय मिथक है। अंडमान अभी तक हमारे लिए काला पानी ही रहा है। आजादी के इतिहास में उसकी बहुत त्रासद स्मृतियां हैं लीलाधर मंडलोई के पांच खण्डों में विभक्त कविता संग्रह के दो खण्ड धरती की भूरी हंडिया में' और काला पहाड़ अंडमान के जीवन को लेकर ही हैं लेकिन आजादी के इतिहास की कोई शायद स्मृति इन कविताओं में नहीं हे। समकालीन इन कविताओं को इतिहास के निषेध की कलावादी दृष्टि से अचेतन रूप में प्रभावित किया है।

सोचता रहा बस
पहुंचू उन द्वीपों तक
कैद है जहां आदिवासी
अंधकार की भयावह दुनिया में
लिख सकता था कि सुरक्षित रहते
कम से कम कविता में
सेंटलीज, जरावा, शेम्पेन।

इसमें अपनी असमर्थता का गहराबोध है। ज्यादा से ज्यादा जीवन को जानने की इच्छा है। दुर्लभ जनजातियों के कठिन जीवन के चित्र है। जीवन व्यवहार से जुड़े अनेक शब्द है। मंडलोई की सजक दृष्टि संघर्षशील लोगों को पहचानती है, जो भयावह समय में खतरों से लड़ रहे हैं।

कवि केदारनाथ सिंह का यह कथन लाजिमी है कि-'एक भारतीय नागरिक के रूप में मैं जानता हूं कि मेरा समाज, सामन्तवाद के विरूद्ध एक लम्बे संघर्ष के बाद भी अपने मूल्यों और अपने आचरण में सामन्ती अवशेषों से अभी पूरी तरह मुक्त नहीं हो पाया है। उसी अवशेष का एक रूप है, जाति व्यवस्था जो मेरे चारों ओर हैं, मैं चाहूं या न चाहूं, अपने समाज में अपने सारे मानववाद के बावजूद मैं एक जाति-विशेष का सदस्य माना जाता हूं। यह मेरी सामाजिक संरचना की एक ऐसी सीमा है ।जिसमें मेरे रचनाकार की संवदेना बार-बार टकराती है और क्षत-विक्षत होती है। समकालीन हिंदी कविता में ऐसी पंक्तियों का अभाव नहीं है। जो उस दंश को व्यक्त करती है। कवि शमशेर की नीचे लिखी पंक्तियों में मुझे उसी दंश की एक गहरी और तिलमिला देने वाली अभिव्यक्ति मिलती है-

ईश्वर, अगर मैंने अरबी में
प्रार्थना की तो तू मुझसे
नाराज हो जायेगा ?
अल्लाह, यदि मैंने संस्कृत में
संध्या कर ली तो तू
मुझे दोजख में डालेगा ?
लोग तो यही कहते घूम रहे हैं
तू बता ईश्वर
तू ही बता मेरे अल्लाह ?

हम जिस समाज में रहते हैं, धार्मिक आचार–विचार उसकी बनावट का एक मुख्य हिस्सा है। जिस हद तक हमारा संदर्भ हमारे भाव–बोध में रचा बसा है, उस हद तक उस पर धार्मिक स्थिति का दबाव भी जरूर होगा।

समकालीन कविता की चुनौतियाँ – समकालीन कविता के लिए यह कठिन समय है। श्री परमानन्द श्रीवास्तव इसकी कठिनाईयों और चुनौतियों के बारे में लिखते हैं– 'मुझे सबसे पहले प्रसिद्ध जर्मन कवि बेर्टोल्ट ब्रेस्ट याद आए– जिन्होंने बुरे दिनों के बारे में कविता भी लिखी और अक्सर अपने समय के चुनौती भरे रचनाकर्म को इस तरह परिभाषित किया है कि कविता और समय के बीच का तनाव पूरी तरह व्यक्त हो उठे।'

संयोग है कि अभी–अभी प्रकाशित हिन्दी कवि लीलाधर जगूड़ी के संग्रह का एक समूचा खण्ड है—बुरे वक्त की कविता!

और मैं सोचता था कि बहुत सरल शब्द
पर्याप्त होंगे। जब मैं कहूं चीजें कैसी हैं:
सबके दिल चिथड़े–चिथड़े हो उठे हों
जो बुरे हैं तुम्हारे पंजों से डरते हैं
जो भले हैं तुम्हारी सुघड़ता से
खुश होते हैं ।
यही यही मैं सुनना चाहता हूं
अपनी कविता के बारे में।

जहां कविता एक युग या समय को संभालने की कोशिश या बेचैनी का परिणाम है। इधर के काव्य परिदृश्य में शायद एक तरह का सन्नाटा है, रिक्तता भी और सबसे अधिक समय को न समझ पाने का सम्भ्रम या ठहराव भी। दूसरी ओर गहरे मानवीय लगाव के साथ अपने समय की कठिनतम चुनौतियों का सामना करने में सक्षम तथा संवेदनशील कविता भी है भले ही वह परिणाम में अल्प या सीमित हो।

आज के उपभोक्ता प्रधान सामाजिक ढांचे के भीतर पूंजीवाद के चतुर–चुस्त उपकरण नव धनाढ्य वर्ग की पतनशील रूचियों का बहाव है, संचार साधनों या अभिव्यक्ति माध्यमों की भूमिका को प्रभावित और नियंत्रित करने वाला अन्धलोकवाद है। आज के कठिन संघर्ष के के बीच कविता का रूप या आकार ग्रहण करना एक जगह दिखाई देता है। दूसरी जगह वह पूरी तरह बनी बनायी चीज है । एक तैयार माल, वस्तु, जिससे सत्ता या बाजार किसी को असुविधा नहीं है। ऐसी कविता में आने वाला विद्रोह भी एक बिकाऊ चीज हो जाता है। वह छोटी पत्रिकाओं में जगह पाती है, अपने संगठनों, संस्कृति कर्मियों के बीच पढ़ी जाती है और इससे पहले कि वह व्यापक संदर्भ प्राप्त करे, वृहत्तर पाठक समुदाय अर्जित करे प्राय: भुला दी जाती हैं। आज के इस दौर में यह देख पाना कठिन है कि कहां कविता में कवि का आत्म संघर्ष या एक समय का संघर्ष का अभिव्यक्ति पा सकता है और कहां वह महज अभ्यास है। सभी प्रचलित काव्य रूढ़ियों का एक एक साथ निर्वाह– आखिर बाजार में सब चीजों को एक साथ ग्राहक की रूचि के अनुसार उपलब्ध होना ही चाहिए। यह सच है कि कभी–कभी ही वह कविता दिखाई देती है जे तमाम हादसों के बाद उम्मीद–सरीखे आश्चर्य को पूरी पकड़ के साथ बचाए हुए हैं। संवेदना और अनुभव प्रत्यक्ष के स्त्रोत को चीजों और स्थितियों के विश्लेषण के लिए जरूरी स्वतंत्र, तर्क, विवेक और जिज्ञासा को कुण्ठित करने वाली रूढ़ियाँ इस दौर में भी एक नए कवि के लिए संकट बनती है। कवि कल्पना पर दूर तक फैले विज्ञापन–तंत्र का मनोविज्ञान हावी हो जाता है। इस कठिन समय में जरूरत कविता को बचाने की नहीं है, उसमें जरूरी तोड़–फोड़ करके वह नयी ताकत, जीवट या उर्ज्जा भरने की है जो कठिनतर दिनों में कविता के काम आती है।

आज के इस कठिन दौर में नई चुनौतियां है। वैश्वीकरण के इस युग में कविता लिखने की चुनौती है, लिख लिए तो छपने की चुनौती है, छप भी गए तो पाठक की चुनौती है कि कविता पढ़ी व समझी भी जाएगी या नहीं। कविता मूल्यवान बनती है। गहरे जीवन बोध से, समय की ठीक–ठीक समझ से वह भी गहरे संवेदन और एहसास से सिर्फ जानकारी का हिस्सा बनकर नहीं। फिर विचारधारा की चुनौतियाँ। विचारधारा को आत्मसात कर लेने का काम बहुत दूर तक अरूणकमल ने किया– पर चिन्ता उनकी भी है कि आने वाले दिनों में कविता की शक्ल क्या होगी और जाहिर तौर पर विचारधारा के सामने जो नई चुनौतियां एक अधिक बड़ी दुनिया में दिखाई दे रही है वे साहित्य में और साहित्य के बाहर विचारधारा और अभिव्यक्ति के रूपों को पूरी तरह अछूता नहीं छोड़ जाएंगी।

समकालीन कविता की मुख्यधारा का निर्णय समय ही करेगा। कुछ पते कुछ चिट्ठियां संग्रह के आरंभ में रघुवीर सहाय के शब्द है : जिस तरह रचनात्मकता और आजादी एक ही मानवीय आकांक्षा के पर्याय हैं, उसी तरह समता की लड़ाई किसी एक ही मोर्चे पर नहीं लड़ी जा सकती और कविता भी भावबोध या इन्द्रियबोध का विचारधारा के इकहरे रास्तों से चलकर अपने लिए पूरी आजादी न पा सकेगी। 'समकालीन कविता की जिद है– अपने खास समय में सार्थक हस्तक्षेप! जो आसपास घट रहा है। उसके प्रति उत्सुक और सजग। इसलिए जैसी स्थितियां है– उत्तेजित और उद्धिग्न भी। गहरे अर्थ में स्थानीय भी और अपने सहज स्वभाव में लोकोन्मुख भी। कविता वहां दिखती है, जहां अत्यन्त परिचित, अत्यन्त साधारण, अनगढ़, बेड़ौल, अकाव्यात्मक प्रसंग कविता होने के लिए तत्पर या बेचैन है। कठिन समय के हादसों के अनुभव प्रत्यक्ष होने से ही इस समय की महत्वपूर्ण कविता लिखी जा सकती है, यह किसी का महज दुराग्रह हो सकता है। पर जीवन के प्रति पूरी खुली हुई मुक्त सजग कविता में अपने समय के हादसे अनदेखे न रह जाएंगे।

अधिक स्वाधीन पूर्णतर जीवन की मांग जीवन के संदर्भ में भी महत्वपूर्ण है, कविता के संदर्भ में भी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. यू.जी.सी. नेट/स्लेट परीक्षा हिंदी साहित्य, गाईड, दानिका पब्लिसिंग कंपनी दरियागंज नईदिल्ली, पृष्ठ 230–231.
2. समकालीनता और साहित्य – राजेश जोरी राजकमल प्रकाशन, नईदिल्ली संस्करण 2010
3. समकालीन हिन्दी आलोचना – संपादक परमानन्द श्रीवास्तव साहित्य अकादेमी नईदिल्ली
4. हंस – संपादक संजय सहाय– मासिक पत्रिका अंक 2015–2016
5. आजकल – संपादक पुरहत परवीन मासिक पत्र 2015–2016।
6. ज्ञानोदय – मासिक पत्रिका 2015–2016 भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन दिल्ली ।
7. युद्धरत आम आदमी – संपादक रमणिका गुप्ता मासिक पत्रिका 2015–16
8. विचार– वीथी – संपादक सुरेश सर्वेद– साहित्यकला की त्रैमासिकी 2014

****

जीवन यथार्थ के परिप्रेक्ष्य में मुक्तिबोध की कहानियाँ

डॉ. इला द्विवेदी *

प्रस्तावना – मुक्तिबोध का साहित्य जीवन की यथार्थ स्थितियों को उजागर करने वाला साहित्य है। न केवल यथार्थ – अंकन उनके साहित्य का उद्देश्य है, अपितु आत्मालोचन के साथ विश्लेषणात्मक चिंतन कर, सत्य को स्वीकार कराने वाला, समाज की वास्तविक तस्वीर प्रस्तुत करते हुए, सही राह दिखाने वाला साहित्य है। सामान्यत: मुक्तिबोध एक कवि के रूप में ही सुविख्यात हैं, पर यदि देखा जाए तो उनके अन्य साहित्यिक रूप भी कुछ कम महत्वपूर्ण नहीं। यदि उनकी कहानियों का अध्ययन किया जाए तो कविताओं की तरह उनकी कहानियाँ भी समाज की विद्रुपताओं पर प्रहार करने वाली, उनका सूक्ष्म विश्लेषण करने वाली और सत्य का साक्षात्कार कराने वाली कहानियाँ हैं। कलागत जो कौशल उनकी कविताओं में दिखाई देता है यथा– फैन्टेसी, नाटकीयता, उनकी अपनी भाषायी मौलिकता, वही रूप कहानियों में भी उभरकर आता है। उनकी कहानियों में व्यक्ति, समाज और व्यवस्था का ऐसा विद्रूप चेहरा सामने आता है, जो आज के जीवन के यथार्थ से हमारा सीधा सामना कराता है और जो पाठकों को झकझोर के रख देता है उस बिन्दु पर विचार करने के लिए जहाँ से मनुष्यता खतरे में दिखाई देती है।

जीवन के यथार्थ चित्रण के पीछे मुक्तिबोध का उद्देश्य समाज को सुव्यवस्थित करना है। उसे उदात्त बनाना है। उसे स्वस्थ बनाना है तथा उसे संस्कारित करना है। इस सन्दर्भ में मुक्तिबोध की 'प्रतिनिधि कहानियाँ' पुस्तक की संपादिका रोहिणी अग्रवाल द्वारा लिखी गई भूमिका की निम्न पंक्तियाँ अवलोकनीय हैं, जो साहित्य–सर्जना के पीछे छिपी हुई मुक्तिबोध की दृष्टि को उजागर करती हैं। उक्त पुस्तक की भूमिका में वे लिखती हैं – 'मुक्तिबोध यानी वैचारिकता, दार्शनिकता और रोमानी आदर्शवाद के साथ जीवन के जटिल, गूढ़, गहन, संश्लिष्ट रहस्यों की बेतरह उलझी महीन परतों की सतत् जाँच करती हठपूर्ण, अपराजेय, संकल्प–दृढ़ता। ..... उनके लिए साहित्य एक दृष्टि और संस्कार है। जीवन की पड़ताल के बहाने अपनी भीतरी संरचना के कारकों और अन्तर्विरोधों को कई–कई कोणों से निखरने–गुनने का निर्भीक सामर्थ्य देता संस्कार। यानी साक्षात्कार और आत्म परिष्कार की अनिवार्य प्रक्रिया।'[1]

यह सत्य है कि जीवन को उसकी यथार्थता में देखे बिना उसका सही आकलन नहीं किया जा सकता। मुक्तिबोध कविताओं की तरह अपनी कहानियों में भी जटिल संरचना करते हुए जीवन के यथार्थ को उजागर करते हैं। उन्होंनें अनेक कहानियाँ लिखीं हैं, जिनमें से प्रमुख हैं – मैत्री की माँग, अंधेरे में, ब्रह्मराक्षस का शिष्य, समझौता, पक्षी और दीमक, क्लाड ईथरली, जलना, काठ का सपना, सतह से उठता आदमी तथा विपात्र इत्यादि। इनके अतिरिक्त भी अन्य अनेक कहानियाँ उन्होंने रची हैं। उनकी कहानियों की कुछ अपनी मौलिक विशेषताएं हैं। उनकी कहानियाँ कभी–कभी निबन्धात्मक हो जाती हैं, कभी विश्लेषणात्मक, तो कभी–कभी अधूरी सी प्रतीत होती हैं। पर यह सत्य है कि उनका अधूरापन भी कहीं न कहीं पूर्णता से युक्त होता है। मध्यमवर्गीय समाज, व्यवस्था जनित अन्याय और शोषण, मनुष्य के दोहरे व्यक्तित्व, उसके अन्तर के खोखलेपन को पूरी निर्भीकता से मुक्तिबोध व्यक्त करते हैं। आत्मचिंतन कराके उसे दोषमुक्त करते हैं। मुक्तिबोध पर केन्द्रित 'आलोचना' पत्रिका के सहस्त्राब्दी अंक में 'निबन्धात्मक कहानियाँ या कथात्मक निबन्ध' लेख में लेखक संजीव कुमार मुक्तिबोध की कहानियों की विषय और शैलीगत गूढ़ व्याख्या करते हुए लिखते हैं – 'मुक्तिबोध की ज्यादातर कहानियाँ 'भूत का उपचार' की तरह ही इस बात का उदाहरण हैं। उनकी कहानियों में निम्न मध्यमवर्गीय अभावग्रस्त जीवन के दारुण चित्र बहुतायत से हैं, इन चित्रों को व्यवस्था में निहित अन्याय और छल के परिणाम के रूप में प्रस्तुत करने का सचेत प्रयास भी है, लेकिन इसके लिए कहानी घटनाओं की श्रृंखला का सहारा उतना नहीं लेती जितना मानसिक प्रतिक्रियाओं का। व्यवस्था की आलोचना किसी पात्र के आत्मनिष्ठ अवलोकन बिन्दु से प्रस्तुत की जाती है, जहाँ उसके विद्रूप को झेलते व्यक्ति का मन केन्द्र में होता है और आलोचनात्मक यथार्थवाद एक तरह का मनोवैज्ञानिक रचना–विधान हासिल कर लेता है। पता नहीं इसके लिए अन्तर्मुखी यथार्थवाद जैसा कोई पद गढ़ा जा सकता है या नहीं, पर यह सच है कि मुक्तिबोध के यहाँ अन्यायपूर्ण समाजार्थिक व्यवस्था की आलोचना और जटिल मनोवैज्ञानिक चित्रण के बीच कोई फाँक नहीं मिलती। ये परस्पर विरोधी विशेषताएं न रहकर पूरक बन जाती है। 'उपसंहार' कहानी को इसके नमूने के तौर पर पढ़ सकते हैं।'[2]

अस्तु, यथार्थ को चित्रित करने के लिए यदि मनोविज्ञान को आधार बनाया जाए तो इससे सत्य और भी पूर्णता से उजागर होता है, और मुक्तिबोध की कहानियों में यथार्थ का चित्रण इसी आधार पर सर्वाधिक हुआ है।

मुक्तिबोध की एक कहानी है – 'मैत्री की मांग'। इस कहानी की प्रमुख पात्र है 'सुशीला', जिसके अन्तर्मन में कहीं बहुत गहरे छिपी हुई महत्वाकांक्षाओं का सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक विश्लेषण कथाकार ने किया है। सुशीला एक कम उम्र की, निम्न मध्यमवर्गीय परिवार की, सीधी–साधी, संकोचशीला महिला है, जो वर्षों से अभावों के साथ जीवन यापन कर रही है। आर्थिक अभाव बहुत ज्यादा हैं पर उन्हें वह अपनी नियति मान चुकी है। उसकी प्रतिदिन की एक बँधी हुई दिनचर्या है। एक सा जीवन जीते–जीते नीरसता उसके जीवन में पूरी तरह व्याप्त हो चुकी है, पर उसके मन में कहीं दबी–छिपी पढ़ने की लालसा विद्यमान है। वह पढ़े–लिखे, सभ्य समाज की

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, दतिया (म.प्र.) भारत

महत्ता को जानती है, समझती है और उससे बहुत प्रभावित है। यही कारण है कि वह पति रामराव के मित्र माधव राव, जो कि उच्च शिक्षा प्राप्त व्यक्ति हैं, इलाहाबाद जैसे बड़े शहर से आए हैं – से बहुत प्रभावित होती है। उनकी सज्जनता, शिष्टता और अध्ययनशीलता के कारण वह उनके प्रति आकर्षण अनुभव करती है। उसके मन में उनके बारे में जानने की तीव्र इच्छा है, पर सामाजिक मर्यादाओं के चलते वह उसे खुलकर व्यक्त नहीं कर सकती और अपने आप को अपनी ही चाहरदिवारी में समेट लेती है। निम्नांकित पंक्तियाँ सुशीला की इस स्थिति का यथार्थ चित्र उपस्थित करती हैं – 'आज भी छोटे से स्थानीय पुस्तकालय से एकाध पुस्तक घर आ जाती है, किन्तु सुशीला उसको दूर से देख भर लेती है। छू भी नहीं पाती। आले में वह किताब इस तरह धरी रहती है, जैसे मन के कोने में एक मीठा अजाना स्वप्न छिपा रहता है। जिस प्रकार नया रास्ता सालों की आमद रफ्त के बाद घिसकर, उखड़कर, निर्जीव घनी धूल की एकरूपता में परिवर्तित हो जाता है, उसी तरह सुशीला का हृदय–पथ समय के नालदार जूतों और उसकी ठोकरों से घिसघर घनी निर्जीव धूल की एकरूपता में परिवर्तित हो गया है। अब उसके हृदय में कोई आनन्द, कोई मोह, कोई स्वप्न, ऐसा कि जिसको वह अपना कह सके, नहीं रहा। काल तथा परिस्थिति जिधर मोड़ दे, जैसी मोड़ दे, उधर ही वैसे ही मुड़ जाने के लिए सुशीला को अपना मन तैयार न करना पड़ता, वह आप ही आप, बिना कहे, किसी पुर्जे की भांति घूम जाता। फिर भी मन, मन ही है।'[3] सीधे सहज तरीके से, एक सीधी सहज बात को और उसके पीछे छिपे हुए मनोवैज्ञानिक कारणों को मुक्तिबोध जिस कुशलता से सामने रखते हैं, वह उनकी सूक्ष्म अन्वेषी दृष्टि का परिचायक है। उस समय के समाज की स्थितियों का यथार्थ और सूक्ष्म अंकन मुक्तिबोध करते हैं। रचना के पीछे छिपे मूल भाव को वे किस प्रकार सामने लाते हैं – ये निम्नांकित पंक्तियों से स्पष्ट है– 'माधवराव ने साबुन लगाए कपड़ों पर और अधिक पानी बापरने के लिए गिर्री पर रस्सी को रखा और बालटी कुए में छोड़ दी। और वह क्या देखता है, दूसरी ओर सामने भी उसी तरह बालटी लटकती हुई नीचे शीघ्र उतर रही है, और गिर्री के दो खम्बो के बीचोबीच एक नारी मुख उसे देख रहा है। उसे एकाएक लगा जैसे यह परिचय की माँग करने वाली सहज, सरल अनायास दृष्टि है। एक पूर्ण मुख जिसके स्तब्ध चेहरे पर आँखें एक विचित्र गम्भीर आलोक डाल रही हैं।

वह हतबुद्धि सा खड़ा हो गया और फिर जल्दी में बालटी गर–गर–गर नीचे डाल दी। बालटी को ऊपर खींचते समय भी वह मुख दो खम्भों के बीच बार–बार दिख जाता था। परन्तु माधवराव को फिर अन्तिम बार उस स्तब्धपूर्ण मुख (पर) दो नारी आँखें अपनी सहज मैत्री का भाव कह गईं।'[4]

इसी प्रकार 'पक्षी और दीमक' कहानी में व्यवस्था की पोल पट्टी खोलते हुए उसका एकदम यथार्थ चित्र प्रस्तुत किया गया है। आज मनुष्य का इतना पतन हो चुका है कि यह समझते हुए भी कि वह जो कर रहा है, वह सर्वथा अनुचित है – वह वही करना चाहता है। भले ही अन्त में वह स्वयं ही अपना विनाश क्यों न कर लें। मुक्तिबोध की यह कहानी भले ही कई वर्षो पूर्व लिखी गई है, पर वर्तमान की भ्रष्ट व्यवस्था पर सीधे प्रहार करती है, क्योंकि कहानी में वर्णित व्यवस्था से कहीं ज्यादा बिगड़ी हुई स्थितियाँ आज हमारे सामने हैं। यदि यह कहा जाए कि आज यह भ्रष्टाचार चरम पर है, तो अतिश्योक्ति नहीं होगी।

संस्थाओं में कितने भ्रष्ट तरीकों से काम किया जाता है, उसकी वास्तविक छवि को मुक्तिबोध सीधे–सच्चे, पर बहुत पैनेपन के साथ उजागर करते हैं। श्यामला के द्वारा बार–बार प्रश्न किए जाने पर कहानी का नायक अपने मन में तो सच्चाई को स्वीकार करता है, बहुत ग्लानि भी अनुभव करता है, पर प्रकट में सब कुछ सामान्य दिखाने की चेष्टा करता है। वह उस व्यवस्था में अपने को फँसा हुआ पाता है, उसमें से बाहर निकलने की छटपटाहट भी उसमें दिख पड़ती है, पर वास्तविकता यह है कि उसकी विवशतायें उसे उसमें से निकलने नहीं देती। उस व्यवस्था का एक चित्र द्रष्टव्य है – 'किसी खास जाँच के एन मौके पर किसी दूसरे शहर की ..... संस्था से उधार लेकर सूक्ष्मदर्शी यंत्र हाजिर। सब चीजें, मौजूद हैं। आइये; देख जाइए। जी हाँ, ये तो हैं सामने। लेकिन जाँच खत्म होने पर सब गायब; अन्तर्धान। कैसा जादू है। खर्चे का आँकड़ा खूब फुलाकर रखिए। सरकार के पास कागजात् भेज दीजिए। खास मौकों पर ऑफिसों के धुँधले गलियारों और होटलों के कोनों में मुट्ठियाँ गरम कीजिए। सरकारी 'ग्रांट मंजूर। और उसका न जाने कितना हिस्सा, बड़े ही तरीकों से संचालकों की जेब में। जी!'[5]

कविताओं की तरह मुक्तिबोध की कहानियों में भी फैन्टेसी का प्रयोग होता है। फैन्टेसी का प्रयोग यथार्थ को और भी प्रभावशाली रूप में प्रस्तुत करने के लिए होता है। साथ में आत्मालोचन और आत्मविश्लेषण भी होता चलता है। अन्त आशा की एक नयी किरण के साथ होता है। ऐसा लगता है कि यदि इसी तरह से दृष्टिकोण में बदलाव आने लगे तो सकारात्मक परिवर्तन अवश्यंभावी है। 'पक्षी और दीमक' कहानी में कहानी के अन्त में नायक अपनी प्रिया श्यामला को एक कहानी सुनाता है, एक तरह से स्वयं की और व्यवस्था की वास्तविकता उसके सामने रखता है। नीचे इसी कहानी का एक अंश प्रस्तुत है जो कहानी के उद्देश्य को भी रेखांकित करता है –

'भयानक है वह सूरत। सारे अनुपात बिगड़ गए हैं। नाक डेढ़ गज लम्बी और कितनी मोटी हो गई है। चेहरा बेहद लम्बा और सिकुड़ गया है। आंखें खड्डेदार। कान नदारद। भूत– जैसा अप्राकृतिक रूप। मैं अपने चेहरे की उस विद्रूपता को, मुग्ध भाव से, कुतूहल से और आश्चर्य से देख रहा हूँ, एकटक। कि इतने में दो कदम एक ओर हट जाता हूँ, और पाता हूं कि मोटर के उस काले चमकदार आइने में मेरे गाल; ठुड्डी, नाक–कान सब चौड़े हो गये हैं, एकदम चौड़े। लम्बाई लगभग नदारद। मैं देखता ही रहता हूँ, देखता ही रहता हूँ कि इतने में दिल के किसी कौने में कोई अंधियारा गटर एकदम फूट निकलता है। वह गटर है आत्मालोचन, दुख और ग्लानि का।'[6]

इसी प्रकार उनकी एक कहानी है 'उपसंहार'। यह रामलाल नाम के एक गरीब, निम्न मध्यमवर्गीय व्यक्ति की कहानी है। वह बहुत कम वेतन पर किसी अखबार में काम करता है। उसका पारिवारिक जीवन अभावों से घिरा है। वह एक भावुक और सिद्धान्तवादी व्यक्ति प्रतीत होता है। आज के समय में एक भावुक, सिद्धान्तवादी और ईमानदार व्यक्ति की जो स्थिति होती है, वही स्थिति उसकी है। वह उसूलों वाला व्यक्ति है; किसी भी कीमत पर समझौता नहीं कर सकता। इसीलिए दुनिया की दृष्टि में वह एक निकम्मा व्यक्ति है। संघर्ष झेलते–झेलते उसका शरीर रोगों का घर बन चुका है। पत्नी भी स्वस्थ नहीं, क्षीण हो चुकी है। कुल मिलाकर इस परिवार में अभाव और अवसाद बहुत गहरे व्याप्त हैं। इन्हीं से लड़ने की कोशिशें पर कहानी केन्द्रित हैं, पर आश्चर्यजनक तथ्य यह है कि इनमें घटनाए उतनी महत्वपूर्ण नहीं हैं जितना कि कहानी के एक बड़े हिस्से में वर्णित मनोभावों का धरातल।

रामलाल आर्थिक अभाव के चलते किसी से कर्ज माँगने के लिए निकलता है। जाना किसी और रास्ते पर होता है और जाने किसी और रास्ते पर लगता है। यह पात्र की मनोदशा को दर्शाता है। एक जटिल मनोविज्ञान पूरी कहानी में झलकता है और आज के समय के यथार्थ को पूरी सच्चाई से व्याख्यायित करता है। ऐसा लगता है, जैसे मुक्तिबोध विशुद्ध मनोवैज्ञानिक

कथाकार हैं। अभावों से भरी जिन्दगी जीने वाला रामलाल का परिवार किन वेदनाओं से गुजरता होगा इसका अन्दाजा सहज ही लगाया जा सकता है। परिवार की इस स्थिति से वह दुखी है, पर विवश है। मुक्तिबोध इस कहानी में आज के उस यथार्थ का चित्रण करते हैं जिसमें मेहनतकशों को उनके प्राप्य से, उनके वाजिब हक से वंचित रखा जाता है। कहानी ज्यों-ज्यों आगे बढ़ती है, रामलाल जैसों को अपना निरीह शिकार बनाने वाली व्यवस्था के कई ठोस सन्दर्भ कहानी में मिलते जाते हैं।

जब रामलाल किसी से कर्ज माँगने के लिए निकलता है और किसी और रास्ते पर चल पड़ता है तो सहसा पत्नी की दो चुभती हुई आँखे उसे याद आ जाती हैं। मुक्तिबोध उस समय का चित्रण करते हुए लिखते हैं कि -'पीले' कृश, सुघढ़ चेहरे की वे आँखें रामलाल के अन्त:करण में गड़ी जा रही हैं। मानों किन्हीं तेज किरणों की वे लम्बी चमकती हुई आलपीन हों। उनकी वह दृढ़ एकाग्र निरन्तर दृष्टि हृदय को आह्लाद देने वाली न थी। चेतना की गहरी तहों को जबरदस्ती झकझोर, विचारों और वेदनाओं की अराजक स्थिति उत्पन्न कर वे उस तमोलीन गहराई में से एक केन्द्रीय सत्य का उद्घाटन करती थीं, जो रामलाल के लाख प्रयत्नों के बावजूद छिप न सका। उन आँखों की तेज रोशनी के एक पल के भीतर ही रामलाल कई बार जन्मा और कई बार मर गया।'[7]

निष्कर्षत: मुक्तिबोध की कहानियों में जीवन के यथार्थ सत्यों का पूरी सच्चाई के साथ निर्वाह हुआ है। वे समाज की विसंगतियों पर सीधा प्रहार करते हैं। कहानियों में व्याप्त आत्मविश्लेषण की प्रक्रिया एक नई और सही दृष्टि प्रदान करती है। मनोवैज्ञानिक ढंग से पात्रों की मन:स्थितियों का चित्रण कर वे मानवीय मनोभावों को पूरी ईमानदारी से सबके सामने खोलते हैं और व्यवस्था के विद्रूप बिन्दुओं की पड़ताल कर उन पर निर्भीकता से अँगुली रखते हैं। वास्तव में मनुष्यता की पहचान कराना ही उनके साहित्य का लक्ष्य है। सम्पादिका रोहिणी अग्रवाल की निम्नांकित पंक्तियों को पढ़कर उनकी रचना धर्मिता का उद्देश्य स्वत: ही स्पष्ट हो जाता है। अवलोकनीय है वह अंश- 'उनकी कहानियाँ आज की, इक्कीसवीं सदी की युवा-कहानी का विलोम भी रचती हैं, जो मूल्यहीनता और अपसंस्कृति का रोना रोकर अवसरवादिता और समझौतापरस्ती को बेहया ठाठ के साथ जीवन-शैली बनाने की पैरवी कर रही है। पैरों तले अपने वजूद को बनाती मिट्टी की सख्त पकड़ हो, हृदय में संवेदना और आस्था का समन्दर और आँखों में 'मनुष्य' की गरिमा की रक्षा का स्वप्न हो तो कोई भी वक्त/व्यक्ति दुश्मन बनकर हमला नहीं बोल सकता। मुक्तिबोध की जिजीविषा -जड़ी कहानियाँ आत्माभिमान को बनाये रखने वाले आत्मविश्वास और आत्मबल को जिलाये रखने का संदेश देती हैं - भीतर के मनुष्य से साक्षात्कार करने के अनिर्वचनीय सुख से सराबोर करने के उपरान्त।'[8]

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. रोहिणी अग्रवाल (संपादिका), भूमिका, प्रतिनिधि कहानियाँ, पृ.सं. 05
2. संजीव कुमार, आलोचना पत्रिका, मुक्तिबोध पर केन्द्रित, सहस्ताब्दी अंक, पृ.सं. 113
3. मुक्तिबोध, सम्पादिका-रोहिणी अग्रवाल, प्रतिनिधि कहानियाँ, पृ.सं. 13
4. मुक्तिबोध, सम्पादिका-रोहिणी अग्रवाल, प्रतिनिधि कहानियाँ, पृ.सं. 17
5. मुक्तिबोध, सम्पादिका-रोहिणी अग्रवाल, प्रतिनिधि कहानियाँ, पृ.सं. 60-61
6. मुक्तिबोध, सम्पादिका-रोहिणी अग्रवाल, प्रतिनिधि कहानियाँ, पृ.सं. 61
7. मुक्तिबोध, पत्रिका-आलोचना, सहस्त्राब्दी अंक (मुक्तिबोध) लेखक-संजीव कुमार, लेख-निबन्धात्मक कहानियाँ या कथात्मक निबन्ध', जुलाई से सितम्बर, 2015 पृ.सं. 113-114
8. रोहिणी अग्रवाल (भूमिका), प्रतिनिधि कहानियाँ, पृ.सं. 08

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) January to March 2017, Vol. I

हिन्दी के प्रारंभिक उपन्यासों में लोक तत्व - एक अध्ययन

डॉ. आई. बेक * डॉ. दीपक कुमार गुप्ता**

प्रस्तावना – साहित्य का आराध्य लोक होता है और साहित्य की मूल भावना लोकहित होती है। इसीलिए प्रारंभिक उपन्यासकारों ने भी अपनी विधि शैलियों में लोकहित की प्रतिबद्धता को कहीं विस्मृत नहीं किया। सामाजिक सरोकार और लोक व्यवहार तथा लोक जीवन की अनुभूतियाँ उपन्यासकार के साथ निरंतर जुड़ी रही और यही प्रतिबद्धता प्रारंभिक दौर के उपन्यासों में लोक व्यवहार के सूक्ष्म विवेचन के लिए उत्तरदायी कही जा सकती है। इस प्रकार प्रारंभिक उपन्यास अपनी प्रस्तुती संप्रेषणीयता, संवाद और संदेश की दृष्टि से व्यक्ति निजता और उसके हास्य विनोद चिंतन और चिंताओं से सीधे सरोकार रखते हैं। हिन्दी के प्रमुख प्रारंभिक उपन्यासों में इस दृष्टि का संक्षेप में विवरण इस प्रकार प्रस्तुत किया जा रहा है –

परीक्षा गुरू – परीक्षा गुरू हिन्दी का पहला उपन्यास माना गया है, इसका अर्थ–हिन्दी उपन्यास का प्रारंभ सामाजिक यथार्थ से हुआ। जिसमें मनुष्य की मनोवृत्तियों को लोक व्यवहार अर्थात यथार्थ से सम्पृक्त किया गया है। समाज में होने वाली घटनाओं को सरल और उपदेशात्मक शैली में व्यक्त किया गया है कोई भी उपन्यास या रचना तब तक बड़ी नहीं हो सकती जब तक उसमें लोक तत्व का जीवन्त अहसास न हों।

'परीक्षा गुरू' उपन्यास अपने किस्म का प्रथम उपन्यास है जो उपदेश परक शैली में आगे बढ़ता है। इसके हर नए अध्याय अथवा भाव को प्रकरण का नाम दिया गया है, इसमें 41 प्रकरण हैं। जिन में संज्ञा और क्रिया के बीच नाम किया गया है। इसमें संज्ञा में मानवीय मनोवृत्ति भाववाचक संज्ञा में तथा लोक व्यवहार को क्रियाओं की कोटि में रखा गया है, तथा अन्य प्रकरण है जहाँ उपदेश और यथार्थ चित्रण की एक उपन्यास आगे बढ़ता है। इसमें घटनाएँ और पात्र आपस में बुने हुए प्रतीत होते हैं। इस उपन्यास में अपने काल के भारतीय जीवन में आने वाली विकृतियों उससे उत्पन्न समस्याओं का चित्रण है, तथा अन्त में समाधान बताया गया है। इस उपन्यास का कथा संक्षेप इस प्रकार है कि लाला मदन मोहन एक बहुत धनवान व्यक्ति है, जिनके ठाट बाट प्रदर्शन फिजूल खर्जी एवं उदारता की चर्चा है वह अपने इर्द–गिर्द चाटुकारों, अवसर वादियों की लम्बी लाइन बनाकर चलते हैं। उनके पास कुछ रईस एवं विदेशी मित्र भी हैं। वह अपनी विलासिता फिजूल खर्ची के कारण लोगों के आकर्षण का केन्द्र बने हैं। लाला ब्रज किशोर उनके मित्र हैं, जबकि चुन्नीलाल नौकर है जो बहुत ही लम्पट तथा झूठा है। हर किशोर, हर नारायण, हकीम जी, हर किशन, पं.पुरूषोत्तम दास, हर गोविन्द जी में भी लालच लोभ एवं धोखेबाजी जैसे पूरे दुर्गुण हैं। इन पात्रों में परन्तु कोई भी व्यक्ति स्पष्ट नहीं बोलता है।

उपन्यास में मानवीय गुणों का समावेश किया गया है।

भूल करना मनुष्य का स्वभाव है, उसको क्षमा करना ईश्वर का गुण है यदि मनुष्य के मन में क्षमा और दया का लेश न हो तो मनुष्य और पशु में 'क्या अंतर है?

हुमाय बरसरे मुर्गा, अजां शरफ दारद।
कि अस्तुरब्बां खुरदों तायरे नया जारद।।

पूरा उपन्यास संवाद शैली में चलता है, जो अवसरानुकूल चलता रहता है। इस पूरे उपन्यास में लाला मदन मोहन को कोर्ट से वसूली डिक्री में गिरफ्तार होने पर उपन्यास में उपलब्ध एक मात्र अनाम नायिका जो मदन मोहन की पत्नी है, उसका उत्सर्ग सराहनीय है। वह रो रोकर अपने सभी आभूषण बेचकर उन्हें छुड़ाने का प्रयास करती है तथा वह उसी के घन बल पर लाला मदन मोहन मुक्त होते हैं यह समर्पण का अन्यतम उदाहरण है। तथा उनके मित्र जीवन की यथार्थता को समझाते हुए कहते हैं कि जो बात सौ बार समझाने में समझ में नहीं आती वह एक बार की परीक्षा में भली–भाँति मन में बैठ जाती है और इसी वास्ते लोग परीक्षा को गुरू मानते है और अन्त में लाला ब्रज किशोर अपने मित्र के सामने अकेले हैं तथा कैद मुक्त होने पर बधाई देते हैं तथा आनंद का माहौल पैदा होता है तथा जो सच्चा है, वह प्राप्त होता है। उसमें ब्रज किशोर की बुद्धिमानी के कारण जीवन का ज्ञान परीक्षा गुरू में मिला जो एक अन्यतम उपलब्धि और नई दृष्टि है।

चंद्रप्रभा – भारतीय जीवन में कथा साहित्य का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। किंतु भारतेंदु काल में जिस उपन्यास–साहित्य का उद्भव हुआ वह कुछ कुछ प्राचीन कथाओं के समीप होते हुए भी उनसे भिन्न है। उपन्यास साहित्य जिस रूप में वह आज हैं वह पश्चिमी साहित्य की देन है। जिस समय अनेक पौराणिक कथाएं, विचित्रता, चमत्कार से कहानियाँ जनता का मन बहला रही थी, उस समय भारतेंदु हरीशचंद्र ने ऐतिहासिक पौराणिक और सामाजिक उन्यासों की ओर ध्यान दिया। उन्होंने स्वयं अनुवाद किए और दूसरों को इस ओर उत्साहित किया। उनके अनुरोध से राधाचरण गोस्वामी, गदाधर सिंह, रामशंकर व्यास तथा राधाकृष्ण दास ने 'दीप निर्वाण', 'सरोजिनी', 'कादम्बीर', 'दुर्गेशनन्दिनी', 'मधुमति', 'स्वर्णलता', 'राधारानी' आदि अनेक उपन्यासों की रचना या उनके अनुसार किए। स्वयं भारतेंदु जी ने कई उपन्यासों का अनुवाद करना चाहा था कि अपना कार्य अपूर्ण ही छोड गए। उन्होंने 'चंद्रप्रभा' और पूर्ण प्रकाश' का अनुवाद करा कर स्वयं को शुद्ध किया था यह उपन्यास मराठी से अनुवादित है और इन उपन्यासों में वृद्ध विवाह का अत्यंत मनोरंजक ढंग से विरोध किया जाता हैं। भारतेंदु के बाद उपन्यास क्षेत्र में किशोरीलाल गोस्वामी का नाम उल्लेखनीय है। उनके त्रिवेणी' स्वर्गय कुसुम', हृदय हारिणी', 'लवंगलता' आदि उपन्यासो में राष्ट्र प्रेम का

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय नेहरू स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बुढार, जिला - शहडोल (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय नेहरू स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बुढार, जिला - शहडोल (म.प्र.) भारत

प्रचार और प्रचलित सामाजिक कुरीतियों और कुप्रथाओं का मूलोच्छेदन किया गया है। तदनन्तर देवी प्रसाद शर्मा, कार्तिक प्रसाद खत्री, गोपाल राम गहमरी, गोकुलनाथ तथा राधाकृष्णदास ने उपन्यास साहित्य की समृद्धि की। इन्होंने अपने उपन्यासों में ऐतिहासिक घटनाओं पर आधारित घटनाओं का चित्रण कर शौर्य, प्रेम, चरित्र की उच्चता और कार्य व्यापार की कुशलता का परिचय कराया है।

चंद्रप्रभा उपन्यास तात्कालिक परिस्थितियों में भारतेन्दु द्धारा अनुदित स्वरूप में प्रस्तुत करना एक ऐतिहासिक घटना थी। जब सृजन अपने प्रारंभिक दौर में था, उस समय अनुवाद करना एक साहसिक कार्य की भांति था, जिसे पूरी दृढता के साथ भारतेंदु जी ने साहित्यकार की भांति पूरा किया। यह उपन्यास सामाजिक जड़ता के विरूद्ध लिखा गया उपन्यास था। उस समय समाज में व्याप्त रूढियों और परंपराओं के खिलाफ आवाज की भांति माना गया। चंद्रप्रभा में बेमेल विवाह की ओर संकेत किया गया है जिसमें यह दर्शाया गया है कि पुरूष प्रधान समाज में उनकी मन:स्थिति को दरकिनार करते हुए एकाधिकार की भावना के साथ अपने निर्णय स्त्रियों पर थोप दिए जाते है। रोगी बीमार, वृद्ध व्यक्ति के साथ किसी तरूणी का विवाह अत्यंत पीड़ादायक और शर्मनाक स्थिति है। पुरूष को बहु विवाह की आजादी तो समाज ने दी थी परंतु स्त्री का विधवा होना भी जैसे उसी की करनी का फल हो, वास्तविकता यह है कि वृद्ध जर-जर व्यक्ति सामान्य रूप से अपनी उस तरूण पत्नी के सम्मुख ही परलोक वासी हो जाता और समाज की जड़ताएं उस निरीह स्त्री को ही अभागन की संज्ञा दे देती है। जबकि भारतेंदु ने इस उपन्यास में कदम कदम पर रोज हो रहे गृह कलह, आपसी विवाद, पारिवारिक संकेतों को रोचक ढंग से प्रस्तुत किया है। इसमें कई सर्वथा अनछुए सवालों को भी चित्रित किया गया है।

सर कटी लाश – यह दौर गद्य विधा का शैशव काल था, भाषा पूर्ण परिनिष्ठित नहीं थी। हिंदी भाषा में पूर्वी बोली, ब्रज, अवधी के साथ यत्र तत्र उर्दू, अरबी के शब्द दिखाई देते हैं। भाषा में यह प्रभाव स्वाभाविक प्रक्रिया है क्योंकि कई वर्षों तक देश में मुगलों की सल्तनत रही। जिसकी वजह से साहित्य में ऐसे कई शब्द की सहज अभिव्यक्ति दिखाई देती है। इस दौर का गद्य साहित्य बेतरतीब और अस्त व्यस्त था। इस युग के अधिकतर उपन्यासों में तिलिस्म, संशय, भ्रम और सनसनी के साथ कथा का विस्तार आगे बढता है। लाला श्री निवासदास के प्रारंभिक उपन्यास 'परीखा गुरू' में संवाद शैली का स्वरूप मिलता है किंतु कथा विस्तार सनसनी के साथ न होकर सरलता के साथ आगे बढता हैं 'सरकटी लाश' उपन्यास अपने नाम के अनुरूप प्रथम दृष्टि में ही एक संशय भ्रम और भय पैदा करता है। वास्तव में इसके लेखक गोपाल राम गहमरी ने तात्कालिक परिस्थितियों में प्रचलित परंपराओं से अपने को अलग नहीं कर सके। उन्होंने उपन्यास रचना में सभी तत्वों को समुचित रूप से समेटा है। परंतु घटना क्रम को बहुत चमत्कारी ढंग से प्रस्तुत किया है। जिसमें पाठक की उत्सुकता कम नहीं होती और पाठक घटना को क्रमिरूप से परत दर परत जानने के लिए निरंतर उत्सुक बना रहता है। यह उपन्यास की विशेषता है कि तथ्य को किस ढंग से प्रस्तुत किया जाए कि पाठक अपने को उससे निरंतर जुडे रहने के लिए विवश बना रहे। रचना विधान में सम्प्रेषणीयता बहुत महत्वपूर्ण है, जिसके कारण पाठक रचना का मुक्त हृदय से लुफ्त उठा पाता है और हर सृजन का यही उद्देश्य है कि पाठक अधिकाधिक आनंदित हो और उसके गहन तत्वों से अपने को जोड़ सके। पाठक का यह जुडाव रचना की उपादेयता और महत्ता को भी प्रतिपादित करता है। 'सरकटी लाश' उपन्यास अपने नाम के अनुरूप उपन्यास जगत् की उत्तम कृतियों में मानी जाती है।

नूतन ब्रम्हाचारी – शिक्षा प्रधान और उपदेशात्मक ढंग के उपन्यास लिखने वालो में बालकृष्ण भट्ट का नाम उल्लेखनीय है। यों तो बालकृष्ण भट्ट निबंधकार थे और एक निबंधकार के रूप में उनका स्थान अपने युग के लेखकों में महत्वपूर्ण योगदान रहा है। बालकृष्ण भट्ट जी ने अपनी बुद्धिमता का परिचय देते हुए दो महत्वपूर्ण उपन्यास लिखे हैं। (1) नूतन ब्रम्हाचारी (2) सौ अजान एक सुजान। 'नूतन ब्रम्हाचारी' के निवेदन में सूचना दी गयी है कि यह उपन्यास सन् 1886 की 'हिंदी प्रदीप' की जिल्दों के कुछ अंकों में 4 या 5 अध्याय निकला फिर पुस्तकाकार में छपकर उस समय के ग्राहकों या पाठकों को उपहार स्वरूप बांट दिया गया था। इस उपन्यास की कथा यह है कि बिट्ठलराव औ रउसकी पत्नी दोनों ही धर्म परायण प्राणी थी। उनकी रिश्तेदारी वहां के ठाकुर के यहाँ थी और उन दोनों परिवार के मध्य अच्छे संबंध स्थापित हो गए थे और वहाँ से बहुधा निमंत्रण आते रहते थे। इसी कड़ी में एक दिन दोनों ठाकुर के निमंत्रण पर वहाँ जाने लगे तो अपने पुत्र विनायकराव को घर पर अकेले छोड़ गए। जाते समय उन्होने विनायकराव को अनेक प्रकार के उपदेश देते हुए यह कहा गया कि यदि केाई अतिथि आए तो तुम उसका उचित आदर सत्कार करना। अवसर देखकर वहां तीन डाकू आए। बालक विनायकराव ने अपने माता पिता के वचनों का परिपालन करते हुए उनका उचित प्रकार से स्वागत किया। वे बालक विनायक राव के भोले व्यवहार से प्रभावित होकर बिना लूट पाट किए वापस चले गए। जब विनायक राव के माता-पिता लौटकर आए तो उन्होंने यह सब जाना। इस घटना के 15 वर्ष पश्चात वे तीनों डाकुओं के मध्य लड़ाई हो गयी और इस लडाई में दो डाकुओं ने अपने नायक को घायल कर वहीं छोडकर चले गए। उसी समय वहाँ विनायकराव पहुँच कर उसे संभालने लगते हैं परंतु विनायक राव उसे बचा नहीं पाते हैं और उस खूंखार डाकू की मृत्यु हो गयी। वे तीनो डाकू ठाकुर साहब के यहाँ डाका डालने के उद्देश्य से जा रहे थे। इस प्रकार विनायक राव के कारण ही उन सबकी रक्षा हो सकी। 'परीक्षा गुरू' उपन्यास की भांति इस उपन्यास के प्रत्येक परिच्छेद किसी नीति कथन से आरंभ होता है। उदाहरण के रूप में प्रथम तथा पंचम अध्याय में वर्णित नीति वचन इस प्रकार है-

1. होनहार बिखान के होत चीकने पात।
2. सरला बिरलायन्ते फलायन्ते कलिद्रुमा:
   न शम, न च पुन्नागे हयस्मिन् संसार कानने।

अत: स्पष्ट है कि बालकृष्ण भट्ट द्धारा लिखित 'नूतन ब्रम्हाचारी' उपन्यास शिक्षा प्रधान एवं उपदेशात्मक होते हुए भी इस उपन्यायस में लोक तत्व एवं लोक व्यवहार के स्वरूप परिलक्षित होते हैं। यथा उपन्यास के प्रमुख पात्र बिट्ठलराव व उसकी धर्मपत्नी दोनों आदर सत्कार, सुख दुख में असहाय की मदद करना, बिनायक राव के भोले पन व्यवहार एवं घायल खूंखार डाकू का इलाज करना आदि लोक तत्व निहित है। जो कि हिन्दी के प्रथम उपन्यास 'परीक्षा गुरू' के कथा के समान ही नीति वचन से परिपूर्ण प्रतीत होता है।

सौ अजान एवं सुजान – हिंदी उपन्यास का प्रारंभिक दौर सृजन का ऐसा समय था, जब उपन्यासकार अपने समय के सभी सामाजिक सरोकारों से जुड़ने का उपक्रम कर रहे थे। उपन्यास मनोरंजक, तिलस्मी, सनसनीखेज होने के साथ प्रेरक शिक्षाप्रद भी बनाने का उद्देश्य भी होता था। कई उपन्यास अपने अपने संदर्भों के साथ बहुत महत्वपूर्ण रहे हैं। 'सौ अजान एक सुजान' पं.बालकृष्ण शर्मा कृत उपन्यास में समाज की कई विकृतियों और बिडंबनाओं

को रेखांकित करते हुए कहा है कि समाज में हर समय मनुष्य की महत्ता उसके कार्य और उपादेयता के आधार पर तय की है। ज्ञानवान व्यक्ति हर परिस्थितियों में अपने को ढाल लेने में दक्ष होता है तथा वह विपरीत परिस्थितियों में अपना धैर्य नहीं छोड़ता, जीवन के हर पग में ज्ञान जरूरी हैं ऐसा कोई भी जीवन पक्ष नहीं है, जहां अज्ञान का कोई अर्थ हो। समाज में बहुत बड़ी भीड़ बिकलांगों जैसी होती है और उन्हें किसी के सहारे की जरूरत होती है, परंतु एक जानकार व्यक्ति पूरे समाज का पथ प्रदर्शक बन सकता है। 'सौ अजान एक सुजान' उपन्यास अपने पूरे कलेवर में जीवन मूल्यों के संदेश के साथ आगे बढता है। समाज में सभी लोगों से अपेक्षा होती है कि वह ज्ञानवान बने। अपने समय में पं.बालकृष्ण शर्मा ने ज्ञान को मनुष्य का सर्वश्रेष्ठ गुण बताया और गुणवान व्यक्ति की सर्वत्र महत्ता निरूपित की जहां तक सौ अजान एक सुजान का प्रश्न है। यह अपने ढंग का अनूठा उपन्यास है। जिसमें बहुत ही सरल अंदाज में बात को आगे बढ़ाया गया हैं यह उपन्यास एक प्रेरक ग्रंथ की भाँति पाठकों को दिशा दिखाएगा, खुद उपन्यासकार पं.बालकृष्ण शर्मा ने स्वयं लिखा है कि हमारे उपन्यास का मुख्य उद्देश्य है जिसे मैं अपने पाठकों को बताना चाहता हूँ। उन्होंने कहा– अंत में हम अपने पढ़ने वालों को सूचित करते हैं कि आप लोगों में यदि कोई अबोध और अज्ञान हो तो इस उपन्यास को पढ़कर सुजान बने, इस किस्से के अजानों को सुजान करने के लिए उपन्यास की प्रमुख नायिका चंद्रा है और सभी पाठकों के लिए हमारा यह उपन्यास है।

अंत में यह कहना उचित होगा कि यह उपन्यास नीति परख एवं उपदेशात्मक होते हुए भी भारतीय संस्कृति की जीवनशैली, आचार विचार, लोक जीवन में प्रचलित परंतपरायें रीति रिवाज आदि स्वरूप दृष्टि गोचर होते हैं।

ठेठ हिंदी का ठाठ – पंडित आयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरि औध' ने भाषा को नमूने की दृष्ठि से 'देवबाला' या 'ठेठ हिंदी का ठाठ' तथा 'अधखिला' फूल नामक दो उपन्यासों की रचना की। उद्देश्य की विशिष्टता के कारण इनमें औपन्यासिक कलात्मक तत्वों की अपेक्षा इन उपन्यासों में भाषा चमत्कार ही अधिक मिलता है। पंडित आयोध्या सिंह उपाध्याय हरिऔंध द्वारा लिखित 'ठेठ हिंदी का ठाठ' सन् 1899 ई.में प्रकाशित हुआ था। यह उपन्यास ठेठ हिंदी में लिखित हिंदी का दूसरा ग्रंथ है। इस उपन्यास का नाम 'देव बाला' या 'ठेठ हिंदी का ठाठ' हैं अर्थात ठेठ हिंदी भाषा में लिखी गयी एक मन को लुभाने वाली कहानी। इस उपन्यास की कथा संक्षेप में इस प्रकार है कि –

उपन्यास की प्रमुख नायिका देवबाला बचपन से ही देवनंदन के साथ खेलती कूदती रहती थी उसकी मां हेमलता भी उन दोनों के पारस्परिक आकर्षण को समझती थी और देवनंदन से ही उसका विवाह करना चाहती थी। पंरतु पति रमाकांत इस विवाह का विरोधी था। अपनी पत्नी के बार बार अनुरोध करने के बाबजूद उसने देवबाला का विवाह रमानाथ नामक व्यक्ति के साथ कर दिया गया। विवाह के कुछ समय के बाद ही देवबाला के सास तथा ससुर की मृत्यु हो गयी और रमानाथ घर छोड़कर भाग गया। इस प्रकार देवबाला पर विपत्ति का पहाड़ टूट पड़ा। वह बड़े कष्ट से एक एक दिन काटने लगी। अंत में उसका इकलौता पुत्र भी बीमार पड़ जाता है और वह विलाप करने लगती है। इसी बीच उसका बचपन का साथी देवनंदन का आगमन होता है। उसने उसे पहचान लिया और उसे धैर्य पूर्वक समझाते हुए उसके पति को वापस लाने का आश्वासन दिया। अंत में बडी कठिनाइयों के बाद जब वह रमानाथ को वापस लेकर आया, तो उन दोनों के सामने ही उपन्यास की प्रमुख नायिका देवबाला की मृत्यु हो गयी। और देवनंदन तथा रमानाथ दोनों साधु हो गए। इस उपन्यास में भी 'परीक्षा गुरू' उन्यास की भाँति प्रकरण के प्रारंभ में कुछ पंक्तियाँ मिलती है– जैसे 'पहले ठाठ' के आरंभ में यह पंक्ति उल्लेखित है–

ललकि ललकि लोचनन तेहि, लखि–लखि होहु निहाल।
लाली इत उत की लहत, लहे जीवन जहि लाल।।

अत: स्पष्ट है कि पंडित आयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' द्वारा रचित इस उपन्यास में भारतीय समाज में निहित लोक परंपराए, आचार–विचार, सहयोग, सौहाद्र, प्रेम प्रसंग, बाल विवाह, बेमेल विवाह, सुख–दु:ख, सहानुभूति, दया, करूणा आदि लोक तत्व एवं लोक जीवन में प्रचलित रीति रिवाज एवं लोक परंतपराएँ दृष्टि गोचर होती है। जो परिस्थिति के अनुरूप उपन्यास के तत्वों एवं कथा को विस्तारित करने में सहायक सिद्ध हुई है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. हिन्दी उपन्यास उद्भव और विकास डॉ.प्रताप नारायण टण्डन – कल्पकार प्रकाशन लखनऊ।
2. परीक्षा गुरू – प्रामाणिकता – लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद।
3. हिन्दी साहित्य का इतिहास – आचार्य रामचंद्र शुक्ल।
4. हिन्दी साहित्य का इतिहास – संपादक डॉ नगेन्द्र।

****

जीवनीपरक उपन्यासों की विकास-यात्रा

डॉ. माधुरी उपाध्याय *

प्रस्तावना – प्रेमचन्दजी ने भावी उपन्यासों के संबंध में भविष्यवाणी करते हुए कहा था–[1]'यों कहना चाहिए कि भावी उपन्यास जीवन-चरित होगा, चाहे किसी बड़े आदमी का या छोटे आदमी का। उसकी छुटाई बड़ाई का फैसला उन कठिनाइयों से किया जाएगा कि जिन पर उसने विजय पायी हैं। हाँ, वह चरित्र इस ढंग से लिखा जाएगा कि उपन्यास मालूम हो। अभी हम झूठ को सच बनाकर दिखाना चाहते है, भविष्य में सच को झूठ बनाकर दिखलाना होगा। किसी किसान का चरित्र हो, या किसी देशभक्त का, या किसी बड़े आदमी का, पर उसका आधार यथार्थ पर होगा। तब यह काम उससे कठिन होगा जितना अब है, क्योंकि ऐसे बहुत कम लोग है, जिन्हें बहुत से मनुष्यों को भीतर से जानने का गौरव प्राप्त हो।'[1]

हिन्दी में उपन्यास लेखन की शुरूआत के साथ जीवनीपरक उपन्यास लेखन की शुरूआत हुई हैं।

जीवनीपरक उपन्यास किसी एक पात्र विशेष के जीवन पर आधारित होता हैं। उस पात्र के जीवन को उपन्यास के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। वह व्यक्ति ही मुख्य होता हैं। उस व्यक्ति के व्यक्तित्व का उपन्यास में पूर्ण रूप से चित्रण किया जाता हैं। साथ ही यह प्रदर्शित किया जाता है कि जीवन की विपरीत परिस्थितयों में भी संघर्ष करते हुए, समाज को अच्छा संदेश कैसे प्रदान करता है ?

भारतवर्ष में अतीत से लेकर अब तक कई महापुरूष हुए है। जिन्होंने भारत को एक नई दिशा प्रदान की है। भारत की कई सामाजिक राजनीतिक, सांस्कृतिक, राष्ट्रीय समस्याओं को दूर करने के लिए भारतीय जनता में एक नई सोच पैदा की है। इन महापुरूषों के विचार सार्वभौमिक व सार्वकालिक है। उनके विचारों से हम आज भी प्रेरणा प्राप्त कर रहे है और करते रहेगे। इन महापुरूषों का जीवन जीवन-शैली, उनके जीवन संघर्ष हमारे लिए प्रेरणा का स्त्रोत बने रहेगें। तुलसीदास, सूरदास महावीर स्वामी, भारतेन्दु हरिश्चन्द्र जैसे महापुरूषों की जीवनियों को औपन्यासिक रूप में विद्धान लेखकों द्धारा प्रस्तुत किया जाता है तो वह और भी अनुपम और अनूठी बन जाती है तथा हमारे लिये चिंतन मनन व अनुसरण के नये द्धार खोलती है।

इन उपन्यासों मे राजनीति, विज्ञान, कला, धर्म, साहित्य, समाजसेवा, इतिहास, उद्योग-जगत किसी भी क्षेत्र के प्रसिद्ध व्यक्ति के जीवन को आधार बनाकर उपन्यास की रचना की जाती है। वह व्यक्ति एक सामान्य मनुष्य से, कैसे विशिष्ट मनुष्य या महान बना, इसका चित्रण होता है। जीवनीपरक उपन्यास के द्धारा हम अपने अतीत की ओर देख पाते है कि कैसे व्यक्ति संघर्ष करते हुए, विकास की और बढ़ा।

सुप्रसिद्ध आलोचक डॉ.इन्द्रनाथ मदान के शब्दों में 'नायक या नायिका की जीवनी का सहारा लेकर उसे उपन्यास की विद्या में डालना। 'जीवनीपरक उपन्यास हैं।

जीवनीपरक उपन्यास की विभिन्नता इसी में है कि वह वास्तविक जीवन से 'वास्तविक पात्र' ही चुनता है। यह पात्र किसी न किसी कारण से इतिहास में प्रसिद्ध होता है।

'जीवनीमूलक उपन्यास को एक वाक्य में समझना हो तो हम कहेगें कि उपन्यास की सुन्दर पच्चीकारी किए फ्रेम में जड़ी जीती-जागती तस्वीर (जीवनी) का नाम है, जीवनीमूलक उपन्यास। जीवनीमूलक उपन्यास के लिए जीवनी कच्चा माल है, जो उपन्यास की निर्माण -प्रक्रिया से गुजर कर सर्वग्राही रूप प्राप्त करती है। जीवनीमूलक उपन्यास का विषय पक्ष जीवनी का आभारी हैं तथा शिल्प-पक्ष उपन्यास का ऋणी हैं। इसके मुख्य पात्र का स्त्रोत भी जीवनी हैं।'[2]

इन उपन्यासों के नायक इतिहास के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है। इन उपन्यासों के मुख्य पात्र के आसपास का वातावरण, परिस्थितियाँ जीवन के उतार-चढ़ाव, संघर्ष सभी बहुत महत्वपूर्ण होते है क्योंकि ये सभी मिलकर उसके व्यक्तित्व का निर्माण करते है।

उपन्यास के अन्य प्रकारो की भांति ही जीवनीपरक उपन्यास भी उपन्यास का विशिष्ट प्रकार ही हैं। जीवनीपरक उपन्यास में भी वे तत्व, प्रभावशील है। जो उपन्यास में होते है। इन उपन्यासों के नायक इतिहास के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है। इन उपन्यासों के मुख्य पात्र के आसपास का वातावरण, परिस्थितयाँ, जीवन के उतार -चढ़ाव, संघर्ष सभी बहुत महत्वपूर्ण होते है क्योंकि ये सभी मिलकर उसके व्यक्तित्व का निर्माण करते है।

हिन्दी उपन्यासों की शुरूआत के साथ ही जीवनीपरक उपन्यासों का प्रारम्भ हो चुका था। सर्वप्रथम गंगा प्रसाद गुप्त व किशोरीलाल गोस्वामी के उपन्यासों में जीवनीपरकता के दर्शन होते है। हिन्दी के सभी जीवनीपरक उपन्यासों का उद्देश्य सामान्य रूप से किसी कथा नायक या नायिका के जीवन का चित्रण करना ही हैं।

जीवनीपरक उपन्यासों का विकास-क्रम – जीवनीपरक उपन्यास के विकास क्रम को तीन काल खण्डों में विभाजित किया गया है। इस विभाजन का आधार उपन्यास की प्रवृत्तियाँ व विशिष्टता हैं।

'जब भी देश में सामाजिक अथवा राजनीतिक उथल-पुथल होती है, लेखकों का ध्यान देश के गौरवशाली अतीत की और जाता है, जिसमें जनता को सांत्वना देने, जागृति पैदा करने, साहस दिलाने तथा अपने अस्तित्व व अस्मिता की रक्षा में सतत् प्रयत्नशील रहने की प्रेरणा देने के अनेक साधन होते हैं। इन साधनो में उन ऐतिहासिक व्यक्तियों का योगदान सर्वाधिक रहता है, जो जीवन में कभी हार नहीं मानते न केवल अपने लिए वरन् अपने

* 4/71, नर्मदा एप्रोच रोड़, मण्डलेश्वर, जिला-खरगोन (म.प्र.) भारत

समय की परिस्थितियों को बदलने के लिए वे आम जनता का सहयोग प्राप्त कर लेते हैं। उपन्यासकार अपने काल के उथल-पुथल पूर्ण वातावरण में जब अपनी बात इन शक्तिशाली व्यक्तियों द्वारा कहता है, तो जीवनीमूलक उपन्यास का जन्म होता हैं।'[3]

1. **विकास का प्रथम चरण** - इस काल के जीवनीपरक उपन्यासों पर चरित्र चित्रण पर जोर दिया गया। इस काल में इतिहास की घटनाओं, रहस्य, रोमांच के बजाय ऐसे पात्रों का चित्रण किया गया जो प्रामाणिक व विश्वसनीय थे। साथ ही इतिहास में प्रसिद्ध व्यक्तियों को आधार बनाकर, रचनाकार मनोविज्ञान की और अधिक झुके, जिससे कि ये रचनाएँ ऐतिहासिक उपन्यासों से हटकर स्वतंत्र स्वरूप ग्रहण करने लगी। इस काल में इतिहास से ऐसे चरित्रों या पात्रों या व्यक्तियों को लाया गया, जिन्हें इतिहास भूल गया था। इसका परिणाम यह रहा कि बहुत सारी ऐतिहासिक सामग्री की जानकारी मिली। जीवनीपरक उपन्यास के यह पात्र पाठको को अपने समीप लगे। जो उन्हीं की भाँति जीवन में संघर्षरत रहकर सफल या असफल हुए। इस काल से जीवनीपरक उपन्यास एक सम्पूर्ण आकार ग्रहण करने लगा। प्रारंभिक जीवनीपरक उपन्यासों में किशोरीलाल गोस्वामी के 'सुल्तान रजिया बेगम वा रंगमहल में हलाहल' (1915) 'कनक कुसुम वा मस्तानी' (1903) तथा गंगाप्रसाद गुप्त के 'हम्मीर'(1904), नूरजहाँ(1902), तथा ब्रजनन्दन सहाय के 'लालचीन' (1916) आदि उपन्यासों की रचना की गई।

इस काल में किशोरीलाल गोस्वामी, गंगाप्रसाद गुप्त, ब्रजनंदन सहाय, मिश्र बंधु, सत्यकेतु विद्यालंकर, उमाशंकर, रघुवीरशरण मिश्र, बाल्मीकि त्रिपाठी आदि उपन्यासकार हैं।

किशोरीलाल गोस्वामी का ''कनक कुसुम वा मस्तानी' उपन्यास मराठा वीर बाजीराव पेशवा प्रथम तथा हैदराबाद के निजाम की भोग्या की पुत्री मस्तानी की कथा को आधार बना कर लिखा गया हैं।

गंगाप्रसाद गुप्त का 'नूरजहाँ' उपन्यास मुगल शंहशाह जहाँगीर तथा नूरजहाँ की प्रेम-कथा पर आधारित हैं।

2. **विकास का द्वितीय चरण** - जीवनीपरक उपन्यास के विकास क्रम के द्वितीय चरण में चरित्र चित्रण के विभिन्न आयाम दिखाई देते हैं।

इस काल के जीवनीपरक उपन्यासों में मुख्य पात्र इतिहास से ही नहीं बल्कि साहित्य व समाज के दूसरे क्षेत्रों से भी लिए, जाने लगे। इस प्रकार जीवनीपरक उपन्यासों का क्षेत्रों अधिक विस्तृत हुआ।

इन जीवनीपरक उपन्यासों के पात्र जनता की इच्छाओं व आकांक्षाओं के परिचायक के साथ ही जनता के प्रेरणा स्त्रोत के रूप में उभरकर सामने आते हैं। इन पात्रों की इतिहास के निर्माण में तो एक विशेष भूमिका समाज में रही है किन्तु वर्तमान में भी ये पात्र जनता के प्रेरक के रूप में प्रस्तुत होते हैं। इस प्रकार अतीत व वर्तमान में भी संबंध स्थापित हो पाया क्योंकि यह भी जीवनीपरक उपन्यासों का मूल उद्देश्य हैं।

इस काल के उपन्यासों की प्रमुख विशेषता यही थी कि समाज के सभी क्षेत्रों से पात्रों का अवतरण होने लगा जिससे कि पाठकों को अपने जीवन के समान ही घटनाओं का अनुभव हुआ और पात्र प्रेरणा स्त्रोत के रूप में ग्रहण किए जाने लगे । इस काल के उपन्यासों में कल्पना का अभाव होकर यथार्थ को ज्यादा प्रस्तुत किया गया। जीवनीपरक उपन्यासों में मुख्य या केन्द्रीय पात्र का चित्रण पूर्ण रूप से तथ्यों के साथ प्रस्तुत किया गया। इस काल के जीवनीपरक उपन्यासों में मुख्य पात्र अधिक प्रमाणिक, अधिक प्रभावशाली होने के साथ-साथ ही मानवीय मूल्यो पर विशेष बल दिया गया है।

इस काल में मुख्य रूप से रांगेय राघव के उपन्यासों का योगदान हैं।

'रांगेय राघव ने 'रत्ना की बात' उपन्यास तुलसीदासजी के जीवन पर (1954), 'लोई का ताना' कबीरदासजी के जीवन पर (1954), 'यशोधरा जीत गई' गौतम बुद्ध के जीवन पर (1954), 'भारती का सपूत' भारतेन्दु हरिचन्द्र के जीवन पर (1954), 'देवकी का बेटा' कृष्ण के जीवन पर (1954), 'लखिमा की आँखे, 'मेरी भव बाधा हरौ' आदि जीवनीपरक उपन्यासों की रचना की हैं।'[4]

इसके अतिरिक्त अमर बहादुर सिंह अमरेश का 'राणा बेनीमाधव', सुदर्षन मजीठिया का 'जसकोट का चित्रकार' आदि जीवनीपरक उपन्यास हैं। 'राणा बेनीमाधव' उपन्यास स्वतंत्रता संग्राम के योद्धा और अवध की जनता के नायक राणा बेनी माधव के जीवन पर आधारित हैं।

3. **विकास का तृतीय चरण** - विकास के तृतीय चरण में जीवनीपरक उपन्यास के बहुआयामी स्वरूप के दर्शन होते हैं। इस काल के उपन्यासों की विशेषता है, केन्दीय पात्र की अत्यधिक प्रामाणिकता। इसमें लेखक को कल्पना का बहुत कम प्रयोग करने को मिला हैं। चरित्र-चित्रण में अन्य पात्रों का उपयोग अथवा सीमित कल्पना मुख्य पात्र के चरित्र को उभारने व तत्कालीन वातावरण के निर्माण में किया गया हैं।

'प्रस्तुत उपन्यास में मेरा ध्येय आदि से अंत तक बेगम हजरत महल का चरित्र अंकित करने को रहा है, इसलिए वाजिद अली शाह अथवा किसी अन्य पात्र का चरित्र उतना ही उभारा गया है, जितना उसका बेगम हजरत महल से सम्बन्ध पाया या समझा गया हैं।'[5]

इस तरह इस काल के सभी केन्द्रीय पात्रों को प्रमुखता से चित्रित किया गया हैं।

इस काल के जीवनीपरक उपन्यासों में अतीत के चित्रण के द्वारा वर्तमान की समस्याओं का विवेचन व समाधान की ओर प्रेरित किया गया हैं। इन उपन्यासों के अधिकतर पात्र ऐसे है, जिनको जनता का नेतृत्व करने का अवसर मिला हैं। इन्होंने अपने समय की ही नहीं वर्तमान काल की जनता की इच्छाओं और आशाओं को भी आवाज दी हैं। इसके साथ ही उपन्यास में मनोविज्ञान का विशेष तौर पर ध्यान रखा गया है। उपन्यासकारों ने अपने स्वयं की खोज व तर्क द्वारा पाठकों के सामने अपनी बात रखी हैं। जिससे कि पाठक स्वयं भी पढ़ कर चिंतन कर सके तथा स्वयं की भागीदार सुनिश्चित कर सके।

इस काल में भाषा का विशेष ध्यान रखा गया है, भाषा का प्रयोग पात्र व पाठक दोनों के अनुसार किया गया हैं। इस प्रकार की भाषा का प्रयोग किया गया है कि वह पात्रों के काल के अनुसार भी हो साथ ही इतनी क्लिष्ट न हो कि आज के पाठक उसको समझ न सकें।

इस काल के प्रमुख जीवनीपरक उपन्यासकारों में इकबाल बहादुर देवसरे, अमृतलाल नागर, वृन्दावनलाल वर्मा, वीरेन्द्र कुमार जैन आदि हैं।

इस काल के प्रमुख जीवनीपरक उपन्यास व उपन्यासकार हैं -

वृन्दावनलाल वर्मा के 'महारानी दुर्गावती'(1963) व 'रामगढ़ की रानी' (1966) जीवनीपरक उपन्यास, अमृतलाल नागर के 'मानस का हंस' (1972), खंजन नयन' (1981) जीवनीपरक उपन्यास हैं। 'मानस का हंस' तुलसीदास के जीवन पर तथा 'खंजन नयन' सूरदास के जीवन पर आधारित हैं।

इकबाल बहादुर देवसरे के 'बेगम हजरत महल' (सन् 1973), 'नवाब वे मुल्क', 'ओरछा की नर्तकी', मनु शर्मा का द्रौपदी की आत्मकथा' (सन्

1976), वीरेन्द्र कुमार जैन का 'अनुत्तर योगी' (सन् 1974), महेन्द्र कुमार मुकुल का 'तानसेन, (सन् 1984) आदि इस काल के प्रसिद्ध जीवनीपरक उपन्यास हैं।

जीवनीपरक उपन्यासों की विकास यात्रा के तृतीय चरण के पश्चात् तो उपन्यासों की उत्कृष्ट रचनाएँ की जा रही है जिनमें उपन्यासें की बहुआयामी बहुवर्णी झलकियाँ दिखाई देती हैं। नरेन्द्र कोहली का 'तोडो कारा तोड़ो' उपन्यास स्वामी विवेकानन्द पर (सन्2002), गिरिराज किशोर का 'पहला गिरमिटिया' उपन्यास महात्मा गाँधी पर, (सन् 2011) योगी अरविन्द उपन्यास श्री अरविन्द पर (सन् 2006) आदि प्रसिद्ध जीवनीपरक उपन्यास हैं। यह काल जीवनीपरक उपन्यासों का श्रेष्ठ काल हैं। इसमें सभी दृष्टियों से श्रेष्ठ जीवनीपरक उपन्यासों की रचना की गई हैं। इस काल में उपन्यासों का उद्देश्य मनोरंजन के साथ ही समाज में आदर्श की स्थापना व वर्तमान समस्याओं का समाधान भी प्रस्तुत करना हैं।

निष्कर्ष – इस प्रकार जीवनीपरक उपन्यासकारों ने विभिन्न क्षेत्रों के प्रसिद्ध व्यक्तियों के जीवन को केन्द्र में रखकर जीवनीपरक उपन्यास की रचना की हैं। उपन्यासकारों ने पुरूष पात्र व स्त्री पात्र दोनों को केन्द्र में रखकर जीवनीपरक उपन्यासों की रचना की। इन उपन्यासों की रचना के द्वारा, पात्र के चरित्र–चित्रण के द्वारा, समाज को प्रेरणा देना व आदर्श स्थापित करना तथा वर्तमान समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करना मुख्य उद्देश्य रहा हैं।

सूर, कबीर, तुलसी, अहिल्याबाई, गाँधीजी विवेकानन्द आदि पर लिखे जीवनीपरक उपन्यास इस बात के परिचायक हैं।

रांगेय राघव, अमृतलाल नागर, वृन्दावनलाल वर्मा, नरेन्द्र कोहली, गिरिराज किशोर आदि ने इस विधा में सशक्त एवं प्रभावी लेखनी चलाई हैं।

'जीवनीपरक उपन्यासों का भविष्य उज्जवल हैं। जीवनीपरक उपन्यास का क्षितिज बहुत व्यापक हैं। इसकी सीमाएँ इतिहास, राजनीति, कला आदि जीवन के सभी क्षेत्रो में फैली हैं। इस विधा को देशकाल, धर्म, जाति, सम्प्रदाय कोई बंधन नहीं बाँध सकता हैं। जब इसके सभी संभावित क्षेत्रों पर रचना की जाने लगेगी तो जीवन को सही अर्थो में प्रस्तुत करने वाली उत्कृष्ट विधा जीवनीपरक उपन्यास की होगी, क्योंकि जीवनीपरक उपन्यास में तथ्य, सत्य और कल्पना तीनों का समावेश होता हैं।'[6]

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. हिन्दी का गद्य साहित्य – डॉ. रामचन्द्र तिवारी – पृ. क्र. 164
2. हिन्दी के जीवनीपरक उपन्यास – एक अध्ययन – डॉ. संगीता सहजवानी – पृ.क्र. 13
3. हिन्दी के जीवनीपरक उपन्यास एक अध्ययन – डॉ. संगीता सहजवानी – पृ. 109
4. हिन्दी उपन्यास का विकास – मधुरेश – पृ. क्र. 128
5. हिन्दी के जीवनपरक उपन्यास – एक अध्ययन – डॉ. संगीता सहजवानी – पृ.क्र. 111
6. हिन्दी के जीवनीपरक उपन्यास – एक अध्ययन – डॉ. संगीता सहजवानी – पृ. क्र. 136
7. डॉ. संगीता सहजवानी, हिन्दी के जीवनीपरक उपन्यास – अमन प्रकाशन एक अध्ययन संस्करण 2009
8. मधुरेश, हिन्दी उपन्यास का विकास – सुमित प्रकाशन संस्करण– 2008
9. डॉ. रामचन्द्र तिवारी, हिन्दी का गद्य साहित्य – विश्वविद्यालय प्रकाशन, संस्करण 2007
10. राजेन्द्र मोहन भटनागर, योगी अरविन्द – राजपाल एड सन्ज संस्करण 2006
11. नरेन्द्र कोहली, तोड़ो कारा तोड़ो – किताबघर प्रकाशन संस्करण 2002
12. गिरिराज किशोर, पहला गिरमिटिया, राजपाल एण्ड सन्जसंस्करण 2011

****

मूल्य व्यवस्था के निर्माण में 'गोदान' की भूमिका

डॉ. सनकादिक लाल मिश्र *

प्रस्तावना – किसी भी जीवित समाज में निरंतर बने रहने की शक्ति और परिवर्तन की शक्ति दोनों ही अनिवार्य है। किसी सभ्य समाज में प्रगति और परिवर्तन ही उसकी गतिविधि का महत्वपूर्ण अंग होते है। भारतीय समाज को यदि हम जीवित बने रहने की शक्ति प्रदान करना चाहते हैं, तो हमें उसकी संरचना में बुद्धिसंगत परिवर्तन करने ही होंगे। भारतीय संस्कृति प्राचीन संस्कृति है, यह तो हमारे लिए गौरव की बात है, पंरतु उसकी विशिष्टता इसी में है, कि वह युगानुरूप अन्य विशिष्ट गणों को भी समाविष्ट कर लेती है तथा ज्ञान के अपने नए प्रकाश से न केवल भारतीय समाज को अपितु संपूर्ण विश्व को चहुँमुखी विकास के लिए प्रेरित करती है।

अव्यवस्थित समाज में व्यवस्था बनाए रखने के लिए नियमों की आवश्यकता पड़ती है और जब नियम व्यवस्थित रूप धारण करते चले जाते हैं, तो वे मूल्य बन जाते हैं। चूँकि साहित्य का वास्तविक जीवन से विच्छिन्न संबंध होता है। अत: साहित्य जीवन मूल्यों का निर्माण करता है या कह सकते है कि मूल्यों की अभिव्यक्ति ही साहित्य है। जीवन की विडंबनाओं और जीवन के अंदर जो एक नाटक है, उसका उद्घाटन करना साहित्य का कार्य है। और जो साहित्य मूल्यों पर आधारित न हो वह साहित्य नहीं है। आज जब मूल्यों का निरंतर विघटन हो रहा है, साहित्यकार का दायित्व और भी बढ़ जाता है। उसे अपनी रचना के माध्यम से संपूर्ण समाज को प्रस्तुत करना है, समाज में होने वाले परिवर्तन को चित्रित करना है।

इतिहास और साहित्य में कभी – कभी ऐसी प्रतिभाएँ जन्म लेती है, जो अपने युग को नई दिशा की ओर मोड़कर विकास की ओर ले जाती है। प्रेमचंद भी इसी परम्परा के जाज्वल्यमान नक्षत्र है, जिन्होंने हिन्दी कथा – साहित्य के क्षेत्र में ऐसी क्रांति की जिसने कथ्य और शिल्प दोनों में आमूलचूल परिवर्तन उपस्थित करते हुए लेखन की एक सर्वथा मौलिक किन्तु सशक्त धारा को उत्पन्न किया । प्रेमचंद से पूर्व के अधिकांश हिन्दी साहित्य के संस्कार, आलंबन और उपकरण सामंती उच्चवर्ग की सीमाओं से धिरे हुए हैं। काव्य का आलंबन चाहे योद्धा हो या विलासी, ईश्वर हो या दवेत, धार्मिक हो या भक्त सबका जीवन व्यापार, आदर्श और मर्यादाएँ सामंती उच्चवर्ग के विभिन्न स्तरों से ग्रस्त है। साहित्य की प्रवृत्ति और भावधारा कहीं आदर्शवादी ओर कहीं रोमांटिक थी। प्रेमचंद के पूर्ववर्ती हिंदी उपन्यासों में चाहे वे तिलस्मी हो या जासूसी, सामंती प्रेमकथा के हों या सुधारवाद, नायक और प्रधान चरित्र राजा या ताल्लुकेदार खानदान का ही है और उनका जीवन – चित्रण बड़ा यांत्रिक रूढ़िवादी और रीतिवादी ही है।

इस प्रकार प्रेमचंद ने अपने पूर्व के और समसामयिक साहित्य प्रवाह में अपर्याप्तता, जीवन का असांपर्क्य और रूढ़ि के शिला खंडों को देखा था। उनके दृष्टिकोण का आधार जनता का सतत प्रवाही जीवनदर्शन था, जिसमें अंसतोष की आग, रूढ़ियों और भाव – रूढ़ियों की घुटन जातीय परंपराओं के प्रति आस्था और बदलते हुए समय के नवनूतन के प्रति कौतूहलपूर्ण जिज्ञासा होती है। प्रेमचंद ने साहित्य का आधार ही जीवना माना है। आधारहीन कल्पनाविलास से वे दूर ही रहे। वे असल में 'जनता का साहित्य' उस नए अर्थ में लिखना चाहते थे। जिसकी चर्चा कवि आलोचय मुक्तिबोध ने की है – 'जनता के साहित्य से अर्थ है, ऐसा साहित्य जो जनता के जीवन – मूल्यों को जनता के जीवनादर्शी की स्थापित करता हो, उसे अपने मुक्तिपथ पर अग्रसर करता हो।' समाज की पुरानी मान्यताओं और पिछड़ी परंपराओं में परिवर्तन लाने में प्रेमचंद का योगदान देश के नेताओं से किसी तरह कम नहीं है। 'वे निश्चय ही विचारों और संस्कारों से भारतीय आदर्शो के पोषक थे, परन्तु एक यथार्थवादी कलाकार की हैसियत से समाज में व्याप्त पुराने नए मूल्यों के संघर्षो, पुराने जर्जर मूल्यों के विघटन और नए भौतिकवादी मूल्यों की उत्तरोत्तर प्रतिष्ठा को ऑखों से ओझल नहीं कर सकते थे। 'साहित्य के क्षेत्र में वे साहित्य के साथ – साथ समाज के भी सृष्टा कहे जा सकते है । प्रेमचंद का साहित्य बीसवीं सदी के हिंदुस्तान का सच्चा इतिहास है। उस समय का राष्ट्रीय आंदोलन विदेशी हुकूमत से राजनीतिक स्वाधीनता प्राप्त करने का आंदोलन है। इस आंदोलन में जो भी व्यक्ति विदेशी हुकूमत से लोहा लेने को तैयार था, वह राष्ट्रीय आंदोलन का एक अंग बन जाता था। फिर यह नहीं देखा जाता था कि वह किस वर्ग का है, शोषित है या शोषक । प्रेमचंद को यह कमी खटकी और उन्होंने अपनी रचनाओं में राष्ट्रीय आंदोलन की झॉकियों के साथ–साथ महजनी सभ्यता और वर्गभेद जन्य शोषण के भी यथार्थ चित्र खींचे हैं।

प्रेमचंद का 'गोदान' हिंदी साहित्य में एक युग – प्रवर्त्तक रचना है। यह बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्ध काल में अपने युग का अग्रदूत ही नहीं, नये युग का सूत्रधार भी है। यह वह समय था जिसकी परिवर्तित मानसिकता की ओर संवेदनशील लेखकों ओर बुद्धिजीवियों का ध्यान समसन रूप से आकर्षित हुआ । गोदान साहित्य के सामंती संस्कारों, रीति – रूढ़ियों जैसे मूल्यों के प्रति साहित्यिक विद्रोह का प्रतीक है । इसमें लेखक ने पहली बार उस नए आयाम को स्पर्श किया है, जो मात्र आर्थिक या नैतिक नहीं है – एक गहरे अवचेतन स्तर पर सांस्कृतिक है, आदिम विश्वासों का आयाम है। प्रस्तुत उपन्यास में प्रेमचंद ने दो संस्कृतियों का भेद बहुत साफ–साफ प्रकट किया है। एक तरफ जमींदार रामसाहब, मिल मालिक खन्ना, मालती और मेहता की दुनिया है – दूसरी तरफ होरी, धनिया, गोबर, सोना, हीरा वगैरह की दुनिया है। एक के बिना दूसरी का अस्तित्व संभव नहीं हैं , इसलिए प्रेमचंद इन दोनों संसारों के चित्र खींचते हैं। बहुत से किसान पात्रों को उभारकर रखने के बदले होरी पर ध्यान केन्द्रित किया है। 'वह उन तमाम गरीब किसानों की विशेषताएँ

* सहायक प्राध्यापक, शासकीय शहीद केदार नाथ स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मऊगंज, जिला–रीवा (म.प्र.) भारत

लिए हुए है जो जमींदारों और महाजनों की धीमे–धीमें बिना रूके हुए चलते वाली चक्की में पिसा करते है।'

प्रेमचंद ने गोदान में किसानों के शोषण के दूसरे रूप को प्रकट किया है। यहॉ सीधे–सीधे रायसाहब के कारिंदे होरी का घर लूटने नहीं पहुँचने, लेकिन उसका घर लुट जाता है। यहॉ अंग्रेजी राज के कचहरी कानून सीधे–सीधे उसकी जमीन छीनने नहीं पहुँचते लेकिन जमीन छिन जाती है। वह चुपचाप सारे अन्यायों और कष्टों को सहता रहता है, किन्तु अपने कर्म से नहीं हटता। इस सतत विश्रामहीन परिश्रम के यज्ञ में वह अपने जीवन की आहूति चढ़ा देता है। लू लगने से पहले जब एक मजदूर कहता है – 'तुम भी तो बहुत दुर्बल हो गए हो दाता', तो होरी हॅस कर कहता है – 'तो क्या मोटे होने के दिन हैं। मोटे वह होते हैं, जिन्हें न रिन की सोच होती है, न इज्जत की। इस जमाने में मोटा होना केहयाई है। सौ को दुबला करके तब एक मोटा होता है ऐसे मोटेपन में क्या सुख। सुख तो जब है कि सभी मोटे होंगे। 'ये शब्द होरी के जीवन – अनुभव का निचोड़ है, उसके मन के किसी कोने में नाचने वाले घुँघले स्वज की एक झॉकी है, मानों यह सारे उपन्यास में प्रकट यथार्थ में अंतनिर्हित 'होना चाहिए' की युग मॉग की पुकार हों। होरी का चरित्र भारत के अजेय किसान का चरित्र है। प्रेमचंद गोदान में आगे बढ़ रहे थे। उन किसानों का आह्वान करते हुए, जो अब तक पिछड़े थे। होरी को चरित्र की कमजोरी का रायसाहब फायदा उठाते हैं। वे होरी को समझाते है कि जमींदारों में केवल वह मात्र नेक आदमी हैं। चारो तरफ दुश्मनों से धिरे हुए हैं। उनकी परेशानियों की कोई सीमा नहीं है। होरी के घर आने पर धनिया पूछती है कि मालिक से क्या बातचीत हुई तो होरी जवाब देता है – 'हम लोग समझते है, बड़े आदमी बहुत सुखी होंगे, लेकिन सच पूछो तो वह हमसे भी ज्यादा दुखी है। हमें तो पेट की ही चिंता हैं, उन्हें हजारों चिंताएँ घेरे रहती है।' होरी के मुकाबले में गॉव के महाजन ऐसे कसुपित और नीच लगते है जैसे जोंक। इनमें मनुष्यत्व के प्रकाश का जैसे लोप हो गया है। वे केवल बूँद–बूँद करके होरी जैसे मेहनतियों का खून पीना जानते है।

रायसाहब का एक आलोचक है – प्रोफेसर मेहता। वह उन बुद्धिजीवियों में से है जो जनता से प्रेम करते हैं, उनके शोषकों से धृणा करते है लेकिन जिनकी सहानुभूति और धृणा ने अभी सक्रिय रूप नहीं लिया हैं। वह रायसाहब के मानववाद का पर्दाफाश करते हैं। गोबर और मेहता दो पात्रों से रायसाहब के बारे में एक ही निष्कर्ष निकलवा कर कि वह धूर्त है, प्रेमचंद ने उसका दोहरा पर्दाफाश किया है। इससे जाहिर होता है कि वह रायसाहब जैसे धूर्तो से जनता को सचेत करना कितना महत्त्वपूर्ण काम समझते हैं। रायसाहब के शब्दों और व्यवहार के भेद पर प्रकाश डालकर प्रेमचंद ने इस सभ्यता की आम कमजोरी की तरफ इशारा किया है जिसका आधार दूसरों की मेहनत है। मेहता एक ही वाक्य में रायसाहब के व्याख्यान की धज्जियॉ उड़ा देते है– 'आपकी जबान में जितनी बुद्धि है, काश उसकी आधी मस्तिष्क में होती। 'मेहता का यह वाक्य प्रमाणित करता है कि बुद्धिजीवी लोग भी रायसाहब जैसे लोगों की हकीकत पहचानने लगे है।

गोबर के चरित्र में नई पीढ़ी का असंतोष प्रकट होता है। चाहे गॉव में खेती करे, चाहे शहर में मजदूरी, वह दूसरों के अन्याय बर्दाश्त करने के लिए तैयार नहीं है। उसके अंदर गॉव के महाजनों और जमींदारों के विरूद्ध एक बगावत की भावना काम करती है। होरी अपने दुखों को पूर्वजन्म के कर्म कहता है, परंतु गोबर उसकी प्रत्येक बात को काटता है। होरी और गोबर की बातचीत एक पिछड़े हुए किसान की चेतना की टक्कर है। यह टक्कर दिखाकर प्रेमचंद सूचित करते है कि रायसाहब की मीठी वाणी का असर सभी किसानों पर एक सा नहीं पड़ता। नई पीढ़ी उसकी हकीकत पहचानने लगी है। होरी के मरने के बाद गोबर मानो पिता के हत्यारों के लिए एक चुनौती की तरह जीवित रहता है। वह गोबर जिसने – 'राजनैतिक जलसों के पीछें खड़े होकर भाषण सुने है और उनसे अंग–अंग में बिंधा है। उसने सुना है और समझा है कि अपना भाग्य खुद बनाना होगा, अपनी बुद्धि और साहस से इन आफतों पर विजय पाना होगा।'

(रायसाहब, पटवारी, कारकुन आदि) प्रेमचंद ने उनके भक्तिभाव और दान धर्म की भीतरी असलियत को पाठकों के सामने रखने का सफल प्रयास किया है तथा यह बताया है कि भजनमाव और धर्मपरायणत: आत्मा की शुद्धि के साधन नहीं, बल्कि उसकी विकृति पर आवरण डालने के साधन मात्र रह गए है।

प्रसार और उसके परिणामरूवरूप होने वाले जीवनमूल्यों के ह्रास तथा बढ़ती हुई व्यावसायिक मनोवृत्ति के कारण अत्यधिक चिंतित थे। मालती और गोविन्दी की चरित्र–सृष्टि के द्वारा प्रेमचंद ने पश्चिमी अर्थात् पूँजीवादी जीवन मूल्यों के प्रति अपने–अपने इसी विरोध को व्यक्त किया है। गोविन्दी आदर्श पत्नीत्व का उत्कृष्टतम उदाहरण है। खन्ना गोविन्दी की अवहेलना और अपमान करता है, स्वयं शराबी और परस्त्रीगामी है किंतु गोविंदी प्रेम और निष्ठा से उसकी सेवा करती है। डॉ. मेहता जिस नारीत्व को आदर्श मानते है – 'गोविंदी उसकी सजीव प्रतिमा है, वे गोविंदी से कहते है – 'प्रकृति ने हमारे साथ कितना बड़ा अन्याय किया है कि आप जैसी कोई दूसरी देवी नहीं बनाई। गोविंदी कहती है' नहीं मेहताजी आपका भ्रम है। ऐसी नारियॉ यहॉ आपको गली–गली में मिलेंगी। 'गोविंदी का यह कथन सामान्य हिंदू नारी के लिए युक्तियुक्त है, जो त्याग सेवा और पवित्रता की प्रतिमा होती है। प्रेमचंद ने गोविंदी के विरोध में मालती की सृष्टि की है। वह पश्चिमी सभ्यता की प्रतिमूर्ति है। उसमें पुरूषों का अनर्थमय अनुकरण करने वाली आधुनिक शिक्षा संपन्न नारी के सभी गुण–अवगुण विद्यमान हैं। पुरूषों के समाज में वह चहकती है, उसका पश्चिम प्रेमचंद ने व्यंग्यपूर्ण भाषा में दिया है–'आप नवयुग की साक्षात् प्रतिमा हैं। गात कोमल पर चपलता कूट कूट कर भरी हुई, झिझक या संकोच का कहीं नाम नहीं। जहॉ आत्मा का स्थान है वहॉ प्रदर्शन, जहॉ हृदय का स्थान है, वहाँ हावभाव। 'मेहता की सेवा भावना की अम्लान ज्योति उसकी प्रसुप्त त्याग भावना को प्रबुद्ध करने लगती है। उनके संपर्क से मालती में परिवर्तन होने के बाद ही प्रेमचंद उसके नारीत्व को सार्थक होते चित्रित करते है और उसकी सारी शिक्षा–दीक्षा का उपयोग परिवार और समाज के कल्याण में होता हैं।

प्रेमचंद नारी को पुरूष की अनुचरी के रूप में देखना चाहते है, न कि पुरूष प्रतियोगिनी के रूप में। किन्तु इसका यह अर्थ कदापि नहीं कि वह उसे घर की चारदीवारी में बंद होने को कहते हैं। इसके विपरित वे चाहते है कि नारी को अवकाश मिले और वह आवश्यकता समझे तो अपने ज्ञान और शक्ति की परिधि परिवार से विस्तृततर करें। भारतीय नारी में यह विशेषता है भी। स्वयं प्रेमचंद का कहना था 'समाज की उन्नति तब तक नहीं हो सकती, जब तक नारी समाज कल्याण में योग नहीं देती।' मालती के परिवर्तित रूप में विवाहित और अविवाहित दोनों प्रकार की नारियों का वह आदर्श रूप मिलता है, जो प्रेमचंद चाहते है। समाज की रीतियों के अनुसार मालती विवाहित भले ही न हो, किन्तु वह मेहता से विवाह करते–करते रूक जाती है और यदि आत्मसमर्पण को विवाह माना जाए तो दोनों एक दूसरे को आत्मसमर्पण कर भी चुके हैं। मालती के जीवन का उद्देश्य सेवा, त्याग और वात्सल्य बन जाता है। उसकी इस सेवा भावना में कहीं भी पुरूषों का अनर्थमय अनुकरण,

प्रतिद्वन्द्विता, हिंसा, अधिकार, भावना नहीं है, जिसे प्रेमचंद ने पश्चिम की नारी में देखकर उसकी निंदा की है।

प्रेमचंद ने नारीत्व का चरमोत्कर्ष मातृत्व में माना है। प्रो. मेहता के शब्दों में – 'नारी केवल माता है और इसके उपरांत वह जो कुछ है वह सब मातृत्व का उपक्रम मात्र है। मातृत्व संसार की सबसे बड़ा त्याग और सबसे महान् विजय है। 'गोविंदी एक दूसरी स्त्री (मालती) के कारण पति द्वारा निर्दयतापूर्वक पीटे जाने पर दु:खी होकर घर से निकल पड़ती है, तो राह में उसकी भेंट प्रो. मेहता से हो जाती है और अंत में उसका नारीत्व भी मातृत्व के आगे पराजित हो जाता है ओर वह घर लौट जाती है।

जब प्रेमचंद नारियों को वे सब अधिकार, जो पुरूषों को मिले हुए है, देने को कहते है, तो वे राजनैतिक सामाजिक, सांपत्तिक आदि सभी क्षेत्रों में उसे पुरूषों के तुल्य अधिकार मिलने की मॉग करते हैं। जैसे पुरूष भी नारी की तरह एक पत्नी व्रत का पाल करें। उसका कई विवाह करना वेश्यागामी होना अवैधानिक ठहराया जाए। प्रेमचंद की दृष्टि में आवश्यकता इस बात की है कि नारियों की पुरूषों के बराबर सभी अधिकार कानूनी तौर पर मिल जाएँ। साथ ही उसकी शिक्षा की भी व्यवस्था हो ताकि वे अपने अधिकरों और कर्त्तात्वों को समझ सकें और उनका अपने हित में उपयोग कर सकें। निष्कर्ष रूप में गोदान उपन्यायस को हम उन कृतियों की श्रेणी में रख सकते है, जो साहितय के इतिहास की धारा के प्रवाह का रूख बदल देती है, जो अपने युग – जीवन का प्रतिनिधित्व करती हैं और साथ ही अपने प्रभाव से नए युग के द्वार भी खोलती है। प्रेमचंद इस तथ्य को भली भॉति समझने लगे थे कि भविष्य में हमारे समाज में मूल्यों की स्थिति क्या हो सकती है ? उन्हीं समस्याओं को उन्होंने अपनी रचनाओं में प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से चित्रित किया है। पात्रों एवं घटनाओं के रूप में वे पूर्ण रूप से यथार्थवादी रहे है। किंतु गोदान में होरी की मृत्यु दिखाकर उन्होंने अप्रत्यक्ष रूप से यह सिद्ध कर दिया है कि वर्ग भेद शोषित वर्ग की होनावस्था आदि सामाजिक विषमताओं के लिए वर्ग विशेष अथवा व्यक्ति विशेष ही उत्तरदायी नहीं है अपितु समस्त समाज व्यवस्था इसके लिए दोषी है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. नए साहित्य की सौंदर्यशास्त्र, मुक्तिबोध।
2. हिन्दी उपन्यास: एक अंतर्यात्रा, डॉ0 रामदरश मिश्र।
3. प्रेमचंद और उनका युग, डॉ0 रामविलास शर्मा।
4. गोदान।
5. गोदान मूल्यांकन और मूल्यांकन, इन्द्रनाथ मदान।
6. बद्री।
7. प्रेमचंद घर में, शिवरानी देवी।

****

पण्डित रामनारायण उपाध्याय के व्यंग्य

डॉ. गणेश लाल जैन *

प्रस्तावना – साहित्य के तीन हेतु है – आनंद प्रदान करना, लोकोपयोगी शिक्षा देना और कान्तासम्मित सदुपदेश देना। साहित्यकारों ने बहुत उपदेश दिए। उपदेशों के द्धारा जीवन जीने की कला समाज के नवनिर्माण एवं संस्कारित करने का पुनीत कार्य साहित्य ने किया। लेकिन समय सदा एक सा नहीं रहता पल–पल परिवर्तित समाज के साथ–साथ जीवन के मूल्य भी बदलने लगे। साहित्यकारों के सदुपदेशों का प्रभाव जब क्षीण होने लगा, सुक्तिवचन मात्र दीवारों पर घर की शोभा बढ़ाने तक सीमित हो गए तो साहित्य में एक नई 'वैदग्ध्य भंगी भणिति वक्रोति' का जन्म हुआ। 'तब बात सीधे न कहकर वक्र ढंग से कही जाने लगी। आदमी को उपदेश देने के बजाय पंचतंत्र ने पशु पक्षियों का सहारा लिया। अतिश्योक्ति ने ब्याज निंदा और ब्याज स्तुति अलंकार निर्मित किए।' व्यंग्यार्थ साहित्य में ध्वनि का वाचक है। प्रारंभ में व्यंग्य अभिव्यक्ति की एक शैली के रुप में प्रयुक्त होता था, किंतु आज व्यंग्य ने एक विधा का रुप ग्रहण कर लिया है। व्यंग्य अभिव्यक्ति की प्रखरतम विधा है। यह वस्तुगत सामाजिक, व्यक्तिगत, सभी प्रकार की विसंगतियों का पर्दाफाश करता है। जब समाज का हृदय संवेदना शून्य हो जाता है तो व्यंग्य की ही चुटकी काटकर जगाया जा सकता है। सामाजिक, राजनैतिक, प्रशासनिक क्षेत्र में व्याप्त भ्रष्टाचार इसकी विषयवस्तु होती है। ये अन्तर्विरोध सर्वत्र पाए जाते है। न केवल वस्तुगत सामाजिक परिस्थितियों में बल्कि विभिन्न घटनाओं और विचारों से लेकर मनुष्य के स्वभाव, कार्यो और चरित्र तक ये अन्तर्विरोध व्याप्त है। इन अन्तर्विरोधों पर व्यंग्य प्रहार करता है, और झूठ के नकाब को हटाकर एक दर्पण की तरह लोगों की असली शक्ल दिखाता है। इसी कारण यह – दामिनी सी टीस उठाते हुए मनो मस्तिष्क सागर को आलौकिक कर दिता है। यही कारण है कि व्यंग्य की भाषा में पैनापन अधिक होता है। सामान्यत: व्यंग्य की भाषा प्रतीकात्मक, सांकेतिक और ध्वन्यात्मक होती है।

उपाध्यायजी को भी व्यंग्य की प्रेरणा समाज की नकली संस्कृति आडम्बर और शहर के कृत्रिमतापूर्ण जीवन से मिली। विनोबा ने उन्हें असत्य का नम्रता से प्रतिकार करने और झूठ के आगे सिर न झुकाने की प्रेरणा दी थी। इसीलिए व्यंग्य विधा के क्षेत्र में उपाध्यायजी ने अपनी सशक्त कलम से विनम्रतापूर्ण व्यंग्य लिखे जो उनकी 7 पुस्तकों में प्रकाशित हुए है।

उपाध्यायजी की पहली व्यंग्य कृति 'गरीब और अमीर पुस्तकें' सन् 1958 में भारतीय ज्ञानपीठ से प्रकाशित हुई। इस पुस्तक में 15 व्यंग्य निबंध और 8 रुपकों सहित 23 निबंध है। इसका नामकरण प्रथम निबंध के आधार पर किया गया है। जिसमें पुस्तकों का मानवीकरण करते हुए अमीरी और गरीबी की स्थिति का यथार्थ चित्रण किया गया है। इस पुस्तक के सभी निबंध वाग्वैदग्धता, विनोदप्रियता और लालित्य से ओतप्रोत है। शैली का चमत्कार, रुपकात्मकता रसानुभूति कराने में सक्षम है। 'गरीब और अमीर पुस्तकें' 'काम और योजना' 'खाली लिफाफा' व लिखा खत' 'राजनीति और साहित्य' आदि के मध्य वार्तालाप कराकर व्यंग्य की मनमोहक सृष्टि की है। इस संकलन के सभी निबंधों की मूलभूत विशेषता है कि सभी का मानवीकरण किया गया है। डॉ. विवेकी राय के शब्दों में – 'उपाध्यायजी निबंध को कथा बना देते है, और कथा को कविता। जब वे प्रकृति को हास्य व्यंग्य का माध्यम बनाते है, तो और अधिक ताजगी आ जाती है। प्रकृति संबंधी रोमांस में धारदार व्यंग्य, मुक्त हास्य और पैने कौतूहल गूंथकर अद्भुत सृष्टि कर देता है।' इस कृति से उपाध्यायजी की एक मौलिक लेखन की पहचान बनी। इस कृति ने अपेक्षित सम्मान पाया।

व्यंग्य के क्षेत्र में उपाध्यायजी को सर्वाधिक प्रतिष्ठित करने वाली कृति 'धुंधले कांच की दीवार' सन् 1966 में प्रकाशित हुई। इसमें 35 व्यंग्य निबंधों के माध्यम से उपाध्यायजी ने सामाजिक, राजनीति, विसंगतियों, कृत्रिमतापूर्ण व्यवहार पर मीठी चुटकी ली है। इसके निबंधों में लेखक ने उच्च वर्ग की अपेक्षा अपने अभाव की कृत्रिमता को उजागर किया है। यह कहता है कि हम सबके चेहरे पर अभावों की धुंध छायी हुई है, जिसमें हमारी वास्तविक तस्वीर छिपी हुई है। इस कृत्रिमता के केचुल को हम उतार फेंके ओर सहज रुप में वैसे ही दिखे जैसे हम हैं। उनका कहना है – 'क्या यह नहीं हो सकता कि हम ठीक वैसे ही मिलें और जो हम नहीं है, वैसा दिखने का प्रयत्न बंद कर दे।' यही इसका सार है। 'हम सब रफू हैं' 'विंध्य की कहानी बादल की जुबानी' 'तुलसी दास की लेटेस्ट भारत यात्रा' 'नकली संस्कृति के मुखौटे' आदि निबंध सर्वत्र व्यंग्य की चुटीली शैली में पाठकों के मर्म को उद्धेलित कर देते है। 'वह एक ओर अपने रफू किए हुए कोट को देखता है, दूसरी ओर अपने परिचित बंधु के मकान का कमरा देखता है, जिसे वह मेहमानों के बैठने के लिए दुरुस्त करवा रहा है, तीसरी ओर वह अपने वकील मित्र की नव विवाहित पत्नी को देखता है, जो गृहस्थी के डूबते जहाज में लगे पैबंद के समान दिखलाई पड़ रही है, और तब वह कह उठता है, हम सब रफू हैं।' डॉ. विवेकीराय के अनुसार – 'धुंधले कांच की दीवार में वेदनीयता है। रचनाओं का अर्थ हँसी के साथ उड़ नहीं जाता अथवा क्षण भर की चुहलबाजी के बाद प्रभावहीन नहीं हो जाता। उनका व्यंग्य चुभता हैं, झनझनाता है, व भीतर कुछ उघाड़ता है, कुछ कुरेदता है।' इस कृति के सभी निबंध व्यंग्य की कसौटी पर खरे उतरे हैं। भाषा साधारण होकर भी सांकेतिकता, व्यवहारिकता एवं वक्रता समेटे हुए असाधारण है। देखने में निबंध हल्के फुल्के हैं, लेकिन गहरी संवेदना समेटे हैं। डॉ. विद्यानिवास मिश्र के शब्दों में – 'इन रचनाओं में धुंधले कांच की दीवार को हटाकर राष्ट्र को देखने की कोशिश की गई है।' यही मूल प्रतिपाद्य है।

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.) भारत

सन् 1970 में उपाध्यायजी की तीसरी व्यंग्य कृति 'सुख के नाम पाती' प्रकाशित हुई। यह कृति तीन भागों में विभक्त है। व्यंग्य, रुपक और ललित निबंध। इस कृति का कथ्य वर्तमान भारतीय जीवन को समग्र रुप से प्रस्तुत करता है। 'आधुनिक युग का आचरण, व्यवहार, रीति–नीति, चाल–चलन, भ्रष्टाचार, घूसखोरी, चुनाव, प्रजातंत्र, घर गृहस्थी का जीवन, नौकरशाही, लालफीताशाही,साहित्य के मतामत, अभिनन्दन वंदन, शिलान्यास उद्घाटन, झूठ सच, भुखमरी, बेकारी, चिकित्सा, अर्थ की खेचातानी, नकली संस्कृति, आंकड़ों के आंकड़े, क्यू और कंट्रोल, ऋण ब्याज आदि सभी को कलम के घेरे में समेटकर उपाध्यायजी ने सही अनुभवों को सही जुबान दी।' इस कृति के व्यंग्य सशक्त जीवनानुभाव से जुड़े हुए 'सुरसुरी सम कह सब हित होई' लोक मंगल की भावना से आप्लावित है। रुपक भी मनोहारी कल्पना के साथ छायावादी गद्य काव्य की शैली में संशलिष्ट बिंबात्मक झांकी प्रस्तुत करते है। इसके ललित निबंध विमल हृदय उच्छवास है। डॉ. राममूर्ति त्रिपाठी के अनुसार इस कृति के व्यंग्य निरामिश हैं, जो लाल चिउटी की तरह काटते है, किंतु जलन नहीं छोड़ते। यह कृति उपाध्यायजी की रचनाधर्मिता एवं समाज के प्रति कटिबद्धता को रेखांकित करती है। इस कृति का गद्य एकदम प्रकृत गद्य है, जिसमें कहीं बनावट भी नहीं है। लघुतम वाक्यों और सरलतम शब्दों से बना यह गद्य सर्वग्राह्य होने के साथ–साथ प्रभावशाली भी है। इसमें चमत्कार का अभाव नहीं है। चमत्कार अलंकारों का भी हैं, क्रिया प्रयोगो का भी हैं, और ध्वनि का भी है। लेकिन कहीं भी चमत्कार सृष्टि के लिए कोई प्रयास नहीं किया गया है। वह चमत्कार स्वाभाविक रुप से दृष्टिगोचर होता है। यह कृति उपाध्यायजी की सदाबहार कृति हैं, और साहित्य में अपना एक महत्वपूर्ण स्थान रखती है।

सन् 1974 में उपाध्यायजी की एक शुद्ध रुप से व्यंग्य कृति 'नया पंचतंत्र' प्रकाशित हुई। इस कृति में पंचतंत्र की कथाओं–बोध कथाओं के समान ही पशु पक्षियों को अवलम्ब बनाकर व्यंग्य के माध्यम से सत्य उद्घाटित किया हैं – जैसे पंचतंत्र की बोध कथाएं उस युग में जीवन के लिए पथ प्रदर्शक थी, उसी प्रकार उपाध्यायजी की यह कृति आज के युग में समाज का पथ प्रदर्शन करने में सक्षम है। सिंह, सियार, हाथी, उंट, आदि प्रतीकात्मक रुप से व्यंग्यात्मक अभिव्यक्ति करते हुए लक्षणा के माध्यम से जन–जन को अपनी नीतिगत विसंगतियों के प्रति सचेत करते है। इस कृति को द्वितीय संस्करण में 'नाक का सवाल' कृति के साथ संलग्न कर दी गई है। इसलिए अब इसका स्वतंत्र रुप उपलब्ध नहीं है।

उपाध्यायजी के मनो मस्तिष्क में व्यंग्य का माध्यम बन चुका है। 1980 में उपाध्यायजी की व्यंग्य कृति 'बक्शीशनामा' प्रकाशित हुई। इसमें 39 निबंध है। उपाध्यायजी के व्यंग्य गहरी संवेदना लिए हुए हल्क सी दामिनी सी टीस उठाते हुए अंत:करण को उद्वेलित कर देते है। 'बक्शीश नामा' व्यंग्य के आधार पर इसका नामकरण किया गया है। बक्शीश नामा में देश की अशिक्षित जनता ने देश के नेताओं के नाम एक बक्शीशनामा लिख दिया जिसमें उन्हें राजनीतिक कुर्सियां बक्शीश में दे दी गई हैं। यहां भाई–भतीजावाद, देश की राजनीतिक विसंगति पर तीखा और करारा व्यंग्य है। अन्य निबंध भी हास्य व्यंग्य को समेटे हुए राजनीतिक सामाजिक पारिवारिक विसंगतियों को उजागर करते है। ये चिमटी खोड़कर भी सहलाने वाले व्यंग्य है। 'भगवान रावण और दुर्योधन से लड़ना तो सहज है, लेकिन राम और युधिष्ठिर का मुखौटा लगाकर आने वाले आधुनिक रावणों से लड़ना बड़ा मुश्किल है।' आज की सामाजिक विसंगति पर कितना करारा प्रहार है। सीधे–सीधे शब्दों में यथार्थ को उद्घाटित कर स्वस्थ समाज के निर्माण की चुनौति रखी गई है।

उपाध्यायजी के व्यंग्य निबंधों का संग्रह 'नाक का सवाल' सन् 1983 में प्रकाशित हुआ। इस कृति के अधिकांश निबंध राजनीतिक विसंगतियों को उजागर करते है। प्रतीकात्मक शैली में लिखे गए ये व्यंग्य निबंध हल्की सी चुभन के साथ उन बुराईयों से दृढ़ता के साथ लड़ने की प्रेरणा देते है। इस संकलन का नामकरण 'नाक का सवाल' व्यंग्य निबंध के आधार पर किया गया है। उपाध्यायजी के शब्दों में – 'तुम नाक चाहते हो या पेट? अगर तुम्हारा पेट भरेगा, तो नाक नहीं रहने वाली हैं, और नाक रहेगी तो पेट नहीं भरने वाला हैं।' सार्वजनिक उपक्रमों में होने वाले भ्रष्टाचार को तीक्ष्ण दृष्टि से रेखांकित किया है। ऐलर्जी, समाजवादी बिल, चमत्कारी नदी, माडर्न शकुन्तला, गुरुभक्ति आदि निबंध आज के युग की विसंगतियों का मधुर शब्दों में व्यंग्यात्मक साक्षात्कार कराते है। उपाध्यायजी की इस कृति में उत्तरोत्तर प्रौढ़ता व सशक्तता के साथ नवीनता का समावेश दृष्टिगोचर होता है। इसके मूल में सामाजिक राजनीतिक जागरुकता का योगदान है। डॉ. विजन्द्र स्नातक के शब्दों में – 'नाक का सवाल पाठक के सामन उन स्थितियों को प्रस्तुत करता है, जिनमें फंसकर वह भी नाक की मर्यादा की रक्षा में प्रयासशील होता है।' वास्तव में आज आम आदमी की नाक का सवाल है। इस कृति में उपाध्यायजी की 'वैदग्ध भंगी भणिति' अवलोकनीय है।

सन् 1987 में उपाध्यायजी की व्यंग्य कृति 'मुस्कुराती फाइलें' प्रकाशित हुई। इनमें 60 व्यंग्य निबंध है। इन व्यंग्य निबंधों में कार्यालयीन जीवन की लाल फीताशाही, अफसरशाही, बाबूगिरी, भ्रष्टाचार आदि विसंगतियों पर मीठा प्रहार किया है। नामकरण की सार्थकता को दृष्टिगत करते हुए उसमें कार्यालयीन जीवन दर्शन प्रस्तुत किया है। 'जब अफसर ने दौरा किया', 'जब अफसर का तार आया', 'जब अफसर ने गाय ख़रीदी', 'जब अफसर की तरक्की हुई', 'जब उन्हें एरियर मिला', और 'बेन हट गया' आदि निबंध फाइलों की मुस्कुराहट से मन मोह लेते है। किसी कार्यालय का जीवन्त चित्र इन निबंधों में देखा जा सकता है। 'नगर की नाक के नीच' 'सेवकनामा' 'बिकाऊ है' 'चांदी का जूता' 'चलती का नाम गाड़ी' 'भारत एक है' 'आईये नव वर्ष बनाएं' और 'आईये चंदा करें' आदि व्यंग्य निबंध हास्य के ठहाके के साथ आज के यथार्थ को प्रस्तुत करते है और व्यवस्था में आमूल परिवर्तन की अपेक्षा रखते है। श्री शंकर दयाल सिंह के शब्दों में – 'केवल व्यंग्य कहना अपराध होगा, यह संदर्भ के साथ–साथ सम–सामयिक पंचाग है। आवरण से लेकर अंत तक मुस्कुराहट ही मुस्कुराहट है।' इन निबंधों को पढ़कर लगता है कि उपाध्यायजी के व्यंग्य अन्तर्मन की गहराई से उभरते हुए क्षणिक हास्य व्यंग्य बनकर चुप नहीं हो जाते, बल्कि चुभते हुए अंत:करण को कुरेदते हुए मीठी गुदगुदी करते है।

इस प्रकार हिन्दी साहित्य की व्यंग्य विधा को उपाध्यायजी ने अपनी 7 कृतियों से समृद्ध किया। इनमें आज की सामाजिक, राजनीतिक, कार्यालयीन अव्यवस्था, भ्रष्टाचार एवं दूषित प्रजातंत्र को सही मार्गदर्शन देकर स्वस्थ समाज के निर्माण में चुनौतियों का मुकाबला करने का साहस करने की प्रेरणा दी है। कथ्य और शिल्प की दृष्टि से सभी व्यंग्य गांधीजी की विनम्रता ओर सच्चाई को समग्र रुप से प्रस्तुत करते है। ये व्यंग्य समाज के सभी वर्गों को एक समान प्रभावित करते है। इन निबंधों का संकेत है कि समाज का निर्माण व्यक्ति के लिए हुआ है। आज व्यक्ति का अस्तित्व खतरे में है। सांप्रदायिकता के नाम पर मानव मानव की हत्या कर रहा है। आज व्यक्ति की अस्मिता उसकी नाक का सवाल मुंह बायें खड़ा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. वक्रोक्ति जीवितम - आचार्य कुंतक।
2. गरीब और अमीर पुस्तके - पण्डित रामनारायण उपाध्याय 1958
3. धुंधले कांच की दीवार - पण्डित रामनारायण उपाध्याय सन् 1966
4. सुख के नाम पाती -पण्डित रामनारायण उपाध्याय सन् 1970
5. नया पंचतंत्र -पण्डित रामनारायण उपाध्याय सन् 1974
6. बक्शीशनामा - पण्डित रामनारायण उपाध्याय सन् 1980
7. नाक का सवाल - पण्डित रामनारायण उपाध्याय सन् 1983
8. मुस्कुराती फाइलें - पण्डित रामनारायण उपाध्याय सन् 1987
9. मामूली आदमी - डॉ. शिवकुमार शर्मा।

****

प्रगतिवादी कविता में सौन्दर्य चेतना

डॉ. रविशंकर पटेल *

प्रस्तावना – प्रगतिवाद विविध परिस्थितियों की सहज देन है। मार्क्सवादी या साम्यवादी लक्ष्य की पूर्ति में योग देने वाली विचारधारा साहित्य में प्रगतिवादी विचारधारा कहलाती है। प्रगतिवादी कवियों में कविवर पंत का स्थान अद्धितीय है। 'युगान्त' नामक काव्य संग्रह में उन्होंने छायावाद का अन्त करके 'युगवाणी' और 'ग्राम्या' नामक काव्य कृतियों की रचना की। निराला की 'भिक्षुक', 'विधवा' एवं 'कुकुरमुत्ता' आदि कविताओं में इस प्रवृत्ति का चरम बिन्दु दिखायी पड़ता है। अन्य प्रगतिवादी कवियों में नरेन्द्र शर्मा, शिवमंगल सिंह 'सुमन', रामेश्वर शुक्ल 'अंचल', डॉ0 रांगेय राघव, केदारनाथ अग्रवाल, भरतभूषण अग्रवाल, नेमिचन्द जैन, नागार्जुन, त्रिलोचन शास्त्री आदि मुख्य हैं।

प्रगतिवादी कवि क्रांति के उन प्रलयंकारी भैरव स्वरों का आह्वान करता है, जिनसे जीर्ण-शीर्ण रूढ़ियों एवं परम्पराएं किसी गहन अनल में सदा के लिए विलीन हो जाए। नवीन जी ने लिखा है कि

'कवि कुछ ऐसी तान सुनाओ ।
जिससे उथल-पुथल मच जाए।।
एक लहर इधर से आए एक लहर उधर से आए।
जग में उथल-पुथल मच जाए।'

डॉ0 गणपति चन्द्रगुप्त ने अपने साहित्यिक निबंध में यह लेख किया है कि 'दर्शन में जो भौतिक विकासवाद है, राजनीति में जो साम्यवाद है, वहीं साहित्य में प्रगतिवाद है।'[1] आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने भी स्वीकार किया है कि वर्गहीन समाज की स्थापना प्रगतिवाद का लक्ष्य है। पूंजीपति वर्ग के प्रति घृणा उत्पन्न करने के लिए प्रगतिवादी काव्य उनके घृणित रूप का चित्रण करता है। सामाजिक अव्यवस्था के उत्तरदायी शोसकों को ललकारते हुए पन्त ने लिखा है।

' वे नृशंस है, वे जन के श्रम-फल से पोषित
दुहरे धनी, जोंक जग के, भू जिनसे शोषित
नरपशु वे! भू भार! मनुजता जिनसे लज्जित।।'

भिक्षुक का वर्णन करते हुए निराला ने पीड़ितों की दीनदशा का सहानुभूति पूर्ण कारूणिक चित्रण किया है-

'वह आता
दो टूक कलेजे के करता पछताता पथ पर आता।।'

प्रगतिवादी कवि विश्व की सामयिक समस्याओं के प्रति अतीव सजग रहा है।

भारत पाकिस्तान का विभाजन, कश्मीर-समस्या, बंगाल का अकाल, महंगाई, दरिद्रता और चरित्रहीनता आदि का प्रगतिवादी कवि ने मार्मिक वर्णन किया है। नागार्जुन ने थोथी आजादी कर व्यंग्य कसते हुए लिखा है –

'कागज की आजादी मिलती,
ले लो दो-दो आने में।'

मानवतावादी भावनाओं से कवि ओत-प्रोत है। इन रचनाकारों के लिए हिन्दू, मुसलमान, ईसाई सभी बराबर हैं। कवि पन्त ने स्वर्ण धूलि में मानवतावादी सौन्दर्य का अप्रतिम वर्णन किया है –

'नहीं छोड़ सकते रे यदि जन
देश राष्ट्र राज्यों के हित नित्य युद्ध करना
हरित जनाकुल धरती पर विनाश बरसना
तो अच्छा हो छोड़ दें अगर हम
अमरीकन, रूसी, औ इंगलिश कहलाना
देशों में धरा निखर, पृथ्वी हो सब मनुजों का घर
हम उनकी सन्तान बराबर।'

प्रगतिवादी कवि समस्त मानव का उद्धार चाहता है। डॉ0 नामवर सिंह ने लिखा है- 'प्रगतिशील कविता ने संसार में सुख शान्ति आने के लिए संसारभर की जनता की आकांक्षाओं के साथ हमारी आकांक्षाओं को जोड़ दिया है।'

प्रगतिवादी साहित्यकारों ने नारी समाज को पुरूष की दासता से मुक्त कराने का आह्वान किया है। पन्त के गीतों में बद्धबंदिनी नारी के पीड़ा का इस प्रकार वर्णन किया है –

'योनि नहीं है रे नारी, वह भी मानवी प्रतिष्ठित।
उसे पूर्ण स्वाधीन करो, वह रहे न नर पर अवसित।'

डॉ0 नगेन्द्र ने लिखा है, 'प्रगतिवादी ने अपनी अभिव्यक्ति के उपकरण आग्रहपूर्वक साधारण, स्वास्थ जन-जीवन से ग्रहण करना आरम्भ किया।' प्रगतिवादी कवियों ने यथार्थ को अपना लक्ष्य बनाया। डॉ0 विश्वनाथ प्रसाद ने लिखा है – 'लौकिक और यथार्थ धरातल पर स्थित होने के कारण प्रगतिवाद सामान्य जन और जीवन का साहित्य है।'[1] यथार्थ चित्रण प्रगतिवाद में दो धरातलों पर प्रगट हुआ है – यथार्थ चित्रण प्रगतिवाद में दो धरातलों पर प्रगट हुआ है – सामाजिक जीवन का यथार्थ चित्रण और सामान्य प्राकृतिक परिवेश चित्रण, डॉ0 नामवर सिंह के शाब्दों में 'सामाजिक यथार्थ दृष्टि' प्रगतिवाद की आधारशील है। नागार्जुन ने एक अध्यापक एवं उसके स्कूल की दशा का वर्णन करते हुए लिख है

'घुन खाए भाहतीरों पर की बारहखड़ी विधान बाँचे।
फटी भीत है, छत चूती है, आले पर बिसतुइया नाचे।
बरसा कर बेबस बच्चों पर मिनट-मिनट में पाँच तमाचे।
इसी तरह से दुखरन मास्टर गढ़ता है आदम के साँचे।।'

इस प्रकार यह कहना समीचीन लगता है कि प्रगतिवादी साहित्य के

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) एस.आर.पी.महाविद्यालय, हनुमना, जिला - रीवा (म.प्र.) भारत

अन्तर्गत समाज सौन्दर्य की धारणा बलवती लगती है। इसके अन्तर्गत इस युग का कवि वर्ग शोषकों के प्रति घृणा तथा शोषितों के प्रति सहानुभूति व्यक्त किया है। प्रगतिवादी कवि साहित्यिक मान्यताओं में विश्वास रखता है। वह रूढ़ियों का विरोधी और स्वर्ग, नर्क, धर्म, भाग्य, लोक, परलोक, आत्मा और ईश्वर आदि पर विश्वास नहीं करता। वह नारी समाज को जो युग-युग से सामन्तवाद की कारा में पुरूष दास्ता की लौह श्रृंखलाओं में बंदिनी पड़ी है, उसे वे मुक्त करने के लिए प्रगतिवादी कवि दृढ़ से अभिव्यक्ति देते हैं। मानवतावादी सौन्दर्य की स्थापना के लिए प्रगतिवादी कवि दृढ़ संकल्पित रहा है। डॉ0 गणपति चन्द्रगुप्त ने लिखा है- 'प्रगतिवादी साहित्य का लक्ष्य उच्चवर्ग के सुरक्षित पाठक नहीं है, अपितु वह जन साधारण के लिए काव्य की रचना करता है। उसमें जन-भाषा एवं सरल भाषा शैली का प्रयोग होना स्वाभाविक है।'[2] प्रगतिवादी काव्य धारा में जीवन सौन्दर्य की व्यवस्था के लिए स्थूल समस्याओं का विववेचन हुआ है। प्रसिद्ध कवि सुमित्रानन्दन पन्त के अनुसार 'नीवन लोक' मानवता की गम्भीर सशक्त चेतना के जागरण गान के स्थान पर उसने नंगे-भूखे श्रमिक-कृषकों के अस्थि-पंजरों के प्रति मध्यवर्गीय आत्मकुंठित बुद्धिवादियों की मानसिक प्रक्रियाओं का हुंकार भरा क्रन्दन सुनाई पड़ने लगा अपने निम्नस्तर पर प्रगतिवाद में सुरूचि संस्कारिकता का स्थान कुत्सित, विभत्स ने ले लिया।' प्रगतिवादी काव्य जीवन 1936 से 1943 तक निरन्तर मानवीय जीवन दशा का अभ्युत्थान करना चाहता है। मानव की प्रष्ठिा के लिए इस वर्ग ने कई दृष्टिकोंणों से लोकजीवन की विषमता का निवारण कर मानवीय उच्चादर्शा स्थापित करने में विश्वास प्रकट किया है। प्रगतिवादी काव्यधारा के प्रगतिशील कवियों की रचनाओं में लोक सौन्दर्य, मानव सौन्दर्य, राष्ट्रीय सौन्दर्य, क्रान्तिकारी आध्वान आदि चिन्तन धारा का समुचित विकास दिखायी पड़ता है। प्रगतिवादकवियों ने अपनी रचनाओं में एक स्वस्थ सामाजिक चेतना सौन्दर्य लोकमंगल की कामना तथा जीवन के प्रति एक व्यापक दृष्टिकोंण के साथ चिन्तन का अप्रतिम प्रभावशाली भाव अभिव्यक्त हुआ है। वे सिद्धान्त और व्यवहार दोनों में भले मार्क्सवादी, साम्यवादी अथवा गाँधीवादी रहे हों परन्तु इस युग की कविता में वे अभिव्यक्ति की अनेकानेक पद्धतियों, कलात्मक विधियों और सौन्दर्य वक्ता के समर्थक रहे है।

इन कवियों ने सम्पूर्ण जीवन को उनके सौन्दर्य और कुरूपता के साथ अपनाया है। इनमें जीवन के अधिक समीप लाने एवं व्यापक बनाने का श्रेय अधिकतर इन्हीं कवियों को प्राप्त है। क्रान्तिकारी कविता संकुचित सौन्दर्य के विरोध में खड़ी हुई है। इसने प्रमाणित कर दिया कि असुन्दर कुछ भी नहीं है। केवल दर्शन की दृष्टि से ही असुन्दर है। यद्यपि ओज में सौन्दर्य की कोमलता कुछ हलकी ही पड़ गई, तथापि सौन्दर्य जीवन के और भी निकट आ गया है। इसमें सन्देह नहीं कि कला की दृष्टि से इन रचनाओं का अधिक मूल्य नहीं, इन्होंने साहित्य को बहुत कुछ नहीं दिया। जीवन में विविधता है। इसमें भी रोटी-दाल, कुरूपता और सौन्दर्य सभी कुछ है। गरीबी और रोटी के साथ यदि क्रांतिकारकवि जीवन के सौन्दर्य की ओर भी दृष्टि निक्षेप करे तो सत्य की हत्या न हो पाएगी और क्रांतिकारियों में कविता वास्तव में जान फूँक देगी। 'चेतना की परिधि के विस्तार तथा कवि व्यक्तित्व के विकास एवं स्वातन।।य का परिणाम काव्य के रूपर पड़ना अनिवार्य है और उचित भी है क्योंकि रूप-विधान सदा युग-विशेष की मन:स्थिति को प्रतिबिम्बित करता आया है।

निष्कर्षत: आधुनिक युग के अन्तर्गत भारतेन्दु युग से लेकर प्रगतिवाद युग (1857 से 1943 तक) की काव्य यात्रा का रूप विधान रचनाकारों के नवीन मन:स्थिति के अनुरूप नये सन्तुलन के अन्वेषण के साथ अनेक पड़ावों से विकसित होता हुआ। अद्यावधि विविध आयामों के बीच सौन्दर्य को खोजता हुआ गतिमान है। यह सौन्दर्य चेतना युग विशेष की मन:स्थिति को नव्यतम रूपों में प्रतिबिम्बित करता आ रहा है। इन समग्र कवियों ने सम्पूर्ण लोकजीवन को वस्तुजगत के सौन्दर्य और कुरूपता के साथ स्वीकार किया है। रचनाकार की दृष्टि से जीवन की विविधता सौन्दर्य के विविधता का विधान करती है। एतदर्थ सौन्दर्य के बदलते परिवेश में युगीन रचनाकार पुराने प्रतिमानों को बदलकर समकालीन रचनाकार नये सौन्दर्यमान स्थापित करने में संलग्न है। अपनी कला चेतना को वह जीवन की सच्चाई के साथ सौन्दर्य को सजीव रूप देना चहता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कवि कुछ ऐसी तान सुनाओं- नरेन्द्र शर्मा नवीन।
2. डॉ. गणपति चन्द्रगुप्त- हिन्दी साहित्य का नवीन इतिहास पृष्ठ 156- डॉ. लालसाहब सिंह।
3. मनुजता- सुमित्रानन्दन पन्त।
4. भिक्षुक- सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला।
5. डॉ. नगेन्द्र, हिन्दी साहित्य का नवीन इतिहास, पृष्ठ 154, डॉ. लालसाहब सिंह।
6. युगान्त- सुमित्रानन्दन पन्त।
7. डॉ. विश्वनाथ प्रसाद - हिन्दी साहित्य का नवीन इतिहास पृष्ठ 154, डॉ. लालसाहब सिंह।
8. डॉ. गणपति चन्द्रगुप्त- हिन्दी साहित्य का नवीन इतिहास पृष्ठ 157, डॉ. लालसाहब सिंह।
9. कविता संग्रह- नागार्जुन।
10. सुमित्रानन्द पन्त - हिन्दी साहित्य का नवीन इतिहास पृष्ठ 157, डॉ. लालसाहब सिंह।

****

भारत, भारतीयता और संस्कृति

डॉ. रशीदा खान *

प्रस्तावना – इस मुल्क की तरक्की व तनज्जली के लिए हमें राष्ट्रीय एकता की आवश्यकता है। जब तक हम एकता की डोर में नहीं बंधेंगे तब तक हमारे राष्ट्र की उन्नति संभव नहीं क्योंकि –

जुर्म होगा उन्हें बशर कहना,
जो कि हमदर्द आदमी के नहीं।
बागियों से वफा की क्या उम्मीद,
जो वतन के नहीं किसी के नहीं।

मनुष्य अनन्त होकर भी शांत है, पूर्ण होकर भी अपूर्ण है किन्तु पूर्णता और अपूर्णता की स्थिति एक साथ नहीं रह सकती। हमारे साहित्यकारों ने सदैव मुल्क की तरक्की की बात की है तथा हमारी संस्कृति को जीवित रखा है।

भारत एक सनातन राष्ट्र है, यहां राज्य अनेक है। हजारों सालों के इतिहास के अनेकानेक आक्रमण दुशक्रमणों के बावजूद भारत एक राष्ट्र के रूप में खड़ा है। कोई ऐसी शक्ति है, जो इस राष्ट्र को एक रख सकती है।

हमारे देश में अलग–अलग मजहब के लोग हैं, हिन्दु हैं, मुस्लिम हैं, क्रिश्चियन हैं, पारसी हैं, जैन हैं, वगैरा–वगैरा हम सब भारतीय हैं। ये सभी मिलकर एक राष्ट्र बना है। अपने राष्ट्र की अनूठी (किन्तु सत्य) छबि अटल बिहारी वाजपेई ने अपनी लेखनी से उकेरी है, इसका एक–एक लफ्ज शरीर के अंतर में घुस जाता है यथा :–

भारत जमीन का टुकड़ा नहीं,
जीता जागता राष्ट्र पुरूष है।
हिमालय इसका मस्तक है,
गौरी शंकर शिखा है, कश्मीर किरीट है।
पंजाब और बंगाल दो विशाल कंधे हैं,
विंध्याचल कटि है, नर्मदा करधनी है,
पूर्वी और पश्चिम घाटी दो विशाल जंघाऐं हैं।
कन्याकुमारी इसके चरण हैं, और सागर इसके पग पगारता है,
पावस के काले–काले मेघ इसके कुन्तल केश हैं।
चाँद और सूरज इसकी आरती उतारते हैं,
ये वन्दन की भूमि, ये अर्पण की भूमि है।
इसका कंकर कंकर शंकर है,
इसका बिंदु–बिंदु गंगाजल है।

हम जीयेंगे तो इसके लिए, मरेंगे तो भी इसी के लिए पण्डित दीनदयाल उपाध्याय भारतीय जनसंघ के बहुत बड़े विचारक और मार्गदर्शक रहे हैं, उन्होंने कहा है इट इज़ द सोल ऑफ द नेशन यह आत्मा है, राष्ट्र की और हर एक राष्ट्र में आत्मा होती है। स्वामी विवेकानंद का प्रसिद्ध वाक्य है, हर एक राष्ट्र के लिए एक कर्तव्य होता है, जिसके लिए वह जन्मता है। आत्मा को राष्ट्र की आत्मा समझने की आज बहुत बड़ी जरूरत है। भारत की एक आत्मा है और इस आत्मा की दृष्टि के लिए आत्म संरक्षण होना चाहिए।

हमारे मन में एक कल्पना है कि राष्ट्र का निर्माण किया जा सकता है। पण्डित जवाहरलाल नेहरू का यह फेमस वाक्य 'नो केन मेक ए नेशन'। दुनिया के बहुत सारे विद्धानों का मानना है कि राष्ट्र का निर्माण नहीं किया जा सकता है, राष्ट्र जन्मता है इट केन टेक बर्थ नेशनल आर नॉट मेड।

भारत में रहने वालों को अपने कर्तव्य याद रखने चाहिए। अधिकारों की बात तो सब करते हैं किन्तु कर्तव्यों को बिसरा देते हैं। राष्ट्र प्रेम की अलख जगाने वालों में साहित्यकारों की अहम भूमिका रही है जैसे :–

जो भरा नहीं है भावों से
बहती जिसमें रसधार नहीं।
वह हृदय नहीं वह पत्थर है
जिसमें स्वदेश का प्यार नहीं।

जिस राष्ट्र को हम अन्नपूर्णा कहते हैं, रत्नगर्भी कहते हैं उस राष्ट्र में आज करोड़ों लोग दु:खी हैं, पीड़ित हैं, भूखे हैं, नंगे हैं। लेकिन सब कुछ जानते हुए भी क्या हम इस समस्या का समाधान करेंगे ? यही विचारणीय है।

गर खुदा मुझसे कहे कुछ माँग ऐ बंदे मेरे तो मैं ये मांगू कि ऐ खुदा मैं अपने कदम उस और बढ़ाऊँ जहां ऐसे लोगों की कुछ सहायता कर सकूं। क्योंकि ईश्वर भी इन्हीं में वास करता है।

मैं ढूँढता तुझे था,
जब कुन्ज और वन में
तू तो बसा हुआ था दीन के वतन में
बाजे बजा–बजा कर
मैं था तुझे रिझाता।
तू तो लगा हुआ था,
पतितों के संगठन में।

हम भारतीयता किसे कहते हैं ? क्या हम सच्चे मायने में भारतीय हैं ? सामान्यतया जब हम भारतीयता का उपयोग करते हैं तो सीधा संबंध हम धर्म से जोड़ लेते हैं और धर्म की व्याख्या करते–करते हम और संकीर्ण गली में प्रवेश कर लेते हैं, और वह है, सम्प्रदाय की गली। मनुष्य की वेशभूषा से उसे धर्म में बांट देते हैं। भारतीयता क्या है ? इसके विविध आयाम हो सकते हैं किन्तु मुख्य रूप से तीन चार चीजें सामने आती हैं।

1. भारतीयता भ्रष्ट आचरण को अस्वीकार करने वाली मनोवृत्ति का नाम

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत

है।

2. दूसरा यह कि भारतीयता का अगर कोई लक्षण है तो वह उत्कृष्टता के लिए सतत् प्रयासरत रहना।
3. तीसरा है, लोकमत, इस देश का समाज लोकमत से चलता है। और समाज का संचालन जनमत से चलता है।
4. और चौथा है, अजीब सी एकमतता चुनाव एक समय ही होते हैं, और परिणाम भी एक जैसे आते हैं। ये मेरा भारत है, ये भारत का मन है और ये जो करता है अच्छा करता है। इसके प्रति अनादर का भाव नहीं आना चाहिए।

और जो इतिहास के असाधारण दिखने वाले लोगों के साथ संबंध जोड़ता है वह भारतीय और ऐसा समाज भारतीय है।

यदि कहीं हम दोषी हैं, कुछ भी कर पाने में स्वयं को अक्षम मानते हैं तो उनके लिए यह ठीक है।

हम तो दर्पण है, दिखाऐंगे चेहरे के दाग
जिसको बुरा लगता हो, सामने से हट जाए।

संस्कृति अनिवार्यत: सर्जनात्मक होती है, मनुष्य संस्कृति का निर्माता है। यह उतना ही सच है, जितना यह कहना कि संस्कृति मनुष्य को जन्म देकर मनुष्य के उच्चाशयी स्वरूप का निर्माण करती है। कला, साहित्य, धर्म, दर्शन, राजनीति और विज्ञान ये सभी संस्कृति के अंग हैं और यही मानव सर्जना के विविध रूप हैं। सर्जनात्मकता उच्च कोटि की धर्मपरायणता है। उसमें मनुष्य दृष्टी के अहम से मण्डित होकर भी आत्मोत्सर्ग का आनन्द प्राप्त करता है। अपने लोकोत्तर रूप में वह मानसी है किन्तु उसकी अभिव्यक्ति का क्षेत्र व्यवहारिक जगत ही है। संस्कृति हमारी चेतना है और सर्जना उस चेतन्य की वाणी है।

भारतीय संस्कृति विश्व की प्राचीनतम संस्कृतियों में से एक है। जिसका सर्वाधिक व्यवस्थित रूप हमें वैदिक युग में प्राप्त होता है। प्रकृति में भारतीय संस्कृति अत्यंत उदात्त समन्मयवादी, सशक्त एवं जीवन्त रही है।

धार्मिक क्षेत्र में भारतीय धर्म का जावा के धर्म पर प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है। 'बोर्नियो ड्रांप धांक' नामक आदिवासियों से भरा पड़ा है किन्तु वहां से प्राप्त शिवलिंग ईसवीं सन् के प्रारंभ में भारतीय प्रभाव की गवाही देते हैं।

बर्मा सांस्कृतिक दृष्टि से भारत का अभिन्न अंग या प्रसिद्ध आनन्द मंदिर भारतीय कर्ता के बर्मा पर प्रभाव का जीता जागता उदाहरण है। इस मंदिर की दीवारों पर महात्मा बुद्ध का जीवनकाल तथा जातक कथाएं चित्रित हैं।

जापान में बौद्ध धर्म का प्रचार भारत के प्रभाव का प्रतीक है।

भारत और चीन का संबंध बहुत पुराना है, इसमें आर्थिक, धार्मिक और सांस्कृतिक संबंध सम्मिलित हैं।

भारतीय संगीत की छाप भी चीन के संगीत पर दृष्टिगत होती है।

भारत के महान संतों, कवियों, कलाकारों और महापुरूषों ने जन्म लिया है। उनकी वाणी, मन और कर्म का सौंदर्य यहां के चप्पे-चप्पे में गंध की तरह समाया हुआ है।

साहित्य – इस देश में कालिदास और भवभूति, पद्माकर और केशव, भूषण, कबीर, बिहारी, प्रसाद, निराला, महादेवी, पंत जैसे अनेकानेक साहित्यकार हुए जिन्होंने अपने साहित्य से देश का नाम रौशन किया है।

राष्ट्रीय साहित्य के मूल में राष्ट्र की भावना है। राष्ट्रीय संस्कृति या राष्ट्रीयता के उपकरणों के संबंध में विद्धानों ने अनेक प्रकार से विचार किया है। राष्ट्र भूमि, राष्ट्र भाषा, राष्ट्रीय सभ्यता और इतिहास, राष्ट्रीयता के वस्तुपरक उपकरण हैं। राष्ट्रीयता की परिभाषा एकांतिक न होकर भिन्न रहेगी और उसमें उस संस्कृति के आदर्श भी आत्मसात होंगे।

राष्ट्रीय साहित्य के रूप में साहित्य की अनेक कोटियाँ सामने आती हैं, जैसे देशभक्ति का साहित्य, समाज सुधार का साहित्य, सांस्कृतिक अथवा पारंपरिक मूल्य निष्ठा साहित्य, अतीत गर्भा साहित्य। यथा –

जो भरा नहीं है भावों से
बहती जिसमें रसधार नहीं।
वह हृदय नहीं वह पत्थर है
जिसमें स्वदेश का प्यार नहीं।
कांकर पाथर जोड़ि के मस्जिद लेई बनाय
ता चड़ी मुल्ला बाग देय, क्या बहरा हुआ खुदाय
पाहन पूजे हरि मिले तो हो पूजूं पहार
तासे तो चाकीं भली, पीस खाय संसार

धर्म राष्ट्रीय मानस की सबसे बड़ी इकाई है, हिन्दी साहित्य में चारण काव्य (रासो परंपरा) भूषण का काव्य, देशप्रेम संबंधी आधुनिक खड़ी बोली आदि को राष्ट्रीय काव्य के अंतर्गत रखा जाता है।

हमारी संस्कृति को जीवित रखने वाले कवियों कायायनी, भारत भारती, राम की शक्ति पूजा, अंधेरे में कुछ अंश, मानस का हंस, गोदान, शेखर एक जीवनी और भी बहुत कुछ यह तो समुद्र में एक कंकर फेंकने के समान है। हम जितना गहराई से साहित्य में डूबेंगे उतना ही अमृतपान करेंगे।

निष्कर्ष रूप में यदि कहूं तो भारत में रहने वाले हम सब भारतीय हैं।

हिन्द देश के निवासी सभी जन एक हैं
रंग रूप वेश भाषा चाहे अनेक हैं।

कभी-कभी जातीय वैमनस्य उभरतर है फिर भी हम एक हैं। हमारी संस्कृति और साहित्यकार हमें जिलाए हुए है। आवश्यकता है इसकी –

इक शजर ऐसा मुहब्बत का लगाया जाए।
जिसका पड़ोसी के भी घर में साया जाए। (नीरज)

हमारी संस्कृति बनी रहे, हमारा राष्ट्र उन्नत रहे क्योंकि किसी ने कहा कि 'हम जिऐंगे और मरेंगे ऐ वतन तेरे लिए'। इस मुल्क की तरक्की और तनज्जली के लिए हमें अपनी आँखें खुली रखनी है – इस मुल्क की सरहद को कोई छू नहीं सकता, इस मुल्क की सरहद की निगेहबान हैं आंखें। हमारी आत्मा, अमारा मन अपने मुल्क को समर्पित है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. सेवा अभ्यास मंडल– 2005 – पृ. 04
2. साहित्य और सर्जना – डॉ. रामरतन भटनागर – पृ. 8
3. भारतीयता के अमर स्वर – सं. धनन्जय वर्मा – पृ. 17
4. निबंध रत्नाकर – रीगल बुक डिपो – पृ. 187

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) January to March 2017, Vol. I

हिन्दी उपन्यास और आदिवासी विमर्श

डॉ. अंजली सिंह *

प्रस्तावना – 'पुत्रो अहं पृथिव्या' अर्थव का पृथ्वी सूक्त, पृथ्वी और मनुष्य के बीच माता और पुत्र के संबंध की स्थापना करता है। दुनिया में जहां भी पुरानी मानव बसाहटें हैं, वे और उनकी संस्कृतियॉ, वहॉ के भूगोल और पर्यावरण की उपज है।

21 वीं शताब्दी की शुरुआत से एक दशक पहले जब 20 वीं शताब्दी अपने अंतिम चरण में थी, भारत में भूमंडलीकरण की शुरुआत हुई, अपने को वसुधैव कुटुंबकम से गौरान्वित अनुभव करने वाले भारत में उन अस्मिताओं के विमर्श शुरु हुए जो इस महादेश की मिट्टी में दबी, कुचली, दलित या वंचित समाज कही जाती थी। दलित–विमर्श स्त्री–विमर्श के साथ आदिवासी विमर्श की शुरुआत चिन्हित रुप से हिन्दी में इसी काल में शुरु हुई है। साहित्य के कुछ सरोकार सनातन हैं, जिन्हें हम मानवीय मूल्य कहते हैं। स्त्री–विमर्श, दलित–विमर्श के साथ ही आदिवासी–विमर्श भी हमारे समाज में साहित्य का एक प्रमुख सरोकार बन रहा है।

बीसवीं सदी के प्रारंभ से ही आदिवासी समाज हिंदी साहित्य का विषय बनने लगा। रामचीज सिंह 'वल्लभ' रचित 'वन–विहंमिनी (1909 में प्रकाशित) को श्री रमेशचंद्र मीणा और प्रो. दिनेश्वर प्रसाद ने पहला उपन्यास माना है। इसके पश्चात 1930 में रामानंद शर्मा का आदिवासी विषयक उपन्यास 'कोरा–कुमारी' प्रकाशित हुआ। योगेन्द्रनाथ सिन्हा ने 'हो जनजाति को केन्द्र में रख कर वन लक्ष्मी और 'वन के मन में' उपन्यासों की रचना पचास के दशक में की। 1948 में वृंदावनलाल वर्मा का 'कचनार' और देवेन्द्र सत्यार्थी को रथ के पहिये प्रकाशित हुए। इसके पश्चात दशकों के अंतराल के बाद राजस्थान के नटों पर 'कब तक पुकारुँ' तथा बंजारा लोहरा समाज पर केन्द्रित 'धरती मेरा घर' के साथ रांगेय राघव ने अपनी आमद दी। गोड़ो के जीवन पर आधारित 'जंगल के फुल' और 'सूरज किरण की छॉव राजेन्द्र अवस्थी के उपन्यास हिंदी जगत में आए। संथालों पर चर्चा रेणु के मैला ऑचल में दिखाई देती है। जय प्रकाश भारती ने 'कोहरे में खोये चॉदी के पहाड़' में राजस्थान के जौनसार बाबर आदिवासी समुदाय को कथा का विषय बनाया।

रांगेय राघव और देवेन्द्र सत्यार्थी जैसे उपन्यासकारों की छोड़ दें तो अधिकांश रचनाकार बाहरी व्यक्ति की तरह आदिवासी यथार्थ को निरख रहे थे। ये आदिवासी जीवन की विवरणिका प्रस्तुत कर रहे थे। गोपीनाथ मोहंती या महाश्वेता देवी जैसा अपनत्व, लगाव, जुनून और एकात्मकता इस दौर के आदिवासी विषयक उपन्यासों में नहीं मिलता।

नब्बे के दशक के आते–आते संजीव, मनमोहक पाठक , पुन्नी सिंह, तेजिन्दर, मैत्रेयी पुष्पा, भगवान दास मोरवाल, राकेश कुमार सिंह की समर्थ और उर्वरक लेखनी ने हिन्दी उपन्यास फलक को सॉवले–सलोने–जामुनी रंगो से सराबोर कर दिया। इनमें खास बात यह भी थी कि इनमें आदिवासी समाज की समस्याओं का रेखांकन मात्र इनकी अस्मिताओं की पहचान के लिए ही नहीं था बल्कि मानवमुक्ति के महान स्वप्न की आहट भी थी।

'सावधान नीचे आग है' 'धार', 'पॉव तले की दूब' आदि उपन्यासों में पन्ने दर पन्ने औद्योगीकरण के बुलडोजर से आदिवासी इलाकों में आये जलजले का चित्रण संजीव चित्रमय तरीके से करते है। थारु जनजाति का आख्यान संजीव का उपन्यास 'जंगल जहॉ से शुरु होता है' मनमोहन पाठक ने 'गगन घटा गहरानी' मे पलामू की महाजनी शोषण की चक्की में पिसते उरॉव जीवन की कथा इतने गझिन बनावट के साथ प्रस्तुत किया है कि उनका यह उपन्यास अद्धितीय बन गया है।

तेजिंदर ने 'काला पादरी' में धर्मान्तरण के माध्यम से आदिवासी सरना धर्म के विरुद्ध धार्मिक संस्थाओं के स्वार्थ व षड़यंत्र को नंगा कर उसे पाठकों तक पहुँचाता है।

गोपीनाथ मोहंती कृत 'अमृत संतान' व 'परजा' रणेन्द्र का 'ग्लोबल गॉव का देवता' व गायब होता देश, महाश्वेता देवी कृत जंगल के दावेदार, चोटी मुण्डा और तीर, राकेश कुमार सिंह का जो इतिहास में नही है 'हुल पहाड़िया' 'पठार पर कोहरा' 'जहॉ खिले, हैं रक्त पालश', विनोद कुमार का 'समेर' शेष, वीर भारत तलवार का 'रस्साकशी' 'झारखण्ड के आदिवासियॉ के बीच' आदि उपन्यासों मे आदिवासी चेतना के सरोकारों की गूंज सुनाई देती है। वीरेन्द्र जैन द्वारा रचित 'पार' उपन्यास में विस्थापन का दर्द है। उनके घर, जंगल, जमीन, और जल से उन्हे अलग कर कभी विकास, कभी राष्ट्रहित के नाम पर किया गया उनका विस्थापन उनके अस्तित्व से जुड़ा प्रश्न है। संजीव के उपन्यास 'धार' की नायिका मैना की लड़ाई भी यही है।

मैत्रेयी पुष्पा का अल्मा कबूतरी में क्रिमिनल ट्राइब्स के रुप में घोषित कबूतरा समुदाय की अंतहीन पीड़ा और व्यवस्था के साथ साथ कथित सभ्य समाज की क्रूरताओं की इन्तहा का प्रामाणिक चित्रण हमारी स्मृति में सदा के लिये टांक जाता है।

महाजनी–सामंती सत्ता से टकराते संघर्षशील शिबू सोरेन के व्यक्तित्व की झलक विनोद कुमार के उपन्यास 'समर शेष है' में दिखाई देता है। पुन्नी सिंह की 'सहराना', भगवानदास मोरवाल की 'रेत', संजीव बख्शी का 'झूलन कांदा' और प्रदीप जिलवाने का 'आठवॉ रंग पहाड़ गाथा' तक और इसके आगे भी आदिवासी समाज की यह यात्रा अनंबरत जारी है।

यहॉ यह विशेष उल्लेखनीय है कि श्री प्रकाश मिश्र की खासी जनजाति को केन्द्र में रखकर लिखा गया उपन्यास 'रुप तिल्ली की कथा' तथा मिजो जनजाति वर्णित उपन्यास 'जहॉ बॉस के फूल खिलते हैं' तथा योगेन्द्रनाथ सिन्हा के उपन्यासों में आदिवासी समुदाय 'अन्य' रुप मे ही वर्णित है। उसकी

* प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय माधव सदाशिवराव गोलवलकर महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

विचित्रताएँ ही रेखांकित करने योग्य हैं क्योंकि हमारी अभिजात श्रेष्ठता ग्रंथि कमियाँ देखने में ही संतुष्टि पाती है। जहाँ सिन्हा जी उद्धारक की भूमिका में हैं, वहीं प्रकाश मिश्र मिजो स्त्रियों के देह की मादकता को वर्णित करने में तथा खासी जनजाति की बर्बरता सिद्ध करने के लिए प्रयत्नशील दिखाई देते है।

डॉ0 श्यामराव राठौड़ के शब्दो में '1980 से पूर्व रचित जनजातीय जीवन पर केन्द्रित हिंदी उपन्यास आदिवासियों के नृत्यों, गीतों, त्योहारों, आमोद-प्रमोद, पर्व उत्सव आदि के रंग एंव छवियों से तथा कथित सभ्य समाज को परिचित तो करवाते है किंतु पीड़ा, वेदना, व्यथा-कथा, संघर्षो को, प्रश्नों को वाणी नहीं देते। 1980 के बाद में आदिवासियों पर हिन्दी उपन्यासों में सार्थक पहल दिखाई देता है।

इसी कड़ी में राजेन्द्र अवस्थी का 'जाने कितनी ऑखे, 'सूरज की छॉव,' शानी का 'शालीनों का द्वीप', राकेश वत्स का 'जंगल के आस-पास' आदि ऐसे उपन्यास हैं जिसमें आदिवासियों के जीवन केा उनके संघर्षों को उजागर किया गया है। रमणिका गुप्ता कृत 'युंद्धरत आम आदमी', 'आदिवासी शौर्य और विद्रोह', 'पूर्वोत्तर के आदिवासी' 'निज घरे आदिवासी', भुजंग मेश्राम कृत उल्गुलान निर्मला पुतुल का 'अपने घर की तलाश में ' इनके अतिरिक्त रामदयाल मुण्डा, ग्रेस कुजूर, सरिता बड़ाइक, रोजकेरकेट्टा, वंदना टेटे, दयामणि बेसरा, एल0टी0 लियाना सिया डन्टे, विजोया सवियान, मिनिमोल लालू, मैडम, डखार, ईस्थर सीएम, हरीराममीणा, रमेशचंद्र मीणा, शंकरलाल मीणा आदि कई नाम इस क्षेत्र से जुड़े है। जहाँ तक हिंदी उपन्यासों में आदिवासी चेतना के सरोकारों की अभिव्यक्ति का प्रश्न है, इसमें आदिवासियों के जीवन को उनके संघर्षो को उजागर किया गया है। इन उपन्यासों में उनका दु:ख दर्द, यातना, विस्थापन आदि समस्याओं के बीच अपने को जिंदा रखने के लिये संघर्ष शक्ति, उनकी जीविविषा की अभिव्यक्ति है।

जंगल, जल और जमीन से जुड़ी उनके अस्तित्व व अधिकार बोध से फूटता आक्रोश उपन्यासों का मुख्य प्रस्थान बिंदु है। अपने अधिकारों के लिए लड़ते, अपनी जान गंवाते आदिवासियों को नक्सली बता कर उनकी सुनियोजित हो रही हत्या जैसे विषय पर मधु कांकरिया का उपन्यास 'खुले गगन के लाल सितारे' में बड़े बेबाकी से बात रखी गई है।

आदिवासी समाज के जीवन संघर्ष और परिर्वतन की चुनौतियों पर बात करते समय हमारे समक्ष पूरे विश्व में बिखरे पड़े तमाम आदिवासी समुदाय है अपने अस्तित्व और अस्मिता के लिये संघर्षरत। मुख्यधारा के सर्वमान्य बुद्धिजीवियों और इतिहासकारों द्वारा बार-बार नकारे जाने के बावजूद यह सशक्त प्रतिरोध फीनिक्स पक्षी की तरह अपनी राख में से उठ खड़ा होता है।

नब्बे के दशक से आदिवासियों की विशिष्ट समस्याएँ शोषण के खास सामाजिक सांस्कृतिक आर्थिक औजार तदजनित दु:ख पीड़ा की अनंत कराहें हिचकियों की गूँज मौन स्वर सदियों से खोया था। आज उनका रेखांकन मात्र इसलिए नहीं है कि इनकी अस्मिताओं को अलग से पहचान मिले बल्कि इसलिये कि मानव मुक्ति का महान स्वप्न पूर्ण हो सके। इस संघर्षपथ के अनेक सहयात्री सहकर्मी हैं, इनकी सब की मौजूदगी में सबसे खास बात ये है कि खुद आदिवासी समाज से निकल कर आए उपन्यासकारों की अलग महत्ता है। यहाँ शेर खुद अपने शिकार बनाए जाने के दर्द की दास्तॉ कह रहा है। भले ही कहने की शैली अनगढ़ है किंतु स्वानुभूति उल्लेखनीय । यहाँ पीटर पाल एक्का की औपन्यासिक रचानाएँ 'जंगल के गीत', मौन घाटी, सोनपहाड़ी और पलाश के फूल अपनी उपस्थिति दर्ज करा रही है। मंगल सिंह मुंडा का छैला संदु, हरिराम मीणा का बीसवीं सदी के पहले दो दशकों में उभरे झील विद्रोह नेता गोविंद गुरु के आदोलन को वर्णित करता उपन्यास 'धूणी तपे तीर', वाल्टर भेगरा तरुण के उपन्यास एवं मेनेस ओड़ेया का मुंडारी से अनुदित उपन्यास 'मथुरा की कहानी' उल्लेखनीय है। साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मनित अरुणाचल प्रदेश के शेरदुकपेन, आदिवासी समाज से संबद्ध येसे दरजे योंगदी का बहुचर्चित असमिया उपन्यास 'सोनम' अनुदित होकर हिन्दी में उपलब्ध है।

उम्मीद है कि इस धारा से न केवल हिन्दी साहित्य के इस अध्याय का पाट चौड़ा होगा और गति तेज होगी बल्कि वह गहरी भी होगी साथ ही हिन्दी उपन्यास के इतिहास में कई स्वर्णिम पृष्ठ जुड़ते चलेगे। 645 आदिवासी समाज की विशिष्टताएँ उक्त समाज के मध्यवर्ग के अंतर्विरोध भी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सं0- रमणिका गुप्ता, आदिवासी स्वर और नयी शताब्दी वाणी प्रकाशन - नई दिल्ली द्वितीय संस्करण - 2008
2. समयांतर मासिक पत्रिका- संपादक पंकज विस्ट, 79-ए, दिलशाद गार्डेन, नई दिल्ली, अंक अगस्त 2010
3. बहुवचन अंक - 25, अ0-जून 2010 सं0 राजेन्द्र कुमार, मा0गॉ0अ0 हि0वि0वि0 वर्धा प्रकाशन
4. विजय शंकर उपाध्याय विजय प्रकाश वर्मा - भारत की जनजातीय संस्कृति, म0प्र0 हिंदी ग्रंथ अकादमी - त आवृति 1998
5. हरिभूमि-दैनिक समाचार पत्र, बिलासपुर संस्करण 16.12.11 ण
6. स्त्री, आदिवासी, सभ्य समाज- महाश्वेता देवी, आउट लुक मासिक हिंदी पत्रिका, 21 अक्टूबर 2002
7. कथादेश - मई 2010 अंक
8. जंगल बुक, मासिक पत्रिका- संपादक-व्ही. व्ही. रमण किरण, सलाहकार संपादक - डॉ विनय कुमार पाठक वर्ष - 3 अंक- 6 अगस्त 2011

****

एक नाटककार का कथाकार के रूप में मूल्यांकन (जयशंकर प्रसाद की चर्चित कहानियों के विशेष संदर्भ में)

डॉ. रमेश कुमार टण्डन *

शोध सारांश – रचना–धर्मिता के आधार पर ही प्रसाद जी के नाम से एक युग का नामकरण हुआ– प्रसाद युग। यह युग हिन्दी साहित्य में 'नाटक' और 'एकांकी' विधा के रचना काल के नाम से विख्यात हुआ। नाटक विधा में भारतेंदु युग के पश्चात् प्रसाद युग का नाम आता है। एकांकी विधा में भारतेंदु युग के पश्चात् द्विवेदी युग, फिर प्रसाद युग का नाम आता है। इन्होंने करूणालय, सज्जन, कामना, विशाखा, कल्याणी परिणय, अजातशत्रु, प्रायश्चित, चंद्रगुप्त, जनमेजय का नागयज्ञ, स्कंदगुप्त, ध्रुवस्वामिनी आदि नाटक लिखा। सुविख्यात ऐतिहासिक नाटककार के बावजूद, प्रसाद जी को कवि–कथाकार भी कहा जाता है। इनकी प्रमुख कहानियाँ ग्राम, छाया, इंद्रजाल, आकाशदीप, आँधी, सुनहला साँप, सालवती, मधुवा, गुंडा, पुरस्कार, चूड़ी वाली नीरा, प्रतिध्वनि, देवरथ–जयशंकर प्रसाद, चंदा, शरणागत, दुखिया, ममता, स्वर्ग के खण्डहर में, बिसाती, कला, देवदासी, मदन–मृणालिनी, घीसू आदि हैं। इन्हीं कहानियों के आधार पर प्रसाद जी का, एक कथाकार के रूप में मूल्यांकन करना, शोध–पत्र लेखक का विवेच्य – विषय है।

प्रस्तावना – प्रसाद जी सांस्कृतिक चेतना के कथाकार हैं। आदर्शवादी होते हुए भी इन्होंने यथार्थ की उपेक्षा नहीं की। साहित्य की सोद्देश्यता और सामाजिक सरोकारों की प्रतिष्ठा के लिए इन्होंने कहानी को एक नई दिशा दी। विषय– वैविध्य और प्रयोगों की नवीनता तो प्रसाद की कहानियों में खूब है ही, बंधनों का अस्वीकार भी है। स्त्री को दृष्टि–विशेष से प्रस्तुत करने वाले प्रसाद जी सम्भवत: हिन्दी के पहले ऐसे कथाकार हैं, जो बहुत चुपके से उसकी स्थिति और सामर्थ्य को एक साथ सामने रख गंभीर विषय की आवश्यकता पर बल देते हैं।

'मदन–मृणालिनी' में लेखक दु:खान्त कहानी से प्रेरित प्रतीत होता है। नायक और नायिका का मिलन नहीं हो पाता। आदर्श की स्थापना करते हुए अशरीरी प्रेम का उजागर हुआ है। जाति और धर्म का भय भी लेखक पाठकों को दिखाता है। नायक की माँ कहानी में कहीं विलीन हो जाती है। 'चंदा' में पहले कहानी सपाट चलती है। फिर प्रतिशोध और एकनिष्ठ प्रेम । यहाँ भी कहानी दु:खान्त है।

'ग्राम' में जमींदारी प्रथा का जिक्र किया गया है। कर्ज देकर ब्याज बढ़ाना, फिर जमीन की नीलामी करा हड़प लेने को अभिव्यक्ति मिली है। यह कहानी भी दु:खान्त है और बिना निष्कर्ष के ही समाप्त हो जाती है। कहीं ग्राम्य जीवन की भाषा, तो कहीं प्राकृतिक वर्णन में संस्कृत निष्ठ भाषा का प्रयोग हुआ है।

'शरणागत' में लेखक ने दर्शाया कि भले ही पश्चिमी–सभ्यता में पली–बढ़ी महिला को भारतीय स्त्री एक दासी (शरणागत) नजर आती हो लेकिन भारतीय स्त्री अपने आपको सहचर के रूप में नहीं अपितु अनुचर के रूप में पहचाना जाना पसंद करती हैं, इसे ये अपना सौभाग्य मानती हैं, इस भारतीय संस्कृति के गुण से दूसरों को भी ये प्रभावित और प्रेरित भी करती हैं। सुखान्त कहानी है। 'ममता' में भी दु:खान्त कहानी इर्द–गिर्द घुमती है। ऐतिहासिक पात्रों को स्थान देते हुए कहानी को आगे बढ़ाया गया है।

'आकाशदीप' एक चर्चित कहानी है। इसमें नायिका चम्पा प्रतिशोध की परिणति करुणा में खोजती है। प्रेम और घृणा इस कहानी को यादगार बना देता है। इसमें नाटक की तरह संवाद एवं कथोपकथन का दृश्य झलकता है। संवाद में भी कहीं हास्य तो कहीं असाधारण सत्य का उजागर किया गया। यथा–

'बंदी!'
'क्या है? सोने दो।'
'मुक्त होना चाहते हो?'
'अभी नहीं, निद्रा खुलने पर, चुप रहो।'
'फिर अवसर न मिलेगा।'.....
दूसरी जगह, 'यह क्या? तुम स्त्री हो?'
'क्या स्त्री होना कोई पाप है?'

'दुखिया' में गरीबी का वर्णन है। कहीं पर गाली भी है। जमींदार ने दुखिया के साथ नीचता का बर्ताव किया– 'मारे जवानी के तेरे मिजाज ही नहीं मिलता! बाद में इसने दुखिया को 'चुप हरामजादी' भी कहा। इसमें संवाद एवं कथोपकथन का दृश्य है, यथा–

'क्या तुम रामगुलाम की लड़की हो?'
'हां बाबूजी।'
'बहुत दिनों से दिखता नहीं।'
'बाबूजी, उनको आंखों से दिखाई नहीं पड़ता।'

'स्वर्ग के खण्डहर' में ऐतिहासिक पात्रों का सहारा लेकर प्रसाद जी, अपने समय के सत्य से लड़ने के लिए अतीत की खुदाई जरूर करते थे, लेकिन उन्हें भविष्य का ध्यान भी बराबर रहता था। इसमें यह स्पष्ट किया गया है कि पृथ्वी को केवल वसुंधरा होकर मानव जाति के लिए रहने दें, अपनी आकांक्षा के कल्पित स्वर्ग के लिए, क्षुद्र स्वार्थ के लिए इस धरती को नरक न बनाएं।

कुछ अधूरा–सा 'सुनहला सांप' की कहानी, प्रसाद जी की जुबानी। संशय की स्थिति निर्मित होती है। कहानी में चंद्रदेव ने सोचा– 'सच तो, क्या मैं अपने को भी पहिचान सका ?'

'चूड़ीवाली' कहानी, विभिन्न नाटकीय मोड़ों से होते हुए सफलता को

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) महात्मा गांधी शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, खरसिया, जिला- रायगढ़ (छ.ग.) भारत

प्राप्त करता है। यह कहानी सम्पूर्णता को हासिल करते हुए सुखान्त को प्राप्त करता है। संवाद एवं कथोपकथन की शैली भी साथ-साथ चलती है। सरल-सपाट शब्दों को प्रयोग भी हुआ है-

'तुम कौन हो ?'
'पहले की एक वेश्या।'
छि:,मुझे पड़े रहने दो।'

अक्सर इनकी कहानियों में अधूरी प्रेम कहानी या दु:खान्त कहानी परोसी गई है। इसी कड़ी में 'बिसाती', 'कला' भी शामिल हैं। 'देवदासी' में एक ऐसे प्रेम की कहानी निरूपित की गई है जिसमें रोमांच भी है, रहस्य और अशरीरी प्रेम भी। पत्रनुमा शैली में लिखी गई यह कहानी भी, अन्य कहानियों की तरह दु:खान्त और अनिश्चितता लिए हुए है। मुख्य पात्र अशोक, धीरे-धीरे अशोक से अभागा अशोक, अधम अशोक और अंत में हतभाग्य अशोक बन जाता है।

'आँधी' में अनेक तत्त्व विद्यमान हैं-दार्शनिकता, संवाद, कथा, पत्रकारिता शैली, दु:खान्त इत्यादि। प्रसाद जी ने दार्शनिकता पर अपने पात्रों के माध्यम से इस तरह कहा - 'किसी कर्म को करने के पहले उसमें सुख की ही खोज करना क्या अत्यन्त आवश्यक है ? सुख तो धर्माचरण से मिलता है। अन्यथा संसार तो दु:खमय है ही ! संसार के कर्मों को धार्मिकता के साथ करने में सुख की ही संभावना है।' संवाद एवं कथोपकथन का प्रत्यक्ष दर्शन मिलता है-

बस ! इतना ही ?
और भी कुछ है !
क्या बाबू ?
और जो उसने लिखा है, वह मैं नहीं कह सकता-
क्यों बाबू ? क्यों न कह सकोगे ? बोलो।

प्रेम की पराकाष्ठा का भी वर्णन किया गया है- 'एक लड़की को हवा लगी है, यहीं का आसेब है। पीर को दिखलाना चाहती हूँ।'

प्रकृति चित्रण का एक उदाहरण, 'बसन्त के आगमन से प्रकृति सिहर उठी। वनस्पतियों की रोमावली पुलकित थी। मैं पीपल के नीचे उदास बैठा हुआ ईषत् शीतल पवन से अपने शरीर में फुरहरी का अनुभव कर रहा था। आकाष की आलोक-माला चन्दा की वीचियों में डुबकियां लगा रही थी। निस्तब्ध रात्रि का आगमन बड़ा गम्भीर था।'

'मधुवा' में दरिद्रता का पूरी तन्मयता के साथ वर्णन हुआ है- 'एक चिन्तापूर्ण आलोक में आज पहले-पहल शराबी ने आँख खोलकर कोठरी में बिखरी हुई दारिद्र्य की विभूति को देखा और उस घुटनों से ठुड्डी लगाए हुए निरीह बालक को; उसने तिलमिलाकर मन-ही-मन प्रश्न किया- किसने ऐसे सुकुमार फूल को कष्ट देने के लिए निर्दयता की सृष्टि की ? आह री नियति !' इस कहानी में सुखान्त है।

'घीसू' में प्रसाद जी ने एक उत्कृष्ट प्रेम की अभिव्यंजना की है। यहाँ भी कहानी दु:खान्त है। अपना घर, पैसा सब कुछ घीसू ने बिंदो को दे दिया, पर बदले में उससे कुछ नहीं लिया, लिया तो सिर्फ बिंदो का दर्द और अपनी मौत।

'पुरस्कार', प्रसाद जी की एक उत्कृष्ट रचना है। ऐतिहासिक, नश्वर-प्रेम, देश-प्रेम, श्रम-शीलता, भयहीनता, पूर्वजों का मान सभी कुछ है, इस कहानी में। इनकी लगभग हर कहानी की तरह यह कहानी भी दु:खान्त है। मगध के राजकुमार विद्रोही अरूण से प्रेम करती हुई मधुलिका ने अपने अरूण का साथ दिया और अपने वीर पिता का मान रखते हुए अपने देश कौशल की रक्षा भी की। पुरस्कार में मधुलिका ने पहले तो अपने खेत के बदले मिले स्वर्ण-मुद्राओं को अस्वीकार किया, बाद में भी देश रक्षा के लिए किए गए कार्यों के लिए मिलने वाले पुरस्कार को ठुकराते हुए देश द्रोही का साथ देने के लिए अपने लिए मृत्यु-दण्ड मांगा।

'इंद्रजाल' में लेखक ने बड़ी ही खूबसूरती के साथ गोली की प्रेमिका बेला को, इंद्रजाल के बहाने, गोली को वापस दिलाया। सुखान्त कहानी। लेखक ने 'घीसू' में नारी के गौर वर्ण का वर्णन किया- 'उसकी उजली धोती में गोराई फूटी पड़ती।' परन्तु 'इंद्रजाल' में श्याम वर्ण का वर्णन इस प्रकार किया- 'बेला सांवली थी। जैसे पावस की मेघमाला में छिपे हुए आलोकपिंड का प्रकाष निखरने की अदम्य चेष्टा कर रहा हो वैसे ही उसका यौवन सुगठित शरीर के भीतर उद्वेलित हो रहा था। गोली के स्नेह की मदिरा से उसकी कजरारी आंखें लाली से भरी रहतीं। वह चलती तो थिरकती हुई, बातें करती तो हँसती हुई। एक मिठास उसके चारों ओर बिखरी रहती।

निष्कर्षत: प्रसाद जी की चर्चित कहानियों में कुछ कहानियाँ- शरणागत, चूड़ीवाली, इंद्रजाल, मधुवा ही सुखान्त हैं। बाकी सभी दु:खान्त हैं। एक-दो, ऐतिहासिक पात्रों को साथ लिए हुए हैं। प्रकृति - चित्रण एवं सौन्दर्य चित्रण का उत्कृष्ट वर्णन हर कहानी में मिलेगा। संस्कृतनिष्ठ, तत्सम शब्दों का प्रयोग हुआ है। कहीं-कहीं, पात्रों की मांग के अनुसार, आंचलिक शब्दों को भी रूप दिया गया है। चूँकि प्रसाद जी एक प्रसिद्ध नाटककार हैं, इसीलिए इनकी कहानियों में नाटकों की तरह संवाद व कथोपकथन शैली नजर आती है। कहीं-कहीं पत्रात्मक शैली का भी दर्शन होता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. संपादक : महेश दर्पण, चर्चित कहानियाँ: जयशंकर प्रसाद, सामयिक प्रकाशन, 3543 जटवाड़ा, दरियागंज नई दिल्ली, 1996

****

सिद्ध एवं नाथ परंपरा – मान्यताएँ एवं वाचिक साहित्य

डॉ. सरोज जैन *

प्रस्तावना – आदिकालीन हिन्दी साहित्य की उपलब्ध सामग्री मुख्यत: दो रूपों में दिखायी देती है – प्रथम वर्ग में वे रचनाएँ आती हैं, जिनकी भाषा तो हिन्दी है किंतु वह अपभ्रंश के प्रभाव से पूर्ण मुक्त नहीं है और द्वितीय वर्ग में वे रचनाएँ आती हैं, जिनको अप्रभंश के प्रभाव से मुक्त हिन्दी की रचनाएँ कहा जा सकता है। अपभ्रंश प्रभावित हिन्दी रचनाओं में सिद्ध साहित्य, श्रावकाचार, नाथ साहित्य, राउलवेल (गद्य पद्य) उक्ति व्यक्तिकरण (गद्य) भरतेश्वर बाहुवलीरास, हम्मीर रासो, वर्ण रत्नाकर (गद्य) हैं, तो अपंभ्रश के प्रभाव से मुक्त रचनाओं में खुमाण रासो, बीसलदेव रासो, पृथ्वीराज रासो, खुसरो की पहेलियाँ आदि रचनाएँ आती हैं। इन रचनाओं से आदिकालीन साहित्य को प्रमुख छह वर्गो में विभक्त किया जा सकता है –

1. सिद्ध साहित्य 2. जैन साहित्य 3. नाथ साहित्य
4. रासो साहित्य 5. लैकिक साहित्य 6. गद्य रचनाएँ

सिद्ध साहित्य– वैदिक धर्म के कर्म काण्ड और वाह्याचारों के विरोध में बौद्धधर्म का उदय हुआ। कालान्तर में स्वयं बौद्ध धर्म अनेक बुराइयों और विवादों से ग्रस्त होकर दो शाखाओं में बट गया– हीनयान और महायान। हीनयान बौद्ध धर्म के प्रति आस्थाबान रहा, जबकि महायान व्यवहार पक्ष को महत्व देने लगा। हीनयान में केवल विरक्तों और संन्यासियों को ही आश्रय दिया गया, जबकि महायान सभी को मोक्ष दिलाने का दावा करने लगा जिससे बौद्ध धर्म का पतन होने लगा। गुप्त सम्राटों ने भी हिन्दु धर्म में अपनी आस्था व्यक्त करके बौद्ध धर्म को धक्का पहुँचाया। शंकर के शैव मत से प्रभावित होकर इस धर्म ने जनता को अपनी ओर आकर्षित करने के लिए तंत्र मंत्र और अभिचार का मार्ग अपनाया। महायान शाखा मंत्रयान में बदलगई और मंत्रयान से वज्रयान और सहजयान का प्रादुर्भाव हुआ। वज्रयान और सहजयान में पाण्डित्य का कोई स्थान नहीं रहा। डॉ. रामकुमार वर्मा के अनुसार–'बाद में जब मन्त्रयान में मद्य और मैथुन का प्रवेश हुआ तो वही वज्रयान में परिवर्तित हुआ। इस प्रकार वज्रयान से मंत्रयान के मंत्र और हठयोग के साथ गद्य और मैथुन भी जोड़ दिए गए और महायान अपने 800 वर्ष के जीवन क्रम में वज्रयान होकर सदाचार से हाथ धो बैठा।'

मंत्रों द्वारा सिद्धि प्राप्त करने वाले बौद्ध तांत्रिक 'सिद्ध' कहलाए। इन बौद्ध तात्रिकों में वामाचार चरम सीमा पर पहुँच गया था। श्री पर्वत सिद्धों का प्रधान केन्द्र था।बंग और विहार इन सिद्धों के प्रभाव क्षेत्र थे। ये सिद्धों का प्रधान केन्द्र था। बंग और बिहार इन सिद्धों के प्रभाव क्षेत्र थे। ये सिद्ध नास्तिकता से आस्तिकता की ओर बढ़ रहे थे। जीवन के सामान्य भागों की इन्होंने उपेक्षा नहीं की। स्त्री–सेवन को इन्होंने संसार विष की औषधि बताया।

सिद्ध साहित्य– सिद्धों ने बौद्ध धर्म के वज्रयान तत्व का प्रचार करने के लिए जो साहित्य जन भाषा में लिखा वह हिन्दी के सिद्ध साहित्य की सीमा में परिगणित किया जाता है। चौरासी सिद्धों में से चौदह सिद्धों की रचनाएं प्राप्त होती है। ये सिद्ध प्राय: अशिक्षित और छोटी जातियों के थे। इनकी साधिकाएँ भी कापाली, डोम्बी आदि हीन जातियों की ही थी। सिद्धों की रचनाएँ अपभ्रंश या अर्द्धमागधी में है। जिसे संध्याभाषा कहां जाता है। सिद्ध साहित्य को तीन भागों में बाँटा जा सकता है –

1. **नीति या आचार संबंधी –** रागदेस मोह लाइउ छार। परम मोख लवए मुत्तिहार।
2. **उपदेश** – भाव न होई अभाव ण जाइ। अइस संबोहे को पति आइ ?
3. **साधना** – जेहि वन पवन न संचरइ, रवि ससि नाहि पवेस।
   तहि घट चित्त विसाम कर, सरहा कहिए उवेस।

पं. राहुल सांकृत्यान ने चौरासी सिद्धों के नामों का उल्लेख किया है, जिनमें सिद्ध सरहपा से सिद्ध साहित्य प्रारंभ होता है। इन सिद्धों में प्रमुख सिद्ध कवि और उनकी रचनाए निम्नलिखित हैं –

सरहपा – ये सरहपाद, सरोजवज्र राहुलभद्र आदि नामें से विख्यात हैं। ये ब्राह्मण जाति के थे। इनका रचना काल 769 ई. माना जाता है। इनके द्वारा रचित ग्रंथ बत्तीस हैं, जिनमें से 'दोहाकोष' हिंदी की रचनाओं में प्रसिद्ध है। इन्होंने पाखण्ड और आडम्बर का विरोध किया है, गुरू सेवा को महत्व दिया। इनकी भाषा सरल और गेय है–

नाद न बिंदु न रवि न शशि मंडल,
चिअराय सहावे मूकल।
अजुरे अजु छाड़ि मा लेहू रे बंक
निअहि वोहिमा जाहु रे लांक।
हाथेरे कांकाण मा लोउ दापण,
अपणे अपा बुझतु निअन्मण।

सरहपा की भाषा पर अपभ्रंश का प्रभाव है, भाव और शिल्प की जो परंपरा संत साहित्य में नये रूप में उभरी उसका बीज रूप सरहपा के काव्य में दिखाई देता है।

शबरपा – इनका जन्म क्षत्रिय कुल में 780 ई. में हुआ था। सरहपा से इन्होंने ज्ञान प्राप्त किया था। 'चर्यापद' इनकी प्रसिद्ध पुस्तक है ये माया–मोह का विरोध कर सहज जीवन पर जोर देते हैं और उसी को महासुख की प्राप्ति का मार्ग बतलाते हैं।

लुइपा – शबरपा के शिष्य लुइपा राजा धर्म पाल के शासन काल में कायस्थ परिवार में पैदा हुए थे। इनकी साधना का प्रभाव देखकर उड़ीसा के तत्कालीन राजा व मंत्री इनके शिष्य हो गए थे। चौरासी सिद्धों में इनका स्थान ऊँचा माना जाता है, इनकी कविता में रहस्य भावना की प्रधानता है।

काआ तरूवर पंचबिडाल, चंचल चीए पइठो काल
दिर करिअ महासुह परिमाण, लुइभरमइ गुरु पूच्छि अजाण।

डोम्भिपा– इनका जन्म मगध के छत्रिए वंश 840 ई. के लगभग हुआ था। विरूपा से इन्होंने दीक्षा ली थी। इनके द्वारा रचित ग्रंथ इक्कीस बताए जाते हैं। जिनमें डोम्बि गीतिका, योगचर्या, अक्षर द्विकोपदेश आदि विशेष हैं।

कण्हपा – इनका जन्म कर्नानट के ब्राह्मण वंश में 820 ई. में हुआ था। जालन्धरपा इनके गुरू थे। इनके लिखे लगभग चौहत्तर ग्रंथ हैं, जिनमें

* प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना (म.प्र.) भारत

अधिकांश दार्शनिक विषयों पर हैं। इन्होंने शास्त्रीय रूढ़ियों का खंडन भी किया –

आगम वेअ पुराणे, पंडित मान बहंति।
पक्क सिरिफल अलिअ, जिम वाहेरित भ्रमयंति।।

कुक्कुरिया – इनका जन्म कपिल वस्तु के ब्राह्मण परिवार में माना जाता है। इनके गुरू चर्पटीया थे। इनके द्वारा रचित सोलह ग्रंथ माने जाते है। ये भी सहज जीवन के समर्थक थे।

उपर्युक्त सिद्ध कवियों के अतिरिक्त अन्य सिद्ध कवियों ने भी जनभाषा में अपनी वाणी का प्रचार पद्य में किया किंतु साहित्य के विकास में उसकी महत्ता नगण्य रही। उपर्युक्त वर्णित सिद्ध कवियों ने हिंदी साहित्य में कविता की जो प्रवृत्तियाँ आरंभ की, उनका प्रभाव भक्तिकाल तक बना रहा। रूढ़ियों के विरोध का अवखड़पन जो कबीर आदि की कविताओं में मिलता है, इन सिद्ध कवियों की ही देन है, योग साधना पर भी इनका प्रभाव परिलक्षित होता है। सामाजिक चेतना के जो चित्र इन्होंने उभारे वे भक्तिकालीन काव्य के लिए सामाजिक चेतना की पीठिका बन गए। कृष्ण भक्ति के मूल में जो प्रवृत्ति मार्ग है, उसकी प्रेरणा के सूत्र भी इनके साहित्य में मिलते हैं।

नाथ साहित्य – सिद्धों की भोग प्रधान योग साधना की प्रतिक्रिया के रूप में आदिकाल में नाथ पंथियों की हठयोग साधना आरंभ हुई। राहुल जी ने नाथपंथ को सिद्धों की परंपरा का ही विकसित रूप माना है। इस पंथ को चलाने वाले गोरखनाथ माने गए है। डॉ. रामकुमार वर्मा ने नाथपंथ के चरमोत्कर्ष का समय बारहवीं शताब्दी से चौदहवीं शताब्दी के अंत तक माना है। उनके अनुसार नाथ पंथ से ही भक्तिकालीन संत मत का विकास हुआ जिसके प्रथम कवि कबीर थे। कथ्य और शिल्प की दृष्टि से संतकाव्य में विद्यमान अनेक विशेषताएँ इस मन्तव्य को प्रमाणित करती है।

नाथ पंथ शैवमत का पोषक है। यह पंथ सिद्धों और संतों के बीच की कड़ी है। सिद्धों के मार्ग में संशोधन करके इन्होंने जिस मार्ग को अपनाया उससे संतों का मार्ग प्रशस्त हो गया। नाथ संप्रदाय पर कोल संप्रदाय का प्रभाव है। कौलों की अष्टांग योग पद्धति को नाथों ने विशेष महत्व दिया किंतु उनकी अभिचार पद्धति के ये विरोधी रहे सिद्धों का प्रभाव भारत के पूर्वी भाग पर था किंतु नाथों का प्रभाव भारत का पश्चिमी भाग राजस्थान, पंजाब में रहा है।

नाथ पंथ के अनुयायी सैद्धांतिक रूप से शैवमत के अनुयायी थे और व्यवहार में हठयोग से प्रभावित। इनकी ईश्वर संबंधी भावना बज्रयान से ली गई है। कबीर ने इसी शून्य को सहज सुन्न सहस्रदल आदि नामों से पुकारा है। नाथों ने निवृत्ति पर अधिक बल दिया। वैराग्य को ये मुक्ति का साधन मानते थे। वैराग्य गुरू द्वारा ही प्राप्त होता है, इसलिए इस संप्रदाय में गुरू का विशेष महत्व है। उलटबासियों, प्रतीकों और रूपकों से नाथों ने रहस्यात्मक शैली में अध्यात्मिक संकेत दिए है, जिन्हें समझना सामान्य जन के लिए कठिन है। इन्द्रिय निग्रह की साधना के लिए गोरखनाथ तथा अन्य नाथों ने नारी से दूर रहने का उपदेश दिया। इन्द्रिय निग्रह से आगे प्राण–साधना और उससे भी आगे मन: साधना इनका लक्ष्य था। बाह्म जगत् से हटाकर मन को अन्तर्जगत की ओर प्रवृत्त करना ही मन:साधना है। इसके लिए नाथों ने कुछ साधन बताए हैं, जैसे नाड़ी साधन, कुण्डलिनी, इंगला पिंगला और सुशुम्न नाड़ी को जगाना, षटचक्र, सुरत, अनहदनाद आदि। शिव और शक्ति को मूलतत्व मानकर नाथों ने ब्रह्माचारों व आडम्बरों का खंडन किया है।

जिस प्रकार चौरासी सिद्ध प्रसिद्ध है, उसी प्रकार नौ नाथ प्रसिद्ध है जिनमें आदिनाथ, मत्स्येन्द्रनाथ, गोरखनाथ, गाहिणीनाथ, ज्वालेन्द्रनाथ चर्पटनाथ, चौरंगीनाथ, भर्तृहरिनाथ, गोपीचंदनाथ आदि प्रसिद्ध हैं। आज कनफटा जोगी गोरखनाथ की वाणी का बयान करते हैं और अपने आपको उन्हीं का शिष्य मानते हैं।

गोरखनाथ नाथ साहित्य के आंरभ कर्ता माने जाते हैं। ये सिद्ध मत्स्येन्द्रनाथ के शिष्य थे पर इन्होंने सिद्धों के मार्ग का विरोध किया था। इनके द्वारा रचित लगभग चालीस ग्रंथ है किंतु डॉ. वड़थवाल के अनुसार ने केवल चौहद ग्रंथ ही स्वीकार किए है जिनके नाम है – सबदी, पद, प्राणसंकली, सिष्यादरसन, नरवै बोध, अभैमात्रा, जोग, आतम बोध, पंद्रह तिथि, सप्तवार, मछीन्द्र, गोरखबोध, रोमावली, ग्यान तिलक, ग्यान चौंतीसा एवं पंचमात्रा। गोरखनाथ के पहले अनेक संप्रदाय थे, जो नाथ–पंथ में मिल गए। गोरखनाथ ने अपनी रचनाओं में गुरू की महिमा, इन्द्रिय निग्रह, प्राण साधना वैराग्य, मन:साधना, कुण्डलिनी जागरण, शून्य समाधि आदि का वर्णन किया है इनमें नीति और साधना की प्रमुखता वर्णित है।

गोरखनाथ ने षट्चक्रों वाला योग मार्ग हिंदी साहित्य में चलाया था। इस मार्ग का हठयोगी साधना द्वारा शरीर और मन को शुद्ध करके शून्य में समाधि लगाता था और वही ब्रह्म का साक्षात्कार करता था। उनके अनुसार धीर वह है जिसका चित्त विकार–साधन होने पर भी विकृत नही होता –

नौ लख पातरि आगे नाचै, पीछै सहज अखाड़ा।
ऐसे मन लै जोगी खेले, तब अंतरि बसै भंडारा।।

मूर्त जगत में अमूर्त के स्पर्श को व्यक्त करते हुए वे कहते हैं–

अंजन माँहि निरंजन भेट्या, तिल मुख भेट्या तेलं।
मूरति माँहि अमूरति परस्या, भया निरंतरि खेलं।।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार – 'इसने परवर्ती संतों के लिए श्रद्धाचरण प्रधान धर्म की पृष्ठभूमि तैयार कर दी। जिन संत साधकों की रचनाओं से हिन्दी साहित्य गौरवान्वित हुआ। उन्हें बहुत कुछ बनाई भूमि मिली थी'।

नाथ साहित्य के विकास में जिन अन्य कवियों ने योग दान दिया उनमें चुणकरनाथ, भरथरी, जलन्धीपाव आदि प्रमुख है। इन कवियों की रचनाओं में उपदेशात्मकता और खंडन मंडन की प्रधानता है। गोरखनाथ की हठसाधना में ईश्वरवाद व्याप्त था। इन हठयोगियों ने भी उनका प्रचार किया जो रहस्यवाद के रूप में प्रतिफलित हुआ और जिसका अनुकरण भक्तिकाल में कबीर आदि संत कवियों ने किया।

'नाथ सिद्धों की बानियाँ इन ग्रंथ में डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी ने सिद्धों और नाथों की दुर्लभ बानियाँ का संग्रह किया है। इसमें कुल मिलाकर 24 प्रसिद्ध–अप्रसिद्ध सिद्ध नाथों की वानियोँ दी गयी। इसमें सभी नाथों के तो उल्लेख किया गया है किंतु सिद्धों में केवल उन्हीं का उल्लेख हुआ है, जो नाथ संप्रदाय के आदि प्रवर्तकों में गिने जाते है। नागार्जुन, भर्तृहरि, चर्पटी गोरखनाथ आदि के अतिरिक्त कुछ ऐसे अप्रसिद्ध नाथ भी हैं, जिनका पहले कभी उल्लेख नहीं हुआ था। धूँधलीमल, पार्वतीजी, महादेव जी, रामचंद्रजी, लक्ष्मण जी, सतवंती जी आदि इसी प्रकार के साधक हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास – डॉ. नगेन्द्र।
2. हिन्दी साहित्य का इतिहास–डॉ. चातक, प्रो हजारी प्रसाद द्विवेदी।
3. हिन्दी साहित्य का इतिहास– आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी।
4. हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास–डॉ. राजेश्वर चतुर्वेदी।
5. हिन्दी साहित्य कोष भाग–2 – सं. धीरेन्द्र वर्मा।

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) January to March 2017, Vol. I

हिन्दी सिनेमा के बदलते परिदृश्य

डॉ. अमित शुक्ल *

शोध सारांश – हिन्दी सिनेमा ने शुरू से ही अखिल भारतीय सिनेमा बन जाने का स्वांग रचा भाषाई, सांस्कृतिक और भौगोलिक विविधता के कारण भारत एकमात्र देश है। जहां कई भाषाओं में एक साथ फिल्में बनाई जाती है। किन्तु गैर हिंदी सिनेमा का दायरा बहुत सीमित है, उसका भाषाई क्षेत्र हिन्दी सिनेमा अकेला ऐसा सिनेमा था जिसने अखिल भारतीय स्तर पर वर्चस्व स्थापित करने का स्वप्न देखा किन्तु राष्ट्रीय सिनेमा का पर्याय नहीं बना सका। आज का सिनेमा ठीक वैसा नहीं है। जैसा एक दशक पहले था। तकनीक से लेकर प्रस्तुतीकरण भाषा नृत्य से कथानक तक में अभूतपूर्व परिवर्तन हुए है। आने वाले समय में भी सिनेमा के कलाकार सत्य की खोज में लगे रहेंगे। बस उनके हथियार और अंदाज बदले हुए रहेगे।

शब्द कुंजी – सिनेमा, राष्ट्रीय सिनेमा, कला सिनेमा, भारतीय बाजार, शताब्दी वर्ष, मसाला फिल्म, अपराध, डिजिटल प्रौद्योगिकी, तकनीकी क्रांति, भविष्य, अंदाज ,बदले हुए।

प्रस्तावना – हिन्दी सिनेमा के बदलते परिदृश्य में तकनीक से लेकर प्रस्तुतीकरण भाषा नृत्य से कथानक तक में अभूतपूर्व परिवर्तन हुए है। इसका मुख्य कारण हैं, उसके अनुभव व भौगोलिक दायरा अत्यन्त सीमित है। हिन्दी फिल्म निर्देशको द्वारा यह ठान लेना कि वह गीत–संगीत, नृत्यों से परिपूर्ण फिल्मो का ही निर्माण करेगे।[1] अन्य देशों में ऐसी फिल्मों को 'म्यूजिकल्स फिल्म' कहा जाता है वह सिनेमा का एक प्रकार है, किन्तु हिंदी सिनेमा का एक प्रकार है 'म्यूजिकल फिल्म' हिंदी सिनेमा से प्रभावित होकर अन्य भाषाई फिल्मों ने भी इस रूप को फिल्मों में अपनाया। सत्तर के दशक में भारत सरकार ने हिंदी सिनेमा को एक नए स्वरूप में बदलने तथा नए सिनेमा निर्माण के लिए संस्थागत कदम उठाए। जो कला सिनेमा समानान्तर सिनेमा आदि नामों से जाना गया। मनोरंजन कर के मुक्त होने पर भी सिनेमा घर दर्शको को आकर्षित नहीं कर सके। प्रारम्भ में निर्माता–निर्देशकों, सुपरिचित कहानियों को खंगालते रहे पुराणों व ग्रन्थों पर सैकड़ों फिल्में बनाई जाने लगी। जिनका आधार पौराणिक कथाए थी। 1920 के दौर में भारतीय सिनेमा ने सामाजिक मुद्दो को प्रदर्शित करने वाली फिल्मे बनाई जो 'टीपिकिल्स' कहलाती थी जो पूरे भारत वर्ष में प्रदर्शित की जाती थीं क्योकि यह दौर मूक फिल्मो का दौर था इसलिए संवाद भाषा की कोई भूमिका न थी। [1] बिलैत–फिरैत, धीरेन्द्र–गागुली 1921, सावकारी पाई बाबूराव पेंटर 1925, रजिया सुल्तान–धीरेन्द्र गांगुली 1924, लाइट ऑफ एशिया 1925 शिराण–फ्रेज आस्टन 1929 इसे चुनिंदा फिल्मो को शामिल किया जा सकता है। जिनके दर्शक अखिल भारतीय थे। पहली सावाक (बोलती फिल्म) 'आलम–आरा' 1931 में बनी पहली सावाक फिल्म थी। जिसमें लगभग एक दर्जन गीत थे, [2] यानी गीत–नृत्य संगीत की परम्परा को कायम रखा गया। हिन्दी सिनेमा के निर्माता–निर्देशक सरल मिली जुली जबान का प्रयोग करने लगे। 1940–1950 के दशक में बड़ी संख्या में लेखक, कवि अभिनेता और संगीतकार मुम्बई आकर बस गए। द्वितीय महायुद्ध के आरंभ में कई नामी स्टूडियों ढह गए, सट्टेबाजों और मुनाफा खोरों ने स्वतंत्र निर्माताओं का रूप धारण कर लिया। फिर मुम्बई को भारतीय सिनेमा के सबसे बड़े केन्द्र में बदलने से रोक नहीं सके। आजादी के दो दशक पूरा होते–होते 'हिंदी सिनेमा की भारतीय बाजार पर पकड़ अत्यन्त मजबूत हो चली। 1990 से 2000 के दशक में बॉली–बुलीकरण की प्रक्रिया ने जोर पकड़ा न केवल प्रवासी भारतीय मीरा नायर, मेहता, नागेश बुकनूर, हिंदी फिल्मों का निर्देशन करने लगे और प्रवासी भारतीयो की कहानियों को भी सिनेमा की पटकथा में पर्याप्त स्थान दिया जाने लगा।[3]

आधुनिक प्रौद्योगिकी ने भारतीय सिनेमा का प्रभावित किया है। भारतीय फिल्मकारों को निर्माण और प्रदर्शन की अत्याधुनिक डिजिटल प्रौद्योगिकी मिलने से डिजिटल भारतीय सिनेमा पर इसका अच्छा प्रभाव पड़ा। नए कैमरे (जो 1.5–2 लाख रूपये में उपलब्ध डी.एस.एल.आर.) छोटे बजट के फिल्मकारों को सहजता से उपलब्ध होने लगे। जिसके फलस्वरूप टेलीविजन के सैकड़ो धारावाहिक तथा भोजपुरी, छत्तीसगढ़ी, पंजाबी और हिमाचली भाषाओं में फिल्मों का निर्माण होने लगा। डिजिटल कैमरे ने सिनेमा को बड़ी पूंजी की पकड़ से मुक्त दिया। 2011 में रिलीज फिल्म 'स्टैनली का डिब्बा' हैं इसके अलावा 'रेड वन' के नाम से कैमरे का चलन भी तेजी से बढ़ रहा है। यह कैमरा अपेक्षाकृत महंगा है। लेकिन नतीजे बेमिसाल है। 2012 में हैवर विलग्रामी के निर्देशन में बनी फिल्म 'प्यार में क्यू' है। ऐसी एलक्स नामक नए कैमरे की मदद से विशाल भारद्वाज ने 2013 में 'मटरू की बिजली का मंडोला' का सफल निर्देशन किया। दृश्यो की पिक्सेल गुणवत्ता को अधिकतम रूप में बरकरार रखने वाले इस कैमरे की विशेषता है कि परदे पर प्रक्षेपित फिल्म को देखकर लगता है कि सब कुछ सामने जीवान्तता के साथ घटित हो रहा है। देखा जाए तो वर्तमान परिदृश्य में डिजिटल प्रौद्योगिकी ने सिनेमा के शिल्प और रूप को बदलने की संभावनाओ को टटोला है। 1991 में भारत में उदारीकरण और वैश्वीकरण पर सरकारी मोहर लगते ही हॉलीवुड भारतीय बाजार में घुसपैठ की योजना बनाने लगा। भारत में हालीवुड मौजूद हैं सोनी, फाक्स, एम.जी.एम. आदि बडी कंपानियां दुकानें खोले बैठी है। 2009 में सोनी के बैनर तले 'सांवरिया' फिल्म का निर्माण हुआ। उसके बाद एक दर्जन फिल्में हालीवुड की मदद से बनाई जा चुकी है। हालीवुड धड़ल्ले से अपनी फिल्मों को भारतीय भाषाओं में डबिंग भी कर रहा है। घरेलू फिल्म पर उसकी पकड़ मजबूत होती जा रही है। हालीवुड की ताकत है,

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

उसकी अकूत पूंजी, नवीनतम प्रौद्योगिकी और अन्तर्राष्ट्रीय बाजार की उपलब्धता।

भविष्य में सिनेमा का स्वरूप – आज का सिनेमा ठीक वैसा नहीं है। जैसा एक दशक पहले था। तकनीक से लेकर प्रस्तुतीकरण भाषा नृत्य से कथानक तक में अभूतपूर्व परिवर्तन हुए है। 1937 में 'आलम आरा' बनाने वाले आर्देशिर ईरानी ने कन्हैया' नाम की रंगीन फिल्म बनाई तब फिल्मी दुनिया में खलबली मच गई थी। हिंदी सिनेमा जगत का ये पहला क्रांतिकारी बदलाव था। आज सिनेमा में हो रहे बदलाव की रफ्तार इतनी तेज हैं कि कई बार उसे पकड़ना भी मुश्किल लगता है। इसके आधार पर भविष्य की रूपरेखा खींची जा सकती हैं लेकिन तयशुदा तौर पर कुछ नहीं कहा जा सकता है। कल के सिनेमा का स्वरूप तय करने में जिसे कारक की सबसे ज्यादा भूमिका होगी वह है, तकनीक श्रेष्ठता तकनीक ने सिनेमा के जादू को हजार गुना बढ़ा दिया है। 1993 में बनी 'जुरासिक पार्क' के दृश्यों ने जब 70 एम.एम. के परदे पर उछल कूद मचाते चिंघाड़ते डायनासोर ने दर्शकों को हतप्रभ कर दिया था।[4] कोई सोच भी नहीं सकता था कि हजारों साल पहले पाए जाने वाले डायनासोर का जीवन सिनेमा में इतने जीवंत तरीके से उतारा जा सकता है, लेकिन ये तकनीक ही थी जिसने हालीवुड के मशहूर निर्देशक स्टीवन के सपने को सच कर दिखाया था। तकनीक ने न केवल सिनेमा के दृश्यों को भव्य और असरदार बनाया बल्कि असंभव सी लगने वाली कल्पना को सिनेमाई इतिहास का यथार्थ बना दिया है। 'जुरासिक पार्क' के बाद कई ऐसी फिल्में आई है जिन्होंने तकनीक भव्यता और स्पेशल इफेक्ट्स के सहारे लोगों का ध्यान अपनी ओर खींचा है। इनमें भविष्य के सिनेमा की झलक भी देखी जा सकती है। एक तरफ जहां तकनीक ने फिल्मो को भव्य और असरदार बनाया है, वही दूसरी ओर मोबाइल क्रांति के बाद शार्ट फिल्मो का नया दौर शुरू हुआ है। एम.एम.एस. की बात छोड़िए अब फिल्मे भी मोबाइल पर देखी–दिखाई जाने लगी है। एक तरफ जहां तकनीक ने फिल्मो को भव्य और असरदार बनाया है, वही दूसरी ओर मोबाइल क्रांति के बाद शार्ट फिल्मो का नया दौर शुरू हुआ है। वो दिन दूर नहीं जब शार्ट फिल्मो को भी फीचर फिल्मों की तरह मान्यता मिलेगी। शार्ट फिल्मों के लेखक, अभिनेता और दर्शकों को भी सम्मान की निगाह से देखा जाएगा। मोबाइल के एक छोटे–से परदे पर अनंत संभावनाओं की खिड़की खुल सकती है। समाचार सुने जा सकते है, किताबें पढ़ी जा सकती है। तो फिर फिल्म क्यों नहीं देखी जा सकती। सूचना क्रांति ने अब तक फिल्म की विषय वस्तु को प्रभावित किया था, लेकिन आने वाले समय में वो फिल्म के फर्मेट को भी प्रभावित करेगी इसमें कोई संदेह नहीं है। तीन घण्टे के बजाय फिल्में 30 मिनट की बनेगी। उनका अलग दर्शक वर्ग होगा, बाजार होगा और सफलता – असफलता के अलग पैमाने होगे।[5]

सिनेमा उद्योग और आर्थिक संरचना – एक जमाना था, जब कुछ खास फिल्मी घराने फिल्मों में पैसा लगाते थे और उनका निर्देशन भी करते थे। जैसे कि यशराज बैनर्स सिनेमा की आर्थिक संरचना पर इन घरानों का प्रभाव रहा करता था, लेकिन भू–मंडलीकरण के बढ़ते दबाव और फिल्मों से अकूत कमाई की संभावना ने इसमें बड़े–बड़े उद्योगपतियों को निवेश करने के लिए मजबूर किया है। अनिल धीरूबाई अंबानी के मालिक अनिल अंबानी ने हालीवुड के मशहूर निर्देशक स्टीवन रियलवर्ग के साथ मिलकर 2009 में 'रिलायंस ड्रीम वर्क' की स्थापना की थी। इसका मकसद वैश्विक स्तर पर वैश्विक अपील के साथ और वैश्विक दर्शकों के लिए फिल्मे तैयार करना है। वैश्विक पूंजी का मकसद न केवल वैश्विक जुटाना है, बल्कि वैश्विक स्तर पर कलाकारो के संबन्ध को भी आगे बढ़ाना है। बालीवुड के इतिहास में पिछले दशक को विखंडा काल का नाम दिया जा सकता है। पुराने फॉमूले तकनीक, मान्यताएँ कौशल–कलाओं और सोच की विभाजक रेखाएँ बुरी तरह टूटी है। एक दौर था जब बडे परदे और छोटे परदे के कलाकारों के बीच स्पष्ट विभाजन था, लेकिन अब ये विभाजन मिट चुका है। छोटे परदे के कई कलाकार अब बड़े परदे पर नजर आ रहे है। बड़े कलाकारो ने भी क्षेत्रीय सिनेमा का रूख किया हैं यहां तक कि अमिताभ बच्चन ने भी भोजपुरी फिल्म 'गंगा' में काम किया है। इसके अलावा अन्तर्देशीय फिल्म उद्योग के साथ भी बालीवुड का विषय और कलाकारों में भी आदान–प्रदान हुआ है। तमिल और तेलुगू के सितारे अब हिंदी पट्टी में खूब जाने–पहचाने जाते है, बल्कि पसंद भी किए जाते है। 'गजनी' (आमिर खान), 'सिंघम' (अजय देवगन) जैसी फिल्मों की सफलता ने हिट का एक नया फॉर्मूला दिया है। आने वाले दिनों में ये आदान–प्रदान और बढ़ेगा कमल हसन की फिल्म 'विश्वरूपम' का जितना आनंद किसी दक्षिण के दर्शक ने लिया होगा उतना ही मजा हिंदी के दर्शकों ने भी उठाया है। भविष्य में ये लेन–देन और बढ़ेगा। इससे सिनेमा का पुरानी सीमा रेखा टूटेगी और नई जमीन तैयार होगी।[6]

भारतीय सिनेमा के बदलते परिदृश्य में अब संवाद अदायगी की भाषा और डायलॉग्स अब वैसे नहीं होगे, जैसे दस या बीस साल पहले थे। आज से 20–30 साल बाद के सिनेमा के बारे में ख्याल किया जाए तो जिस भाषा का अक्स उभरता है, वो 'हिग्लिंश' जैसी कुछ लगती है। विज्ञापन, सीरियल, और रियलिटी शोज में तो उस भाषा का दखल पहले ही बढ़ चुका है अब सिनेमाई परदे पर उसका प्रभाव जमना बाकी है। अनुराग कश्यप ने तो अपनी फिल्मों में इसकी शुरूआत कर ली है। उनकी फिल्मों के गाने ठेठ देसीपन और नग्न यथार्थ को व्यक्त करते है, लेकिन उनकी भाषा हिग्लिंश जैसी होती है। 'इमोशनल अत्याचार' और 'ओ री वुमनिया' को एक संकेतक के रूप में किया जा सकता है। भविष्य में फिल्मों के गाने इन्हीं की तर्ज पर बनाए जाएगें।

निष्कर्ष यह है कि हमारी मानसिक संरचना के विकास में जितना असर सिनेमाई नायकों का होता है, उतना ही किसी और का होता हो। सुनहरे परदे की अभिनेत्रियो हमारे ख्वाबो में आती है। इसी तरह सलमान खान जैसे अभिनेता स्त्रियों की कल्पनाओं में बसते है। भले ही भविष्य के सिनेमा में पारंपरिक अर्थो में नायको का अन्त हो जाए, लेकिन नायकत्व रहेगा। अर्थात् अच्छाई की प्रवृत्ति अच्छे और बुरे के संघर्ष से ही सिनेमा बनता है। ये संघर्ष और द्वन्द्व ही सिनेमा ही भाषा और व्याकरण को रचता है। जितना बड़ा संघर्ष और द्वन्द्व होगा, उतना ही बड़ा सिनेमा या सिनेमाकार होगा। आने वाले समय में भी सिनेमा के कलाकार सत्य की खोज मे लगे रहेगे। बस उनके हथियार और अंदाज बदले हुए रहेगे।[7]

संदर्भ सूची :–

1. तेवर ऑनलाइन (हिन्दी), दिनांक 30.04.2013 शीर्षक 'ये कहॉ आ गए हम' भारतीय सिनेमा के 100 साल।
2. प्रभा साक्षी, नई दिल्ली, 23 अप्रैल 2012, शीर्षक : हिन्दी सिनेमा के सौ वर्ष पर विशेष।
3. वेब दुनिया (हिन्दी), शीर्षक : आस्कर और भारतीय सिनेमा।
4. समयान्तर, जुलाई 2012, शीर्षक भारत में सिनेमा के सौ साल–1
5. आहा ! जिंदगी – जून 2013
6. दैनिक भास्कर – 15 दिसंबर 2013
7. स्वयं का सर्वेक्षण व निष्कर्ष

तकनीकी क्रांति में हिन्दी भाषा के बढ़ते कदम

डॉ. वंदना चराटे*

प्रस्तावना – आज का युग सूचना, संचार तथा विचार का युग है, जिसमें भाषा, तकनीक और प्रौद्योगिकी का घनिष्ठ संबंध है। मानव विकास और भाषा विकास के प्रत्येक चरण में भाषा, तकनीक और प्रौद्योगिकी ने अहम भूमिका निभायी है। संचार क्रांति के संदर्भ में कम्प्यूटर भाषा वैज्ञानिक बिल गेट्स ने कहा था 'सम्पूर्ण संचार क्रांति मात्र कम्प्यूटर के विभिन्न उपयोग मात्र है। वह दिन दूर नहीं जब संचार का एक प्रमुख साधन प्रिंट मीडिया जो कागजों पर निर्भर हैं, दुर्लभ वस्तु हो जाएगी और उनका स्थान कम्प्यूटर और इलेक्ट्रॉनिक माध्यम ले लेंगे।'

सूचना क्रांति के क्षेत्र में आज जो नया विस्फोट हुआ है, वह भाषा में भी एक मौन क्रांति बनकर आया है। अभी तक भाषा को मनुष्य की आवश्यकताओं को पूरा करना पड़ता था लेकिन आज तकनीक हेतु नित नवीन भाषाई मांगों को भी पूरा करना पड़ रहा है।

हिन्दी विश्व की तीन सबसे बड़ी भाषाओं में से एक है। लगभग 1 करोड़ 30 लाख भारतीय मूल के लोग विश्व के 132 देशों में फैले है। जिसमें आधे से अधिक हिन्दी भाषा को व्यवहार में लाते है, गत पचास वर्षों में हिन्दी की शब्द संपदा का अत्यधिक विस्तार हुआ है, विदेशों में भी हिन्दी के पठन, पाठन और प्रचार प्रसार तीव्र गति से हो रहा है, दूरसंचार माध्यमों फिल्मों, गीतों, हिन्दी पत्र पत्रिकाओं ने हिन्दी भाषा के प्रचार प्रसार में अहम भूमिका अदा की है। तकनीक एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में भारत का वर्चस्व तेजी से बढ़ रहा है। हिन्दी का व्यापक प्रयोग जन संचार माध्यमों की अनिवार्य आवश्यकता बन गया है।

भारत वर्ष में सन् 1950 में संपर्क, सूचना एवं प्रसारण, टेलीग्राफ एवं टेलीफोन के माध्यम से हुआ। इसके पश्चात् रेडियो, टेलीविजन, कम्प्यूटर, इंटरनेट आदि का विकास हुआ।

भारत की विभिन्न सरकारी और निजी कम्पनियों में कम्प्यूटर का आगमन 1995 के बाद ही हुआ। विभिन्न प्रकार की मषीनों, कम्प्यूटर के सॉफ्टवेयरों और यूजर इंटरफेस में हिन्दी के विकास का लम्बा इतिहास रहा है, भारत सरकार ने वर्ष 1986 में प्रथम इनस्क्रिप्ट कीबोर्ड को मानकीकृत किया।

हिन्दी भाषा का व्याकरण वैज्ञानिक आधार पर बना है, इसलिये देवनागरी लिपि कम्प्यूटर यंत्र की प्रक्रिया के अनुकूल है। इसमें विश्व के किसी भी भाषा एवं ध्वनि का लिप्यांकन किया जा सकता है।

कम्प्यूटर में हिन्दी प्रयोग की बढ़ती संभावनाओं को ध्यान में रखकर इलेक्ट्रॉनिकी विभाग ने भारतीय भाषाओं के लिये टेक्नॉलोजी विकास नामक परियोजना के अन्तर्गत कई प्रोजेक्ट शुरू किये है। इस प्रयास में आई.आई.टी. कानपुर और सी.डेक की भूमिका प्रमुख थी। कम्प्यूटर पर हिन्दी भाषा ध्वनि, चित्र, एनीमेशन की सहायता से विकसित की जा रही है।

हायपर टेक्स्ट सिस्टम से वर्ल्ड वाईड वेब का विकास हुआ, जिसने विश्व को संचार क्रांति के नये मायने की ओर अग्रसर किया, वर्ष 1991 में यूनिकोड का पहला संस्करण 1.0.0 जारी किया गया जिसमें नौ भारतीय लिपियों के साथ देवनागरी को भी शामिल किया।

वेब पर हिन्दी का पहला कदम सन् 1999 में भारत के पहले हिन्दी पोर्टल 'वेबदुनिया' के रूप में आरंभ हुआ। ये सर्च पोर्टल अनेक वेबसाईटों का संग्रह और प्रबंधन करता है। मुख्य सर्च पोर्टल गूगल, याहू, लीफॉस, माईक्रोसॉफ्ट नेटवर्क की मदद से आसानी से पहुंचा जा सकता है, वर्तमान में हिन्दी साहित्य और भाषा के संदर्भ में जानकारी देने के लिए बहुत सारे पोर्टल है। पोर्टल्स और वेबसाईट ने हिन्दी भाषा और साहित्य को अब किताबों से निकालकर ऑनलाईन कर दिया है। हिन्दी भाषा में वेबपेज विकसित करने हेतु 'प्लग इन पैकेज' तैयार किया गया है, जिससे कोई भी व्यक्ति, संस्था अपने वेबपेज हिन्दी में प्रकाशित कर सकता है। आज वेबसाईट पर हिन्दी में इलेक्ट्रॉनिक शब्दकोष उपलब्ध है। माईक्रोसॉफ्ट, याहू, रेडिफ, गूगल आदि विदेशी कम्पनियों ने अपनी वेबसाईट पर हिन्दी भाषा को स्थान दिया है। देवनागरी टायपिंग सुविधा, वर्णाक्षरों के विविध आकार ओर लेखन शैलियाँ लिप्यान्तरण के साधन, अक्षर, शब्द उच्चारण जैसी सामग्री और संसाधन उपलब्ध है, अब हिन्दी के सर्च इंजन भी हिन्दी के विभिन्न सॉफ्टवेयर तथा लिंक का उपयोग कर ऑनलाईन तथा ऑफ लाईन समाचार पत्र, पत्रिका, साहित्य, भाषा, शब्दकोष आदि उपलब्ध करा रहे है। वर्तमान में इंटरनेट पर नवभारत टाईम्स, दैनिक जागरण, हिन्दुस्तान टाईम्स, नई दुनिया, अमर उजाला, दैनिक भास्कर जैसे समाचार पत्र उपलब्ध है।

इंटरनेट पर हिन्दी का सबसे महत्वपूर्ण वर्ष 2003 था। जब हिन्दी विकिपीडिया का आरम्भ हुआ। आंकड़ों के अनुसार 2011 तक हिन्दी आलेखों की संख्या 1,00,000 थी। इसी वर्ष इंटरनेट/डेस्कटॉप सर्च हिन्दी में उपलब्ध हुआ। जी–मेल के जरिये ई–मेल की सुविधा हिन्दी में मिलने लगी। साथ ही हिन्दी ब्लॉगों का पदार्पण हुआ।

दुनिया के सबसे अधिक प्रयोग किए4 जाने वाले सर्च इंजिन गूगल ने 2008 में मशीनी हिन्दी अनुवाद की सुविधा प्रदान की। इस सुविधा ने भाषा और साहित्य के विकास के व्यापक परिप्रेक्ष्य का निर्माण किया। टेक्नॉलोजी में हिन्दी भाषा ने अद्भुत पैठ बनायी है। वर्ष 2010 में टचस्क्रीन डिवाईसों पर हिन्दी टंकण हेतु टचनागरी नामक ऑनलाईन हिन्दी की बोर्ड जारी किया गया। आज मोबाईल, आई पेड, टेब, स्मार्टफोन, किंडल आदि में हिन्दी पुस्तकें पढ़ने और प्रेषित करने की सुविधा उपलब्ध है। सन् 2011 में 'तकनीकी शब्दावली आयोग' ने हिन्दी शब्दावली ऑनलाईन की, वर्ष

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) बी.एल.पी. शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महू (म.प्र.) भारत

2014 में गूगल मैप्स हिन्दी में देखने की सुविधा आरम्भ हुई। साथ ही इसी वर्ष गूगल द्वारा बोलकर हिन्दी टाईप करने की सुविधा और हिन्दी वाईस सर्च (बोलकर खोजने की सुविधा) शुरू की गई। यूनिकोड, माईक्रासॉफ्ट, गूगल, कैफे हिन्दी प्रखर, लिपिकार जैसे ऑफलाईन टूल्स है। जिनकी सहायता से हम हिन्दी टायपिंग और लेखन कर सकते है। फेसबुक, ट्विटर, लिंक्डइन आदि सभी प्रकार की सोशल नेटवर्किंग साईटो में हिन्दी की सुविधा उपलब्ध है। इसमें हिन्दी टाईप के साथ संदेश भी भेज सकते है।

अंत में कहा जा सकता है कि तकनीक के क्षेत्रों में प्रांरभिक संघर्ष के दौर से गुजरती हिन्दी विश्व की सर्वाधिक प्रिय भाषा के रूप में अपना मार्ग प्रशस्त करेगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. प्रयोजनमूलक हिन्दी - डॉ. संजीव जैन।
2. विकास प्रभा हिन्दी त्रैमासिक पत्रिका।
3. इंटरनेट।

****

लोक साहित्य में सामाजिकता

डॉ. एस. एस. राठौर *

प्रस्तावना – लोक साहित्य का विस्तार बहुमुखी एवं व्यापक होता है। लोक संस्कृति उससे भी अधिक व्यापक है। साहित्य तो लोक संस्कृति का एक भाग है। भारत में लोक साहित्य की परम्परा अत्यंत प्राचीन काल से चली आ रही है। प्राचीन ग्रन्थों में इसकी उत्पत्ति एवं विकास की जो कथा चली आ रही है, वह अत्यंत ही रोचक है। लोक साहित्य कैसे उत्तरोत्तर विकास करते हुए विभिन्न शताब्दियों से होकर आज भी अपनी स्थिति एवं उपस्थिति बनाए हुए है। इन बातों के साथ यह भी विचारणीय प्रश्न है कि आधुनिक युग में लोक साहित्य के अध्ययन एवं अन्वेषण की दिशा में क्या काम हो रहा है। लोक साहित्य का कथानक, ऐतिहासिक, पौराणिक, धार्मिक, श्रंगारिक, काल्पनिक सभी प्रकार का होता है। वहॉ अधिकतर धार्मिक भावनाओं तथा सरल मानवीय स्तर के शाश्वत मूल्यों पर ही प्रकाश डाला जाता है। इनमें प्रेम, वीरता आदि भावों की ज्यादा अभिव्यक्ति होती है। लोक साहित्य जनता के हृदय का उद्गार होता है। इसमें जन सामान्य का समग्र जीवन प्रतिबिंबित होता है। यह सत्य है कि समाज में सामान्य तथा असामान्य दोनों प्रकार के लोग रहते हैं किन्तु असामान्य लोगों की संख्या कम ही होती है। अत: लोक रंजन ही लोक साहित्य का सबसे बड़ा आधार माना जाता है। जो समाज को एक साथ उठने-बैठने, खाने-पीने तथा रहने के लिए उपयुक्त होता है। लोक साहित्य में यह सारे गुण समाहित होते हैं।

भारतीय संस्कृति का जैसा स्वाभाविक तथा मनोहारी चित्रण लोक साहित्य में दिखाई देता है, वैसा अन्यत्र दुर्लभ है। अत: लोक साहित्य की समान भाव धाराओं को समझना अनिवार्य हो जाता है। खास तौर पर लोक साहित्य का समाज पर जो सीधा असर पड़ता है, वह शोध का विषय बन जाता है। आज भी लोक साहित्य के प्रति जो सजगता दिखाई देती है वह केवल गॉवों तक ही सीमित रह गई है। जैसे-जैसे नगरीय संस्कृति अपने पैर पसारती जाती है लोक संस्कृति का ह्रास होता जाता है। वर्तमान भौतिकवादी युग में इस मूल को बचाना व संजोकर रख पाना बड़ी चुनौती है। लोक साहित्य का महत्व सामान्य जीवन के सर्वांगीण सत्य का उद्घाटन करता है। किसी भी देश या जाति के जीवन में उसके लोक साहित्य का बहुत अधिक महत्व होता है। लोक साहित्य पहले मौखिक स्वरूप में होने के कारण काफी दिनों तक लोकांतरित होता रहता है किन्तु बाद में वह लोप हो जाता है। लोक साहित्य अपने व्यापक परिवेश में देश के जीवन की धार्मिक, सामाजिक तथा सदाचार संबंधी विशेषताओं को सुरक्षित रखती हैं ।

लोक साहित्य की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उसकी सामाजिक सापेक्षता अधिक होती है। यह उसी मिट्टी से पैदा होता है और उसी की सुगंध में रचता बसता है। आज के साहित्यकार उस साहित्य को जिस विद्रूप दृष्टि से देखते हैं, इसी कारण उसका समझ पाना कठिन है तथा जिस सामाजिकता की बात करते हैं, वह मात्र काल्पनिक दिखाई पड़ती है। हमारे पुराने सामाजिक संस्कार इतने सुदृढ़ थे जिसका एक उदाहरण बुन्देली में नवल किशोर 'मायूस' लिखते है-

जब अपने तपने जीवन को
पल पल हतो सुहानो
को जानें अब कितै बिला गओ
है ऊ समय पुरानों
पैलें आदमी कउॅ जैबे खां, घर से जब निकरत ते ।
गॉव पुरा में सबई जनन से, राम रहीम करत ते ।।
तन-तन की बातन पे होके, कोउ न कबहूॅ रिसानो ।
को जानै अब कितै बिला गओ है उ समय पुरानों ।।[1]

लोक साहित्य में ऐसे स्थल शायद ही मिलें जिनका सम्बंध प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से समाज से न हो। लोक संस्कृति में आज भी ग्रामीण अंचलों में होरी और दिवारी में जो सामाजिक सद्भाव दिखाई देता है, वह हमारी भारतीय संस्कृति को जीवंत रखने में सहायक है।

मिलिके मनत हतीती सबरें, होरी और दिवारी ।
हतो ऐन सुख चैन पैल की, रीत लगत ती प्यारी ।।
जनी मांस सब प्रेम एकता, को पैरत ते गहनो ।।
को जानै अब कितै .....

वस्तुत: इतिहास में संस्कृति के भ्रामक रूप को ग्रहण किया गया है। जब कि लोक साहित्य के बारे में विभिन्न विद्धानों ने जो अपनी मान्यताएं दी ही है, वह अत्यन्त ही मूल्यवान है। लोक साहित्य कभी भी नया पुराना नहीं होता है, वह तो संसार के एक वृक्ष के समान है। जिसकी जड़ें भूत काल की धरती पर काफी गहरी धंसी हुई हैं। परन्तु जिसमें प्रति क्षण नवीन डालियां, पल्लव और फल लगते रहते हैं। जिनमें हर समय नवीनता दिखाई पड़ती है उस वृक्ष के सुरभित पुष्प सामाजिक वातावरण में अपनी खुश्बू हमेशा बिखेरते रहते है।

खेतों में कृषक चलाते हल, प्रमुदित श्रम स्वेद सने ।
उधर धातु गलते बनते हैं, आभूषण और वस्त्र नये ।।
वह विज्ञानमयी, अनिला पंख लगाकर उड़ने की ।[2]

डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय के अनुसार लोक साहित्य में जो समाज का चित्रण हुआ है, वह अत्यन्त ही सरल एवं सुसंस्कृत है। हमारा लोक साहित्य बहुत ही भावनात्मक एवं मक्खन की तरह है। यहॉ सामाजिक मर्यादाओं का निर्वाह, पारस्परिक व्यवहार का वर्णन जैसे ननद-भावज, देवर-भावज का जो मार्मिक चित्रण है, वह अन्यत्र नहीं मिलता।[3]

आज सामाजिक मान्यतायें बदलती जा रही हैं। संकीर्ण मानसिकता

* प्राध्यापक (हिन्दी) छत्रसाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पन्ना (म.प्र.) भारत

अधिक बढ़ती जा रही है। संयुक्त परिवार टूट रहे हैं तथा परिवार की परिभाषा में केवल पति, पत्नी तथा उनके बच्चे तक ही सीमित हैं। पहले घर एवं परिवार का एक ही मुखिया होता था। जो पूरे परिवार का संचालन करता था तथा उसी की आज्ञा का पालन सब कोई करता था लेकिन आज मुखिया शब्द का अर्थ भूल गए लोग। मानवीय संवेदनाए इतनी मर चुकी हैं कि किसी के सुख दुख से किसी को कोई फर्क नहीं पड़ता है। किसी भी देश या जाति के जीवन में उसके लोक साहित्य का इतना अधिक प्रभाव पड़ता है कि समाज अपने अतीत को जब याद करता है, तो सिर्फ पछतावा शेष रह जाता है कि हमने अपना क्या खो दिया। लोक संस्कृति एवं लोक साहित्य की सत्ता हमेशा प्रथक रहती है। प्राचीन भारतीय साहित्य के अध्ययन काल से ही लोक संस्कृति की धारा बहती आ रही है। जिसमें लोक संस्कृति का प्रेरणा स्त्रोत लोक ही था, जिसकी भूमि सामान्य जन मानस था। जिसका बौद्धिक विकास की दृष्टि से निम्न धरातल था पर किसी भी देश के धार्मिक, सामाजिक विश्वासों तथा क्रिया कलापों के पूर्ण परिचय के लिए लोक साहित्य या कि लोक संस्कृति का अध्ययन नहीं किया जावेगा तब तक भारतीय सामाजिक संरचना को समझ पाना कठिन ही होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. नवल किशोर 'मायूष' 'बुन्देली बसंत' पुराने समय पृष्ठ 41, 2015
2. जय शंकर प्रसाद, कामायनी, पृष्ठ 181, 186
3. डॉ. कृष्णदेव शर्मा, लोक साहित्य समीक्षा, पृष्ठ 03

****

समकालीन महिला कहानीकार - क्षमा शर्मा और उनका कृतित्व

डॉ. रागनी चौहान *

''और स्त्रियां-उनकी कठिनाईयों के तो कहने ही क्या? उनकी कठिनाइयां तो किसी को दिखती ही नहीं। वे हाशिए पर भी नहीं, हमेशा हाशिए से बाहर ही रहती आई है।''

क्षमा शर्मा

प्रस्तावना - क्षमा शर्मा समकालीन महिला कहानीकारों में प्रसिद्ध नाम है, जिनकी कहानियाँ फैशन को चका-चौंध से एकदम परे अपनी अलग ही लीक बनाती है। आप जो स्वयं देखती और महसूस करती है, उसे अपनी कहानियों में दिखाती है। आप की कहानियाँ आत्मविश्वास, यथार्थवादी, समझ, मानवतावादी उदार दृष्टिकोण एवं कलात्मकता से परिपूर्ण होती है, और यही आपकी कहानियों की विशेषता रही है।

आपकी कहानियों में पर्यावरण प्रेम, शहरी जीवन के उतार-चढ़ाव, रूढ़िग्रस्त परम्पराओं- मूल्यों के प्रति विरोध के साथ-साथ सभ्य और शिक्षित समाज में नारी की स्थितियों का मार्मिक चित्रण एवं पारिवारिक रिश्तों के बीच प्रेम और बनते-बिगड़ते, टूटते-बिखरते रिश्तों के बीच होते द्वंद भी दिखायी देता है।[1]

जीवन-परिचय -

जन्म एवं शिक्षा - क्षमा शर्मा जी का जन्म सन् 1955 अक्टूबर में हुआ। आपने हिंदी विषय में स्नातकोत्तर एवं साहित्य और पत्रकारिता में पी.एच-डी. किया और पत्रकारिता में डिप्लोमा भी प्राप्त किया।

क्षमा और उनका कृतित्व - क्षमा शर्मा के व्यक्तित्व और कृतित्व के बारे में जितना कहा जाए वह कम ही होगा। क्षमा शर्मा हिंदी साहित्य की एक प्रसिद्ध लेखिका और पत्रकार भी है। आपके लेखन में उपभोक्तावाद से गहरी घृणा और पर्यावरण के प्रति प्रेम, अत्यंत आत्मविश्वास, मानवता, उदार दृष्टिकोण नजर आता है आप महिला संगठनों और पत्रकारों की यूनियन में सक्रिय भागीदार एवं दो बार 'इंडियन प्रेस कोर' की प्रबंध समिति में सांस्कृतिक कार्यक्रमों की प्रमुख भी रही है।

क्षमा वर्मा का लेखन कार्य सन् 1975-76 के आस-पास आरम्भ हुआ। आपकी 'बाल साहित्य लेखन' और सम्पादन में शुरू से ही रूचि रही है। आपने बच्चों, महिलाओं और पर्यावरण से संबंधित विषयों पर देश की सभी पत्र-पत्रिकाओं में लेख लिख चुकी है। आपकी अनेक रचनाओं का अनुवाद पंजाबी, अंग्रेजी, उर्दू और तेलगू में हो चुका है।

आपकी कहानियों के संबंध में विष्णु नागर लिखते है कि- 'क्षमा शर्मा की कहानियाँ स्त्री की दुनिया के जितने आयामों को खोलती है, उसके जितने संभवतम रूपों को दिखाती है, स्त्री के बारे में जितने नियमों और धारणाओं को तोड़ती है, ऐसा कम ही कहानीकारों की कहानी संग्रहों में देखने को मिलता है। क्षमा शर्मा हिंदी लेखकों की आम आदतों के विपरीत अपेक्षा छोटी कहानियाँ लिखती है, जो अपने आपमें सुखद है, उनकी लगभग हर कहानी स्त्री-पात्र के आस-पास घूमती जरूर है मगर क्षमा शर्मा उस किस्म के स्त्रीवाद का शिकार नहीं है, जिसमें स्त्री की समस्याओं के सारे हल सरलतापूर्वक पुरूष को गाली देकर ढूंढ लिए जाते है। इसका मतलब यह नहीं है कि वह पुरूषों या पुरूष वर्चस्ववाद को बख्शती है, उसकी मलामत वे जरूर करती है और खूब करती है मगर उनकी तमाम कहानियों से यह स्पष्ट है कि उनके एजेंडे में स्त्री तकलीफें, उसके संघर्ष और हिम्मत से स्थितियों से मुकाबला करने की उसकी ताकत में उभारना ज्यादा महत्वपूर्ण है। वह इस मिथ को तोड़ती है कि सौतेली माँ असली (सगी) माँ से हर हालत में कम होती हैं या एक विधुर बूढ़े के साथ एक युवा स्त्री के संबंधों में प्यार और चिंता नहीं हो सकती है, जो कि समान वय के पुरूष के साथ होती है। वह देह पर स्त्री के अधिकार की वकालत करती है, और किसी विशेष परिस्थितियों में उसे बेचकर कमाने के विरूद्ध कोई नैतिकवादी रवैया नहीं अपनाती।

उनकी कहानियों में लड़कियाँ है, तो बूढ़ी औरते भी है, दमन की शिकार वे औरतें है, जो एक दिन चुपचाप मर जाती है तो वे भी है जो कि लगातार संघर्ष करती है लेकिन स्त्री की दुनिया के अनेक रूपों को हमारे सामने रखने वाली यह कहानियाँ किसी और दुनिया की कहानियाँ नहीं लगती, हमारी अपनी इस दुनिया की लगती है बल्कि लगती ही नहीं है भी। इनमें पात्र हमारे आस-पास हमारे अपने घरों में मिलते है, बस हमारी कठिनाई यह है कि हम उन्हें इस तरह देखना नहीं चाहते, देख नहीं पाते जिस प्रकार क्षमा शर्मा हमें दिखाती है और एक बार जब हम उन्हें इस तरह देखना सीख जाते है तो फिर वे अलग व्यक्ति, एक अलग खासियत नजर आती है, और हम स्त्री के बारे में सामान्य किस्म की उन सरल अवधारणाओं से जूझने लगते हैं, जिन्हें हमने बचपन से अब तक प्रयत्नपूर्वक पाला है, संस्कारित किया है। क्षमा शर्मा की कहानियों की यह सबसे बड़ी ताकत है, उनकी भाषा शैली की पुख्तगी के अलावा।'[2]

यूं तो क्षमा शर्मा की कई कहानियाँ नारी चरित्र केन्द्रित है- 'कार्ड', 'खेल', 'छिनाल', 'न्यूड का बच्चा' आदि ऐसी कहानियाँ है जो स्त्री के पारिवारिक संघर्ष, सौतेली माँ की छवि के प्रति लोगों के नकारात्मक और सकारात्मक दोनों पहलुओं को दिखाती है, जो स्त्री जीवन को चुनौती देती हुयी, प्रतीत होती है। 'दादी माँ का बटुआ' एवं 'और अब' कहानियों में कन्या भ्रूण हत्या तथा कन्या भ्रूण जांच जैसे मुद्दे को उठाया है।

'और अब' कहानी में बताया गया है, कि कैसे आज भी पढ़ा-लिखा वर्ग भी लड़कियों को गर्भ में ही खत्म कर देना चाहता है, बेटे की चाहत में। इस कहानी की नायिका रोमी जो कि, सत्रह वर्षीय स्कूली छात्रा है, जो 'कन्या भ्रूण जाँच व हत्या' जैसे कृत्य का विरोध करती है, यह विरोध वह अपनी माँ

* अतिथि विद्वान, शासकीय महाविद्यालय, चंदिया, जिला-उमरिया (म.प्र.) भारत

और दादी के समक्ष करती है, जो इस कुकृत्य को अंजाम देती है।

क्षमा शर्मा अपनी कहानियों के संबंध में स्वयं लिखती है कि- 'ये कहानियाँ उन्हीं स्त्रियों की आवाज को कुछ त्वरा देने की कोशिश है। कैसे तकनालाजी धर्म, समाज के कायदे कानून सबकी कोशिश अंतत: स्त्री को अनुशासित करने की है। स्त्री तभी तक अच्छी लगती है जब तक 'जन्म-जन्म की दासी' और तुम्हारे चरणों में बैठने के लायक की तोटारंटत करती रहे। जरा-सी भी आत्म सम्मान वाली, मजबूत और अपनी राय को दृढ़ता से रखने वाली औरत किसी को पसंद नहीं आती, क्योंकि जो स्त्री बोल सकती है, अपने विचार प्रकट कर सकती है, वह किसी की गुलाम नहीं बन सकती। बोलने वाली स्त्री का अर्थ अंलकारिणी स्त्री जो किसी से दबती नहीं। पुरूषों को यदि अपनी सत्ताा चलानी है तो स्त्री को दबाकर ही उस पर अपनी श्रेष्ठता साबित की जा सकती है, लेकिन समय बदल गया है। अब कोई स्त्री सिर्फ अपने स्त्री होने के नाते किसी पुरूष से दबना नहीं चाहती। इसीलिए नए सिरे से स्त्रियों को यह पाठ पढ़ाने की कोशिश की जा रही है कि उसकी जगह उसका घर है और उसकी एकमात्र कर्मस्थली उसका रसोई घर। अफगानिस्तान में कट्टरपंथी तालिबानों का उभार इसका उदाहरण है।

समय-समय पर हमारे यहाँ भी ऐसे महान विचार प्रकट किए जाते रहते है- जब शंकराचार्य स्त्रियों को वेद पढ़ने की मनाही करते है या लड़कियों को अपनी पंसद से शादी करने पर सजाए मौत दे दी जाती है। पूरा गाँव इस बर्बरता को खामोशी से देखता है। दहेज के लिए औरतों को जलाकर मार देना तो इतनी आम बात मान ली गई है कि अब इस पर चर्चा तक नहीं होती।

ये कहानियाँ मुझे किसी पूरी घटना के रूप में नहीं प्राय: किसी सूत्र के रूप में दिखी है।

कई बार तकलीफें इतनी बड़ी होती है कि कथा में शतांश भी नहीं आ पाता। लेकिन जीवन की अबाध गति उधर ही खीचे लिए जाती है, जहाँ कुछ बेढब है, कुछ शिकायत भरा कुछ ऐसा भी जिसे देख उम्मीद जगती है।'[3]

अंतत: क्षमा शर्मा की कहानियाँ, कहानियों के पात्र विशेषकर नारी पात्र ऐसे पात्र है, जो अपनी आजादी के साथ जिंदगी जीने के उल्लास, उमंग से भरपूर है। यह पात्र सामाजिक मर्यादाओं एवं रूढ़ परम्पराओं की चट्टानों से टकराकर अपनी राह खुद बनाते हैं जीवन में फरेब, संघर्ष, जोखिम, असफलताओं से यह टूटकर बिखर नहीं जाते बल्कि उसका सामना कर अपनी नई पहचान बना लेते है।

क्षमा शर्मा की प्रमुख कहानी संग्रह -

- नेमप्लेट
- काला कानून
- कस्बे की लड़की
- लव-स्टोरी
- थैंक्यू सद्दाम हुसैन
- घर-घर तथा अन्य कहानियाँ।

प्रमुख उपन्यास -

- दूसरा पाठ
- परछाई
- अन्नपूर्णा
- शस्य का पता है।

प्रमुख बाल-साहित्य -

- परी खरीदनी थी।
- भाई की सीख।
- पानी-पानी

प्रमुख टेली फिल्म -

- गाँव की बेटी (दूरदर्शन से प्रसारित)

पुरस्कार -

- 'दूसरा पाठ' उपन्यास के लिए 'हिंदी अकादमी दिल्ली द्वारा पुरूस्कृत किया गया।
- बाल कल्याण संस्थान जबलपुर और इंडो रूसी क्लब द्वारा सम्मानित।
- सोनिया ट्रस्ट नयी दिल्ली द्वारा सम्मानित।[4]

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. लड़की जो देखती पलटकर (कहानी-संग्रह) - क्षमा शर्मा, आवरण पृष्ठ से। (वाणी प्रकाशन)
2. नेमप्लेट (कहानी-संग्रह) - क्षमा शर्मा, आवरण पृष्ठ से। (राजकमल प्रकाशन)
3. इक्कीसवीं सदी का लड़का, (कहानी-संग्रह) - क्षमा शर्मा, पृ. सं. 07, सामायिक प्रकाशन।
4. नेमप्लेट (कहानी-संग्रह) - क्षमा शर्मा, आवरण पृष्ठ से। (राजकमल प्रकाशन)

****

लोक साहित्य में संस्कृत साहित्य की सामाजिक चेतना

डॉ. मंशाराम बघेल *

प्रस्तावना – 'लोक' शब्द का अर्थ है 'देखने वाला।' वह समस्त जन समुदाय जो इस कार्य को करता है, 'लोक' कहा जाता है। 'लोक' शब्द 'दर्शन' धातु से निष्पन्न है। आमतौर पर सर्वसाधारण जनता को ही 'लोक' शब्द का पर्याय माना जाता है।

'लोक' शब्द का वेदों में भी उल्लेख किया गया है। वेद में लोक शब्द स्थानापन्न 'जन' शब्द का भी प्रयोग किया जाता है। महाभाष्यकार पतंजलि ने भी जन साधारणा के अर्थ में 'लोक' शब्द का व्यवहार किया गया है। डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी ने 'लोक' शब्द के अर्थ में जनपद या ग्राम्य नहीं बल्कि नगरों और गाँवों में फैली हुई समस्त जनता माना है।

'लोक' शब्द के साथ पर्याय रूप से लोक संस्कृति शब्द का भी साहित्यवेत्ताओं ने व्यवहार किया गया है। 'संस्कृत' शब्द का अर्थ है, संस्कार किया हुआ, पालिश किया हुआ, दोष तथा त्रुटियों रहित, शुद्ध किया हुआ– आदि अर्थों में 'संस्कृति' शब्द का प्रचलन किया गया है। मानवशास्त्री डॉ. डी.एन. मजुमदार के अनुसार संस्कृति के अन्तर्गत मनुष्यों की रीति–नीति, लोक विश्वास, आदर्श, कलाएँ आदि के द्वारा मानव द्वारा उपलब्ध समस्त कौशल एवं योग्यताओं को लिया जा सकता है।

लोक संस्कृति का यह अभिप्राय है कि जनसाधारण को उस संस्कृति से है जो अपनी प्रेरणा लोक से प्राप्त करती है, जिसकी उत्स–भूमि जनता है।

'लोक साहित्य' की समस्त विधाएँ भी लोक संस्कृति मेंअन्तर्भूत होती है। लोक–गीत, लोकगाथा, लोककथा, लोकनाट्य, लोक सुभाषित और लोकोक्तियाँ, मुहावरें, सूक्तियाँ–आदि सब लोक संस्कृति के अध्ययन के विषय है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि लोक संस्कृति का क्षेत्र–विस्तार अत्यन्त व्यापक एवं विस्तृत है। लोक संस्कृति मानव–जीवन के समस्त अंगों से संबंधित होने से वह लोक साहित्य को भी आत्मसात किए हुए है। डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय कहते हैं कि– 'यदि लोक संस्कृति की उपमा शरीर से दी जाए तो साहित्य उसके एक अंग के तुल्य है। इससे स्पष्ट होता है कि लोक संस्कृति मानव जीवन के सभी अंगों से संबंधित होने के अतिरिक्त उसके लोक साहित्य में आत्मसात किए हुए हैं।

डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय ने 5 भागों में लोक साहित्य का वर्गीकरण किया है जिसमें लोक गीत, लोक गाथा, लोक कथा, लोक नाट्य एवं प्रकीर्ण साहित्य जिसमें लोकोक्तियों, मुहावरें, सूक्तियाँ, सुभाषित, बालगीत, झूले के गीत आदि सम्मिलित है।

वैदिक धर्म का स्वरूप अति विस्तृत और व्यापक हैं। उसकी उदारता, सहिष्णुता व सत्यवादिता के कारण ही भारतीय संस्कृति मेंभारतीय संस्कृतियों में गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त हुआ है।

ब्राह्मण ग्रन्थों में कर्मकाण्डों की व्याख्या है। वेदों में और परावर्ती उपनिषदों में ईश्वर के साकार और निराकारण दोनों रूपों का वर्णन है। परमेश्वर की अनेक शक्तियों की पूजा का विधान सर्वत्र किया गया है। आरंभ मेंवैदिक धर्म मेंप्रकृति की दिव्य सत्ताओं की व्यावहारिक और आध्यात्मिक दोनों रूपों में प्रतिष्ठा स्थापित की गई है।

मृत्यु के बाद जीव की गति तथा आत्मा की अमरता के साथ पुनर्जन्म, सृष्टि की उत्पत्ति, ईश्वर, तीव और प्रकृति के अन्योन्य सम्बन्धों की चर्चा की गई है। वैदिक धारणाओं के अनुसार धर्म के क्षेत्र मेंदेवताओं को विशेष आदर प्राप्त है। धर्म हमें विनाश और अधोगति से बचाकर हमारा कल्याण व अभ्युदय करता है।

किसी भी समाज में प्रचलित प्रथाओं, संस्कारों, आचार–विचारों एवं रहन–सहन के प्रकार से तत्कालीन सभ्यता का बोध होता है।

ब्राह्मण परम्परा ने संस्कृत में आख्यान रचे हैं तो श्रमण परम्परा ने प्राकृत, अपभ्रंश एवं बौद्ध परम्परा से पाली भाषा का आश्रय लेकर आख्यानों की रचनाएँ की हैं।

रामायण और महाभारत के कई आख्यानों की रचनाएँ संस्कृत में की हैं। उनमें से कुछ लोकाख्यानों की रचनाएँ लोक साहित्य के रूप रचे गए हैं। बहुत समय से आख्यान वाचिक परम्पराओं के द्वारा पीढ़ी दर पीढ़ी को मौखिक रूप से प्रचलित रहे। बहुत काल के पश्चात् उन्हें लोक साहित्य में पुनर्लेखन के रूप में प्रकाशित किए गए है।

यह निर्विवाद तथ्य है कि लोक साहित्य सामान्यजन की अनुभूतियों, भावनाओं, विचारों आदि सहज अभिव्यक्ति है। वस्तुत: लोक संस्कृति की आधारशिला लोक जीवन है। डॉ. सम्पूर्णानन्द ने कहा है कि– लोक संस्कृति वह जीवित तथ्य है, जिसके माध्यम से ग्रामीण जीवन की आत्मा स्वयं को अभिव्यक्त करती है।

आचार्य राममूर्ति त्रिपाठी इस आख्यान परम्परा, मानव कल्याण की सिद्धि के लिए उपादेय तत्वों का समावेश इन आख्यानों के भीतर करते हैं– फलत: मानव समाज के ये कल्याण साधक बन गए है। इनकी शिक्षा मानव समाज के सामूहिक कल्याण तथा विश्वमंगल को अभिवृद्धि के निमित्त है।

वैदिक काल में प्रचलित पुरुरवा – उर्वशी आख्यान बाद के ब्राह्मण ग्रन्थों, विष्णुपुराण, श्रीमद्भागवत के मत्स्यपुराण आदि के साथ–साथ कालिदास के विक्रमोर्वशीय ने भी इस आख्यान का विस्तार पाया जाता है। इसी प्रकार च्यवन–सुकन्या, ययाति प्रकरण, पंतजलिकृत्त वासवदत्ता, सुमनोत्तरा व भैयरथी आख्यायिकाओं का निमोल्लेख किया गया है।

बाणभट्ट कृत 'कादम्बरी', जिसका मूल कथानक गुणाय की वृहत्कथा से है, उनका चित्रण किया है।

प्राचीन आख्यानों का हिन्दी मेंअनेक विद्धानों ने नये सिरे से पुनर्लेखन

* वन विभाग, काकड़दा (गुजरी) महेश्वर, जिला – खरगोन (म.प्र.) भारत

किया है– जिनमें निराला की 'राम की शक्ति पूजा', मैथिलीशरण गुप्त की 'साकेत', तुलसीकृत रामचरित मानस जिसका वाल्मीकि ने रामकथा के रूप में हिन्दी में रूपान्तरित किया हैं। कृष्ण आख्यान को लेकर महाकवि सूरदास ने अनेक प्रसंगों का ब्रज भाषा में अवतरण किया है। कृष्ण के प्रति गोपियों का उत्कट अनुराग अनेक कवियों ने चित्रित किया है। शिव–पार्वती, विष्णु–लक्ष्मी, राम–सीता और राधा–कृष्ण के चरित के आख्यान रचे है।

राजाभर्तृहरि और गोपीचंद की लोक कथाएँ संस्कृत काव्यों के आधार पर ही रचे गए है। मोती लीला में राधाकृष्ण के प्रणय प्रसंगों की चर्चा की गई है। रामायण पर आधारित लव–कुश गाथा मोतीलाल यादव ने इसे सुमधुर गायन शैली में प्रस्तुत किया है।

महाभारत के सभापर्व अध्याय 7.13, में श्रीमद्भागवत के (अध्याय 9.7.7 में), वायुपुराण (88.188), ऐतरेय ब्राह्मण में– इसी प्रकार हरिश्चन्द्र की गाथा निमाड़ को हरिश्चन्द्र काठी गाथा के रूप में चित्रण किया गया है।

'सलिता का ब्याह' में गाथा का प्रथम अंश भागवत (3.12.54, 14.5, 21.2 और 4.19) अध्यायों में,ब्राह्मणपुराण (1.1.57), मत्स्यपुराण (4.13), वायुपुराण (1.66) ने सुरुचि के गर्भ से उत्तम नामक पुत्र हुआ, सुनीति से ध्रुव का जन्म हुआ। विष्णु की आराधना से ध्रुव को अक्षय पद प्राप्त होने का उल्लेख है, किन्तु बाद की कथा पूरी तरह से काल्पनिक रूप से रची गई है। इस सलिता का ब्याह नामक गाथा पूर्णतया कल्पना के आधार पर रची गई है। केवल कुल पात्र पौराणिक हैं।

चन्द्र गुप्त द्वितीय के कार्यकाल संवत् 437–470 के थोड़े समय के बाद उज्जैन के शासन विक्रमादित्य के भाई भर्तृहरि ने गुरु गोरखनाथ को शिष्य के रूप में वैराग्य धारण किया। इसी प्रकार गोपीचंद ने भी वैराग्य धारण किया।

इन लोककथाओं और लोकगाथाओं में विभिन्न पात्र आए हैं, जिनमें धर्म पर आधारित सत्कर्म पर ही अधिक बल दिया है। इन गाथाओं के माध्यम से भारतीय आध्यात्मिक परम्पराओं का भलीभाँति निर्वाह किया है।

इनमें बहुत सी गाथाएँ पद्य के रूप में लोक गायन शैली में रचे हुए हैं। वस्तुत: इन लोक गाथाओं के रचयिता आम जन है, जिन्होंने अपनी सहज अनुभूतियों के माध्यम से अपनी सहज शैली में लोकगाथाओं को स्वरबद्ध किया है। ये कथाएँ और गाथाएँ भी लोक परम्पराओं और लोक विश्वासों से परिचित करते हैं। लोक साहित्य उस वृक्ष की तरह है, जिनकी जड़े अतीत में छिपी हुई हैं और शाखाएँ एवं पत्ते वर्तमान में भरे रहते है। इस लोक साहित्य में जन मानस के प्रति सहज आकर्षण उत्पन्न कराता है।

लोक साहित्य में भी शिक्षा की सार्थकता की दृष्टि से कहा गया है कि– 'ज्ञानेन हीना पशुभि: समाना।' ज्ञान से रहित व्यक्ति पशु के समान माना जाता है। वस्तुत: धर्म, अर्थ, काम और मोक्षःऐसे चार जीवन लक्ष्य उपनिषद् काल से ही माने जाते हैं। अंतिम लक्ष्य के रूप में 'मोक्ष' को शिक्षा का परम लक्ष्य माना गया है। 'सा विद्या या विमुक्तये।' अर्थात् विद्या वही है, जो मुक्ति प्रदान करता है। सात्विक और नैतिक निर्देशों का पालन कर सन्मार्ग की ओर प्रेरित करता है। परिवार और समाज के निर्माण में व्यक्ति का योगदान सर्वोपरि माना जाता है।

शिक्षा के द्वारा मनुष्य जो उद्देश्यों की पूर्ति होती हैं वे है– व्यक्तित्व का विकास, सदाचार और शील का विकास, सन्मार्ग की प्रवृत्ति, बौद्धिक ज्ञानवर्धन का विकास, आचरण की शुद्धता, धर्म और अध्यात्म का विकास, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं जीवन का सर्वांगीण विकास ये ही व्यक्ति के सर्वश्रेष्ठ प्रदेय होना आवश्यक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डॉ. मजुमदार –समाजशास्त्र – 1969, पृ.14.
2. डॉ. सम्पूर्णानन्द – लोक संस्कृति, पृ.17
3. आचार्य राममूर्ति त्रिपाठी – भारतीय आख्यान परम्परा स्वरूप और प्रयोजन–चौमासा 2008, पृ.22.

****

व्यक्तित्व के धनी - श्रीलाल शुक्ल

पुष्पा बर्डे *

शोध सारांश – 'कोई व्यक्ति अपने कर्मों से महान होता है, जन्म से नहीं।' श्रीलाल जी ने अपने कथनी और करनी में कभी भी कोई अंतर नहीं रहा। साळा ही उन्होंने यह भी साबित कर दिया कि ढोंग-ढकोसले के सर्वत्र व्याप्त आचरण के बीच हर तरह के 'हम्बग' से परहेज करने वाला इंसा नही असलियत में बड़ा होता है।

प्रस्तावना – जब मैं श्रीलाल शुक्ल से लखनऊ में पहली बार मिला तब उन्हें प्रांतीय सिविल सेवा में कार्यरत रहते तकरीबन सोलह-सत्रह वर्ष हो चुके थे। मुझे वह दिन अभी भी याद है। मुलाकात के माध्यम सुरेंद भाई शायद नवभारत टाइम्स के ब्यूरो चीफ थे और श्रीलाल जी राज्य सरकार के बड़े हाकिम। मैं गोरखपुर में रेल लेखा सेवा के शुरुआती पापड़ बेल रहा था और श्रीलाल जी सूनी घाटी का सूरज उपन्यास और अंगद के पांव व्यंग्य-संग्रह से साहित्य के राजपथ पर प्रवेश कर चुके थे। तब तक उनका कालजयी उपन्यास राग दरबारी लिखा जा चुका था। जब कोई दरबारी लिखा जा चुका था। जब कोई अधिकारी और बड़ा लेखक यानी करेला और नीम चढ़ा जैसी हस्ती से प्रथम बार संसर्ग करे स्वाभाविक झिझक रहती है।

मैंने पाया श्रीलाल जी का सान्निध्य सहज है। चेहरे पर मुस्कान खेलती रहती है, साथ ही अपनेपन का स्नेह भरा अहसास। चर्चा गोरखपुर के भयंकर मच्छरों से शुरू होकर सरकारी खटमलों तक आ जाती है। सुरेन्द्र जिज्ञासा जताते हैं – 'राग दरबारी का क्या हुआ?' श्रीलाल जी उत्तर देते हैं –'बस वहीं की वहीं हैं'। पता लगता है कि जिक्र श्रीलाल जी की उस कालजयी कृति का हो रहा है जो लिखी तो जा चुकी है पर सरकारी अनुमति की प्रतीक्षा में अभी भी अप्रकाशित है। मुझे लगता है कि सरकारी तंत्र की यही खासियत है। कोई उस का अंग हो तब भी उससे परेशान रहता है और न हो तब भी। श्रीलाल जी बात बदल देते हैं –'यहां के चिली पनीर चखिए, स्वादिष्ट हैं। सुरेद्र! इनके लिए मंगवाओ, भाई!' मुझे अहसास होता है कि अपने से कोई बड़ा अनुज की देखभाल कर रहा है। खाते-पीते इधर-उधर की बात करते वक्त कैसे गुजर गया , पता ही न चला जब तक रात की गाड़ी से गोरखपुर की वापसी ध्यान न आया।

दूसरी बार जब श्रीलाल जी से मिला तब भी माहौल और स्थान वही था, बस मेरे एक मित्र की गिनती बढ़ गई थी। हुआ यों कि मेरे इन मित्र का विवाह था। हम दोनों ने भारतीय पुलिस सेवा में साथ-साथ प्रवेश किया था। वह टिके रहे और मैं भाग निकला प्रशिक्षण के पश्चात। जो साथ-साथ ट्रेनिंग की शारीरिक यातना भुगतते हैं, उनमें स्नेह-सौहार्द की भावना भी अधिक विकसित हो जाती है। सुख के साथी भले बिकाऊ हों, दुख के टिकाऊ होते हैं। वह आज भी मेरे अच्छे मित्र हैं। योजना यह थी कि वैवाहिक बंधन में बंधने के पूर्व वह तथाकथित कुंवारी आजादी का अंतिम दिन हमारे साथ बिताएंगे, शाम तक उन्हें मुक्ति दी जाएगी। जिससे वह शादी की बारात और फेरों जैसी अनिवार्य औपचारिकताएँ, पूरी कर सकें। बारात में शामिल होने का नेक इरादा हमारा भी था।

लब्बो-लुबाब यह कि सुरेंद्र जी के जाने-माने अड्डे अवध जिमखाना में मुलाकात हुई। उन्हें श्रीलाल जी से मिलवाया गया। राग दरबारी के पहले भी श्रीलाल शुक्ल हिंदी क्षेत्र मे एक जाना-माना नाम था। मित्र प्रसन्न और गौरवान्वित हुए, उनसे भेंट कर। खान-पान, गपशप और लखनऊ की खास किस्सागोई के चलते-चलते, पता ही न चला और सूरज डूब गया। घटना मई 1968 की है तब के कार्ल्टन नामक होटल के लॉन की बड़ी ख्याति थी। अपेक्षाकृत, सबकी उम्र भी कम थी और बदपरहेजी, का माद्दा भी अधिक। होने वाले दूल्हे को अपने जीवन के इस निर्णायक मोड़ को 'सैलिब्रेट' करना था। उनका दायित्व था कि लॉन की खुशनुमा शाम की तरल सामग्री का प्रबंध वह करें। सब खुश थे कि वह अपनी इस अहम जिम्मेदारी के प्रति पूरी तरह सचेत हैं। कार्ल्टन की शाम धीरे-धीरे रात का रुख करने लगी। बरात का वक्त आकर निकलने लगा। नौशे मियां के छोटे भाई भी भारतीय पुलिस सेवा में थे और वह भी लखनऊ में। 'वन फॉर दि रोड' की जिद की तो श्रीलाल जी अपवाद स्वरूप इतना ही बोले 'इन्हें जाने भी दीजिए। अब यह शादी के के लिए पूरी तरह तैयार हैं।'

श्रीलाल जी मितभाषी थे, पर बात हमेशा समझदारी की करते थे। उनके व्यक्तित्व का एक महत्तवपूर्ण और गौरतलब तथ्य यह था कि उन्होंने अपना आपा कभी नहीं खोया। बेहद संयमित, संतुलित, आडंबरहीन तथा सौजन्यपूर्ण व्यवहार। मुझे आज भी वह शाम याद है और मेरे मित्र को भी। उनके सुखद वैवाहिक जीवन की इससे बेहतर शुरुआत और संभव ही क्या थी।

सभी जानते हैं कि श्रीलाल जी प्रयाग विश्वविद्यालय से 1947 में स्नातक की परीक्षा उत्तीर्ण कर 1949 में प्रांतीय सिविल सेवा में चयनित हुए। 'होनहार बिरवान के होत पात' जैसी कहावत श्रीलाल जी पर बिलकुल खरी उतरती है। उन्होंने हर परीक्षा श्रेणी में और उत्तार प्रदेश की मैरिट-सूची में कोई-न-कोई स्थान प्राप्त कर पास की। संस्कृत के श्लोक जैसे उन्हें विरासत में कंठस्थ थे। उनके विस्तृत और गहन अध्ययन से मेरा साबका तब पड़ा जबकि एक भेंट के दौरान, उनसे मैंने अपने अंग्रेजी साहित्य का ज्ञान झाड़ने की कोशिश की, वह भी यह जताने को कि हम ने अंग्रेजी में एम.ए. किया है। चॉसर से लेकर इलियट तक की धाराप्रवाह बात कर उन्होंने

* अतिथि विद्वान (हिन्दी) शासकीय महाविद्यालय, जुन्नारदेव, जिला - छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत

हमें चुप कर दिया। दरअसल, वह विश्व-साहित्य के अध्येता थे। वह कहते भी थे कि वही अच्छा लिखा जा सकता है, जो पढ़ाने का शौकीन हो। अपनी विलक्षण रचनात्मक प्रतिभा और लेखन से उन्होंने इसे सिद्ध भी किया। दस उपन्यास, चार कहानी-संग्रह और दस व्यंग्य संकलन इस तथ्य के साझी हैं। अज्ञेय कुछ रंग, कुछ राग, उनकी पैनी साहित्यिक समझ दृष्टि का परिचायक है। अज्ञेय की कहानियों और शेखर, एक जीवनी जैसे उपन्यास के मर्म तक पहुंचना और उसे विस्त्र के श्रेष्ठ साहित्य के संदर्भ में परखना अपने-आपमें एक उपलब्धि है। इसी भाषण माला में उन्होंने वर्तमान व्यंग्य लेखन का सूक्ष्म विवेचन किया है। इसमें व्यंग्य की परिभाषा तथा सीमाओं से किसी का भी असहमत होना कठिन है।

श्रीलाल जी की विशेषता थी कि वह अपनी ओर से साहित्य चर्चा नहीं शुरू करते थे। कोई पहल करे तो बिना किसी दंभ और प्रदर्शन के वह उसे अपने संस्कृत और आधुनिक साहित्य के ज्ञान से प्रभावित करने में सक्षम थे। श्रीलाल जी महान इस अर्थ में भी थे कि वह महानता का मुखौटा नहीं लगाते थे। एक बार, यों ही चर्चा के दौरान हजारी प्रसाद द्विवेदी ने बताया था कि महान वह होता है जो मिलने पर आगंतुक को बिना किसी दिखावे या प्रयास के अपनी महानता का कुछ अंश दे जाता है। श्रीलाल जी से सामान्य बातचीत के बाद भी यही महसूस होता। उनके ज्ञान और अनुभव का कोई-न-कोई बहुमूल्य रत्न कहीं-न-कहीं उपलब्ध होना कोई अचंभा नहीं था। उनकी स्वाभाविक सहज विनम्रता किसी का भी दिल जीतने को पर्याप्त थी। बनावट न उनके व्यवहार में थी, न पहनावे में।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

लोक जीवन के चितेरे - नागार्जुन

डॉ. रवीन्द्र कुमार सोनपुरे *

शोध सारांश – नागार्जुन एक ऐसे साहित्यकार है, जिन्होंने लोक जीवन जैसे गम्भीर विषय को लक्ष्य बनाया, जिसमें तात्कालिकता की समय-सीमा को खारिज किया। नागार्जुन इकलौते ऐसे साहित्यकार है, जिन्होंने अपनी जनपक्षता के लिए वैचारिक विचलन का भी स्वीकार किया। साहित्य की शास्त्रीय परम्परा से लेकर उपन्यास, नई कविता, नवगीत आदि तमाम आधुनिक साहित्यिक प्रवृत्तियों, को यदि एक साथ देखता है, तो नागार्जुन के साहित्य में देखा जा सकता है। अनेकानेक भाषाओं और विधाओं में लेखनी चलाने वाला यह रचनाकार अदम्य शक्ति और साहस का प्रतीक है। भारतीय साहित्य और दर्शन की महान परम्पराओं और भारतीय मनीषा को आत्मसात कर लोक की उत्सवधिकता अपनी विविधता में रच-बस कर अन्तहीन यायवरी से प्राप्त अपार अनुभव सम्पदा को ग्रहण कर जिस साहित्य की रचना करते हैं, उसका आधार और लक्ष्य दोनों ही भारतीय जन-गण है।

प्रस्तावना – नागार्जुन के सभी उपन्यास इस तथ्य के उदाहरण है कि उपन्यासों में आए सभी पात्र लोक जीवन की विभिन्न सच्चाईयों को प्रमाणित करते हैं। इन्हीं पात्रों के माध्यम से नागार्जुन ने सामाजिक-आर्थिक सच को उजागर किया है। नागार्जुन ने पात्रों के जरिए ही आम जन जीवन की समस्याओं को उठाया है। जमीदारों के अत्याचार और शोषण से लेकर दहेज की समस्या, अनमेल विवाह, पाखण्ड, बेतुके रीति-रिवाज आदि ज्वलंत प्रश्नों को उठाया गया है।

नागार्जुन का रचना संसार एक साथ दो धरातलों पर रचना-कर्म करता है। एक तरफ है प्रेम, सौन्दर्य और प्रकृति तो दूसरी तरफ सामाजिक, राजनीतिक, दुर्व्यव्यवस्थाओं, शोषण, अन्याय पर तीखी तात्कालिकता प्रतिक्रियात्मक व्यंग्य की रचनाएँ है। आत्मचिन्तन और आत्मविश्लेषण की मानसिकता रखने वाले बाबा नागार्जुन का स्वभाव बेखौफ होकर अन्याय के विरूद्ध खरी-खरी सुनाना स्वभाविक था। तिलमिला देने की सीमा तक व्यंग्य का प्रहार करना उनके साहित्य का सबसे अलग और विशिष्ट पक्ष है। 'यह व्यंग्य सामाजिक दुर्व्यव्यवस्थाओं और उससे संबंधित व्यक्ति विशेषों पर कहर के समान टूटता है। किन्तु नागार्जुन लोक कल्याण, लोक चिन्तन में अपनी क्षमताओं का उपयोग किया। ऐसा भी हुआ कि जिस व्यक्ति की प्रशस्ति में रचना करते हैं, उसी को मानवीय मूल्यों से इतर कर्म करते हुए देखकर वे तीखी व्यंग्यात्मक प्रतिक्रिया भी करते है। किसी को आहत करने का उनका कोई इरादा नहीं, वे तो उस अगणित जनता के सुख दुखात्मक आवेग में प्रशस्ति और विरोध जन्म देते हैं।'[1]

नागार्जुन ने सभी उपन्यासों में सामाजिक विसंगतियों पर व्यंग्य का प्रहार किया है। कहने को तो अभिजाव्य और करने को निम्नतर कर्म पर नागार्जुन का व्यंग्य रूपी कोड़ा नहीं छोड़ता। समाज में जो विसंगतियाँ व्याप्त है, उसमें पुरूष ही नहीं स्त्रियों की भी भागीदारी बताकर नागार्जुन अपनी समदृष्टि का परिचय देते हैं। 'इमरतिया' उपन्यास में मठ में रहने वाली गौरी की विकृत काम वासना का वर्णन वे करते हैं, जो पुरूष और जानवर में कोई भेद नहीं करती, रिश्ते और अवस्था का भी उनके जीवन में कोई महत्व नहीं था, उसके लिए तो देह ही महत्वपूर्ण थी। [2]

नागार्जुन की विचारधारा समाज के दुहरे मापदण्डों पर व्यंग्य करती है। नागार्जुन देख रहे है..... यह समाज अर्थप्रधान है, जिसके पास धन है, उसके लिए कोई कायदा कानून नहीं।, तभी नागार्जुन की लोक चेतना पीड़ा रूपी सघन अंधकार में बिजली के समान कौंध जाती है और यथार्थ का चित्रण कर जाती है। जमींदारों की अथक सेवा करने पर भी क्षुब्ध की तृप्ति रह ही जाती है, उस सभ्य समाज पर व्यंग्य करते हुए नागार्जुन उनकी दशा का मार्मिक वर्णन करते है -'उनकी हथेलियों का रस चाट-चाट कर मालिकों के पाँव भले ही गुलाब बने रहे अपना बाल बच्चा तो शायद ही कभी पूरी देह कपड़ा पहन सका या पूरा पेट खा पाया। तीन पुरखों का हाल तो मैं भी बता सकता हूँ। मालिकों के जूठन का गुण गान करते उनकी विकट गालियों को परेम भाव से सुनते दादी को देखा। रात-दिन की सेवा करते रहने पर भी पाव आध पाव खुदी के लिए माँ किस तरह रिरियाती किरती थी।'[3] बलचनमा बचपन से ही भूख की पीड़ा को जानता है। स्पष्ट है कि नागार्जुन ने अपने उपन्यासों में लोक-जीवन की अंत रंग तस्वीरे एकत्र की है। इनके साहित्य में रही सहज और समस्यामय जीवन है, जिसका साक्षाकार स्वयं कथाकार ने किया है। तभी उनका लोकजीवन विश्वसनीय और प्रभावपूर्ण बन सका है।

नागार्जुन के सभी आंचलिक उपन्यासों का यथार्थ धरातल मिथिला के विभिनन समस्याएँ तथा वहाँ का लोक जीवन है। मिथिला के लोक जीवन की समस्याएँ उनके उपन्यासों को शक्तिशाली आंचलिक वातावरण प्रदान करती है। 'इस क्षेत्र की ऐसी जातिय प्रथाएँ है जो अन्यत्र देखने में नहीं आती और जिनका मूलाधार है, अंध-विश्वास, जातीय तथा कुलीनता की भावना। अनमेल विवाह नारी के सामाजिक शोषण की पद्धति हमारे गाँवों की प्रचलित कुप्रथा है।'[4] वैधव्य तथा वृद्ध-विवाह के अभिशाप ने हमारे समाज को किस प्रकार खोखला कर दिया है, इसके कई चित्र हमारे सामने अपनी बेबसी, करूणा और पीड़ा को लेकर आते हैं। यद्यपि से चित्र मिथिलावासी समाज के प्रतीक के रूप में ही नागार्जुन ने अपने उपन्यासों में प्रस्तुत किए हैं।'[5]

निष्कर्षत: नागार्जुन का दृष्टिकोण मूलत: जनवादी है। सामान्य जनता की सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक स्थित का उनके पास अनुभव और

* अतिथि विद्वान (हिन्दी) शासकीय महाविद्यालय, जुन्नारदेव, जिला - छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत

अध्ययन है। लोक जीवन के दुखदर्द तथा मन:स्थिति को उनकी लेखनी यथार्थ तथा स्वाभाविकता के साथ चित्रित करती है। लोक जीवन के दुर्बल पक्षों पर उनकी दृष्टि अधिक रहती है, यद्यपि सबल पक्षों का भी अंकन उनकी रचनाओं में रहता है। लोकजीवन की मूल समस्याओं की नागार्जुन ने अपनी कृतियों में स्थान दिया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. हिन्दी उपन्यास - सुषमा धवन - पृ. 3062.
2. आज कल - फरवरी 2001 - पृ. 123.
3. नागार्जुन के उपन्यास - डॉ. प्रणव - पृ. 39
4. इमरतिया - नागार्जुन - पृ. 725. नागार्जुन (लघुशोध) - रविन्द्र सोनपुरे - पृ. 107

****

निर्गुण उपासना मिथ्याडंम्बरों पर प्रहार और मन की शुद्धता

डॉ. छविनम श्रीवास्तव *

प्रस्तावना – हिन्दी साहित्य के इतिहास में मध्यकाल के अंतर्गत निर्गुण एवं सगुण धारा दो भिन्न प्रवृत्तियों की कल्पला की है और निर्गुण धारा को ज्ञानाश्रयी और प्रेमाश्रयी शाखा में विभाजित किया गया है।

निर्गुण धारा में कबीर, नानक, रैदास, दादू जैसे संतों के नाम आते है। इन कवियो में ज्ञान, भक्ति और वैराग्य का पूर्ण सामंजस्य है, इन्होने निर्गुण ब्रम्ह के विषय में उक्ति दी है –

'जाके मुँह माथा नहीं, नहीं रूपक रूप
पुहुप वास थै पतला, ऐसा तत्व अनूप ।।'

(कबीर)

निर्गुणी संत सामाजिक एकता, वर्ग एवं जाति की समानता के पक्षधर थे। वे शूद्रों को हमेशा ब्राह्मण व अन्य वर्ग के समान मानते थे। निर्गुणी संतो ने शूद्रो को उनके भद्दे आखरण सुधरवाने पर बल दिया और धर्म के प्रत आदर करना सिखलाया तथा स्वाभिमान और आत्मसम्मान की चेतना जगाई।

कबीर, रैदास आदि समस्त संतो ने निर्गुण निराकार की उपासना पर बल दिया तथा मिथ्याडम्बरों का विरोध कर मन की पवित्रता को चित्रांकित किया। कबीर कहते है कि उनका हरि अगुण और सगुण दोनों से ऊपर है, अजर और अमर दोनों से अतीत है, अरूप और अवर्ण दोनों से परे है, पिण्ड और ब्राह्मण दोनों से अगम्य है

संतो धोखा कासूं कहिए–
गुण में निर्गुण – निर्गुण में गुण बाट छॉड़ि क्यूं बहिए
अजरा अमर कथै सब कोई, अलख न कथणां जाई
ना ति सरूप वरण नहिं ताके घटि घटि रहयो समाई।।
प्यंड ब्रहम्मंड छाड़ि जे कथिए कहे कबीर हरि सोई।।

सुन्दरदादास को तो अत्यन्त अभावात्मक ही मालूम होता है। यह बात और ही है कि यह अत्यंन्ताभाव विषिष्ट कोटि का है। कह सकते है कि यह भाव, अभाव के बीच का है–

यह अत्यंताभाव है, यह ई तुरियातीत।
यह अनुभव साक्षात् है, यह निश्चै अद्धैत।।
'नाही, नाही' करि कहै है है कहै बखानि।
नहीं है के मध्य है सो अनुभव करि जानि।।

संतों का निर्गुण राम त्रिगुणातीत है, द्धैताद्धेत विलक्षण है,

भावाभाव विनिर्मुक्त है, अलख है, अगोचर है, अगम्य है, अकथ्य है, और अद्धैत वेदान्त परब्रम्ह का समशील है। लेकिन इतना ही नहीं जिससे थोडा और अधिक भी है। नानक कुछ न कहकर उसे बड़ा ही कहने की सलाह देते है–

लेखा होइ लिखीए, लेखै होइ बिणास।
नानक बड़ा आखिए आपै जाणै आप।।

कबीर आदि अन्य संतों का मानना है कि दशरथ का बेटे राम का बखान करने वाला त्रेलोक्य राम नाम के असली मर्म से परिचित नही है

दशरथ सुत तिहुँ लोक हि जाना।
राम नाम को मरम है आना।।

अत: स्पष्ट है कि सभी निर्गुण संतों ने भगवान राम के रूप में उस परमब्रह्म परमात्मा की भक्ति पर बल दिया जो अलम्य अलक्ष्य और निरंजन है, जो अपरम्पार है। संसार के जितने भी सिद्ध साधक, पैगम्बर हुए है। वे सभी इसी निर्गुण निराकार ब्रह्म की उपासना पर उपदेश देते है तथा उसे अपने अंतस् मे ही खोजने का प्रयास करने और उसे अनुभूत करने की सलाह देते है इस सभी संतो ने मिथ्याडम्बरों पर प्रहार कर समाज की विसंगतियों एवं विषमताओं को दूर करने का प्रयत्न किया। इन्होनें धार्मिक आडम्बरो लोक वेद की परंपराओं एवं परम्परागत रूढियों पर जमकर प्रहार किया। जाति पाति के भेद–भाव का विरोध और रूढियों तथा आडम्बरों के खण्डन करने में उनका स्वर बौद्ध सिंद्धों एवं जैन मुनियों के समान प्रखर था। कबीर ने धर्म और समाज में व्याप्त घोर पाखण्ड कदाचार विषमता और पारस्परिक विद्धेश को बडी निर्ममता एवं अक्खडता से फटकारा है। उनके काव्य में स्वानुभुति एवं यथार्थ के दर्शन होते है–

मैं कहता हूँ ऑखिन देखी,
तू कहता कागद की लेखी।।

कबीर पर सिद्ध एवं नाथ पंथ का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। इन्होंने अन्तस्साधना की महिमा तथा शस्त्रागम तथा पण्डितो की निन्दा करते हुए कहा है–

पढि–पढ़ि पंडित वेद बखाणै।
भीतरी हूती बसत न जाणै।।

इस प्रकार जन्मना कुलाभिमान करने वालों को प्रताड़ित करते हुए कबीर कहते है कि उच्चकुलाभिमान व्यर्थ है, वास्तविक वस्तु है। उच्चाशय कर्म। स्वर्ण पात्र में भरी होने के कारण जिस प्रकार मदिरा सम्मानीय नहीं बन जाती, संत तो उसे त्याज्य ही मानते है उसी प्रकार नीच कर्म करने वाला उच्च कुलोत्पन्न व्यक्ति भी तिरस्करणीय होता।

'ऊँचे कुल क्या जनमियॉ, जे करणी ऊँच न होई।
सेवन कलश सुरै भयो, साधू निंद्या सोई।।

इसी प्रकार संत रैदास जाति प्रथा को एक रोग ही मानते है, जो व्यक्ति को व्यक्ति से तोड़ती है–

जात पांत के फेर मंहि, उरझि रहइ सब लोग।
मानुषता को खात इह, रैदास जात कर रोग।।

* हिन्दी विभाग, शासकीय राजमाता सिंधिया कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत

रैदास ने प्रत्येक व्यक्ति को एक बताते हुए धर्म, जाति, वर्ण आदि के विभाजन का विरोध किया–

'हिन्दू तुरकं नहीं कहु भेदा, सव मंह एक रक्त और मांसा
दोऊ एकह दूजा कोऊ नाही, पेख्यो सोध रैदार।।

कबीर की भंति संत रैदास ने भी समाज में प्रचलित समस्त रूढ़ियों पर दृष्टिपात किया। तथा मिथ्याडम्बरों पर प्रहार करते हुए वर्ण व्यवस्था को हिन्दू धर्म का कोढ़ माना जाता है। वर्ण व्यवस्था का अभिशाप चौथे वर्ण अर्थात 'शूद्र' के हिस्से में आया। उन्होने ऊँच नीच का भेद करते हुए मन की शुद्धता और कर्म की श्रेष्ठता पर बल दिया।

रैदास जन्म के कारणै, होत न कोई नीच।
नर को नीच करि–डरि है, औछे करम की कीच।।

इन्होंने मन की शद्धता को ही समस्त धर्म का आधार माना है–

मन चंगा तो कठौती में गंगा
का मथुरा का द्वारिका का कासी हरिद्वार।
रैदास खोजा दिल आपना, तउ मिलिया दिलदार।।

इस प्रकार समस्त मध्ययुगीन संतों ने उच्च वर्ण, जाति–पॉति के भेदभाव, धर्माडम्बरों का विरोध, रूढ़ियों एवं परंपरागत सड़ी–गली सामाजिक मान्यताओं तथा धार्मिक रूढ़ियों का विरोध किया और समाज में व्यक्ति की समानता और कर्मो की प्रधानता और श्रेष्ठता के साथ–साथ हृदय की पवित्रता पर बल दिया तथा मानवीय त्रास और करूणाजन्य अनुभुति को आत्मविश्वास और चेतनाजन्य आलोक प्रदान किया।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. भक्तिकाव्य और मानव मूल्य – विरेन्द्र सिंह – पृ. 77
2. निर्गुण रामभक्ति और दलित जातियॉ – डॉ राजदेव सिंह – पृ. 74, 75, 77
3. हिन्दी साहित्य का अद्यतन इतिहास – मोहन अवस्थी – पृ. 105
4. हिन्दी साहित्य का इतिहास – डॉ नगेन्द्र – पृ. 128
5. कवीर दास – डॉ. कान्ती कुमार जैन – पृ. 58, 91
6. मेरा दलित चिंतन – डॉ एन सिंह – पृ. 68, 69, 70, 71

****

कबीर साहित्य में मानव मूल्य

डॉ. मंजू देवी मिश्रा * डॉ. सनकादिक लाल मिश्र **

प्रस्तावना – रचनाकार के व्यक्तित्व का निर्माण अनिवार्यत: समाज में ही होता है, अत: समाज से प्रभावित होना स्वाभाविक है , लेकिन वह अपने व्यक्तित्व द्वारा समाज को पुन: प्रभावित भी करता है। रचनाकार की कृति में तत्कालीन समाज के उत्कर्ष–अपकर्ष , हास एवं रूदन की कहानी प्रत्यक्ष – अप्रत्यक्ष रूप से अवश्य ही अंकित होती है। इसी कारण साहित्य को समाज का दर्पण स्वीकार किया गया है, वहीं रचनाकार को समाज का सृष्टा भी कहा गया है।

कबीर ने अपने को मुसलमान नहीं कहा। किंवदन्तियॉ उन्हें मुसलमान कुल में पालित होना और नीरू–नीमा जुलाहे का पालित पुत्र होना बताती है। सामाजिक दृष्टि से यह सम्मानित जाति नहीं थी। कबीर की गवाही 'हम तो जाति कमीना' [1] के आधार पर कहा जा सकता है कि उन्हें तत्कालीन समाज में होने वाले भेदभाव का अनुभव था, इसके दुष्परिणामों को स्वयं भोगा भी होगा और इस संदर्भ में उनका रोस मुखर था।

अन्यत्र कबीर अपने को इस जाति–पॉति के विवाद से ऊपर उठा लेते है, जब वे अपने को य ना हिन्दू ना मुसलमान कहते है। 'वे स्वभावत: हिन्दू आचार–विचार से दूर थे, इन्हें मूर्तिपूजा के लिए कोई आकर्षण नहीं था। मुसलमानी अत्याचार की क्रूरता ने इस्लाम की अनेक बातों से उन्हें विरक्त कर दिया , जिनमें नमाज , रोजा और हिंसा कर्म थे।' [2] इसलिए वे अपने को 'ना हिन्दू ना मुसलमान' कहते है।

कबीर ने अपने पैतृक व्यवसाय कपड़ा बुनने के धर्म को नहीं छोड़ा। 'कबीर का मत था कि धार्मिक जीवन का अर्थ आलस में समय गॅवाना नहीं है, हर व्यक्ति को परिश्रम करके स्वयं अपनी रोटी कमानी चाहिए और दूसरों की सहायता करनी चाहिए।' कबीर के काव्य में जिन प्रतीकों का सर्वाधिक प्रयोग हुआ है, उनमें कपड़ा बुनने वाले उपादान ही अधिक है। इस प्रकार कबीर अनायास ही श्रम साधना का धर्म स्वीकार करते है।

कबीर में जो खीझ, करूणा, असहायता और आक्रोश मिलता है, वह मात्र साधना की उपज नहीं बल्कि किसी न किसी रूप में सामाजिक जीवन का अनुभूत सत्य है। मुसलमानी संस्कार न अपनाकर हिन्दू संस्कारों के करीब आना जाति के लिए अपमान और धर्म की दृष्टि से सामाजिक अपराध था। लेकिन कबीर ने इस विरोध का सामना किया। विद्रोह और आक्रोश के स्तर पर , साथ ही पूरे समाज को ललकराते हुए। 'जाति पॉति पूछै नहिं कोई, हरि को भजै सो हरि का होई।' रामानंद के मूलमंत्र को पूरी तरह स्वीकार कर कबीर ने रामानंद के दर्शन को नया व्यक्तित्व प्रदान किया।

कबीर का व्यक्तित्व बहुआयामी और सामाजिक संघर्षो के बीच निर्मित हुआ था। यों भी व्यक्तित्व, समाज परिस्थितियों और परिवेश के द्वन्द्व की उपज होता है, लेकिन कबीर का व्यक्तित्व सामाजिक सीमाओं से प्रेरणा न प्राप्त कर उन सीमाओं को लगातार तोड़ता है। यह प्रक्रिया इतनी अन्तर्सग्रथित और अर्न्तसम्बन्धित है कि सम्पूर्ण सामाजिक ढॉचा और उसकी सम्पूर्ण प्रक्रियाएॅ कबीर के काव्य व्यक्तित्व का विषय बन जाती है।

कबीर ने स्वानुभूत सत्य का सहारा लिया, पहले स्वयं परख कर देखा, खरा उतरा तो स्वीकार किया नहीं तो नहीं। उनका साथ वही दे सकता है, जो कबीर की तरह सिर कटाने और घर फूॅकने के लिए तैयार हो।

'हम घर जाल्या आपणॉ, लिया मुराड़ा हाथि
अब घर जालौं तास क, जे चले हमारे साथि।'[4]

कबीर के व्यक्तित्व में प्रेम की कमी नहीं है। उनका यह प्रेम मनुष्यगत है और मनुष्य के लिए है। हॉ , इसके अतिरिक्त ब्रह्म के प्रति जब वे अपने प्रेम को व्यक्त करते हैं, तो वे प्रेम की उन सारी अवधारणाओं सारे स्वरूपों को उस ब्रह्म पर आरोपित और घटित कर देते है। जो मनुष्य समाज में पति–पत्नी के रूप में, माता –पिता और स्वामी–सेवक के के रूप में तत्कालीन समाज में स्वीकृत थे। कबीर की साखियों में प्रेम का व्यापक वर्ण पाया जाता है। यह प्रेम जल और मीन, स्वाती और चातक के रिश्ते का है, इसका नशा मदिरा से भी अधिक मतवाला बना देने वाला है। लेकिन यह प्रेम समर्पण मॉगता है अहं और तेरे मेरे की भावना से ऊपर उठना चाहता है। इसीलिए कबीर ने इस प्रेम मार्ग को कहीं भी सहज–सरल न कहकर अगम, अगाध और जोखिम भरा कहा है। इसका आनंद प्राप्त करने के लिए सिर उतारना पड़ता है।

'कबीर निज घर प्रेम का भारग अगम अगाध
सीस उतारि पग तलि धरै, तब निकटि प्रेम का स्वाद'[5]

कबीर के समय में धर्म, दर्शन, कला, साहित्य, संस्कृति, राजनीति और समाजनीति सभी का सामन्तीकरण हो गया था। वे तुलसी की भॉति रामराज्य वाली प्राचीन व्यवस्था को न स्वीकार कर भविष्य की वर्ण जातिहीन और शोषणहीन विचारधारा वाली व्यवस्था को ज्यादा महत्व देते है। कबीर ने वर्ण–व्यवस्था, ब्राह्मणों की श्रेष्ठत, यज्ञ, हवन तथा दिगम्बर साधुओं की केवल आलोचना ही नहीं की वरन् हॅसी उड़ाते हुए व्यंग्य भी किया।

'नहीं को ऊॅचा नहीं को नीचा, जाका प्यण्द ताही का सींचा
जै तू बॉभन बॉभनी जाय, तौ आन बाट है काहे न आया
जै तू तुरक जुरकनी जाया, तौ भीतरि खतनों क्यूॅ न कराया
कहै कबी मधिम नहीं कोई, सो मधिम जा मुखि राम न होई।'[6]

कबीर कालीन समाज अनेक प्रकार की साधना – पद्धतियों में फॅस गया था। ब्राह्म, मुनि, पी, तपस्वी, दिगम्बर, संयासी, योगी आदि सांसारिक मायाजाल में पूरी तरह फॅसे हुए थे। विधर्म और पाखंड के बढ़ने का कारण

* एम.ए., पीएच.डी. (हिन्दी) मऊगंज, जिला–रीवा (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक, शासकीय शहीद केदार नाथ स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मऊगंज, जिला–रीवा (म.प्र.) भारत

यही विविध मतवाद है। जिससे कबीर का विद्रोह भाव और अधिक मुखर हो गया है । यह विद्रोह भाव पूर्व परम्पराओं और तत्कालीन परिस्थितियों से जन्मा है । वास्तव में इन मत-मतांतरों के प्राबल्य का कारण व्यक्तिवादी शक्तियों का सभी क्षेत्रों में प्रभुत्व था। रामानंद के राम नाम को कबीर ने व्यावहारिक स्वरूप प्रदान करते हुए व्यक्तिवादी विचारों का विरोध किया । अत: कबीर की विद्रोही दृष्टि में हिन्दू मुसलमानों के पाखण्ड, विभिन्न सम्प्रदायों की मूल्यहीन साधना - पद्धतियॉ और शासन पद्धतियॉ और शासन की निरंकुश नीतियाँ हैं। कबीर का विद्रोह भाव केवल यहीं तक सीमित नहीं रह जाता बल्कि इसके आगे वे इन द्वैतयुक्त सामाजिक कारणों की खोज करते हैं। जन्म, कर्मकांड, ढोंग, पाखण्ड, आडम्बर और भेदभाव तक का छोटे-से-छोटे फिर भी महत्वपूर्ण तथ्य उनकी दृष्टि में है क्योंकि सामान्यजन के लिए दार्शनिक चिंता से बड़ी सामाजिक मुक्ति की चिंता थी । ब्रह्म या मुक्ति की चिंता कबीर का मानदण्ड या सर्वोच्च मूल्य है । अत: कबीर इस सामाजिक मुक्ति के लिए रूढ़ मान्यताओं को एक-एक कर कबीर ने जिस राजतंत्र की स्थापना की है, वह लोक - निरपेक्ष नहीं है क्योंकि उस राज्य-व्यवस्था के सूत्र सांमती समाज से ही ग्रहण कर उनको लोकपरक रूप दिया गया है । राजा, दीवान, कोतवाल, पटवारी, कारिन्दा, आदि के सारे प्रतीक सामंती व्यवस्था से ही प्राप्त किए है लेकिन इनका स्वरूप समतावादी है । इसीलिए ये प्रेम भावन, लोक प्रीति और सामूहिक हित के पक्षधर हो गए है। यहॉ ज्ञानयोग और सत्य के राजकोष है। अत: यह व्यवस्था सामाजिक नैतिक मूल्यों पर आधारित है । यहॉ आकर सामन्ती साम्राज्य राजकीय कोष, धन सम्पति सब के समान विभाजन और वितरण की व्यवस्था की जाती है। कबीर समाज के इसी मानवीय मूल्य को स्थापित करना चाहते है । कबीर मनुष्य का सर्वांगीण विकास चाहते हैं, वे सामंती मूल्यों पर प्रहार करते है, जिससे मानवीय स्वतंत्रता प्राप्त हो सके उन्होंने एक वैकल्पित मूल्य जगत रचा जिसके दो छोर है - सामाजिक चेतना और आध्यात्मिक चेतना । अपनी रचना में वे इनमें मिलन स्थापित करना चाहते है। कबीर ने जातियों की भिन्नता को अमान्य करते हुए एक मात्र राम की जाति घोषित किया ।

सारांश - कबीर के साहित्य के अध्ययन तथा तत्कालीन प्राप्त अन्य ग्रन्थों से यही प्रतीत होता है कि कबीर ने जाति-पॉति, ऊँच-नीच के भेद-भाव को सिरे से खारिज किया है। उनके लिए मूल्य है - प्रेम , सत्य , परोपकार , सत्कार्य । वे रूढियों और सड़ी गली परम्पराओं का विरोध करते है। वे मानव के सहज , सरल रूप को आदर्श मानते है।

कबीर के साहित्य में मानवता रूप से बड़ा मूल्य एवं धर्म है । इसके अलावा वे किसी की जाति - वंश गत श्रेष्ठता को स्वीकार नहीं करते है। समाज के हित के लिए श्रेष्ठ कार्य करते हुए माया - मोह से परे रहकर योग साधना द्वारा शरीर एवं मन दोनों को स्वस्थ बनाकर अपने को आदर्श एवं श्रेष्ठ बना सके ।

अत : हम कह सकते हैं कि कबीर ने जीवन में सहजता को स्वीकार करते हुए आडम्बरों से दूर रहकर अपने को एवं समाज को स्वस्थ बनाने के लिए हर जगह ललकार कर कहा है। छल - प्रपंच एवं दिखावा से दूर रह ठगिनी माया से दूर रहकर समाज को नई दिशा देने के लिए प्रेम के रास्ते का अनुकरण करना सिखाया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कबीर ग्रन्थावली पद 270
2. डॉ0 रामकुमार वर्मा , हिंदी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास , पृ0 193
3. के दामोदरन , भारतीय चिंतन परम्परा , पृ0 321
4. क0ग्रं0 , गुरू सिख हेरा अंग , साखी , 3
5. प्रकाशचंद्र गुप्त , हिन्दी साहित्य की जनवादी परम्परा

****

देवी नर्मदे

डॉ. गुलाब सोलंकी *

प्रस्तावना – हमारी संस्कृति में जल को देवता और नदियों को माँ की सर्वोच्च सत्ता पर आसीन किया गया। देश की माटी को अपने जल से सोना उपजाने योग्य बनाने और हमारे शुष्क कण्ठों की प्यास बुझाने वाली माँ नर्मदा को हम युगों से पूजते आए हैं।

युग–युगों से संसार में शक्ति का पूजन हो रहा हैं, देवी स्वरूप में दुर्गा, काली या पार्वती हो या दैहिक रूप में सीता सावित्री हो शक्ति के आगे सदैव नतमस्तक रहा हैं।

नर्मदा पुण्य सलिला व मोक्ष प्रदायिनी नदी हैं, जो युगों से अनवरत बहती जा रही हैं, नर्मदा शिव तनया कहलाती हैं अर्थात शिव पुत्री यह जितनी दैवीय शक्ति हैं, उतनी ही जनसाधारण के निकट भी हैं, नर्मदा शक्ति नद्य स्वरूप के साथ ही जीते जी मोक्ष प्रदान करने वाली मानी गयी हैं। जिसके दर्शन और पूजन हर मानव करना चाहता हैं।

नर्मदा भारत के मध्यभाग में पूरब से पश्चिम की ओर बहने वाली प्रमुख नदी हैं, जो गंगा के समान ही पूजनीय हैं। महाकाल पर्वत के अमरकंटक शिखर से नर्मदा की उत्पत्ति हुई हैं इसके उद्‌भव से लेकर संगम तक दस करोड़ तीर्थ हैं, परम्परा के अनुसार नर्मदा की परिक्रमा का प्रावधान हैं, जिससे श्रृद्धालुओं को पुण्य की प्राप्ति होती हैं।

पश्चिम प्रवाहिनी इस नदी को उल्टी नदी भी कहा जाता हैं, शिव के स्वेद से उत्पन्न इस नदी के संबंध में अनेक कथाएं प्रचालित हैं। दिव्य कन्या नर्मदा ने उत्तर दिशा में बहने वाली गंगा के किनारे कठोर तपस्या कर भगवान षिव से वरदान मांगा कि मेरा प्रलय में नाश न हो विश्व में एकमात्र पापानाशिनी नदी कहलाऊ मेरा हर पाषाण शिवलिंग के रूप में पूजित हो। मेरे तट पर शिव–पार्वती सहित सभी देवता निवास करें।

नर्मदा की महत्ता में मत्स्यपुराण के अध्याय 186/11 में लिखा हें कि सरस्वती में तीन दिन, यमुना में सात दिन तथा गंगा में एक दिन स्नान करने से मनुष्य पावन होता हैं लेकिन नर्मदा के दर्शन मात्र से व्यक्ति पवित्र हो जाता हैं।

म.प्र. की जीवन रेखा कही जाने वाली नर्मदा नदी वास्तव में आज की आपाधापर से जूझते लोगों की सबल हैं, तो नर्मदा के दर्शन मात्र से आत्मविश्वास और उत्साह में जो वृद्धि होती हैं, वह आज भी रहस्य बना हुआ हैं।

भारत महान संतो एवं ऋषि–मुनियों की जन्मस्थली रही हैं। यहां का कण–कण पवित्र एवं तारणहार माना गया हैं। इसी पवित्रता को यहां प्रवाहित होने वाली सैकड़ो नदियां भी स्वयं में समाहित किये हुए हैं। पुरूषों के अनुसार जब पृथ्वी से समस्त नदियां सुख जावेगी तब भी नर्मदा का प्रवाह सतत् बना रहेगा।

नर्मदा का धार्मिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक महत्व हैं। वाल्मिकी रामायण, महाभारत, वायुपुराण, कर्मपुराण, पद्मपुराण, विष्णुपुराण, वामपुराण, बराहपुराण तथा नर्मदा पुराण में नर्मदा की महिमा का उल्लेख हैं।

जीवनदायिनी पुण्य सलिता माँ नर्मदा जो पूर्व से पश्चिम की ओर प्रवाहित जबकि देश की अन्य नदियां पश्चिम से पूर्व की ओर प्रवाहित होती हैं।

भारत में अनेक पुण्य प्रदाता नदियां हैं परन्तु उनका स्थान विशेष पर महत्व हैं। गंगा हरिद्वार, प्रयाग काशी और गंगासागर में पुण्य देने वाली मानी जाती हैं, सरस्वती विलुप्त हो चुकी हैं, गोदावरी नासिक में अधिक महत्व प्रदान करती हैं किन्तु नर्मदा पग–पग पर पूजनीय और वंदनीय हैं। जिसके दर्षन मात्र से ही मोक्ष प्राप्त हो जाता हैं, ऐसा शास्त्रोक्त हैं।

पृथ्वी की परिक्रमा को छोड़कर देवस्थानों की तीर्थो के परिक्रमाओं से नर्मदा की परिक्रमा अधिक बड़ी हैं 1780 मील के परिक्रमा नर्मदा जी की प्रसिद्ध हैं, नर्मदा ही विश्व की एकमात्र नदी हैं,जिसकी परिक्रमा की जाती हैं।

नर्मदा दर्शन (दिसम्बर 85 जनवरी 86) के अनुभवों को श्री दिनेश जोशी नर्मदा का उद्गम कुण्ड इस कदर गंदा है कि उसके जल को छूने तक की इच्छा नहीं होती। कुण्ड के आसपास भी गंदगी का साम्राज्य हैं। म.प्र. की पहचान हैं माँ नर्मदा जो वेदो में माँ रेवा के नाम से जानी जाती हैं समूचे विश्व में दिव्य और रहस्यमयी असीम संभावनाओं वाली नर्मदा ही एकमात्र ऐसी नदी हैं, जिसकी परिक्रमा की जाती हैं। पूर्व से पश्चिम की ओर बहने वाली रेवा जन–जन की आस्था का प्रतीक हैं। धर्म और आस्था के साथ चिर कुमारी को नमन कर उसे उपेक्षित न करें क्योंकि नर्मदा हैं, तो हम हैं।

नर्मदा नदी के बांधों में प्रमुख हैं–इन्दिरा सागर बांध, औंकारेश्वर, महेष्वर एवं सरदार सरोवर (परियोजनाएं) सम्मिलित हैं इन परियोजनाओं ने विद्युत, सिंचित क्षेत्रों में योगदान दिया हैं, साथ ही नर्मदा के किनारे बसे ग्रामवासियों को पुनर्वास आदि की समस्याओं की ओर धकेला है। जिसके कारण दबाव समूह सक्रिय हुए और उन्होंने अपने–अपने स्तर से दबाव बनाया।

म.प्र. शासन द्वारा नमामि देवी नर्मदेय नर्मदा सेवा यात्रा माँ नर्मदा के उद्गम स्थल अमरकंटक से दिनांक 11 दिसम्बर 2016 से प्रारंभ होकर अलीराजपुर के सौण्डवा से वापस होते हुए। अमरकंटक में दिनांक 11 मई 2017 को 144 दिवसीय यात्रा का समापन होगा।

नर्मदा केवल नदी मात्र ही नहीं अपितु आस्था और विश्वास का प्रतीक भी है। इसके निर्मल और अविरल बहते जल में एक शक्ति है, जो हर मानव को अपनी ओर आकर्षित करने की शक्ति हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. नर्मदा प्रदक्षिणा–ब्रहालीन तपोभूमि स्वामी श्री गीरी।
2. डॉ.श्रीमती गुलाब सोलंकी – शोध कार्य।

* प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय महाविद्यालय, धामनोद (म.प्र.) भारत

Judicial Governance In India

Aprajita Bhargava *

Abstract - Judicial Governance in India: The judiciary's effort to infuse accountability in the functioning of government institutions and the growth and development of human rights jurisprudence have demonstrated the importance of judicial governance. The term 'judicial governance' in itself is subject to challenge as the judiciary is not supposed to be involved in 'governance'. Undoubtedly, the wider civil society has embraced the notion of judicial governance, given the fact that it provides certain social expectations for creating accountability. The relaxation of the rules of locus standii~ recognition of a range of human rights under the "right to life" provision of the Constitution, and the development of public interest litigation are important milestones in meeting civil society expectations on the working of the judiciary.
Key Words - Governance, Locus Standii, Judicial accountability.

Introduction - When the Constitution of India was adopted on November 26, 1949 by the Constituent Assembly, its members were mindful of the challenges of governance. Speaking after the completion of his work, Dr. B.R. Ambedkar, Chairman of the Constitution Drafting Committee, said: "I feel that the Constitution is workable~ it is flexible and it is strong enough to hold the country together both in peacetime and in wartime. Indeed, if I may say so, if things go wrong under the new Constitution the reason will not be that we had a bad Constitution. What we will have to say is that Man was vile." The members also recognised that the mere adoption of a good Constitution would not culminate in the values of constitutionalism permeating the civil and political culture in the country, nor could it ensure good governance. It is this ability of Constitutions to act as limitations on the exercise of power, and in that process delineate the functions of the government and outline the rights of the people, that distinguishes them from other legislation. The experience of 60 years of constitutional governance helps us understand the working of the Constitution in general and the role of the judiciary in particular.

The theme of social revolution runs throughout the proceedings and documents of the Constituent Assembly. This theme formed the basis of the decision to adopt the parliamentary form of government and direct elections, the fundamental rights, the directive principles of state policy, and many of the executive, legislative, and judicial provisions of the Constitution. Although the social revolution theme was espoused throughout the Constitution, Parts III and IV — fundamental rights and directive principles of state policy — demonstrate the core of this commitment. These are perceived as the conscience of the Constitution, because they provide the base for human rights and human development policies for governance. The Constitution ensures that the fundamental rights are guaranteed as a matter of legal obligation rather than as a political concession. These are basic human rights and have been interpreted as civil, political, economic, social and cultural rights. Articles 12--35 of Part III elaborate on the fundamental rights. Articles 36--51 outline the framers' vision for good governance and they constitute the directive principles of state policy. They are not enforceable in a court of law, but the principles laid down therein are fundamental to governance. It is the duty of the state to apply these principles in making and implementing laws.

Role Of Judiciary - The judiciary is uniquely placed in the matrix of power structure within the system of governance. Judges are not elected but clearly have the power and indeed the responsibility to check the exercise of powers and actions of elected representatives and appointed officials. The judiciary as an institution is vastly respected, notwithstanding huge challenges in ensuring access to justice, judicial process and issues of transparency and accountability. It is vested with ensuring that the rights and freedoms of the people are protected and the powers exercised by the government in adopting policies are in accordance with the Constitution and other legislation. In theory, if the different branches of the government adhere to the basic principle of separation of powers and function within their limits, it is considered a sound system of governance. In practice, however, a number of issues have emerged and challenges occurred. It is in this context that the three branches of the government — the legislature, the executive and the judiciary — need to have a certain degree of trust in, and deference to, the actions of one another in matters within their respective jurisdictions. However, trust and deference in relation to the actions of a

*Faculty, R.D.Public School, Betul (M.P.) INDIA

particular branch should not undermine the judiciary's responsibility to adjudicate on the constitutional and legislative validity of the actions of the government. Clearly, this delicate balancing act of rightfully intervening when necessary requires a deeper understanding and appreciation of the principles of constitutionalism. Rule of law is about all people and institutions respecting laws and acting in accordance with the law. The legislature and the executive as collective powerhouses are bound by these principles as much as ordinary citizens are.

Role Of Judiciary In Governance - The national constitutions of the countries of the region recognize the significance of the judiciary and its supervening influence on the polity. The importance of judicial independence for the effective discharge of its role has also been duly accepted. A brief reference to the salient features of the 'Beijing Statement of Principles of the Independence of the Judiciary', 1997 (for short 'Beijing Principles') is apposite. The evolution of the Beijing Principles commenced in 1985 in the Conference of the Chief Justices of the Asia Pacific region in conjunction with the LAWASIA, and culminated in the adoption of the revised principles at Manila in 1997. Its Preamble refers to the UN Charter, UDHR, ICCPR and ICESCR and states the primary object: "To promote the administration of justice, the protection of human rights and the maintenance of the rule of law within the region". Each of them relate to qualitative improvement of governance. It states that "The judiciary is an institution of the highest value in every society" (Article 1). A few important provisions in it are indicated.

Article 10 - Objectives of the Judiciary - The objectives and functions of the judiciary include the following:

(a) To ensure that all persons are able to live securely under the rule of law~
(b) To promote, within the proper limits of judicial function, the observance and attainment of human rights~ and
(c) To administer the law impartially among persons and between persons and the State.

Article 33 - Jurisdiction - The judiciary must have jurisdiction over all issues of a justiciable nature and exclusive authority to decide whether an issue submitted for its decision is within its competence as defined by law. The Bangalore Principles of Judicial Conduct, 2002 are also important. The essential values stated therein are: judicial independence, both individual and institutional, as a prerequisite to the rule of law~ impartiality, not only to the decision itself but also to the process~ integrity~ propriety, and appearance of propriety~ equality of treatment to all~ competence and diligence. The power of judicial review under the national Constitution and the provisions in the Beijing Principles and the Bangalore Principles confer the right coupled with the duty in the judiciary to work for improving the quality of governance bearing the principles of judicial accountability in mind.

Judicial Governance - The term 'judicial governance' in itself is subject to challenge as the judiciary is not supposed to be involved in 'governance'. However, the effort of the Indian judiciary to infuse accountability in the functioning of government institutions, and the growth and development of human rights jurisprudence have demonstrated the central importance of judicial governance. of course, there is no doubt that it has posed critical challenges to parliamentary accountability and executive powers and, more important, reinforced the need for improving efficiency and effectiveness of governmental institutions.

The need for social reform preceded the Constituent Assembly bestowing on the judiciary the role of guardian of individual rights. Hence, the protection of liberties within the constitutional framework needed to be balanced with achieving social reform. The Supreme Court perceived itself to be an institutional guardian of individual liberties against political aggression. In that process, it went beyond the framers' vision of achieving an immediate social revolution. The best known of these implied limitations, the 'basic features limitation', precludes the Indian Parliament from amending the Constitution in such a way as to displace its basic features.

Civil Society Expectations - Legal provisions relating to human rights as a normative framework provide little guidance and help for the masses in India who are aspiring to fulfil their basic rights, in particular their right to acquire and experience the basic needs of survival and existence. The civil society seeks to enforce good governance so that all human rights are promoted and protected. It is imperative for the Indian society to work towards internalising the values of constitutionalism so that the exercise of all powers is subject to accountability. Undoubtedly, the wider civil society has embraced the notion of judicial governance, given the fact that it provides certain social expectations for creating accountability.

The relaxation of the rules of locus standi~ recognition of a range of human rights under the "right to life" provision of the Constitution, and the development of public interest litigation are important milestones in meeting civil society expectations on the working of the judiciary. However, given the range of injustices in our society, institutional responses, including that of the judiciary, need to be further expanded. The Indian experience has demonstrated that the initial judicial recognition of human rights has culminated in the passage of an amendment, which guarantees the fundamental right to education. If democracy is to become meaningful in India, it should be based on two important factors -

1) Enforcement of the rule of law
2) The reform of the political system – each dwelling upon the other.

The judiciary is well suited to support both these initiatives The seven principles of 'Standards in Public Life' recommended by the Lord Nolan Committee in UK are: selflessness, integrity, objectivity, accountability, openness, honesty and leadership. These principles are of universal application. The Indian Supreme Court has quoted the

above principles with approval in the **Vineet Narain vs UOI 1996 SCC (2) 199** (Hawala case): "These principles of public life are of general application …and one is expected to bear them in mind while scrutinizing the conduct of every holder of a public office….If the conduct amounts to an offence, it must be promptly investigated and the offender against whom a prima facie case is made out should be prosecuted expeditiously so that the majesty of law is upheld and the rule of law vindicated." The institutional integrity is the primary consideration which the HPC is required to consider while making the recommendation…for appointment of the Central Vigilance Commissioner." Judiciary is regarded with reverence in South Asia. Judicial independence is protected by the constitutional framework in these countries.

Conclusion - The Beijing Principles, 1997 are adopted for uniformity of a minimum standard of judicial review with judicial independence and accountability. This has enabled the judiciaries of the region, e.g. in India, Sri Lanka, Bangladesh, Pakistan etc. to liberally interpret and protect the rights of the people, and to develop the human rights jurisprudence. The power of judicial review under the national Constitution and the provisions in the Beijing Principles and the Bangalore Principles confer the right coupled with the duty in the judiciary to work for improving the quality of governance bearing the principles of judicial accountability in mind.

References :-

1. http://www.thehindu.com/todays-paper/tp-opinion/constitutionalism-and-judicialgovernance/article1932166.ece.html.
2. Raj Kumar Associate Professor of Law at City University of Hong Kong and Honorary Consultant to the National Human Rights Commission in India.
3. Role of Judiciary in Good Governance – Justice Y.K.SABHARWAL
4. The Judiciary and Governance in India – Madhav Godbole.

****

A Compare Study Between Academic Achievement And Emotional Intelligence Among Government And Private Higher Secondary School's Students

Manish Rathore *

Introduction - Today education is the hope and dream of every person. Education has to prepare man to face the unknown, unpredictable and uncertain tomorrow. In modern age, a society cannot achieve a goal without education. In recent times, student Academic Achievement, Attitude and Emotional Intelligence for higher education has become the subject of Government policy and school / University partnerships.

Academic Achievement - Academic achievement is the amount of knowledge derived from learning. The child gains knowledge by instructions he/ she receives at school and are organized around a set of core activities in which a teacher assigns tasks to pupils and evaluates and compares the quality of their work.

Emotional Intelligence- Emotion is logical in nature. It helps to take decision in right direction and at appropriate time as it is related with feeling, experience and behavior. The logical part of the brain where it makes decision from the observed data is called emotional intelligence. Emotional intelligence is the ability to recognize, acknowledge, manage and handle our emotions in such a way that promotes personal growth. An emotionally sound teacher is the heart and soul of any educational program

Review of related literature

Upadhyaya, Pratik, (2013) studied on A Study of the Relationship between Emotional Intelligence and Academic Achievement among Student- Teachers. Objectives were 1. To study the relationship between emotional intelligence and academic achievement among student-teachers. 2. To compare academic achievement of student-teachers with high and low level of emotional intelligence. The hypothesis was 1. There is no significant relationship between emotional intelligence and academic achievement among student teachers. 2. Student-teachers with high and low level of emotional intelligence do not differ from one another on academic achievement. The sample was used to this study 97 B. Ed. students of Allahabad city. Test of Emotional Intelligence (Student-Teacher Form) developed by K. S. Misra was used as a tool for this study. Marks obtained by the student-teachers in theory and practical examination served as an index of academic achievement. High and low groups of emotional intelligence were formed on the basis of Mean ± 1S.D. (Mean = 20.10 & S. D. = 4.49). The Test of Emotional Intelligence of K.S. Misra was used to assess the emotional intelligence of student-teachers and the marks obtained by the student-teachers in theory and practical examination served as an index of academic achievement. The findings of the study revealed that emotional intelligence is positively related to academic achievement (theory & practice) and student-teachers with high emotional intelligence scored better in theory and practical examination than the student-teachers with low emotional intelligence.

M &Yeshodhara (2014) studied on Emotional Intelligence and Self Concept of B.Ed. Students. The objectives were 1. To study the level of Self Concept of B.Ed. students. 2. To study the level of Emotional Intelligence of B.Ed. students. 3. To find out whether there is a significant difference in the means of Self Concept of B.Ed. student's with reference to the following categories of variables – (i) Male and female students. (ii) Aided and unaided college students. (iii) Science and Arts subject background students. (iv) Kannada and English medium of instruction students. (v) 21-25 years age and above 25 years age students. The hypotheses were 1. There is no significant difference between the following categories of B.Ed. students in their level of self concept.(i) Male and female students.(ii) Aided and unaided college students. (iii) Science and Arts subject background students.(iv) Kannada and English medium of instruction students. (v) 21-25 years age and above 25 years age students. 2.There is no significant difference between the following categories of B.Ed. students in their level of Emotional Intelligence. (i) Male and female students. (ii) Aided and unaided college students. (iii) Science and Arts subject background students. (iv) Kannada and English medium of instruction students. (v) 21-25 years age and above 25 years age students. The sample was selected 150 B.Ed. Students studying in both aided and unaided B.Ed. College in Bangalore North was drawn through random sampling technique. Tools were used to test of self concept inventory developed by Dr. Beena Shah (1986) and Emotional Intelligence scale developed by Anukool Hyde,Sanjyot Pethe, Upindar Dhar (2002) for this study. Finding was B.Ed. students have possessed the same level of Self Concept with reference to the variables viz., gender, subject , medium

*Research Scholar (Edcuation) Kalinga University, Raipur (C.G.) INDIA

of instruction and different age groups. But as for as B.Ed. Students from aided and unaided are considered they significantly different, where students from unaided colleges have possessed high level of Self Concept compared to students from aided colleges. Female B.Ed. Students are significantly different from male B.Ed. Students as far as Emotional Intelligence is considered. B.Ed. students from aided and unaided colleges are significantly different with reference to Emotional Intelligence. Students from unaided colleges have possessed high level of Emotional Intelligence when compared to students from aided colleges, but the B.Ed. Students from Arts Science stream, medium of instruction and different age groups have possessed same level of Emotional Intelligence. A significant relationship was found between Emotional Intelligence and Self Concept of B.Ed. Students.

Gupta, Hemalata (2015) studied on Academic Achievement of B.Ed. Students in Relation to their Emotional Intelligence. The objectives were 1. To study the level of Academic Achievement of B.Ed. Students. 2. To study the level of Emotional Intelligence of B.Ed. students. The hypotheses were 1. There is no significant difference between the emotional intelligence of male and female B.Ed. students. 2. There is no significant difference between Emotional Intelligence of science and Art, B.Ed. students. Survey method was in this study. There were 300 Male B.Ed. and 300 Female B.Ed. students in the study. Tools were used to test of Emotional Intelligence developed by S. K. Mangle and Mrs. Shubhra Mangle for this study. Findings were- 1. There is no significant difference in the Emotional Intelligence of male and female B.Ed. students. 2. There is no significant difference in the Emotional Intelligence of Science and Art B.Ed. students.

Objectives - The objectives of the study were -

1. To compare study between academic achievement and emotional intelligence among Government and Private Higher Secondary School Students.
2. To compare study between academic achievement and emotional intelligence among Government and Private Higher Secondary School's girls Students.
3. To compare study between academic achievement and emotional intelligence among Government and Private Higher Secondary School's boys Students.

Hypotheses - To achieve the above mentioned objectives, following hypotheses were formulated and tested:

1. There is no significant difference between academic achievement and emotional intelligence among Government and Private Higher Secondary School Students.
2. There is no significant difference between academic achievement and emotional intelligence among Government and Private Higher Secondary School's girls Students.
3. There is no significant difference between academic achievement and emotional intelligence among Government and Private Higher Secondary School's boys Students.

Method - The descriptive survey method is used in the present study.

Sample - The sample for the study comprised of 200 students of Government and private higher secondary school' s (Each school's student of 100 , 50 boys and 50 girls) Students.

Tools Used - The following tools are used for the present study -

1. Test of Emotional Intelligence developed by K. S. Misra was used as a tool for the study. High and low groups of emotional intelligence were formed on the basis of Mean ± 1S.D.
2. Marks obtained by the student in theory and practical examination served as an index of academic achievement.

Statistical Techniques Used - In the present study the investigator has used median, standard deviation and t-ratio were computed for the analysis of the data.

Result and Analysis

1. To compare study between academic achievement and emotional intelligence among Government and Private Higher Secondary School Students.

Table -1 (See in the next page)

In case of which were 2.081 was more than the tabulated value (1.96) at 0.05 level of significance for 398 degrees of freedom. Hence the 't' ratio in case of significant. So the null hypothesis that there is no significant difference between academic achievement and emotional intelligence among Government and Private Higher Secondary School Students be accepted.

2. To compare study between academic achievement and emotional intelligence among Government and Private Higher Secondary School's girls Students.

Table -2 (See in the next page)

In case of which were 0.33 was lesser than the tabulated value 1.96 at 0.05 level of significance for 398 degrees of freedom. Hence the 't' ratio in case of not significant. So the null hypothesis that there is no significant difference between academic achievement and emotional intelligence among Government and Private Higher Secondary School girls be rejected.

3. To compare study between academic achievement and emotional intelligence among Government and Private Higher Secondary School's boys Students.

Table -3 See in the next page)

In case of which were 1.77 was lesser than the tabulated value 1.96 at 0.05 level of significance for 398 degrees of freedom. Hence the 't' ratio in case of not significant. So the null hypothesis that there is no significant difference between academic achievement and emotional intelligence among Government and Private Higher Secondary School boys be rejected.

Findings and Conclusions - After testing hypotheses and analysis of data, the following conclusions were drown:

1. The academic achievement and emotional intelligence

among Government and Private Higher Secondary School's girls and boys Students are found similar on overall.

2. The study also reported both visually boys and girls possess same academic achievement.
3. It is found that private school's students are having better academic achievement for Government school's students.
4. The results of the study further show that private school's students are having better emotional intelligent for Government school's students.

Educational Recommendations - On the bases of the finding of the present study, the following educational recommendations are proposed by the researchers so that it may help teachers, policy makers, parents and researchers.

1. The present study has been conducted on IX to X class students. Further studies can be conducted on these variables at the other levels of education as well.
2. A comparison can also be made between those visually handicapped children who study in special school and those who study in other schools with normal children.

References :-

1. Abouserie, R. (1995). Self-esteem and achievement motivation as determinants of students' approaches
a. to studying, *Studies in Higher Education*, 20: 1, 19-26
2. Cassidy, T. (2000). Social background, achievement motivation, optimism and health: a longitudinal
a. study, *Counseling Psychology Quarterly*, 13: 4, 399-412
3. Chowdhury, A., & Pati, C. (1997). Effect of Selected Family Variables on Social Preference, Academic
4. Achievement and Self-Concept of Elementary School Children, *Early Child Development and Care*, 137: 1,133-143
5. Goel, S. & Sen, S. 1985. Work adjustment and job anxiety of the handicapped in open
a. employment –An Empirical Study. Indian journal of Industrial Relation, No. 23 Koul, L. 2006. Methodology of Educational Research, Vikas Publishing House pvt ltd, New Delhi.
6. Lifshitz, K. 2007. Self-concept, adjustment to blindness, and quality of friendship among
a. adolescents with visual impairments. Journal of visual impairment and blindness,
b. 10, 2, 96-107

Table - 1

Student	N	M	SD	't' value	df	Inference	Level of Sig.
Government school	100	29.91	3.86	2.081	398	Significant	-05
Private school	100	30.25	4.65				

Table - 2

Student	N	M	SD	't' value	df	Inference	Level of Sig.
Government school	50	29.40	4.31	0.33	398	Not Significant	-05
Private school	50	29.54	4.29				

Table - 3

Student	N	M	SD	't' value	df	Inference	Level of Sig.
Government school	50	29.08	4.67	1.77	398	Not Significant	-05
Private school	50	29.84	3.86				

****

शैक्षिक विकास के परिपेक्ष्य में जन शिक्षा केंद्रों में जन शिक्षकों की समस्याओं की भूमिका का अध्ययन (मन्दसौर जिले के संदर्भ)

डॉ. जयदीप महार * मनीष राठौर **

प्रस्तावना – मध्य प्रदेश में विगत एक दशक की अवधि में शिक्षा के क्षेत्र में अनेक सकारात्मक बदलाव आए है। जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (डिस्ट्रिक्ट प्राइमरी एजुकेशन प्रोग्राम) तथा सर्वशिक्षा अभियान जैसे परियोजनाओं के संचालन के तहत अनेक महत्वपूर्ण नवाचार शिक्षा के क्षेत्र में हुए हैं तथा इन नवाचारों के सकारात्मक परिणाम भी सामने आए है। जिसमें शिक्षा में पालकों की भागीदारी शिक्षण संस्थाओं की भूमिका तथा समुदाय की सहभागिता महत्वपूर्ण है। म.प्र. जन शिक्षा अधिनियम वर्ष 2002 में पारित होने के उपरान्त वर्ष 2003 अधिनियम के नियम बने जो म.प्र. जन शिक्षा नियम, 2003 के रूप में जाना जाता है। प्रारंभिक शिक्षा की संपूर्ण व्यवस्था इस नियम के तहत नियंत्रित होती है। **औचित्य**

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत में शिक्षा के क्षेत्र में 10–10 वर्षो के अन्तराल से शैक्षणिक सर्वेक्षण के कार्य हुए और केन्द्र शासन के नीति निर्माताओं ने अखिल भारतीय शैक्षणिक सर्वेक्षण के आंकडों को गंभीरता से लेते हुवे प्रांरभिक कदम उठायें तथा देश में ऑपरेशन ब्लैक बोर्ड योजना लागू की। उक्त परिपेक्ष्य में राज्य द्वारा काफी समय बीत जाने के बाद भी कोई अन्य मौलिक योजनाओं पर कार्य नही किये गये और न ही केन्द्र सरकार द्वारा लागू की गई ऑपरेशन ब्लैक बोर्ड योजना को निरंतर प्रदान की गई। जबकि शोधकर्ताओं जैसे पक्रियाम (1990), गुप्ता,आर.के. (1992), बाथरी, जे.के. (1995) ने ओ.बी.बी योजनान्तर्गत प्राप्त शैक्षणिक सामग्री की उपयोगिता पर अन्वेषण किया तथा पाया कि उक्त सामग्री शाला में बच्चों को सतत् बनाये रखने व उनका शैक्षणिक स्तर सुधारने हेतु सहायक है।

उद्देश्य

- शिक्षकों में पारस्परिक शैक्षिक समर्थन प्रणाली स्थापित करना।
- अध्यापन तथा सीखने की गुणात्मक कार्यपद्धति के आदान – प्रदान के लिये अवसर उपलब्ध कराना।
- शैक्षणिक प्रक्रियाओं में आने वाली समस्याओं का समाधान करना।
- शिक्षकों की आवश्यकताओं के अनुसार शिक्षकों का प्रशिक्षकों का प्रशिक्षण आयोजित करना।
- स्कूलों को शैक्षणिक रूप से सहयोग देना।
- समुदाय तथा अभिभावक शिक्षक संघ के साथ समन्वय करना।
- क्षेत्र की साक्षरता संबंधी गतिविधियों और शिक्षा की निरन्तरता में समन्वय स्थापित करना।
- प्रारंभिक स्तर पर सभी बच्चों को जीवनोपयोगी और समाजोपयोगी समुचित गुणस्तर की शिक्षा व्यवस्था किया जाना।
- जनशिक्षा केन्द्र प्रभारी को जनशिक्षा प्रभारी के रूप में अभिहित किया गया।

अध्ययन की सीमायें – प्रस्तुत अध्ययन की निम्नलिखित सीमायें है।

1. शोध में मध्यप्रदेश के मन्दसौर जिले को ही लिया गया है।
2. शोध को मध्यप्रदेश के मन्दसौर जिले के 02 विकासखंडों में 20 जन शिक्षा केंद्र तक सीमित रखा गया हैं।
3. न्यादर्श मे मन्दसौर जिले की शासकीय प्राथमिक व माध्यमिक शालाओं को ही सम्मिलित किया गया है।
4. प्रदत्तों के संकलन हेतु शोधकर्ता द्वारा विकसित अकारणों को प्रयुक्त किया गया है।
5. प्रदत्तों का विश्लेषण प्रतिशत के द्वारा किया गया है।

शोध का प्रकार – प्रस्तुत शोध अध्ययन में सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया जिसके अंतर्गत मन्दसौर जिले के पांच विकासखण्डों का सर्वेक्षण किया गया।

क्रं.	विकास खण्ड के नाम	जन शिक्षा केंद्र की संख्या
1	मन्दसौर	10
2	सीतामऊ	10

शोध न्यादर्श

न्यादर्श का प्रकार	न्यादर्श की संख्या	रिमार्क
जन शिक्षक	02×20=40	प्रत्येक जन शिक्षा केंद्र से 02 जन शिक्षक

शोध विधि – प्रस्तुत शोध अध्ययन में सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया जिसके अंतर्गत मन्दसौर जिले के 02 विकासखंडों में 20 जन शिक्षा केंद्र सम्मिलीत किया गया हैं।

उपकरण – प्रस्तुत शोध अध्ययन में जन शिक्षकों की समस्या से संबंधित तथ्यों व सूचनाओं को एकत्रित करने हेतु प्रश्नावली का निर्माण शोधार्थी द्वारा किया गया है,

प्रदत्तों का संकलन – शोर्ध कार्य को सफल बनाने हेतु ऑकडों व जानकारी का संकलन आवश्यक है। प्रस्तुत शोध अध्ययन में प्रदत्तों के संकलन हेतु सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है। शोधकर्ता ने शोध उपकरणों का निर्माण कर प्रदत्तों का संकलन किया हैं प्रदत्तों के संकलन की प्रक्रिया को नीचे वर्णित किया गया है।

* विभागाध्यक्ष, मन्दसौर यूनिवर्सिटी, मन्दसौर (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (शिक्षा) कलिंगा यूनिर्वसिटी, नया रायपुर (छ.ग.) भारत

जन शिक्षकों की समस्याओं से संबंधित प्रदत्तों का विवरण (सारिणी देखे आगे पृष्ठ पर)

सारणी का विश्लेषण –

1. सारणी के विश्लेषण से ज्ञात होता है, कि 80 जनशिक्षकों में से 14 प्रतिशत जनशिक्षक का चयन वष्ठिता के आधार पर हुआ, 81 प्रतिशत का काउंसलिग के आधार पर, 03 प्रतिशत शैक्षणिक योग्यता के आधार पर , 02 प्रतिशत व्यवसायिक योग्यता के आधार पर हुआ।
2. सारणी के विश्लेषण से ज्ञात होता है, कि 40 जनशिक्षकों में से 16 प्रतिशत जनशिक्षकों को जानकारी समाचार पत्रों से मिली 68 प्रतिशत को विभागीय पत्रों से, 16 प्रतिशत को साथी शिक्षक से जनशिक्षक पद हेतु जानकारी मिली।
3. सारणी के विश्लेषण से ज्ञात होता है, कि 40 जनशिक्षकों में से 100 प्रतिशत जनशिक्षक के अनुसार उनका मूल पद शिक्षक है।
4. सारणी के विश्लेषण से ज्ञात होता है, कि 40 जनशिक्षकों में से 64 प्रतिशत जनशिक्षक के अनुसार जनशिक्षक पद पर नियुक्ति उपरांत उनको किए जाने वाले कार्यो की जानकारी विभागीय प्रशिक्षण से मिली, 15 प्रतिशत जनशिक्षकों को पूर्व में कार्यरत जनशिक्षकों से मिली, 18 प्रतिशत जनशिक्षकों करो विकासखण्ड स्त्रोत केन्द्र समन्वयक द्वारा मिली, 03 प्रतिशत जनशिक्षकों को जन शिक्षा केन्द्र प्रभारी से मिली।
5. सारणी के विश्लेषण से ज्ञात होता है, कि 40 जनशिक्षकों में से 25 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार उनकी जनशिक्षा पद पर नियुक्ति उपरांत जनशिक्षा केन्द्र की शालाओं का अनुवीक्षण करते है, 75 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार शाला अनुवीक्षण के अतिरिक्त अन्य कार्य करते है।
6. सारणी के विश्लेषण से ज्ञात होता है, कि 40 जनशिक्षकों में से 12 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार सप्ताह में एक बार जनशिक्षा केन्द्र की शालाओं का अनुवीक्षण करते है, 88 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार मासिक आधार पर शालाओं का अनुवीक्षण करते है।
7. सारणी के विश्लेषण से ज्ञात होता है, कि 40 जनशिक्षकों में से 02 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार जनशिक्षा केन्द्र की शालाओं के अनुवीक्षण के दौरान शिक्षकों का शिक्षण कार्य देखते हैं, 02 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार छात्रों से शिक्षण संबंध चर्चा करते है, 96 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार शिक्षक का शिक्षण कार्य देखते है, छात्रों से चर्चा करते है और छात्रों का ग्रह कार्य भी देखते है।
8. सारणी के विश्लेषण से ज्ञात होता है, कि 40 जनशिक्षकों में से 52 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार जनशिक्षा केन्द्र की शालाओं का अनुवीक्षण करने से छात्रों के शैक्षणिक स्तर में सुधार हुआ है, 22 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार शिक्षकों की उपस्थिति नियमित हुई है, 26 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार शाला से संबंधित जानकारियॉ समय पर उपलब्ध हो जाती है।
9. सारणी के विश्लेषण से ज्ञात होता है, कि 40 जनशिक्षकों में से 62 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार शालाओं के सतत अनुवीक्षण करने से शासन द्वारा संचालित विभिन्न योजनाओं के बारे में जानकारी प्राप्त हुई है और योजना का लाभ भी हुआ है, 12 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार योजना में सुधार अपेक्षित रूप से नहीं हुआ है, 26 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार योजनाओं में आंशिक सुधार हुआ है।
10. सारणी के विश्लेषण से ज्ञात होता है, कि 40 जनशिक्षकों में से 91 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार जनशिक्षा केन्द्र की शालाओं के अनुवीक्षण के दौरान संस्था प्रधान से सहयोग मिलता है, 09 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुससर संस्था प्रधान आपसे वरिष्ठ की मानसिकता से व्यवहार करते हैं।
11. सारणी के विश्लेषण से ज्ञात होता है, कि 40 जनशिक्षकों में से 68 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार अनुवीक्षण की जाने वाली शालाओं के शिक्षकों का दृष्टिकोण आपके द्वारा दिए जाने वाले निर्देशों के प्रति सकारात्मक रहता है, 02 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार नकारात्मक रहता है, 20 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार दृष्टिकोण तो सकारात्मक रहता है लेकिन निर्देशों के प्रति नकारात्मक रहते है, 10 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार उनके पद तथा स्थानाकुल आपको समर्थन मिलता है।
12. सारणी के विश्लेषण से ज्ञात होता है, कि 40 जनशिक्षकों में से 06 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार शाला अनुवीक्षण से शालाओं में नामांकन पर प्रभाव पड़ा है, 05 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार शालाओं में बच्चों के ठहराव पर प्रभाव पड़ा है, 05 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार शालाओं में बच्चों की उपलब्धि पर प्रभाव पड़ा है, 84 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार उपरोक्त सभी कारकों पर प्रभाव पड़ा है।
13. सारणी के विश्लेषण से ज्ञात होता है, कि 40 जनशिक्षकों में से 14 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार शाला में अनुवीक्षण के दौरान औसत रूप से शाला में पूरा दिन रूकते है, 45 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार आधा दिन रूकते है, 27 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार केवल दो घण्टे ही रूकते है, 14 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार थोडी देर रूकते है।
14. सारणी के विश्लेषण से ज्ञात होता है, कि 40 जनशिक्षकों में से 62 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार शाला में अनुवीक्षण दौरान आप ग्राम/सुदाय के लोगों से मिलते है, 19 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार बहुत कम मिलते है, 19 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार केवल S.M.D.C के सदस्यों से मिलते है।
15. सारणी के विश्लेषण से ज्ञात होता है, कि 40 जनशिक्षकों में से 30 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार जनशिक्षा केन्द्र योजना को एक प्रभावी योजना मानते है, 58 प्रतिशत जनशिक्ष इस योजना को एक प्रभावी शैक्षिक विकास का माध्यम मानते है, 12 प्रतिशत जनशिक्षक इस योजना को बहुत उपयोगी मानते है।
16. सारणी के विश्लेषण से ज्ञात होता है, कि 40 जनशिक्षकों में से 40 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार प्रारंभीक शिक्षा के विकास में अपनी भूमिका को अत्यंत उपयोगी मानते है, 50 प्रतिशत जनशिक्षक एक नवाचारी सोच मानते है, 10 प्रतिशत जनशिक्षक इसे एक सिमित भूमिका मानते हैं।
17. सारणी के विश्लेषण से ज्ञात होता है, कि 40 जनशिक्षकों में से 40 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार जनशिक्षा केन्द्र शालाओं

के शैक्षिक विकास में एक महत्वपूर्ण कड़ी है, 05 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार शैक्षिक विकास में ज्यादा उपयोगी नहीं है, 04 प्रतिशत जनशिक्षकों के पास इसका कोई जवाब नहीं है।

18. सारणी के विश्लेषण से ज्ञात होता है, कि 40 जनशिक्षकों में से 32 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार उन्हें जनशिक्षक के तौर पर कार्य करते हुवे तीन वर्ष हुए है, 03 प्रतिशत जनशिक्षक को दो वर्ष हुए है, 65 प्रतिशत जनशिक्षक को इस पद पर कार्य करते हुए चार वर्ष या चार वर्ष से अधिक हो गये हैं।
19. सारणी के विश्लेषण से ज्ञात होता है, कि 40 जनशिक्षकों में से 32 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार शैक्षिक विकास के संदर्भ में जनशिक्षा केन्द्र / शैक्षिक योजना का स्वरूप यथावत रखना चाहिए, 16 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार इस स्वरूप को बदलना चाहिए, 44 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार पुनर्गठन करना चाहिए और 8 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार इस योजना को समाप्त कर देना चाहिए।
20. सारणी के विश्लेषण से ज्ञात होता है, कि 40 जनशिक्षकों में से 92 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार जनशिक्षा केन्द्र पर शालाओं के शिक्षकों हेतु मासिक समीक्षा बैठक का आयेजन प्रतिमाह किया जाना चाहिए, 06 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार बैठक का आयोजन त्रैमासिक आधार पर होना चाहिए, 02 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार बैठक नहीं होना चाहिए।
21. सारणी के विश्लेषण से ज्ञात होता है, कि 40 जनशिक्षकों में से 05 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार जनशिक्षा केन्द्र स्तरीय बैठकों में कठिन अंशों पर चर्चा होती है, 02 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार शालाओं में संचालित विभिन्न योजनाओं की समीक्षा होती है, 02 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार डाक का आदान – प्रदान होता है, 91 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार उपरोक्त सभी कार्यो की चर्चा जनशिक्षा केन्द्र की बैठकों में होती है।
22. सारणी के विश्लेषण से ज्ञात होता है, कि 40 जनशिक्षकों में से 50 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार उक्त जनशिक्षा केन्द्र स्तरीय बैठकों से शिक्षकों का शैक्षणिक विकास होता है, 14 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार बैठक में शिक्षकों को अकादमिक अनुसमर्थन प्राप्त होता है, 14 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार उनकी शालेय कठिनाईयों पर चर्चा तथा निवारण के उपाय खोजे जाते है, 22 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार नई जानकारियों का आदान – प्रदान होता है।
23. सारणी के विश्लेषण से ज्ञात होता है, कि 40 जनशिक्षकों में से 15 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार अभिभावकगण जनशिक्षा केन्द्र योजना से अच्छी तरह वाकिफ है, 35 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार कुछ अभिभावक ही वाकिफ है, 10 प्रतिशत अभिभावकों का जानकारी नहीं है, 40 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार अभिभावकों को इस विषय में जागरूकता नहीं है।
24. सारणी के विश्लेषण से ज्ञात होता है, कि 40 जनशिक्षकों में से 70 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार जनशिक्षा केन्द्र योजना को एक विकेन्द्रीकृत योजना मानते है, 14 प्रतिशत जनशिक्षक इस योजना को नहीं मानते है, 06 प्रतिशत जनशिक्षक इस योजना को बिलकुल नहीं मानते है, और 10 प्रतिशत जनशिक्षक इस योजना के बारे में कुछ नहीं कह सकते है।
25. सारणी के विश्लेषण से ज्ञात होता है, कि 40 जनशिक्षकों में से 25 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार जनशिक्षा केन्द्र योजना जिले की दुरस्थ शालाओं तक पहुँचती है, 30 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार दुरस्थ शालाओं की मॉनिटरिंग सुदृढ़ हुई है, 20 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार दुरस्थ शालाओं में शिक्षकों की उपस्थिति बढ़ी है और 25 प्रतिशत जनशिक्षकों के अनुसार शाला के शैक्षिक तथा भौतिक वातावरण में परिर्वतन आया है।

परिशिष्ट

जन शिक्षक के लिये प्रश्नावली –

1. जन शिक्षक पद पर आपके चयन का आधार –
   (1) वरिष्ठता के आधार पर
   (2) काउंसलिंग के आधार पर
   (3) आपकी शैक्षणिक योग्यता के आधार पर
   (4) आपकी व्यवसायिक योग्यता के आधार पर
   (5) अन्य कोई आधार (कृपया उल्लेख करे)
2. जन शिक्षक पद हेतु आपको जानकारी कैसे मिली –
   (1) समाचार पत्रों से (2) विभागीय पत्रो से
   (3) साथी शिक्षक से
   (4) अन्य किसी स्त्रोत से (कृपया उल्लेख करे)
3. आपका मूल पद क्या है –
   (1) शिक्षक/अध्यापक (2) सहा. शिक्षक/सहा. अध्यापक
   (3) संविदा शाला शिक्षक वर्ग 1/2/3
   (4) अन्य कोई पद (कृपया उल्लेख करें)
4. जन शिक्षक पद पर नियुक्ति उपरांत आपको किए जाने वाले कार्यो की जानकारी कैसे मिली –
   (1) विभागीय प्रशिक्षण से
   (2) पूर्व में कार्यरत जनशिक्षकों से
   (3) जनशिक्षा केन्द्र प्रभारी से
   (4) विकासखंण्ड स्त्रोत केन्द्र समन्वयक
   (5) किसी अन्य स्त्रोत से (कृपया उल्लेख करे)
5. क्या जनशिक्षक पद पर नियुक्ति उपरांत–
   (1) आप जनशिक्षा केन्द्र की शालाओं का अनुवीक्षण करते है
   (2) आप अपनी मूल शाला मे ही पढ़ाते है
   (3) आप मूल शाला में ही पढ़ाते है तथा जनशिक्षा केन्द्र की शालाओ का अनुसमर्थन भी देते है
   (4) शाला अनुवीक्षण के अतिरिक्त अन्य कार्य भी करते हैं
6. आप अपने जनशिक्षा केन्द्र की शालाओं का अनुवीक्षण करते है–
   (1) सप्ताह में एक बार (2) त्रैमासिक आधार पर
   (3) मासिक आधार पर (4) कभी नहीं
7. जनशिक्षा केन्द्र की शालाओं के अनुवीक्षण के दौरान –
   (1) आप शाला के शिक्षक का शिक्षण कार्य देखते है
   (2) आप छात्रों से शिक्षण संबंधी चर्चा करते है
   (3) आप छात्रों का गृहकार्य देखते है
   (4) उपरोक्त सभी कार्य करते है

8. आपके द्वारा जनशिक्षा केन्द्र की शालाओं का अनुवीक्षण करने से –
   (1) छात्रों के शैक्षणिक स्तर में सुधार हुआ है
   (2) शालाओं में शिक्षकों की उपस्थिति नियमित हुई है
   (3) शालाओं के भौतिक वातावरण मे परिवर्तन हुआ है
   (4) शाला से संबंधित जानकारियां समय पर उपलब्ध हो जाती है
   (5) अन्य कोई उल्लेखनीय परिवर्तन जिसका आप उल्लेख करना चाहते है
09. आपके द्वारा जनशिक्षा केन्द्र की शालाओं के सतत अनुवीक्षण करने से –
   (1) शासन द्वारा संचालित विभिन्न योजनाओं (यथा मध्यान भोजन योजना नि:शुल्क पाठ्य पुस्तक/गणवेश/छात्रवृति/ सायकल वितरण तथा अन्य)
   (2) सुधार अपेक्षित रूप से नहीं हुआ है
   (3) बिल्कुल सुधार नहीं हुआ है
   (4) आंशिक सुधार हुआ है
10. आपके द्वारा जनशिक्षा केन्द्र की शालाओं के अनुवीक्षण के दौरान –
   (1) संस्था प्रधान से सहयोग मिलता है
   (2) संस्था प्रधान से असहयोग मिलता है
   (3) संस्था प्रधान उदासीन रहते है
   (4) संस्था प्रधान आपसे वरिष्ठ/कनिष्ठ की मानसिकता से व्यवहार करते है
11. अनुवीक्षण की जाने वाली शालाओं के शिक्षकों का दृष्टिकोण आपके द्वारा दिए जाने वाले निर्देशों के प्रति –
   (1) सकारात्मक रहता है (2) नकारात्मक रहता है
   (3) दृष्टिकोण तो सकारात्मक रहता है लेकिन निर्देशों के प्रति नकारात्मक रहते है
   (4) शिक्षक भी आपके साथ वरिष्ठ/कनिष्ठ की मानसिकता से पेश आते है
   (5) आपके पद तथा ज्ञानाकुल आपको समर्थन मिलता है
12. आपके द्वारा शाला अनुवीक्षण से –
   (1) शालाओं में नामांकन पर प्रभाव पड़ा हैं
   (2) शालाओं मे बच्चो के ठहराव पर प्रभाव पड़ा है
   (3) बच्चों की उपलब्धि पर प्रभाव पड़ा है
   (4) उपरोक्त सभी कारको पर प्रभाव पड़ा है
13. शाला अनुवीक्षण के दौरान आप औसत रूप शाला में –
   (1) पूरा दिन रूकते है (2) आधा दिन रूकते है
   (3) केवल दो घण्टे रूकते है (4) थोडी देर रूकते है
   (5) केवल डाक एकत्रित करके चले जाते है
14. शाला अनुवीक्षण के दौरान आप ग्राम/समुदाय के लोगों से –
   (1) मिलते है (2) बहुत कम मिलते है
   (3) केवल S.M.D.C. के सदस्यों से मिलते है
   (4) किसी से नहीं मिलते है
15. जनशिक्षा केन्द्र योजना को आप –
   (1) एक प्रभावी योजना मानते है
   (2) एक प्रभावी शैक्षिक विकास का माध्यम मानते है
   (3) बहुत उपयोगी मानते है
   (4) एक विफल एवं निष्प्रभावी योजना मानते है
16. प्रारिभक शिक्षा के विकास में आप अपनी भूमिका को –
   (1) अत्यंत उपयोगी मानते है
   (2) एक नवाचारी सोच मानते है
   (3) एक सिमित भूमिका मानते है
   (4) आपकी कोई प्रभावी भूमिका नहीं मानते है
17. आपके दृष्टिकोण में जनशिक्षा केन्द्र शालाओं के शैक्षिक विकास में–
   (1) महत्वपूर्ण कड़ी है
   (2) शैक्षिक विकास में ज्यादा उपयोगी नहीं है
   (3) बिल्कुल उपयोगी नहीं है
   (4) कुछ कह नहीं सकते है
18. जनशिक्षक के तौर पर आपको कार्य करते हुए –
   (1) एक वर्ष हुआ है (2) दो वर्ष हुआ है
   (3) तीन वर्ष हुए है (4) चार या अधिक वर्ष हो गये हैं
19. शैक्षिक विकास के संदर्भ में क्या जनशिक्षा केन्द्र/शैक्षिक संकुल योजना का स्वरूप –
   (1) यथावत रखना चाहिए
   (2) स्वरूप बदलना चाहिए
   (3) पुनर्गठन करना चाहिए
   (4) योजना को समाप्त कर देना चाहिए
20. क्या जनशिक्षा केन्द्र पर शालाओं के शिक्षको हेतु मासिक समीक्षा बैठक का आयोजन –
   (1) प्रतिमाह किया जाना चाहिए
   (2) त्रैमासिक आधार पर होना चाहिए
   (3) कुछ चिंहीत शालाओं के शिक्षकों को ही बुलाना चाहिए
   (4) बैठक नहीं होना चाहिए
21. जनशिक्षा केन्द्र स्तरीय बैठको में –
   (1) कठिन अंशो पर चर्चा होती है
   (2) मुल्यांकन पर चर्चा होती है
   (3) शालाओं में संचालित विभिन्न योजनाओं की समीक्षा होती है
   (4) डाक का आदान प्रदान होता है
   (5) उपरोक्त सभी कार्य
22. उक्त जनशिक्षा केन्द्र स्तरीय बैठकों से –
   (1) शिक्षकों का शैक्षिक विकास होता है
   (2) शिक्षकों को अकादमिक अनुसमर्थन प्राप्त होता है
   (3) शिक्षकों की शालेय कठिनाईयों पर चर्चा तथा निवारण के उपाय खोजे जाते है
   (4) नई जानकारियों का आदान – प्रदान होता है
   (5) कोई गंभीर कार्य नहीं होते है
23. अभिभावकगण जनशिक्षा केन्द्र योजना से –
   (1) अच्छी तरह से वाकिफ है
   (2) कुछ ही अभिभावक वाकिफ है
   (3) अधिकांश पालकों को जानकारी नहीं है
   (4) पालकों को इस विषय में ज्यादा ज्ञान / जागरूकता नहीं है

24. क्या आप जनशिक्षा केन्द्र योजना को एक विकेन्द्रीकृत योजना मानते है –
    (1) हॉ मानते है (2) नहीं मानते है
    (3) आंशिक रूप से मानते है (4) बिल्कुल नही मानते है
    (5) कुछ कह नहीं सकते है
25. जन शिक्षा केन्द्र योजना जिले की दुरस्थ शालाओं तक –
    (1) पहुँच बनी है
    (2) दुरस्थ शालाओं का शैक्षिक विकास हुआ है
    (3) दुरस्थ शालाओं की मानिटरिंग सुद्रढ़ हुई है
    (4) दुरस्थ शालाओं मे शिक्षकों की उपस्थिति बढ़ी है
    (5) शाला के शैक्षिक तथा भौतिक वातावरण में परिवर्तन आया है

जन शिक्षकों की समस्याओं से संबंन्धित प्रदत्तों का विवरण

क्रं.	जन शिक्षक के लिए	अ	ब	स	द
1.	जन शिक्षक पद पर आपके चयन का आधार	14	81	03	02
2.	जन शिक्षक पद हेतू आपको जानकारी कैसे मिली	16	68	16	–
3.	आपका मूल पद क्या है।	100	–	–	–
4.	जन शिक्षक पद पर नियुक्ति उपरांत आपको किए जाने वाले कार्यो की जानकारी कैसे मिली।	64	15	18	03
5.	क्या जनशिक्षक पद पर नियुक्ति उपरांत।	25	–	–	75
6.	आप अपने जनशिक्षा केन्द्र की शालाओं का अनुवीक्षण करते है।	12	–	88	–
7.	जनशिक्षा केन्द्र की शालाओ के अनुवीक्षण के दौरान।	02	02	–	96
8.	आपके द्वारा जनशिक्षा केन्द्र की शालाओं का अनुवीक्षण करने से।	52	22	–	26
09.	आपके द्वारा जनशिक्षा केन्द्र की शालाओं के सतत अनुवीक्षण करने से।	62	12	–	26
10.	आपके द्वारा जनशिक्षा केन्द्र की शालाओं के अनुवीक्षण के दौरान।	91	–	–	09
11.	अनुवीक्षण की जाने वाली शालाओ के शिक्षकों का दृष्टिकोण आपके द्वारा दिए जाने वाले निर्देशो के प्रति।	68	02	20	10
12.	आपके द्वारा शाला अनुवीक्षण से	06	05	05	84
13.	शाला अनुवीक्षण के दौरान आप औसत रूप शाला में।	18	50	32	14
14.	शाला अनुवीक्षण के दौरान आप ग्राम /समुदाय के लोगों से।	62	19	19	–
15.	जनशिक्षा केन्द्र योजना को आप।	30	58	12	–
16.	प्रारिभक शिक्षा के विकास में आप अपनी भूमिका को	40	50	10	–
17.	आपके दृष्टिकोण में जनशिक्षा केन्द्र शालाओं के शैक्षिक विकास में।	91	05	–	04
18.	जनशिक्षक के तौर पर आपको कार्य करते हुए।	–	32	03	65
19.	शिक्षक विकास के संदर्भ में क्या जनशिक्षा केन्द्र / शैक्षिक संकुल योजना का स्वरूप।	32	16	44	08
20.	क्या जनशिक्षा केन्द्र पर शालाओं के शिक्षकों हेतु मासिक समीक्षा बैठक का आयोजन।	92	06	–	02
21.	जनशिक्षा केन्द्र स्तरीय बैठकों में।	05	02	02	91
22.	उक्त जनशिक्षा केन्द्र स्तरीय बैठकों से।	50	14	14	22
23.	अभिभाकगण जनशिक्षा केन्द्र योजना से।	15	35	10	40
24.	क्या आप जनशिक्षा केन्द्र योजना को एक विकेन्द्रीकृत योजना मानते है।	70	14	06	10
25.	जन शिक्षा केन्द्र योजना जिले की दुरस्थ शालाओं तक।	25	30	20	25

****

Effect of basketball specific endurance circuit training on aerobic capacity and performance and heart rate of Inter College male basketball players

Dr. Jogendra Singh * Manoj Kumar Singh **

Abstract - The purpose of the study was to evaluate the effectiveness of a basketball specific endurance circuit training on aerobic capacity and heart rate of inter college male basketball players. To achieve the purpose of the study twenty four (24) male inter college basketball players were selected from B.B.S. Sports college Gorakhpur up. and B.B.P. inter college gangapur u.p. These Subjects were randomly distributed into two groups namely basketball specific endurance circuit training group (N=12) and control group (n=12). The mean age of the selected players was 16.87±0.69. Aerobic capacity, resting heart and peak heart rate were selected as criterion variables. Aerobic capacity was measured by multistage fitness test and resting ang peak heart rate was measured using polar heart rate monitor. The basketball specific endurance circuit training was administered 3 days per week for six week. They performed 2 minutes of work at 90 to 95% of targeted heart rate using Karvonen method. They performed 8 repetitions during first and second week, followed by 10 repetitions during third and fourth week and 12 repetitions during fifth and sixth week of training. This was followed by 2 minutes of active resting at 60 to 70% of targeted heart rate. In this study 1:1 work rest ratio was followed. Both the groups were tested before and after training, the collected data was analysed using ANCOVA. The result of the study showed that aerobic capacity, resting heart rate and peak heart rate between the group was significant, it indicate that after adiusting pre-test scores, there was a significant difference between the two groups on post-test scores. The findings of the study show that significant increase in aerobic capacity and decrease in resting and peak heart rate. It can be concluded that basketball specific endurance circuit training is effective in improving aerobic capacity and increases the cardiovascular fitness of male inter college boys during competitive phase.

Introduction - Traditionally, the coaches and trainers have planned conditioning programs for their teams by following regimens used by teams that have successful win-loss records. This type of reasoning is not sound because win-loss records alone do not scientifically validate the conditioning programs used by the successful teams. In fast, the successful team might be victorious by virtue of its superior athletes and not its outstanding conditioning program. Without question, the planning of an effective athletic conditioning program can best be achieved by the application of proven physiological training principles. Optimizing training programs for athletes is important because failure to properly condition an athletic team results in a poor performance and often defeat.

The importance of developing good conditioning programs based on the specific physiological demands of each sport is considered a key factor to success (Gillam 1985; Taylor 2003; 2004). The basketball player needs to train multiple components of fitness. Thus, the athlete will concurrently perform various modes of training (e.g., strength anaerobic, endurance). In thepresentstudy sport specific circuit training was employed. This incorporates skills and movements specific to the sport, at intensities sufficient to promote aerobic adaptations, are being increasingly implemented in professional team sports environment (Lawson 2001). The perceived benefit of performing sports-specific exercise is that the training will transfer better into the athlete's competitive environment and that the greatest training benefits occur when the training stimulus simulates the specific movement patterns and physiological demands of the sport (McArdle, Katch and Katch 1996). The purpose of the study was to evaluate the effectiveness of a basketball specific endurance circuit training on aerobic capacity and heart rate of inter college male basketball players.

Methods

Subjects - A total of twenty four (24) male inter college basketball players were selected from B.B.S. Sports College Gorakhpur up. and B.B.P. inter college gangapur u.p.. These subjects were randomly distributed into two groups namely sports specific endurance circuit training group (N=12) and control group (N=12). The mean age of the selected players was 16.87±0.69. The selected players had 3.8± 3.1 years of playing experience and regularly participate in training

* Secretary, University Sport Board Pacific University, Udaipur (Raj.) INDIA
** Research Scholar, Pacific University, Udaipur (Raj.) INDIA

prior to the commencement of this study. All subjects were subjected to medical examination by a general medical practitioner before participation in the study to ensure that there was of sufficient standard to be able to take part in fitness testing and training.

Variables and tests - Aerobic capacity resting heart rate and peak heart rate were selected as criterion variables. Aerobic capacity was measured by multistage fitness test and resting and peak heart rate was measured using polar heart rate monitor.

Design of the study - For the present study pretest-posttest randomized group design (Thomas, Nelson& Silverman, 2005) which consists of a control group (CG) and an experimental group (TG) that was used to find out effect sports specific circuit training on the selected physiological variables Equal numbers (twelve) of subjects were assigned randomly to all the group. TG was exposed to training with a set of drills selected for specific purpose. The TG Underwent training for a period of six week (42days).The training sessions were conducted three days a week (i.e. Monday, Wednesday, and Friday).Measurement of physiological variables was taken for both the groups.

Collection of Data - All the subjects were tested on physiological variables preor to training and after six weeks of training at B.B.S. and gangapur. The testing session consists of warm-up and test interspersed with rest. All tests were explained and demonstrated. Before testing, subjects were given practice traials to become familiar with the testing procedures. All tests were counterbalanced ore and post testing to ensure that testing effects were minimized. Subjects performed each test as per test procedure and the scores of best trials were taken for this study. In the morning of the first day of testing measurements like height, weight, body composition, resting heart rate, vertical jump and repeated sprint ability were measured, however in the evening aerobic capacity and peak heart rate were evaluated.

Sports specific circuit training - TG is supplemented with sports specific circuit training replaced the regular physical fitness activity. However, control group performed regular physical activity. The training was carried out in outdoor basketball court. This sports specific circuit training was based on a previous design (Smith, 2004) and adapted to mimic as closely as possible the movement patterns of basketball match play as reported by Mclnnes et al., (1995). The sports specific circuit training was administered 3 days per week for six week. The TG performed 2minutes of work at 90 to 95% of targeted heart rate using Karvonen method. They performed 8 repetitions during first and second week, followed by 10 repetitions during third and fourth week and 12 repetitions during fifth and sixth week of training. This was followed by 2minutes of active resting at 70 to 80% of targeted heart rate. In this study 1:1 work rest ratio was followed. This training protocol was adapted from Helgerud et al., (2001). The average running time of one circuit was 59 s and the total distance covered during one lap was approximately 153 m, with 60.5% of the movements forward sprinting and 39.9% side shuffing. The portion of the circuit considered 'offence' activity where a basketball was dribbled, was 55.8% while 44.6% was considered 'defensive' activity without ball. Three layups, three rebounds, seven vertical jumps, one pivot and 20 change of direction were completed during one repeat of the circuit.

Heart rate monitor was used to measure peak heart rate when performing the circuit. The subjects wore polar heart rate transmitter belt and watch (Polar heart rate monitor watch, Finland). The training intensity was fixed between 90 to 95% of THR. When the players perform below or above the prescribed intensity the watch will produce beep sound to alter their intensity accordingly.The sports specific endurance circuit training details are presented in figure 1.

(See figure1 in last page)

The description of the circuit - 1-2 forward sprint, 2-3 hurdle jump, 3-4 forward sprint, 4 pivot left, 4-5 shuffe left, 5-6 shuffle right, 6-7 shuffle left, 7-8 shuffle right, 8-9 shuffe left, 9-10 shuffle right, 10-11 hurdle jump, 12 vettical jump (collect ball upon landing), 13-14 zig zag Dribble, 14-15 speed dribble with complete layup, 15 collect the rebound, 15-16-15 speed dribble with complete layup, 15 collect the rebound, 15-17-15 speed dribble with complete layup, 15 collect the rebound, 15-18 run and place the ball in basketball, 18 throw the medicine ball, 18-19-20 forward sprint.

Statistical technique - The collected data was evaluated using Analysis of Covariance (ANCOVA).The proposed hypothesis was tested at 0.05 level of confidence. Beside this mean and standard deviation were also calculated. SPSS statistic software package (SPSS Company, America, version 17.0) was used. The value of 0.05 was set for statistical significance.

Results - Table 1 clearly shows that aerobic capacity , resting heart rate and peak heart rate between the groups was significant, it indicate that after adjusting pre-test scores, there was a significant difference between the two groups on post-test scores on aerobic capacity, resting heart rate and peak heart rate. The findings of the study show that significant increase in aerobic capacity and decrease in resting and peak heart rate . The changes are presented in table 1.

(Table-1 see in last page)

Discussion - In the present study, basketball specific endurance circuit training for six week has significantly improved aerobic capacity 3.29%. Similarly, in CG 1.03% of improvement is elicited in aerobic capacity. The changes observed in the present study have been reported previously in basketball (Balabinis et. 2003) and soccer players (Helgerud et al. 2001) . The changes elicited in the present study found to be lower than the 7.5 to 9% increases in VO2peak observed in soccer players following eight to ten-weeks of performing a similar sport- specific aerobic endurance training circuit compared to control group (Chamari et al. 2005; McMillan et al. 2005).

The reasons for small change obtained in aerobic capacity was firstly, differences observed could be due to the fact that the training was carried out during the competitive phase in the present study compared to the preparatory phase in other studies (Chamari et al. 2005; McMillan et al.2005). Greater training adaptations are more likely to occur due to a potentially detrained state during preparatory phase. Secondly, the difference could also be due to the shorter duration training programme in the present study compared to other (Chamari et al. 2005). Sports specific endurance circuit training results in increase capillary and mitochondrial density, enzyme activity (creatine phosphokinase and myokinase), metabolic stores (ATP, Creatine phosphate and glycogen), connective tissue strength (ligament and tendon) (Baechle and Earle 2000; Amigo et al. 1998). These factors result in slight improvement in aerobic capacity in male inter college basketball players.

Resting heart rate refers to the number of times a heart contracts in one minute (beats per minute or BPM) while at complete rest. The normal heart rate depends upon your age, gender and health and can very greatly for both athletes and non-athletes. In general, a person,s resting heart rate indicates their basic fitness level. The stronger the heart, the more blood it can pump during each contraction, and the less frequently it needs to beat to get adequate blood flow (circulation) and oxygen to the body tissues.A well trained athlete can hav a very low resting heart rate and pump more blod than an unconditioned individual. In the present study TG showed 3.58 beats\min changes is elicited. The percentage reduction for resting heart rate between pre to post was 6.48%. These changes are elicited as a result of sports specific endurance circuit training imparted to the inter collegemale basketball playees. The amount of blood pumped out of the left ventricle of heart with each contraction is called the stroke volume. Although some condition can affect a person,s stroke volume, endurance and high intensity cardiovascular exercise training often increases stroke volume (Bonaduce et al. 1998).A larger stroke volume results in a lower (resting) heart rate (Nottin et al. 2002). H0wever, longer diastole influences the resting heart rate in athletes(Nottin et al. 2002).

In this study TG showed 3.14% (6.25 beats\min) of reductions in peak heart rate. These alterations are caused because of sports specific endurance circuit training which resulted in improvement of aerobic capacity. Heart rate increases in parallel with increasing exercise intensity. Heart rate is stimulated to increase through the activation of mechano-, chemo-, and baroreceptors sending afferent signals to the cardiovascular control centre in the brain. This in turn adjusts sympathovagal balance to the SA node bringing about a change in HR. At the onset of exercise, there is a rapid increase in HR. Due to its speed of response, this is suggested to arise through a withdrawal of parasympathetic modulation which enables the HR to increase up to the intrinsic rate of approximately 100 beats\min. Thereafter, any increase in HR is stimulayed through an increased sympathetic modulation. Increased sympathetic cardiac modulation is evident from approximately 25% peak VO2 onwards and by the time exercise reaches an intensity of 50-60% of peak VO2, data suggest that vagal modulation disappears all together. Very few studies have reported the dynamics of autonomic control of HR during exercise in children. Those studies that have been performed report similar findings to those observed in adults. Due to training adaptations these changes are found in the present study.

Conclusion - Basketball specific endurance circuit training is effective in improving aerobic capacity and increases the cardiovascular fitness of male inter college boys during competitive phase.

References :-

1. Thomas, J.R., Nelson, J.K., and Silverman S.J. (2005) Research Methods in physical Activity. USA.
2. Taylor, J. (2004) A tactical metabolic training model for collegiate basketball . Strength and Conditioning Journal 5, 22-29.
3. Taylor, J. (2003) Basketball: applying time motion data to conditioning . Strength and Conditioning Journal 2, 57-64.
4. Smith, M. (2004) Basketball Skill test for the big men. FIBA Assist Magazine, 07:59-60.
5. Nottin, S., Vinet, A., Stecken, F., N, Guyen, L.d., Ounissi, F., Lecoq, A.M., Obert, P. (2002). Central and peripheral cardiovascular adaptations to exercise in endurance- trained children. Acta Physiol Scand, 175:85-92.
6. McMillan K., Helgerud, J., Macdonald, R., and Hoff, J. (2005). Physiological adaptations to soccer specific endurance training in professional youth sccer players. British Journal of Sports Medicine, 39:273-277.
7. McInnes, S.E., Carlson, J.S., Jones, C.J., McKenna, M.J. (1995). The physiological load imposed on basketball players during competition. J Sports Sci, 13(5):387-97.
8. McArdle, D.M.; Katch, FI.&Katch, V.L. (1996). Exercise Physiology: energy, nutrition and human performance (5th Ed.). Philadelphia, P.A.; Lippincott Williams and Wilkins.
9. Lawson, E. (2001). Incorporating sports- specific drills into conditioning. In B. Foran (Ed.), High performance sports conditioning (pp.215-266). Champaign , IL: Human Kinetics.
10. Helgerud, J., Engen,L.C., Wisloff, U., Hoff, J. (2001). Aerobic endurance training improves soccer performance. MedSce Sports Exerc, 33 (11):1925-31.
11. Gillam, G (1985) Physiological basis of basketball bioenergetics. NSCA Journal6,44-71.
12. Chamari,K., Hachana, Y., Kaouech, F., Jeddi, R., Moussa- Chamari, I., Wisloff, U. (2005). Endurance training and testing with the ball in young elite soccer

playets. Br J Sports Med, 39(1): 24-8.
13. Bonaduce, D., Petretta, M., Cavallaro, V., Apcella, C., Ianniciello, A., Romano, M., et al. (1998). Intensive training and cardiac autonomic control in high level athletes. Med Sci Sports Exerc, 30:691-6.
14. Balabinis, C.P.,Psarakis, C.H., Moukas, M., Vassiliou, M.P., Behrakis. P.K. (2003). Early phase changes by concurrent endurance and strength training. J Strength Cond Res, 17(2):393-401.
15. Baechle, T.R., and Earle, R.W. (2000). NSCA Essentials of strength traininh and conditioning (2nd ed.). Human Kinetics, Leeds,UK.
16. Amigo,N., Cadefau, J.A., Ferrer, I., Tarados, N., and Cusso, R. (1998). Effect of summer intermission on skeletal muscle of adolescent soccer players. Journal of Sports Medicine & Physical Fitness, 38(4): 298-304.

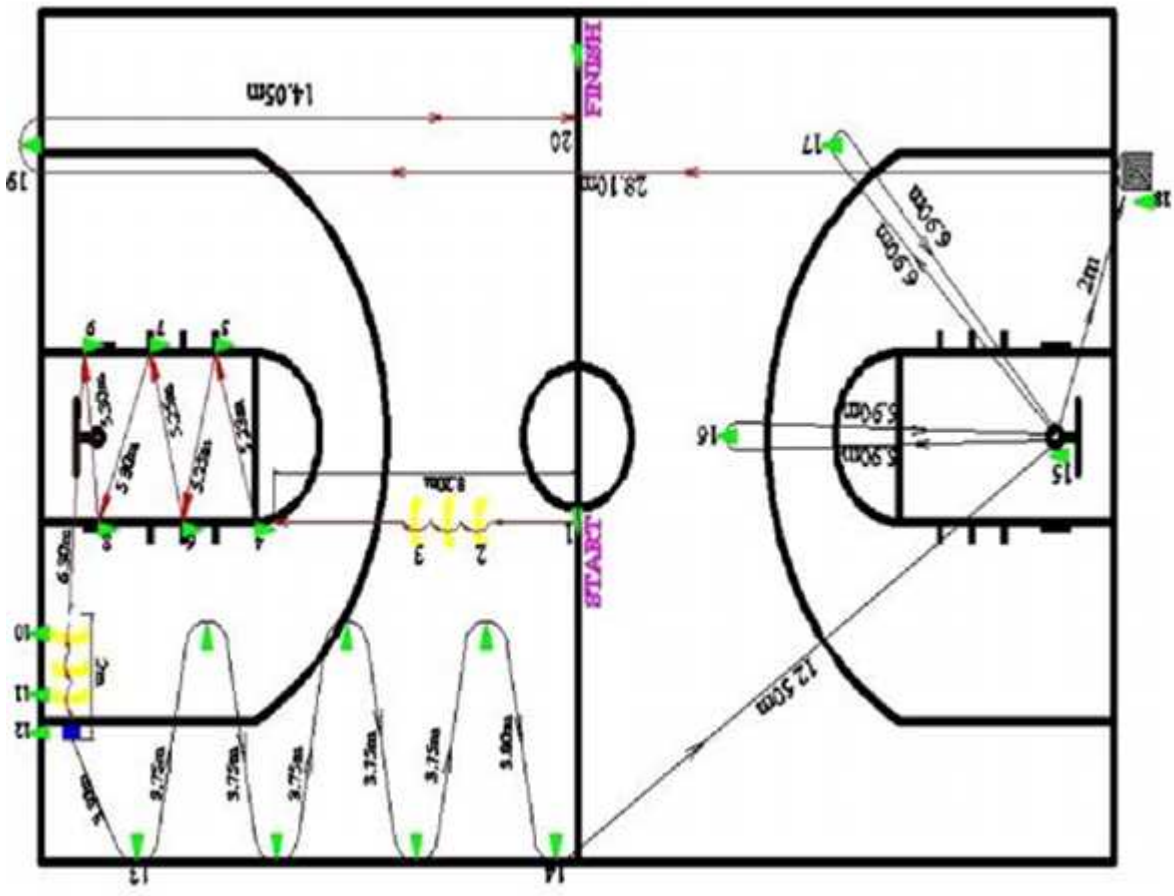

Fig. 1 : Basketball specific circuit training

Table-1 : Changes in aerobic capacity and heart rate

Variables	Groups	Pre-test	Post-test	% of changes	F
Aerobic Capacity (ml\kg\min)	TG	43.36 ± 5.85	45.12 ± 5.45	3.29	7.893*
	CG	43.31 ± 3.69	43.86 ± 3.62	1.03	(p =0.011)
Resting HR (beats\min)	TG	55.66 ± 2.56	52.08 ± 2.26	6.43	28.05*
	CG	54.50 ± 2.59	54.75 ± 2.86	0.42	(p = 0.000)
Peak HR (beats\min)	TG	198.58 ± 3.59	192.33 ± 3.85	3.14	32.23*
	CG	197.08 ± 4.83	197.67 ± 3.25	0.29	(p = 0.000)

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

मानव जीवन में शारीरिक शिक्षा के महत्व का अध्ययन

डॉ. कौशल कुमार मिश्रा *

शोध सारांश – जीवन में सफलता पाने के लिए मानव को शारीरिक ,मानसिक तथा आत्मिक विकास की आवश्कता पड़ती है।इन तीनों के सामंजस्य से ही मानव जीवन पूर्णता को प्राप्त होता है । शारीरिक शिक्षा का लक्ष्य व्यक्ति का सम्पूर्ण विकास करना है, वास्तव में शारीरिक शिक्षा के लक्ष्य को प्राप्त करना आसन कार्य नहीं है।शारीरिक शिक्षा को प्राप्त करना है, तो शारीरिक शिक्षा के उदेश्य को सीढ़ी दर सीढ़ी चढ़ना पड़ता है। हम जीवन में उदेश्य के बिना लक्ष्य की प्राप्ति नहीं कर सकते हैं।

प्रस्तावना – शारीरिक शिक्षा मनुष्य की उन क्रियाओं को कहते हैं, जिनका चुनाव तथा प्रयोग उनके प्रभावों के सिद्धांत के अनुसार किया जाता है।[1]विश्वविद्यालयों और अन्य शिक्षण संस्थाओं ने भी खेल एवं शारीरिक शिक्षा को एक बेहतर पाठ्यक्रम के रूप में मान्यता देना शुरू कर दिया है। स्वास्थ्य के प्रति हमारे अंदर आई जागरूकता के कारण हम जिम, योग आदि के प्रति सजग हो रहे हैं और इनको अपना रहे हैं। ऐसे में योग जैसी प्राकृतिक पद्धतियों के विशेषज्ञों की भी आज काफी मांग है।

खेल एवं शारीरिक शिक्षा के क्षेत्र में बढ़ रही संभावनाओं को देखते हुए यह कैरियर की दृष्टि से एक बेहतर विकल्प साबित हो सकता है। देश के कुछ जाने–माने विश्वविद्यालयों ने इस तरह के नए पाठ्यक्रमों की शुरुआत की है। देशवासियों में स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता ने शारीरिक शिक्षा और खेल के प्रति रुचि में बढ़ोतरी हुई है। शारीरिक शिक्षा प्राथमिक एवं माध्यिमक शिक्षा के समय में पढ़ाया जाने वाला एक पाठ्यक्रम है। इस शिक्षा से तात्पर्य उन प्रक्रियाओं से है जो मनुष्य के शारीरिक विकास तथा कार्यो के समुचित संपादन में सहायक होती है। शारीरिक शिक्षा, शिक्षा की वह अवस्था है जिससे शारीरिक कार्यक्रमों द्वारा व्यक्ति का पूर्ण विकास किया जाता है।[2]मानव जीवन में शारीरिक शिक्षा का महत्वपूर्ण स्थान है। प्राचीन काल से ही शरीर को स्वस्थ, सुडौल और सशक्त बनाने के लिए शरीर से सम्बन्धित खेलकूद, व्यायाम, घूमना–फिरना आदि किया जाता रहा है। जब बच्चा जन्म लेता है, वह तभी से हाँथ–पाँव चलाकर व्यायाम करता रहता है। व्यायाम व खेलकूद का मानव जीवन में बहुत ही महत्व है। कहा गया है कि **'शरीर माद्यम् खलु धर्म साधनं'** अर्थात् शरीर ही सम्पूर्ण धर्मो का साधन है। यदि शरीर स्वस्थ रहेगा तो सम्पूर्ण धार्मिक व सामाजिक कार्य सरलता से किए जा सकेंगे और भी कहा गया है कि **'धर्मार्थ् काम मोक्षाणाम् शरीरं मूलमुक्तमम्'** अर्थात् धर्म अर्थ काम और मोक्ष के लिए शरीर ही उत्तम मूल है, स्वस्थ शरीर के माध्यम से ही धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति सम्भव है। अंग्रेजी में कहा गया है कि "Health is Wealth' अर्थात् स्वास्थ्य ही धन है। और भी कहा गया है कि "A Good Health is Above Wealth' एक अच्छा स्वास्थ्य धन से ऊपर है, स्वस्थ शरीर के लिए व्यायाम, खेलकूद, स्वच्छ वातावरण, शारीरिक शिक्षा आवश्यक है। वैदिक काल में लोग हृष्ट–पुष्ट, कद में लम्बे रंग में गोरे लम्बे बालों वाले होते थे। रथदौड़, शिकार करना, जुआँ खेलना, पाँसा खेलना, संगीत एवं नृत्य इनकी क्रियाओं का एक अंग था। ढोल, सितार और बासुरी आदि लोकप्रिय थे।[3] स्त्री व पुरुष संगीत तथा नृत्य करते थे। ये शरीर से बलिष्ट एवं योद्धा थे। प्राकृतिक रूप से शरीर क्रियाएँ करने के कारण इनकी शारीरिक शक्ति और कौशल प्राकृतिक रूप से विकसित हुए, वैदिक काल के समाप्त होते–होते शारीरिक शिक्षा में विकास हुआ। यह विकास प्राणायाम तथा व्यायाम में बदल गया। योगासन एवं अन्य शारीरिक क्रियाओं का विकास हुआ। सूर्य नमस्कार शरीर को हृष्ट–पुष्ट रखने के लिए शुरू हुआ। इसी समय योग का प्रचलन हुआ, शारीरिक रक्षा के लिए लाठी प्रशिक्षण युवकों को दिया जाने लगा। महाभारत एवं रामायण काल में सैन्य क्रियाओं के लिए शारीरिक शिक्षा का प्रशिक्षण आरम्भ हुआ, जिसमें तीरंदाजी, भाला फेंकना, तलवार बाजी, कुल्हाड़ी का प्रयोग, कुश्ती आदि का प्रचलन हुआ। इस समय में समाज में व्यवसाय एवं कार्य के अनुसार चार वर्गों में (योद्धा, पुरोहित, व्यापारी, तथा सूद्र) विभाजित था। महाभारत काल में जरासंध, भीमसेन, चारूड़ और मुस्टिक पहलवान तथा रंग–स्थली की क्रीड़ाओं के वर्णन से मल्ल युद्ध के शारीरिक प्रशिक्षण का बोध होता है। प्राचीन काल में तक्षशिला, पाटलिपुत्र, कन्नौज तथा मिथिला में शैक्षणिक संस्थाएँ स्थापित हुईं। इन शिक्षा संस्थाओं में विभिन्न विषयों के साथ–साथ नक्षत्र शास्त्र, ज्योतिष शास्त्र, कृषि, नृत्य, तीरंदाजी और शैन्य कौशल की शिक्षा दी जाती थी, तक्षशिला विश्वविद्यालय कई सौ वर्षो तक शिक्षा का कार्य करता रहा।

महात्मा बुद्ध के जन्म 566 ई.पू. के समय से भारत में घटित घटनाओं को श्रेणीबद्ध मानकर इसे ऐतिहासिक काल की संज्ञा दी गई है। इस काल के पूर्वार्द्ध तक उत्तरी भारत, अनेक छोटे–छोटे राज्यों में विभक्त था, जो अपने–अपने अस्तित्व के लिए आपस में युद्ध करते रहते थे। राज्य पुरोहितों व ब्राह्मणों द्वारा नियंत्रित होते थे। जातीय भेद चरम सीमा पर था। गौतम बुद्ध के संरक्षण में बौद्ध धर्म तथा महावीर के संरक्षण में जैन धर्म का उदय हुआ। इन धर्मों का प्रभाव तत्कालिक जीवनशैली एवं शिक्षा के क्षेत्र में भारत के अधिकांश भागों पर पड़ा। इन दोनों धर्मों से अहिंसा का प्रचार हुआ। परिणामस्वरूप आर्यों द्वारा प्रतिपादित, शारीरिक सैन्य क्रियाओं को बहिष्कृत किया गया। इस काल में औषधि को बढ़ावा दिया गया। बुद्ध की शिक्षाओं के बावजूद युद्ध व लड़ाई–झगड़े चलते रहे। मौर्य साम्राज्य उत्तार एवं दक्षिण भारत में फैल गया। मेगस्थनीज ने (305 ई.पू. से 297 ई.पू.) पाटलिपुत्र के प्रवास के दौरान लिखा है कि समस्त जनसंख्या सात घटकों में विभाजित थी, जिसमें योद्धा व किसान प्रमुख थे। इन योद्धाओं को राज्यों द्वारा अस्त्र–शस्त्र दिए जाते थे। युद्ध के समय इन्हें अपने राज्यों की रक्षा के लिए लड़ना पड़ता था। अत: योद्धाओं को स्वस्थ एवं चुस्त–दुरुस्त रखने के लिये कुस्ती, मुक्केबाजी, दौड़ना–कूदना, भाला फेंकना तथा घुड़सवारी का प्रशिक्षण दिया जाता था।

* अतिथि विद्वान् (क्रीड़ा) शासकीय महविद्यालय, त्योथर, जिला - रीवा (म.प्र.) भारत

योद्धाओं की दो श्रेणियाँ थीं, एक तीर कमान, तलवार, चलाने में निपुण थे, तथा दूसरे ऊँट, घोड़े, हाँथी पर सवार होकर भाला तथा कवच धारण करते थे। शरीर को बलिष्ठ बनाने के लिए व्यायाम करते थे। कलिंग युद्ध के बाद सम्राट अशोक ने बौद्ध धर्म को अपना लिया, अत: सैन्य प्रशिक्षण एवं शारीरिक व्यायाम के महत्व में कमी आई।

सामान्यजन, सूर्य नमस्कार व योगासन करने में रुचि लेने लगे। पाँचवी शताब्दी में बिहार राज्य में पटना के पास 'नालन्दा' नामक शैक्षणिक केन्द्र की स्थापना हुई। इस संस्था में 5000 से अधिक छात्रों के रहने की व्यवस्था थी। नालन्दा में सम्पूर्ण शारीरिक विकास को महत्व दिया जाता था। यहाँ पर सूर्य नमस्कार तथा प्राणायाम की क्रियायें दैनिक रूप से कराई जाती थी। पैदल चलना एक अच्छा व्यायाम माना जाता था, जो सभी छात्रों के लिए अनिवार्य था। भारतवर्ष में शारीरिक शिक्षा के क्षेत्र में भारतीय व्यायाम पद्धति का प्रमुख स्थान है। यह विश्व की सबसे पुरानी व्यायाम प्रणाली है। जिस समय यूनान, स्पार्टा ओर रोम में शारीरिक शिक्षा के झिलमिलाते हुए तारे का अभ्युदय हो रहा था उस समय भी भारतवर्ष में वैज्ञानिक आधाार पर शारीरिक शिक्षा का ढांचा बन चुका था।

भारतीय शारीरिक शिक्षा की विशेषता – भारतीय व्यायाम पद्धति में सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इस पद्धति के द्वारा ध्यान को एकाग्र करना, चित्तावृत्ति का निरोध करना तथा स्मरण शक्ति आदि की वृद्धि करना सुगमतया संभव है। इसी विशेषता से आकर्षित होकर अन्य देशों में इन व्यायामों का बड़ी तीव्र गति से प्रचार और प्रसार हो रहा है। यही नहीं, कहीं– कहीं पर तो इन व्यायामों के विभिन्न अनुसंधाान केंद्र स्थापित कर दिए गए हैं। मनोविज्ञान के युग का प्रारंभ होते ही शारीरिक शिक्षा के कार्यक्रम तथा संगठन में वैज्ञानिक दृष्टिकोण का समावेश हुआ। फलत: बच्चों की अभिरुचि, प्रवृत्ति, उम्र तथा क्षमता को ध्यान में रखकर शारीरिक शिक्षा के पाठों का निर्माण हुआ। शैशव काल में ड्रिल को हटाकर छोटे– छोटे यांत्रिक खेल तथा कसरतों पर अधिक बल दिया गया। इसके बाद जिम्नास्टिक्स की ओर युवकों को आकर्षित किया गया। सारी कसरतें संगीत की लय पर युवकों में अधिक सुखद और रुचिकर बनाने के प्रयास हुए। शारीरिक शिक्षा का क्षेत्र बहुत विस्तृत बना दिया गया। आज यह विषय अंतरराष्ट्रीय आदान– प्रदान का एक सुलभ साधन हो गया है।

शारीरिक शिक्षा का महत्व – छात्रों को शरीर के अंगों का ज्ञान, उनकी रचना और कार्यों का बोध कराने के लिए शारीरिक शिक्षा महत्तवपूर्ण है। शरीर को स्वस्थ रखने के लिए विभिन्न प्रकार के खेल हैं, जैसे बालीबाल, फुटबाल, हाकी, बास्केटबाल, टेबल टेनिस, लान टेनिस,कबड्डी, खो–खो, बेडमिंटन, क्रिकेट, कैरमबोर्ड और शतरंज आदि हैं। प्रत्येक स्कूल में एक शारीरिक शिक्षक उतना ही महत्तवपूर्ण है जितना पढ़ाने वाला शिक्षक होता है। शारीरिक शिक्षक से बालक का मानसिक विकास तो होता ही है साथ ही शारीरिक विकास भी सही गति से होता है। बच्चों को शिक्षा के साथ खेलकूद में भाग लेना चाहिए, जिससे उनके अंदर खेल के प्रति पूरा सम्मान उत्पन्न हो। शारीरिक शिक्षा. शिक्षा का एक अभिन्न अंग है, पहले शारीरिक शिक्षा को केवल खेल कूद ही समझा जाता था परन्तु जैसे जैसे समय में परिवर्तन होता गया शारीरिक शिक्षा का महत्व बड़ता गया ।

शरीरिक शिक्षा का खेलों का महत्व –

व्यक्ति का सम्पूर्ण विकास – खेलो के माध्यम से व्यक्ति का सम्पूर्ण विकास होता है क्योंकि खेलने से व्यक्ति कि वे सभी अगं कार्य करना शुरू कर देते है जो कि एक साधारण व्यक्ति के किसी आम कार्य को करने से कार्य नहीं करते है इसलिए हर व्यक्ति को खेलों में भाग लेना चाहिए।

मानसिक विकास – खेलों के माध्यम से व्यक्ति का मानसिक विकास भी सम्पूर्ण तरीके से होता है खेलों से व्यक्ति के दिमाग कि सभी नसें अच्छे तरीके से काम करना शुरू कर देती है जिससे कि किसी को भी ब्रेन कि बिमारियों से कुछ हद तक बचाया जा सकता है।

शारीरिक विकास – खेलो के माधयम से व्यक्ति का शारीरिक विकास होता है।खेलने से व्यक्ति का शरीर तंदरुस्त रहता है तथा वह हर कार्य को करने में सक्षम रहता है यदि व्यक्ति का शरीर ठीक नहीं होगा तो वह किसी भी कार्य को करने में सक्षम नहीं होता इसलिए खेलों का शारीरिक शिक्षा में विशेष महत्व है ।

सामाजिक विकास – एक व्यक्ति समाज में रहना तभी सीखता है जब वह कोई ऐसा कार्य करता है जिससे कि उसे समाज सम्बन्धी जानकारी प्राप्त हो सके इसलिए हमें खेलों में भाग लेना चहिये ताकि हम अपना समाजिक विकास कर सके व्यक्ति खेलों के माध्यम से ही समाज में रहना सीखता है।

अनुशासन का विकास – खेलो के माधयम से व्यक्ति में अनुशासन का विकास होता है। क्योकिं खेलो में सबसे पहले अनुशासन को ही सिखाया जाता है जो कि हर इन्सान या व्यक्ति के जीवन में विशेष महत्व रखता है। यदि व्यक्ति के जीवन में अनुशासन न हो तो वो कभी भी अपने जीवन में आगे नहीं बढ़ सकता है।

इस तरह खेलों का शारीरिक शिक्षा में विशेष महत्व है, यदि कोई व्यक्ति खेलों में भाग लेता है, तो वह अपना सम्पूर्ण विकास कर सकता है, इसीलिए खेलो का हमारे जीवन में विशेष महत्व है ।

भारत के प्रमुख शारीरिक शिक्षण संस्थान – हिमाचल प्रदेश यूनिवर्सिटी, शिमला गुरु नानकदेव यूनिवर्सिटी, अमृतसर लक्ष्मीबाई राष्ट्रीय शारीरिक संस्थान ग्वालियर(एशिया का एकमात्र डीम्ड विश्वविद्यालय) उस्मानिया विश्वविद्यालय, हैदराबाद कालेज ऑफ फिजिकल एजुकेशन पुणे, महाराष्ट्र इंदिरा गांधी इंस्टीच्यूट ऑफ फिजिकल एजुकेशन एंड स्पोर्ट्स साइंस, नई दिल्ली विवेकानंद रूरल एजुकेशन सोसायटी कालेज आफ फिजिकल एजुकेशन, रैचुर कर्नाटक वीएनएस कालेज ऑफ फिजिकल एजुकेशन एंड मैनेजमेंट, भोपाल(मप्र)

निष्कर्ष – सभी प्रगतिशील देशों में इस शिक्षा के माध्यम से अंतरराष्ट्रीय प्रतियोगिताओं तथा समारोहों की संख्या दिनों दिन बढ़ती जा रही है। इस विषय में प्रशिक्षण देने के लिए शारीरिक शिक्षा महाविद्यालय खुले हैं। जहाँ पर अध्यापक तथा अध्यापिकाएँ प्रावधान के अनुसार तीन वर्ष दो वर्ष या एक वर्ष का प्रशिक्षण प्राप्त करते हैं। शारीरिक–परिपक्वता परीक्षा वर्तमानकालीन शारीरिक शिक्षा का प्रमुख विषय है और इसके लिए नियम के अनुसार विभिन्न स्तर बनाए गए हैं।

विभिन्न स्तरों पर शारीरिक शिक्षा के संवर्धन के लिए संघ तथा संस्थाएँ स्थापित की गई हैं। ये संस्थाएँ समय समय पर प्रादेशिक, राष्ट्रीय तथा अंतरराष्ट्रीय प्रतियोगिताएँ भी आयोजित कराती हैं। इन प्रतियोगिताओं में भाग लेने के लिए प्रतियोगियों को विशिष्ट प्रशिक्षण दिया जाता है। यही कारण है कि विश्व की प्रतियोगिताओं में दिनोंदिन प्रगति होती जा रही है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1 शारीरिक शिक्षा के सिद्धांत एवं इतिहास – डॉ.आरसी.कंवर, पेज 13
2 शारीरिक शिक्षा के सिद्धांत एवं इतिहास – डॉ.आरसी.कंवर, पेज 12
3 शारीरिक शिक्षा का इतिहास – डॉ.मोहम्मद वाहिद, पेज 168

योग एवं चिकित्सा

संजय कुमार *

प्रस्तावना – यह अत्यन्त हर्ष का विषय है कि योग का विकास ऐसे देशों में हो रहा है, जहां पश्चिम विज्ञान विधि का प्रयोग स्वास्थ सेवा के प्रमुख आधार के रुप मे स्वीकार्य है। साक्ष्य आधारित विधियों की प्रभावी मिसाल पेश करते है। आज योग के द्वारा कई असाध्य रोगों का इलाज सम्भव है। इसकी अहमियत को समझते हुए भारत के प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी के प्रयास से विश्व योग दिवस मनाया जा रहा है। जिससे एक स्वस्थ्य विश्व का निर्माण किया जा सके। योग भारत वर्ष की ही देन है। सिन्धु सभ्यता से प्राप्त मूर्तियों के आसनों के आधार पर यह ज्ञात होता है कि लगभग 3000 ई. पू. सिन्धु घाटी की सभ्यता में योग का प्रचलन था। योग अत्यन्त सूक्ष्म विज्ञान पर आधारित एक आध्यात्मिक अनुशासन है, जो मन और शरीर के समरसता स्थापित करने पर केन्द्रित है। यह स्वस्थ जीवन जीने की कला और विज्ञान दोनों है। योग का समग्र दृष्टिकोण भली–भाँति स्थापित है, और यह जीवन के सभी क्षेत्रों में सामंजस्य लाता है। इस प्रकार, यह रोग निवारण स्वास्थ्य संवर्धन और जीवन शैली से सम्बंधित विकारों पर नियन्त्रण कायम करने के लिए जाना जाता है। योग का अर्थ है, जोड़ना। लेकिन योगाभ्यास में किसको किससे जोडा जाता है, यह आजतक के अधिकांश योगाचार्य भी बतलाने में असमर्थ है। कारण केवल एक है वे इस विषय का सम्पूर्ण ज्ञान नहीं रखते वे आसनों को योग समझते है और उसका अभ्यास केवल व्यायाम के रुप में करवाते है।

योग में किससे किसको जोड़ा जाता है, यह जानने के लिए हमें प्राचीन ऋषियों के विज्ञान को समझना होगा। वे जड़ व चेतन दोनों में एक ही चेतना तत्व की उपस्थिति मानते है। यह चेतना तत्व इस सम्पूर्ण ब्रम्हाण्ड में व्याप्त है और निरंतर इसका प्रवाह हो रहा है। ब्रम्हाण्ड का निर्माण ही इस चेतना तत्व के प्रवाह से हुआ है।

योग के लिए आवश्यक तत्व –

आसन – योगाभ्यास की प्रक्रिया में साधक शरीर का स्वस्थ्य रहना आवश्यक है। यह स्वस्थता शरीर के अन्दर–बाहर दोनों में होनी चाहिए। इसके लिए गुरु सबसे पहले साधक–साधिकाओं को शरीर के विभन्न अंगों की सफाई एवं उसके व्यायाम की प्रक्रिया बताता है। आज कल योग की इन्हीं प्रारम्भिक क्रियाओं को योग कहॉ जाता है। लेकिन ये क्रियाएं और इनको करने के लिए प्रयोग में लाए गए आसन योगाभ्यास की प्राईमरी कक्षाए है। जिस तरह हम प्रतिदिन शौच जाते है, दाँत साफ करते है या स्नान करते है, उसी प्रकार योगाभ्यास के मध्य निरंतर इन आसनों एवं क्रियाओं को किया जाता है। इससे शरीर स्वस्थ्य रहता है और योगाभ्यास मे सरलता होती है। इसके पश्चात् उन कठिन आसनों का अभ्यास कराया जाता है, जिनमें योगाभ्यास किया जाता है।

आसन से लाभ – शरीर में विषैले तत्वों के निर्माण का मुख्य कारण मनुष्य का मस्तिष्क है। मस्तिष्क के अवसाद, कुविचार, आलस्य, उसकी चिंता, कामना, तृष्णा आदि का प्रभाव शरीर पर पड़ता है। इस प्रभाव का आधुनिक चिकित्सा पद्धति में प्रामाणिक रुप से स्वीकार किया गया है। योग की प्रमुख क्रिया इस मस्तिष्क की ही साधना है। इससे शरीर स्वाभाविक रुप से स्वस्थ रहता है। यौवन, कांति, उल्लास, आयु आदि में अप्रत्याशित विकास होता है। साधना की गहन अवस्था में साधक या साधिका का इस पर नियंत्रण हो जाता है। यह चिर यौवन, चिर आयु का स्वामी होता है।

ध्यान – मस्तिष्क को एकाग्रचित करके किसी कार्य में वांछित सफलता प्राप्त की जा सकती है, यह तो हम सभी मानते है। जो एकाग्रचित होकर पढ़ता है, वही अव्वल आता है। जो एकाग्रचित होकर शोध करता है, वही वैज्ञानिक होता है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में एकाग्रचित की आवश्यकता होती है।

योग – योग शब्द की उत्पत्ति संस्कृत भाषा की युज धातु से हुई है– जोड़ना या मिलाना यह यजु धातु समाधों है तथा इसका अर्थ है समाधि तथा जोड़ने वाला। आत्मा को परमात्मा से जोड़ने वाली क्रियाओं का नाम योग है। युजिर योगे धातु से बना शब्द योग का अर्थ है जुड़ना या मिलाना योजना योग समाधि इत्यादि शब्द योग के ही पर्याय है।

महर्षि पतंजलि ने योग के लक्षण बताते हुए कहा है योगाष्चित्य वृत्ति निरोध है। साधारण शब्दों में चित्त की वृत्तियों के निरोध का ही नाम योग है।

गीता में योग शब्द के कई अर्थ दिए है जैसे –

समता – जैसे यमत्व योग उच्चयते, अर्थात समता को ही योग माना है। कही–कही सामर्थ्य ऐश्वर्य या प्रभाव को भी योग के पर्याय रुप में लिया गया है। महर्षि व्यास ने कहाँ है कि योगों ही समाधि अर्थात योग ही समाधि है। गीता में कहॉ गया है। 'योग: कर्मसु कौशलम' साधारण शब्दों में कुशलता को ही योग कहते है। कुशलता पूर्वक किया गया कर्म ही सफलता दायक होता है।

योग द्वारा मानव का शारीरिक, मानसिक, वौद्धिक तथा आध्यात्मिक विकास होता है। मनुष्य का जीवन लक्ष्य है। आत्मा परमात्मा को मिलाना जिससे वह इस संसार से सदा–सदा के लिए बंधन मुक्त हो जाए।

याज्ञवल्वय योगाश्चित्त वृत्ति निरोध: अर्थात चित्तवृत्तियों के निरोध (एकाग्रता) का नाम योग है। महात्मा याज्ञयवल्क्य ने जीवात्मा और परमात्मा के मिलन का नाम योग बताया है।

शब्द कोष में योग के अनेकों अर्थ बताए गए है। यजुर्वेद में औषधियों की अठारह विधियों का वर्णन किया गया है। श्रीमद् भगवद गीता में अठारह अध्याय में योग की अठारह विधियों का वर्णन किया गया है। योग को

* क्रीड़ाधिकारी (अ.वि.) नवीन शासकीय महाविद्यायल, चंदिया, जिला – उमरिया (म.प्र.) भारत

अलग-अलग रुप में हिन्दुओं के अतिरिक्त अन्य धर्म के लोगों ने भी स्वीकार किया है।

योग की प्रमुख विधाएं – (1) मंत्र योग (2) हठयोग (3) लय योग (4) राज योग

गीता में योग की कई विधियों का वर्णन किया गया है।

यथा (1) भक्ति योग (2) ध्यान योग (3) सांख्य योग (4) आत्म संयम योग (5) संन्यास योग (6) कर्म सन्यास योग।

महर्षि पंतजली द्वारा बताएं गए योग के आठ अंग है, जो इस प्रकार है। यमनियमासन, प्राणायाम, प्रत्याहार धारणा, ध्यान, समाधयोडष्टावगंनि। यम, नियम, आसान, प्राणायाम, प्रत्याहार धारणा, ध्यान तथा समाधि में योग के आठ अंग है।

(1) **यम –** अहिंसा सत्यास्तेयव्रहमचर्या परिग्रहा यमा:।

अहिंसा , सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह इन पांच का नाम यम है।

(A) **अहिंसा –** किसी भी प्राणी को मन, वाणी एवं शरीर द्वारा कभी किसी प्रकार किंचित मात्र भी कष्ट नहीं पहुँचाने को ही अहिंसा कहते है।

(B) **सत्य –** वचन मन एवं कार्य द्वारा कपट रहित रहकर सत्य बोलना अप्रिय सत्य को नहीं बोलना चाहिए क्योंकि अप्रिय सत्य से दूसरो को कष्ट पहुँचाना हिंसा है।

(C) **अस्तेय –** मन, वाणी, शरीर द्वारा किसी प्रकार से भी किसी के अधिकार न चुराना, न लेना तथा छीनना ही अस्तेय है। ब्रम्हचर्य, अपरिग्रह, नियम, शौच, संतोष, तप, स्वाध्याय, आसन।

(4) **प्राणायाम –** किसी खास तरीके से श्वास (प्राणों) को भीतर रोकने एवं बाहर निकालने की क्रिया को प्राणायाम कहते है। अर्थात प्राणों के नियमन को ही प्राणायाम कहते है। प्राणायाम के तीन चरण है। (1) पूरक (2) कुम्भक (3) रेचक

पूरक का अर्थ श्वास खींचना, कुम्भक का अर्थ श्वास रोकना और रेचक का अर्थ श्वास छोड़ना होता है। प्राणयाम के निम्न रुप है। (1) उज्जयी (2) सूर्य भेद (3) भ्रामरी (4) शीतली (5) भस्त्रिका (6) केवली (7) मूछी (8) प्लाविनि (9) शीतकारी

(5) **प्रात्याहार –** हमारी विभिन्न इंद्रियाँ अपने गुण एवं स्वभाव के अनुसार अपने-अपने विषयों का सेवन करती है। जैसे आंखे रुपगुण का, हाथ स्पर्ष का, नाक गंध का, जीभ स्वाद का, कान ध्वनि का सेवन करते है। परन्तु जब ये इंद्रिया अपने-अपने विषयों के संग से विमुख हो जाती है तो चित्त रुप में अवस्थित हो जाती है। इसे प्रत्याहार कहते है। इसके द्वारा हम इंद्रियों पर पूर्ण अधिकार कर पाते है।

(6) **धारणा –** मन की आधार शक्ति द्वारा मानव इच्छानुसार वस्तुओं को प्राप्त कर सकता है तथा करता भी है। परन्तु हमारे भीतर एकाग्रता के अभाव में हम अनेक सुख-सुविधाओं को प्राप्त नहीं कर पाते। यही धारणा का अर्थ है मन को किसी इच्छित वस्तु मे लगाना।

(7) **ध्यान –** धारणा जब साधना का रुप ले लेती है तथा मन जब तेल की धारा के समान निरंतर अपने लक्ष्य (ध्येय) में ही समा जाता है, तो उसे ध्यान कहते है।

(8) **समाधि –** यह ध्यान की पराकाष्ठा (उच्चतम अवस्था) है। इससे ध्यान करने वाला (ध्याता) एवं जिसका ध्यान किया गया है (ध्येय) एक हो जाते है (कोई अंतर नहीं रहता) अर्थात आत्मा-परमात्मा में लीन हो जाती है।

योग द्वारा रोग निदान – जीवन शैली लोगों के जीने का तरीका है और इसका व्यक्ति की बीमारी या स्वास्थ्य की स्थिति पर जबरजस्त प्रभाव पड़ता है। व्यक्ति की जीवन शैली उसके प्रारम्भिक जीवन में ही विकसित करने की सलाह दी जाती है। कई कारक एक व्यक्ति की जीवन शैली को निर्धारित करते है, जैसे आर्थिक स्थिति निर्धारित करती है, गरीबों में कुपोषण और अमीरों मे मोटापे की समस्या को। समाज के सांस्कृतिक मूल्य आबादी में आहार वरीयताओं को नियंत्रित करते है, जबकि धूमपान और शराब पीने जैसी निजी आदतें हृदय रोग और लिवर सिरोसिस का कारक होती है। पौष्टिक आहार आदतें, आराम और विश्राम स्वस्थ जीवन शैली के महत्वपूर्ण घटक है।

विभिन्न रोगों में किन-किन आसनों से लाभ होता है, उनका विवरण इस प्रकार है।

पेट की बीमारियाँ – पद्मासन, सुखासन, उत्तानपाद आसन, पवन मुक्तासन, भुजंगासन, शलभासन, पश्चिमोत्तासन, शवासन।

मधुमेह – धनुरासन, मत्स्येंद्रासन, सुप्तवज्रासन, अर्धवक्रासन, सूर्यनमस्कारासन, नौकासन।

दमा – शीर्षसन, शवासन, सर्वांगासन, भत्स्यान, शलभासन, उष्ट्रासन, सुप्तवज्रासन तथा उज्जयी आसन।

सिर की बीमारी – सर्वांगासन, चंद्रासन, शीर्षासन, भुजंगासन।

अनिद्रा – शीर्षासन, योग निद्रा, शीतली एवं शीतकारी, प्राणायाम, सर्वांगासन, हलासन।

गठिया – पवनमुक्तासन, पश्चिमोत्तासन, धनुरासन, त्रिकोणसन, जानुसिरासन, पर्वतासन, गोमुखासन, अर्धमत्स्येद्रासन।

मोटापा – धनुरासन, पश्चिमोत्सान, त्रकोणासन, हलासन, शलभासन, सर्वांगासन, पदहस्तासन, नाड़ीशोधन, प्राणायाम और उड्डियानाबंध।

गले का योग – शीर्षासन, सर्वांगासन, हलासन, सिंहासन, चंद्रासन, भुजंगासन, सुप्तवज्रासन, मत्स्यासन।

बबासीन गुदा भगंरद – सुखासन, सर्वांगासन, उत्तानपादासन, चंद्रनमस्कारासन, उष्ट्रासन, भ्रदासन, सिद्धासन, गोमुखासन, पश्चिमोत्तासन।

वीर्य रोग – सर्वांगासन, वज्रासन, वद्धमपद्मासन, गोमुखासन।

हकलाना – नौकासन, सिंहासन, शीर्षापादासन।

जुकाम – सर्वांगासन, हलासन, शीर्षासन।

प्रमोह – सर्वांगासन, हलासन।

नाभि – नाभिआसन, भुजंगासन, धनुरासन।

गैस – जानुशिरासन, खगासन, वज्रासन, पवनमुक्तासन।

खून की कमी – हलासन, पश्चिमोत्तासन, भुंजगासन, शीर्षासन, मत्स्यासन, सर्वांगासन, शलभासन, वज्रासन।

रक्त चाप की कमी – भूमिवाद, मस्तकासन, वज्रासन।

यकृत रोग – हलासन, धनुरासन, मयूरासन, शीर्षासन, भुजंगासन, पश्चिमोत्तासन, शलभासन, सर्वांगासन, उष्ट्रासन।

मानसिक तनाव – शीर्षासन, शलभासन, हलासन, वज्रासन, शवासन, गरमासन, शांकासन, सर्वांगासन।

जोड़ो का दर्द – (संधि शोध) संतुलन आसन, त्रिकोणासन, गौमुखसन, सिद्धासन, नटराजासन, वृक्षासन, वीरासन, सेतुबंधासन।

कमर दर्द – चक्रासन, धनुरासन हलासन, भुजंगासन, सुखासन, पदमासन, त्रिकोणासन, पादसलभासन, नौकासन।

स्नायु निर्बलता – हलासन, चक्रासन, धनुरासन, गरमासन, वज्रासन, शीर्षासन, सर्वांगासन, शलभासन, शशांकासन, पश्चिमोत्तासन।

गुर्दे का रोग – अर्धमत्स्येद्रासन, उष्ट्रासन, भुजांगासन, गौमुखासन, शशांकासन, हलासन, धनुरासन।

लीवर – सूर्यनम्स्कारासन, शलभासन, शीर्षासन, शशांकासन, भुजांगासन, हलासन, तथा धनुरासन।

कब्ज – जानुशिरासन, मयूरासन, चक्रासन, ताड़ासन, भुजंगासन, धनुरासन, कर्णपीड़ासन, पादहस्तासन, मत्स्यासन ।

खाँसी – शीर्षासन, उर्ध सर्वांगासन, सुप्तवज्रासन ।

रीड़ की हड्डी संबंधी – वृश्चिकासन, शशांकासन, हलासन, धनुरासन, चक्रासन, त्रिकोणासन, भुजंगासन, शीर्षासन, पश्चिमोत्सासन।

मासिक धर्म रोग – शीर्षासन, धनुरासन, हलासन, शवासन, सर्वांगासन, वज्रासन, भुजंगासन, मत्स्यासन, शलभासन, पर्वतासन।

यौन विकार – धनुरासन, सर्वांगासन, शीर्षासन।

थकावट – शवासन, मत्स्यासन, दंडासन, प्रेतासन।

आँतो के विकार – सर्वांगासन, वृक्षासन, मयूरासन, सर्पासन, चक्रासन, जानुशिरासन, मत्स्येद्रासन।

पांडु रोग – चक्रासन, मत्स्यासन, सर्पासन, पदमासन, सर्वांगासन, पश्चिमोत्तासन।

पीठ दर्द – भुजंगासन, सुप्तवज्रासन, धनुरासन, गौमुखसन तथा पश्चिमोत्सान।

साइटिका – गोमुखासन, हनुमानासन, वज्रासन।

आंत्र वृद्धि – सर्वांगासन और शीर्षासन।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. वर्मा, व्यास देव एवं कौर लखवीर – 'शारीरिक शिक्षा अध्यापक' एच.जी. पब्लिकेशन (इण्डिया) 2010
2. श्रीवास्तव, अजय कुमार – यू.जी.सी. दानिका पब्लिकेशन कम्पनी दिल्ली 2012
3. पाण्डेय, डॉ. आलोक कुमार 'चिकित्सा प्रौद्योगिकी' वैदिक प्रकाशन इलाहाबाद 2008
4. नायर, आर.एम. 'प्राकृतिक चिकित्सा तथा भारत की स्वास्थ्य चुनौतियां' योजना जून 2015
5. सिद्धान्त संदीप सिंह 'शारीरिक शिक्षा' सिद्धांत पब्लिकेशन लखनऊ 2012

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) January to March 2017, Vol. I

भारतीय कृषि में संरचनात्मक परिवर्तन और उसकी चुनौतियाँ

डॉ. दिलीप पीपाड़ा*

शोध सारांश –भारतीय कृषि ने स्वतंत्रता के बाद से अब तक एक लंबी यात्रा तय की है। यह यात्रा आत्मनिर्भरता की आवश्यकता से शुरू होकर वैश्विक प्रतिस्पर्धा और तकनीकी परिवर्तन तक पहुँची है। पिछले सात दशकों में कृषि क्षेत्र में अनेक संरचनात्मक परिवर्तन हुए हैं जैसे उत्पादन प्रणाली में विविधता, तकनीकी नवाचारों का प्रयोग, भूमि उपयोग के स्वरूप में परिवर्तन, श्रम और पूँजी के संबंधों का रूपांतरण, तथा ग्रामीण आय के स्रोतों का पुनर्विन्यास। इन परिवर्तनों ने कृषि को नई दिशा दी, परंतु इसके साथ कई गंभीर चुनौतियाँ भी उभरीं जैसे कृषि संकट, आय असमानता, जलवायु परिवर्तन, घटती उत्पादकता, और किसानों की आय में स्थिरता का अभाव। इस लेख भारतीय में कृषि में हुए इन संरचनात्मक परिवर्तनों का समग्र विश्लेषण करने कर प्रयास किया गया है, उनकी सामाजिक–आर्थिक पृष्ठभूमि को स्पष्ट करने की कौशिश की गयी है, साथ ही भविष्य की नीति दिशा पर प्रकाश डाला गया है।

प्रस्तावना – कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ रही है। स्वतंत्रता के समय भारत की लगभग 75% जनसंख्या कृषि पर निर्भर थी, और राष्ट्रीय आय में कृषि का योगदान लगभग 50 प्रतिशत था। परंतु आर्थिक विकास और औद्योगिकीकरण की प्रक्रिया के साथ–साथ कृषि की स्थिति, स्वरूप और संरचना में निरंतर परिवर्तन हुए हैं। आज, जबकि भारत एक उभरती हुई वैश्विक अर्थव्यवस्था है, कृषि का सकल घरेलू उत्पाद में योगदान घटकर लगभग 15 से 17 प्रतिशत रह गया है, परंतु अब भी 45 से 50 प्रतिशत कार्यबल इसी क्षेत्र पर निर्भर है।यह असंतुलन दर्शाता है कि भारतीय कृषि एक संक्रमण के दौर में है जहाँ पारंपरिक खेती से आधुनिक, बाजार–उन्मुख और तकनीकी कृषि की ओर बढ़ने की प्रक्रिया जारी है।

अध्ययन के उद्देश्य – इस अध्ययन का प्रमुख उद्देश्य भारतीय कृषि में हुए संरचनात्मक परिवर्तनों को समझना और उनके सामाजिक–आर्थिक प्रभावों का विश्लेषण करना है। अध्ययन का लक्ष्य यह जानना है कि किस प्रकार हरित क्रांति, उदारीकरण, वैश्वीकरण और तकनीकी प्रगति ने भारतीय कृषि की उत्पादन प्रणाली, फसल पैटर्न, श्रम संरचना और भूमि उपयोग के स्वरूप को परिवर्तित किया है। इसके साथ ही, यह अध्ययन कृषि क्षेत्र के समक्ष उत्पन्न नई चुनौतियों जैसे जलवायु परिवर्तन, भूमि खंडन, घटती उत्पादकता, किसानों की आय में असमानता, और ग्रामीण–शहरी असंतुलन का भी विश्लेषण करता है। अध्ययन का एक अन्य उद्देश्य यह भी है कि कृषि क्षेत्र में सतत विकास, समावेशी वृद्धि और नीति–निर्माण के लिए उपयुक्त उपाय सुझाए जा सकें, ताकि भारत की कृषि अर्थव्यवस्था न केवल आत्मनिर्भर बने बल्कि वैश्विक प्रतिस्पर्धा के अनुरूप भी विकसित हो सके।

भारत में कृषि की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि – स्वतंत्रता प्राप्ति के समय भारत की कृषि पारंपरिक, आत्मनिर्भर और मानसून–निर्भर थी। उत्पादन साधन सीमित थे, भूमि वितरण असमान था और औसत उत्पादकता बहुत कम थी।

1950 के दशक से भारत ने कृषि के आधुनिकीकरण के लिए संस्थागत सुधार अपनाए जैसे भूमि सुधार, सहकारी संस्थाओं की स्थापना और सिंचाई परियोजनाएँ। 1960 के दशक में हरित क्रांति ने कृषि उत्पादन को नई ऊँचाइयों पर पहुँचाया, विशेषकर गेहूँ और चावल के उत्पादन में। परंतु यह क्रांति मुख्यत: पंजाब, हरियाणा और पश्चिमी उत्तर प्रदेश तक सीमित रही। 1980 के दशक से लेकर अब तक कृषि में तकनीकी, बाजार और संरचनात्मक स्तर पर बड़े परिवर्तन देखे गए हैं।

भारतीय कृषि में संरचनात्मक परिवर्तन – स्वतंत्रता के बाद से भारतीय कृषि ने कई गहरे संरचनात्मक परिवर्तनों का अनुभव किया है, जिन्होंने न केवल उत्पादन प्रणाली बल्कि ग्रामीण समाज की आर्थिक संरचना को भी प्रभावित किया है। प्रारंभिक दशकों में कृषि मुख्यत: पारंपरिक साधनों पर निर्भर थी, परंतु हरित क्रांति ने उत्पादन के स्वरूप को बदल दिया। भूमि सुधारों, सिंचाई परियोजनाओं और रासायनिक उर्वरकों के उपयोग ने कृषि उत्पादन को बढ़ाया, परंतु इसके लाभ क्षेत्रीय रूप से असमान रहे विशेषकर पंजाब, हरियाणा और पश्चिमी उत्तार प्रदेश जैसे इलाकों तक सीमित रहे। समय के साथ भूमि स्वामित्व की संरचना में भी परिवर्तन हुआ छोटे और सीमांत किसानों की संख्या में वृद्धि हुई, जबकि बड़े भूमिधारकों का अनुपात घटा। इसके परिणामस्वरूप भूमि का खंडन और भूमिहीनता की समस्या गहराती गई, जिससे कृषि की उत्पादकता और निवेश क्षमता पर प्रभाव पड़ा।

इस इस अवधि में भारतीय कृषि में फसलों की संरचना में भी उल्लेखनीय विविधता आई है। पहले जहाँ कृषि मुख्यत: खाद्यान्न उत्पादन पर केंद्रित थी, वहीं अब व्यावसायिक फसलें जैसे बागवानी, सब्जियाँ, फूल, गन्ना, और नकदी फसलें (कपास, सोयाबीन, तिलहन आदि) अधिक लोकप्रिय हुई हैं। यह परिवर्तन बाजार की माँग, निर्यात अवसरों, और सरकारी नीतियों के प्रभाव से प्रेरित रहा है। यद्यपि इस विविधता ने किसानों को आय बढ़ाने के नए अवसर दिए, परंतु इसके साथ मूल्य अस्थिरता और जल संसाधनों के अति–उपयोग जैसी चुनौतियाँ भी बढ़ीं। भूमि उपयोग पैटर्न में परिवर्तन के कारण गैर–कृषि उपयोग हेतु कृषि भूमि का रूपांतरण तेजी से हुआ, विशेषकर शहरीकरण और औद्योगिकीकरण के प्रभाव से, जिससे ग्रामीण अर्थव्यवस्था पर दबाव बढ़ा।

* अर्थशास्त्र विभाग, राजकीय महाविद्यालय, नाथद्वारा, राजसमंद (राज.) भारत

तकनीकी स्तर पर भी भारतीय कृषि में गहरा बदलाव देखा गया है। यंत्रीकरण, उच्च उत्पादकता वाली किस्में ड्रिप सिंचाई, आईटी-आधारित कृषि सूचना प्रणालियाँ, और डिजिटल प्लेटफॉर्मों के प्रयोग ने उत्पादन की दक्षता को बढ़ाया है। इसके बावजूद, तकनीकी नवाचारों का लाभ असमान रूप से वितरित हुआ है विकसित राज्यों और बड़े किसानों को इसका अधिक लाभ मिला, जबकि छोटे किसान अब भी परंपरागत तरीकों पर निर्भर हैं। श्रम संरचना में भी परिवर्तन हुआ है कृषि में कार्यरत श्रमिकों का अनुपात घटा है, और गैर-कृषि कार्यों (निर्माण, सेवा क्षेत्र आदि) में ग्रामीण श्रम का पलायन बढ़ा है। इससे कृषि क्षेत्र में श्रम की कमी और मजदूरी लागत में वृद्धि जैसी नई समस्याएँ उत्पन्न हुई हैं।

देश की कृषि के बाजार और संस्थागत ढांचे में भी उल्लेखनीय सुधार हुए हैं। उदारीकरण के बाद से कृषि बाजारों में निजी निवेश, अनुबंध खेती, एपीएमसी सुधार, और अन्य आधुनिक तकनीको के प्रयोग जैसी पहलों ने नई संरचना को जन्म दिया है। इसके अतिरिक्त, कृषि वित्तीय संस्थाएँ, सूक्ष्म ऋण संस्थान, और कृषि बीमा योजनाएँ किसानों को जोखिम प्रबंधन में सहायता प्रदान कर रही हैं। साथ ही, ग्रामीण आय के स्रोतों में विविधता आई है अब किसान केवल फसल उत्पादन तक सीमित नहीं रहेय वे दुग्ध उत्पादन, पशुपालन, मत्स्य पालन, बागवानी और गैर-कृषि रोजगार से भी आय अर्जित कर रहे हैं। इस बहुआयामी आय संरचना ने ग्रामीण जीवनशैली में परिवर्तन लाया है, परंतु यह भी स्पष्ट है कि इन परिवर्तनों से लाभान्वित होने की क्षमता किसानों की आर्थिक स्थिति और क्षेत्रीय अवसरों पर निर्भर करती है।

इस प्रकार, भारतीय कृषि में संरचनात्मक परिवर्तन बहुआयामी हैं इनमें भूमि स्वामित्व, फसल पैटर्न, तकनीकी नवाचार, श्रम प्रवृत्तियाँ, बाजार ढांचे और आय स्रोतों की विविधता सभी शामिल हैं। ये परिवर्तन भारत को आत्मनिर्भर और प्रतिस्पर्धी कृषि अर्थव्यवस्था बनाने की दिशा में एक कदम हैं, लेकिन इनके समान वितरण, पर्यावरणीय स्थिरता और किसानों की सुरक्षा के लिए नीतिगत हस्तक्षेप आवश्यक है।

भारतीय कृषि की प्रमुख उपलब्धियाँ – भारतीय कृषि ने स्वतंत्रता के पश्चात् से अब तक उल्लेखनीय प्रगति की है और यह देश की अर्थव्यवस्था का एक मजबूत स्तंभ बन चुकी है। कृषि क्षेत्र ने पारंपरिक आत्मनिर्भरता से आगे बढ़कर उत्पादन, विविधता और तकनीकी उन्नति के नए आयाम स्थापित किए हैं। सबसे बड़ी उपलब्धि यह रही कि भारत ने अपने खाद्य सुरक्षा तंत्र को मजबूत किया और अब यह वैश्विक स्तर पर कृषि उत्पादों का एक प्रमुख उत्पादक और निर्यातक देश बन गया है। फसलों की संरचना में विविधता आई है अब कृषि केवल अनाज तक सीमित नहीं रही, बल्कि किसानों ने तिलहन, बागवानी, मसालों, और नकदी फसलों की ओर भी रुख किया है। इस विविधीकरण ने न केवल आय में वृद्धि की बल्कि ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार और उद्यमशीलता के नए अवसर भी प्रदान किए।

इसके साथ ही, तकनीकी और संस्थागत सुधारों ने भारतीय कृषि को आधुनिक दिशा दी है। उच्च उत्पादकता वाली किस्में, यंत्रीकरण, सिंचाई के नए साधन और डिजिटल तकनीकों का प्रयोग अब ग्रामीण क्षेत्रों तक पहुँच चुका है। इससे कृषि उत्पादन की दक्षता बढ़ी है और किसानों को बाजार तथा जानकारी तक बेहतर पहुँच प्राप्त हुई है। बाजार संरचना में भी सुधार हुए हैं कृषि विपणन में पारदर्शिता बढ़ी, मूल्य निर्धारण की प्रणाली सुदृढ़ हुई, और किसानों के लिए नई विपणन संभावनाएँ खुलीं। इसके अतिरिक्त, ग्रामीण आय के स्रोतों में विविधता आई है पारंपरिक खेती के साथ-साथ पशुपालन, मत्स्य पालन, बागवानी और लघु उद्योगों ने ग्रामीण अर्थव्यवस्था को नया आधार प्रदान किया है। इन उपलब्धियों ने भारतीय कृषि को न केवल आत्मनिर्भर बनाया है, बल्कि उसे वैश्विक प्रतिस्पर्धा में भी सशक्त स्थान दिलाया है।

भारतीय कृषि की प्रमुख चुनौतियाँ – भारतीय कृषि आज भी अनेक जटिल और बहुआयामी चुनौतियों का सामना कर रही है। सबसे बड़ी समस्या भूमि के खंडन और सीमांत स्वामित्व की है। अधिकांश किसान छोटे और सीमांत हैं, जिनके पास इतनी भूमि नहीं है कि वे आधुनिक तकनीकों का उपयोग कर सकें या पर्याप्त उत्पादन लागत वहन कर सकें। इस खंडित भूमि प्रणाली के कारण यंत्रीकरण और सिंचाई की सुविधा का विस्तार कठिन हो जाता है। इसके साथ ही, भूमि उपयोग में असंतुलन, शहरीकरण के कारण कृषि भूमि का गैर-कृषि उपयोग में परिवर्तित होना, और भूमि विवाद जैसी समस्याएँ भी लगातार बढ़ रही हैं। परिणामस्वरूप, कृषि की उत्पादकता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है और किसान आर्थिक रूप से असुरक्षित स्थिति में हैं।

दूसरी बड़ी चुनौती है प्राकृतिक संसाधनों और पर्यावरणीय संकटों का बढ़ता प्रभाव। जलवायु परिवर्तन, अनियमित वर्षा, सूखा, बाढ़, और मृदा क्षरण जैसी समस्याएँ कृषि उत्पादन की स्थिरता को गंभीर रूप से प्रभावित कर रही हैं। भूजल का अत्यधिक दोहन, रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों का अत्यधिक उपयोग, तथा जैव विविधता का क्षय, कृषि के दीर्घकालिक संतुलन के लिए खतरा बन गए हैं। इन चुनौतियों ने न केवल उत्पादन प्रणाली को प्रभावित किया है, बल्कि किसान समुदाय की सामाजिक और आर्थिक स्थिरता को भी कमजोर किया है। पर्यावरणीय दृष्टि से टिकाऊ कृषि पद्धतियों की कमी आज भारतीय कृषि के भविष्य के लिए गंभीर चिंता का विषय है।

तीसरी चुनौती कृषि विपणन और मूल्य निर्धारण प्रणाली से जुड़ी है। किसान अक्सर बाजार की अस्थिरता, बिचौलियों की भूमिका और मूल्य समर्थन की कमी के कारण अपनी उपज का उचित मूल्य प्राप्त नहीं कर पाते। कृषि उत्पादों के भंडारण, परिवहन और प्रसंस्करण की सुविधाएँ भी अपर्याप्त हैं, जिसके कारण किसानों को अक्सर फसलों को घाटे में बेचना पड़ता है। बाजार सुधारों और डिजिटलीकरण के बावजूद, छोटे किसानों तक इन सुविधाओं की पहुँच अभी भी सीमित है। इसके अतिरिक्त, कृषि ऋण प्रणाली और बीमा योजनाएँ भी सभी किसानों तक प्रभावी रूप से नहीं पहुँच पातीं, जिससे आर्थिक जोखिम और बढ़ जाते हैं।

चौथी बड़ी चुनौती सामाजिक-आर्थिक असमानता और श्रम संरचना में परिवर्तन से संबंधित है। युवा पीढ़ी अब कृषि से विमुख हो रही है और ग्रामीण श्रम बल का शहरी क्षेत्रों की ओर पलायन बढ़ गया है। इससे कृषि क्षेत्र में श्रम की कमी और मजदूरी लागत में वृद्धि जैसी समस्याएँ उत्पन्न हो रही हैं। महिलाओं की कृषि में भागीदारी तो बढ़ी है, परंतु उन्हें तकनीकी प्रशिक्षण और निर्णय-निर्धारण में समान अवसर अभी भी नहीं मिल पाते। साथ ही, किसानों की आय में असमानता, ऋणग्रस्तता और आत्मनिर्भरता की कमी, कृषि को आज भी आर्थिक दृष्टि से अस्थिर बनाती है।

इन सभी चुनौतियों से स्पष्ट है कि भारतीय कृषि केवल उत्पादन की नहीं, बल्कि संरचना, नीति और सामाजिक समावेशन की भी समस्या से जूझ रही है। कृषि क्षेत्र के सतत विकास के लिए आवश्यक है कि भूमि सुधार, तकनीकी नवाचार, बाजार सशक्तिकरण, पर्यावरणीय संरक्षण, और सामाजिक सुरक्षा को एकीकृत रूप में नीति ढाँचे का हिस्सा बनाया जाए। तभी कृषि को वास्तव में आत्मनिर्भर, टिकाऊ और न्यायसंगत बनाया जा

सकेगा।

भारतीय कृषि के सामाजिक-आर्थिक प्रभाव – भारतीय कृषि में हुए संरचनात्मक परिवर्तनों ने ग्रामीण समाज की सामाजिक और आर्थिक संरचना पर गहरा प्रभाव डाला है। हरित क्रांति, तकनीकी प्रगति और बाजारोन्मुखी नीतियों के चलते किसानों की उत्पादन क्षमता और आय के स्रोतों में विविधता आई है। इससे ग्रामीण अर्थव्यवस्था में रोजगार के अवसर बढ़े और ग्रामीण जीवन स्तर में सुधार हुआ। कृषि आधारित उद्योगों, दुग्ध उत्पादन, मत्स्य पालन और बागवानी जैसी सहायक गतिविधियों ने ग्रामीण क्षेत्रों में नए उद्यमों को जन्म दिया। इससे ग्रामीण परिवारों की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ हुई और कृषि अब केवल आजीविका का साधन न रहकर एक उद्यम के रूप में विकसित होने लगी। इसके अलावा, शिक्षा, संचार और तकनीकी पहुँच में वृद्धि ने किसानों की सोच और कार्यशैली को भी आधुनिक बनाया, जिससे वे बाजार और नीति परिवर्तनों के प्रति अधिक सजग हुए।

हालाँकि, इन परिवर्तनों के साथ कुछ नकारात्मक सामाजिक-आर्थिक प्रभाव भी देखने को मिले हैं। क्षेत्रीय और सामाजिक असमानता बढ़ी है जहाँ समृद्ध और तकनीकी रूप से सक्षम किसानों ने कृषि सुधारों का लाभ उठाया, वहीं छोटे और सीमांत किसान हाशिए पर रह गए। भूमिहीनता, कृषि ऋण, और आय अस्थिरता जैसी समस्याओं ने किसानों की सामाजिक सुरक्षा को कमजोर किया। पारंपरिक सामुदायिक सहयोग और सामाजिक एकता में कमी आई, जबकि बाजार-आधारित प्रतिस्पर्धा ने ग्रामीण समाज में भौतिकवादी दृष्टिकोण को प्रोत्साहन दिया। श्रम पलायन, लैंगिक असमानता और ग्रामीण युवाओं का कृषि से मोहभंग जैसी प्रवृत्तियाँ भी उभरकर सामने आईं। इस प्रकार, भारतीय कृषि के संरचनात्मक परिवर्तन जहाँ एक ओर ग्रामीण विकास और आधुनिकीकरण के वाहक बने, वहीं दूसरी ओर उन्होंने सामाजिक विषमता और आर्थिक असंतुलन जैसी नई चुनौतियों को भी जन्म दिया।

भविष्य की दिशा में सुझाव – भारतीय कृषि के सतत और समावेशी विकास के लिए यह आवश्यक है कि आने वाले समय में नीति निर्माण का फोकस किसान-केंद्रित और क्षेत्रीय संतुलन आधारित दृष्टिकोण पर हो। सबसे पहले, भूमि सुधार और जल संसाधनों के प्रबंधन पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए, ताकि छोटे और सीमांत किसान भी आधुनिक तकनीकों और यंत्रीकरण का लाभ उठा सकें। सिंचाई के क्षेत्र में जल-संरक्षण आधारित तकनीकों को बढ़ावा देना और स्थानीय स्तर पर जल प्रबंधन समितियों को सशक्त बनाना आवश्यक है। इसके साथ ही, कृषि अनुसंधान, जैविक खेती और पर्यावरणीय रूप से टिकाऊ उत्पादन पद्धतियों को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए, ताकि कृषि जलवायु परिवर्तन के प्रभावों के प्रति अधिक लचीली बन सके। शिक्षा और प्रशिक्षण के माध्यम से किसानों को आधुनिक तकनीक, बाजार की समझ और वित्तीय प्रबंधन की जानकारी दी जाए, जिससे वे अपनी उत्पादन क्षमता और आय में सुधार कर सकें।

दूसरी ओर, कृषि विपणन, मूल्य स्थिरता और सामाजिक सुरक्षा को सशक्त बनाना भी भविष्य की दिशा में महत्वपूर्ण कदम होगा। कृषि उत्पादों के विपणन के लिए पारदर्शी और किसान-हितैषी डिजिटल प्लेटफॉर्मों का विस्तार किया जाना चाहिए ताकि किसानों को अपनी उपज का उचित मूल्य मिल सके। मूल्य समर्थन नीतियों को व्यवहारिक और क्षेत्रीय आवश्यकताओं के अनुसार ढाला जाए तथा किसानों को जोखिम प्रबंधन के लिए सुदृढ़ बीमा और ऋण सुविधाएँ प्रदान की जाएँ। साथ ही, ग्रामीण आय के विविध स्रोतों जैसे पशुपालन, बागवानी, मत्स्य पालन और कृषि-आधारित उद्योगों को बढ़ावा देना चाहिए ताकि किसानों की आय स्थिर और बहुआयामी हो सके। यदि इन नीतिगत कदमों को समग्र दृष्टिकोण से लागू किया जाए, तो भारतीय कृषि न केवल आत्मनिर्भर बनेगी बल्कि वैश्विक स्तर पर प्रतिस्पर्धी, टिकाऊ और समावेशी विकास का मॉडल भी प्रस्तुत कर सकेगी।

निष्कर्ष – भारतीय कृषि में हुए संरचनात्मक परिवर्तनों ने देश की अर्थव्यवस्था और ग्रामीण समाज दोनों को गहराई से प्रभावित किया है। हरित क्रांति, तकनीकी नवाचार, फसल विविधीकरण और बाजार सुधारों ने कृषि को आत्मनिर्भरता से आगे बढ़ाकर विकास के एक नए चरण में पहुँचाया है। आज कृषि केवल पारंपरिक उत्पादन प्रणाली नहीं रही, बल्कि यह उद्यमिता, तकनीकी ज्ञान और बाजारोन्मुखी दृष्टिकोण से जुड़ी हुई है। इन परिवर्तनों ने किसानों के लिए नए अवसर खोले हैं, ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार सृजन किया है और देश की खाद्य सुरक्षा को मजबूत किया है। फिर भी, यह परिवर्तन समान रूप से सभी वर्गों तक नहीं पहुँचा छोटे किसानों, भूमिहीन श्रमिकों और पिछड़े क्षेत्रों के सामने अब भी कई सामाजिक, आर्थिक और पर्यावरणीय चुनौतियाँ मौजूद हैं।

इसलिए यह आवश्यक है कि भारत की कृषि नीतियाँ केवल उत्पादन वृद्धि पर केंद्रित न रहकर समावेशी और सतत विकास की दिशा में आगे बढ़ें। भूमि उपयोग, जल प्रबंधन, तकनीकी नवाचार और बाजार सुधार को एक समन्वित नीति ढाँचे में शामिल किया जाए। साथ ही, किसानों की सामाजिक सुरक्षा, आय स्थिरता और प्रशिक्षण पर विशेष ध्यान दिया जाए, ताकि वे वैश्विक अर्थव्यवस्था के बदलते स्वरूप में आत्मविश्वास से खड़े रह सकें। भारतीय कृषि का भविष्य तभी उज्जवल होगा जब विकास के लाभ समाज के सभी वर्गों तक समान रूप से पहुँचें और कृषि क्षेत्र को केवल आर्थिक गतिविधि नहीं, बल्कि सामाजिक समृद्धि और पर्यावरणीय संतुलन के आधार के रूप में देखा जाए।

संदर्भ ग्रन्थ सूची:-

1. भारत सरकार, आर्थिक सर्वेक्षण विभिन्न वर्ष, वित्त मंत्रालय, नई दिल्ली।
2. योजना आयोग का के विविध प्रकाशन भारत की पंचवर्षीय योजनाएँ, नई दिल्ली।
3. कृषि मंत्रालय, कृषि सांख्यिकी एट ए ग्लांस, भारत सरकार।
4. Vyas, V.S. (2003), Agrarian Structure, Environmental Resources and Sustainable Development, Academic Foundation, New Delhi.
5. Rao, C.H. Hanumantha (2005), Agricultural Growth, Rural Poverty and Environmental Degradation in India], Oxford University Press.
6. Bhalla, G-S- & Singh, Gurmail (2009), Economic Liberalization and Indian Agriculture: A Stagewise Analysis, SAGE Publications
7. Datt, R- & Sundaram, K.P.M. (2010), Indian Economy, S- Chand & Company Ltd., New Delhi.

****

भारतीय जनजातियों की आर्थिक और सामाजिक दशा का एक अध्ययन

डॉ. चक्रपाणि उपाध्याय*

प्रस्तावना – भारत में जनजातीय समुदाय देश की कुल जनसंख्या का एक महत्वपूर्ण हिस्सा हैं और ये विविध संस्कृतियों, परंपराओं और जीवनशैली का प्रतिनिधित्व करते हैं। वे प्राचीन काल से ही प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भर रहे हैं और अधिकाशतया ये वनों या ग्रामीण क्षैत्र मे ही निवासित रहते है तथा कृषि, वनोपज संग्रहण, पशुपालन तथा हस्तशिल्प जैसी पारंपरिक आजीविकाओं से जुड़े हुए हैं। हालाँकि, आधुनिक समाज में जनजातीय समुदायों को कई आर्थिक और सामाजिक चुनौतियों का सामना करना पड़ता है, जैसे कि गरीबी, अशिक्षा, अल्प रोजगार या पूर्ण बेरोजगारी, आधार भूत सुविधाओं का अभाव, स्वास्थ्य सुविधाओं की कमी और सामाजिक भेदभाव इत्यादि सरकार द्धारा इनके उत्थान के लिए विभिन्न योजनाएँ चलाई जा रही हैं, लेकिन अभी भी इनके समग्र विकास के लिए ठोस प्रयासों की आवश्यकता है। प्रस्तुत अध्ययन मे इसी प्रकार की कुछ आर्थिक व सामाजिक स्थितियों का अध्ययन किया गया है जो जनजातियों के दैनिक जीवन को प्रभावित करती है।

आर्थिक दशा – भारतीय जनजातियों की अर्थव्यवस्था मुख्य रूप से कृषि, वनोपज, पशुपालन और हस्तशिल्प पर निर्भर करती है। लेकिन आधुनिक आर्थिक विकास की दौड़ में वे अपेक्षित प्रगति नहीं कर पाए हैं। भारतीय जनजातियों की आर्थिक दशा अत्यंत जटिल और चुनौतीपूर्ण बनी हुई है। अधिकांश जनजातीय समुदाय पारंपरिक कृषि, वनोपज संग्रहण, मछली पकड़ने और हस्तशिल्प जैसी प्राथमिक आर्थिक गतिविधियों पर निर्भर हैं। औद्योगीकरण और विकास के नाम पर वनों की अधांधुध कटाई के कारण उनकी पारंपरिक आजीविकाओं पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है, जिससे उनकी आर्थिक अस्थिरता बढ़ी है। इसके अलावा, भूमि अधिकारों की अस्पष्टता, शिक्षा और कौशल विकास की कमी तथा बाजार तक सीमित पहुँच भी उनके आर्थिक विकास में बाधा डालती है। हालाँकि, सरकार द्धारा मनरेगा, वन अधिकार अधिनियम और अन्य योजनाओं के माध्यम से उनके आर्थिक उत्थान के प्रयास किए जा रहे हैं, लेकिन अभी भी व्यापक सुधारों की आवश्यकता बनी हुई है। जनजातियों की कुछ प्रमुख आर्थिक समस्याओं को निम्नबिन्दुओं के अर्न्तगत बतलाया जा सकता हैं–

भूमि और संसाधनों की हानि – भूमि और संसाधनों की हानि का भारतीय जनजातियों की आर्थिक दशा पर गंभीर प्रभाव पड़ा है। जंगलों की कटाई, खनन गतिविधियों और औद्योगीकरण के कारण जनजातीय समुदाय अपनी परंपरागत जीविका से वंचित हो रहे हैं। उनके कृषि योग्य भूमि के सिकुड़ने से खाद्य सुरक्षा और आजीविका के साधनों में कमी आई है। साथ ही, विस्थापन की समस्या के कारण वे शहरों में पलायन करने को मजबूर हो रहे हैं, जहाँ उन्हें असंगठित श्रम बाजार में न्यूनतम मजदूरी पर कठिन परिस्थितियों में काम करना पड़ता है। इसके अलावा, संसाधनों की कमी से उनके पारंपरिक शिल्प और हस्तकला उद्योग भी प्रभावित हो रहे हैं, जिससे उनकी आर्थिक स्थिरता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इन चुनौतियों से निपटने के लिए आवश्यक है कि सरकार और समाज मिलकर भूमि अधिकारों की सुरक्षा, पुनर्वास योजनाओं और वैकल्पिक आजीविका स्रोतों पर ध्यान केंद्रित करें।

आजीविका के सीमित साधन– आजीविका के सीमित साधनों का जनजातीय समुदायों की आर्थिक स्थिति पर गहरा प्रभाव पड़ता है। कृषि और वनोपज पर अत्यधिक निर्भरता के कारण जलवायु परिवर्तन और पर्यावरणीय अस्थिरता से उनकी आय प्रभावित होती है। सीमित रोजगार के अवसर और कौशल विकास की कमी के चलते जनजातीय समुदायों को असंगठित श्रम क्षेत्र में न्यूनतम मजदूरी पर काम करने के लिए बाध्य होना पड़ता है। इसके अलावा, आर्थिक संसाधनों की अनुपलब्धता और बिचौलियों की भूमिका के कारण वे अपनी उत्पादकता का पूरा लाभ नहीं उठा पाते हैं। इन चुनौतियों से निपटने के लिए सरकार द्धारा स्वरोजगार योजनाएँ, कौशल विकास कार्यक्रम और वैकल्पिक रोजगार के साधन उपलब्ध कराए जाने चाहिए ताकि जनजातीय समुदाय आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बन सकें।

शिक्षा और कौशल विकास की कमी – शिक्षा और कौशल विकास की कमी का भारतीय जनजातीय समुदायों की आर्थिक स्थिति पर व्यापक प्रभाव पड़ता है। उच्च शिक्षा और व्यावसायिक प्रशिक्षण के अभाव के कारण जनजातीय युवा आधुनिक उद्योगों और सेवा क्षेत्रों में रोजगार पाने में सक्षम नहीं हो पाते हैं। इससे वे पारंपरिक और असंगठित क्षेत्रों में कम आय वाले कार्यों तक सीमित रह जाते हैं, जिससे उनकी आर्थिक स्थिति कमजोर बनी रहती है। इसके अलावा, तकनीकी शिक्षा और कौशल विकास कार्यक्रमों की पहुँच न होने के कारण वे नवाचार और उद्यमशीलता में पीछे रह जाते हैं। यदि इन्हें समुचित शिक्षा और व्यावसायिक प्रशिक्षण प्रदान किया जाए, तो वे आत्मनिर्भर बन सकते हैं और मुख्यधारा की अर्थव्यवस्था में अधिक प्रभावी योगदान दे सकते हैं।

गरीबी और बेरोजगारी गरीबी और बेरोजगारी का भारतीय जनजातीय समुदायों की आर्थिक स्थिति पर गंभीर प्रभाव पड़ता है। आय के स्थायी स्रोतों की अनुपलब्धता के कारण अधिकांश जनजातीय परिवार न्यूनतम जीवन स्तर बनाए रखने के लिए संघर्ष करते हैं। बेरोजगारी के कारण उन्हें असंगठित क्षेत्र में काम करना पड़ता है, जहाँ मजदूरी कम होती है और श्रमिक अधिकारों की सुरक्षा नहीं होती। इस स्थिति से बचने के लिए उन्हें ऋण पर निर्भर रहना पड़ता है, जिससे वे कर्ज के जाल में फँस जाते हैं। इसके अलावा, गरीबी और बेरोजगारी के कारण जनजातीय समुदायों में स्वास्थ्य, पोषण और शिक्षा पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है, जिससे उनका समग्र सामाजिक–

* लेक्चरर (समाजशास्त्र) राजकीय महाविद्यालय, नाथद्वारा, राजसमंद (राज.) भारत

आर्थिक विकास बाधित होता है। इस समस्या के समाधान के लिए सरकार को रोजगार सृजन, कौशल विकास और उद्यमिता को बढ़ावा देने वाली योजनाओं को प्रभावी ढंग से लागू करना चाहिए।

सामाजिक दशा – भारतीय जनजातीय समुदायों की सामाजिक दशा अब भी काफी पिछड़ी हुई है। अधिकांश जनजातीय क्षेत्रों में शिक्षा और स्वास्थ्य सुविधाओं का अभाव देखा जाता है, जिससे सामाजिक प्रगति बाधित होती है। सामाजिक भेदभाव और मुख्यधारा के समाज से अलगाव के कारण इन समुदायों को न्याय, अवसरों और संसाधनों की समान उपलब्धता में कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। महिलाओं की स्थिति विशेष रूप से चिंताजनक है, क्योंकि वे शिक्षा, स्वास्थ्य और रोजगार के मामलों में और भी अधिक पिछड़ी हुई हैं। पारंपरिक रीति-रिवाजों और मान्यताओं के कारण कई बार ये समुदाय आधुनिक विकास प्रक्रिया से पीछे रह जाते हैं। सरकार और गैर-सरकारी संगठनों के प्रयासों के बावजूद, अभी भी शिक्षा, स्वास्थ्य, महिला सशक्तिकरण और सामाजिक समावेशन की दिशा में अधिक प्रभावी कदम उठाने की आवश्यकता है। कुछ प्रमुख सामाजिक मुद्दे निम्नलिखित हैं-

शिक्षा का अभाव – शिक्षा का अभाव भारतीय जनजातीय समुदायों की आर्थिक स्थिति पर नकारात्मक प्रभाव डालता है। कम साक्षरता दर और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की कमी के कारण जनजातीय युवा आधुनिक नौकरियों और तकनीकी कार्यों के लिए आवश्यक कौशल विकसित नहीं कर पाते। इससे वे निम्न आय वाले असंगठित क्षेत्रों में कार्य करने के लिए बाध्य होते हैं, जहाँ श्रम की सुरक्षा और उचित वेतन का अभाव होता है। इसके अलावा, शिक्षा की कमी के कारण वे सरकारी योजनाओं और ऋण सुविधाओं का लाभ नहीं उठा पाते, जिससे उनका आर्थिक विकास अवरुद्ध हो जाता है। यदि इन्हें उचित शिक्षा और प्रशिक्षण मिले, तो वे अधिक आत्मनिर्भर बन सकते हैं और मुख्यधारा की अर्थव्यवस्था में प्रभावी योगदान दे सकते हैं।

स्वास्थ्य समस्याएँ – भारतीय जनजातीय समुदायों को कई गंभीर स्वास्थ्य समस्याओं का सामना करना पड़ता है, जिनका मुख्य कारण स्वास्थ्य सुविधाओं की कमी, कुपोषण, अस्वच्छ पेयजल, और गरीबी है। दूरदराज के क्षेत्रों में निवास करने के कारण इन्हें आधुनिक चिकित्सा सेवाएँ आसानी से उपलब्ध नहीं हो पातीं। कुपोषण, मातृ एवं शिशु मृत्यु दर, मलेरिया, तपेदिक, डेंगू और अन्य संक्रामक रोग इन समुदायों में व्यापक रूप से फैले हुए हैं। इसके अलावा, जागरूकता की कमी और पारंपरिक चिकित्सा पद्धतियों पर अत्यधिक निर्भरता भी उनकी सेहत पर नकारात्मक प्रभाव डालती है। स्वास्थ्य सुविधाओं के अभाव के कारण जनजातीय महिलाओं और बच्चों की स्थिति विशेष रूप से चिंताजनक बनी रहती है। हालाँकि, सरकार ने राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन, आयुष्मान भारत और पोषण अभियान जैसी योजनाएँ शुरू की हैं, लेकिन इनका पूर्ण लाभ जनजातीय समुदायों तक पहुँचाने के लिए अधिक प्रयासों की आवश्यकता है। स्वास्थ्य सेवाओं में सुधार और जागरूकता बढ़ाकर ही जनजातीय समुदायों की स्थिति को बेहतर बनाया जा सकता है।

सामाजिक भेदभाव – भारतीय जनजातीय समुदायों को लंबे समय से सामाजिक भेदभाव और हाशिए पर रखे जाने की समस्या का सामना करना पड़ा है। समाज की मुख्यधारा से अलग-थलग रहने के कारण उन्हें शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार और बुनियादी सुविधाओं में समान अवसर नहीं मिल पाते। कई बार इन्हें असमानता, जातिगत भेदभाव, आर्थिक शोषण और सामाजिक बहिष्कार जैसी चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। औद्योगीकरण और भूमि अधिग्रहण के कारण उनकी पारंपरिक आजीविकाओं पर भी खतरा मंडरा रहा है, जिससे उनका सामाजिक और आर्थिक विकास बाधित हो रहा है। हालाँकि, सरकार ने अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षण, वन अधिकार कानून, शिक्षा और सामाजिक कल्याण योजनाएँ शुरू की हैं, लेकिन सामाजिक स्तर पर भेदभाव अभी भी जारी है। जनजातीय समुदायों के प्रति सम्मान, समानता और समावेशन की भावना को बढ़ावा देकर इस भेदभाव को दूर किया जा सकता है, ताकि वे समाज की मुख्यधारा में समान अवसरों के साथ आगे बढ़ सकें।

महिलाओं की स्थिति – भारतीय जनजातीय समाज में महिलाएँ पारंपरिक रूप से परिवार और समुदाय की आर्थिक व सामाजिक संरचना का महत्वपूर्ण हिस्सा रही हैं। वे कृषि, वनोपज संग्रहण, हस्तशिल्प, पशुपालन और घरेलू कार्यों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। हालाँकि, आधुनिक विकास और सामाजिक बदलावों के बावजूद जनजातीय महिलाओं को कई चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। शिक्षा की कमी, स्वास्थ्य सुविधाओं का अभाव, बाल विवाह, कुपोषण और पारंपरिक रूढ़ियों के कारण उनकी सामाजिक और आर्थिक स्थिति अपेक्षाकृत कमजोर बनी हुई है। कई जनजातीय समुदायों में महिलाओं को पुरुषों की तुलना में अधिक श्रम करना पड़ता है, लेकिन उनके अधिकार और निर्णय लेने की क्षमता सीमित होती है। हालाँकि, सरकार द्वारा शिक्षा, कौशल विकास और महिला सशक्तिकरण के लिए विभिन्न योजनाएँ चलाई जा रही हैं, जिससे उनकी स्थिति में धीरे-धीरे सुधार हो रहा है। समाज में जागरूकता बढ़ाकर और उन्हें आर्थिक अवसरों से जोड़कर जनजातीय महिलाओं की स्थिति को और सशक्त किया जा सकता है।

सरकारी प्रयास और समाधान भारत सरकार ने जनजातीय समुदायों के आर्थिक और सामाजिक उत्थान के लिए कई योजनाएँ चलाई हैं, भारत सरकार ने जनजातीय समुदायों के आर्थिक और सामाजिक विकास के लिए कई महत्वपूर्ण योजनाएँ और कार्यक्रम शुरू किए हैं। ये प्रयास शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार, आजीविका, और सांस्कृतिक संरक्षण के क्षेत्रों में व्यापक रूप से लागू किए गए हैं।

1. शिक्षा एवं कौशल विकास के लिए योजनाएँ:

1. एकलव्य मॉडल आवासीय विद्यालय (EMRS) – जनजातीय बच्चों को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करने के लिए आवासीय विद्यालयों की स्थापना।
2. प्री-मैट्रिक और पोस्ट-मैट्रिक छात्रवृत्ति योजना -जनजातीय छात्रों को वित्तीय सहायता प्रदान करना ताकि वे उच्च शिक्षा प्राप्त कर सकें।
3. आदिवासी शिक्षा हेतु विशेष छात्रावास योजना – जनजातीय छात्रों के लिए मुफ्त छात्रावास सुविधा।
4. प्रधानमंत्री कौशल विकास योजना (PMKVY) -जनजातीय युवाओं को व्यावसायिक प्रशिक्षण और कौशल विकास का अवसर देना।

2. आर्थिक सशक्तिकरण और रोजगार के लिए योजनाएँ:

1. वन धन योजना – जनजातीय समुदायों को वन उत्पादों के व्यापार और प्रसंस्करण के माध्यम से आर्थिक रूप से सशक्त बनाना।
2. महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम (MGNREGA) – जनजातीय क्षेत्रों में रोजगार के अवसर उपलब्ध कराना।
3. TRIFED (Tribal Cooperative Marketing Development Federation of India) – जनजातीय उत्पादों के विपणन और व्यापार को बढ़ावा देना।
4. राष्ट्रीय आजीविका मिशन (NRLM) – जनजातीय महिलाओं और समूहों को स्वरोजगार और उद्यमशीलता के लिए सहायता प्रदान करना।

3. स्वास्थ्य और पोषण संबंधी योजनाएँ:

1. राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन (NHM) – दूरदराज के जनजातीय क्षेत्रों में स्वास्थ्य सेवाओं का विस्तार।
2. आयुष्मान भारत योजना –जनजातीय परिवारों को मुफ्त स्वास्थ्य बीमा सुविधा।
3. राष्ट्रीय पोषण मिशन (POSHAN Abhiyaan) – कुपोषण, एनीमिया और शिशु मृत्यु दर को कम करने के लिए विशेष कार्यक्रम।
4. जनजातीय स्वास्थ्य देखभाल योजना – प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों और मोबाइल क्लीनिकों के माध्यम से जनजातीय समुदायों तक स्वास्थ्य सुविधाएँ पहुँचाना।

4. सामाजिक और सांस्कृतिक संरक्षण के लिए योजनाएँ:

1. वन अधिकार अधिनियम, 2006 – जनजातीय समुदायों को उनके पारंपरिक वन भूमि पर अधिकार प्रदान करना।
2. पेसा अधिनियम, 1996 (PESA Act) – जनजातीय क्षेत्रों में स्थानीय स्वशासन को बढ़ावा देना।
3. समाज कल्याण बोर्ड और अनुसूचित जनजाति आयोग –जनजातीय समुदायों के अधिकारों और कल्याण की रक्षा करना।
4. TRIFED और आदिवासी हाट बाजार योजना – जनजातीय कला, शिल्प और संस्कृति को संरक्षित

निष्कर्ष – भारतीय जनजातियाँ देश की सांस्कृतिक विरासत का महत्वपूर्ण हिस्सा हैं, लेकिन आर्थिक और सामाजिक दृष्टि से वे अब भी मुख्यधारा से काफी पीछे हैं। शिक्षा की कमी, स्वास्थ्य सुविधाओं का अभाव, रोजगार के सीमित अवसर, भूमि और संसाधनों की हानि, तथा सामाजिक भेदभाव जैसी चुनौतियाँ उनके विकास में बाधा बनी हुई हैं। हालाँकि, सरकार द्वारा विभिन्न योजनाओं और नीतियों के माध्यम से इनके सशक्तिकरण के प्रयास किए जा रहे हैं, लेकिन उनका प्रभाव अभी भी अपेक्षित स्तर तक नहीं पहुँचा है। जनजातियों के आर्थिक और सामाजिक उत्थान के लिए शिक्षा, स्वास्थ्य, स्वरोजगार और बुनियादी सुविधाओं तक उनकी पहुँच को और अधिक मजबूत करने की आवश्यकता है। जब तक ये समुदाय पूरी तरह से आत्मनिर्भर और समान अवसरों से युक्त नहीं होंगे, तब तक समावेशी विकास का लक्ष्य अधूरा रहेगा। अत:, सरकार, समाज और निजी क्षेत्र को मिलकर इन समुदायों के उत्थान के लिए सतत प्रयास करने चाहिए, ताकि वे भी समान अधिकारों और अवसरों के साथ देश की प्रगति में भागीदार बन सकें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. भारत सरकार, जनजातीय कार्य मंत्रालय –भारतीय जनजातियों की सामाजिक और आर्थिक स्थिति पर आधिकारिक रिपोर्टें और योजनाएँ।
2. राष्ट्रीय जनजातीय स्वास्थ्य अध्ययन –भारत में जनजातीय समुदायों के स्वास्थ्य संबंधी आंकड़ों और चुनौतियों पर आधारित रिपोर्ट।
3. वन अधिकार अधिनियम, 2006 (Forest Rights Act, 2006) –जनजातीय समुदायों को भूमि और संसाधनों पर अधिकार देने वाला महत्वपूर्ण कानून।
4. पेसा अधिनियम, 1996 (Panchayats EÛtension to Scheduled Areas & PESA Act, 1996) जनजातीय क्षेत्रों में स्वशासन और अधिकारों की सुरक्षा।
5. राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण कार्यालय (NSSO) रिपोर्ट द जनजातीय गरीबी, शिक्षा, स्वास्थ्य और आजीविका पर सांख्यिकीय डेटा।
6. योजना आयोग और नीति आयोग की रिपोर्टें – जनजातीय विकास से जुड़ी विभिन्न नीतियों और योजनाओं का विश्लेषण।
7. अंतरराष्ट्रीय श्रम संगठन (ILO) और संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (UNDP)
8. शोध पत्र एवं अकादमिक ग्रंथ – जनजातीय समाज से संबंधित विभिन्न शोध अध्ययन, जैसे कि भारतीय समाजशास्त्रियों और अर्थशास्त्रियों द्वारा किए गए अध्ययन।
9. ट्राइफेड (TRIFED) और वन धन योजना से जुड़ी सरकारी रिपोर्टें
10. राष्ट्रीय अनुसूचित जनजाति आयोग (NCST) की रिपोर्टें

****

भारत – नेपाल सम्बंधों की एक झलक

डॉ. अभिमन्यु सिंह चौहान*

शोध सारांश – भारत–नेपाल के बीच शताब्दियों से भौगोलिक और सांस्कृतिक सम्बंध रहे हैं। 1947 से वर्तमान तक दोनों देशों के बीच उतार–चढ़ाव के सम्बंधों की कहावत चरितार्थ होती सी दिखाई देती है। क्यों कि राजशाही से लेकर लोकतंत्र के बीच में बहुत से दृष्टिकोणों की चाल समझ से परे दिखाई देती है। नेपाल की चीन के साथ बढ़ती मित्रता इस बात ही घोतक है कि भारत को अब नए सिरे से सम्बंधों की कहानी गढ़नी होगी। यदि भारत नेपाल की सम्प्रभुत्ता व स्वतंत्रता के बारे में तथा नेपाल भारत की सुरक्षा पहलुओं पर ध्यान देंगे तो दोनों के बीच मधुर सम्बंधों का विकास निरन्तर बना रहेगा। अत: निष्कर्षत: कह सकते हैं कि भारत–नेपाल सम्बंध मूलत: मित्रतापूर्ण रहे हैं लेकिन कभी–कभी मतभेदों के शिकार भी रहे है। मुख्य तौर पर चीन को लेकर दोनों के सम्बंधों में टकराव आया है, लेकिन दोनों ओर से संयम बरतने से स्थिति में सुधार हो गया है। अत: दोनों देशों के सम्बंधों के विकास से भविष्य में मित्रतापूर्ण सम्बंधों की कल्पना की जा सकती है।

कुंजी शब्द –ऐतिहासिक, धार्मिक, सांस्कृतिक एवं भौगोलिक समानताएं, प्रारम्भ सुखद एवं मैत्रीपूर्ण तरीके से होना, नेपाल का चीन की तरफ झुकाव से स्पष्ट है भारत से दूरियां बढ़ना, भारत–चीन युद्ध से दोनों देशों के बीच नए दृष्टिकोण का प्रारम्भ, 1980 के दशक के अंत में दोनों के बीच मतभेद बढ़ना, नेपाल द्वारा चीन से हथियारों का आयात, परमिट व्यवस्था लागू करना, नागरिक की समस्या तथा गुजराल सिद्धांत के आधार पर सम्बंधों में विकास आदि।

प्रस्तावना – भारत व नेपाल के बीच सदियों से गहन ऐतिहासिक, धार्मिक, सांस्कृतिक एवं भौगोलिक समानताएं रही है। दोनों देशों के बीच 1700 कि.मी. की खुली सीमा आपसी सामारिक महत्व का प्रतीक है। नेपाल की भौगोलिक स्थिति जहां एक और इसे भारत के लिए महत्वपूर्ण स्थिति वाला देश बना देता है, वहीं दूसरी ओर नेपाल का भू–बद्धय राष्ट्र होना इसे काफी हद तक भारत पर निर्भर बना देता है। चीन और भारत के मध्य स्थिति होने से यह अवरोधक राष्ट्र की भूमिका भी निभाता है। अत: दोनों देश एक दूसरे के लिए महत्वपूर्ण स्थान रखते है।

भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहर लाल नेहरुने 6 नवम्बर 1950 में भारत–नेपाल संबंधों के बारे में कहा था कि 'हम नेपाल की स्वतंत्रता को मान्यता प्रदान करते है तथा उसका भला चाहते है। लेकिन एक बच्चा भी यह जानता है कि भारत में से गुजरे बिना कोई भी नेपाल नहीं पहुंच सकता। अत: अन्य किसी देश के नेपाल के साथ उतने धनिष्ठ सम्बंध नहीं हो सकते जितने भारत के। इसलिए हम प्रत्येक राष्ट्र द्धारा भारत व नेपाल के बीच स्थापित घनिष्ठ भौगोलिक एवं सांस्कृतिक सम्बंधों की स्वीकृति व सराहना चाहते है।'

भारत–नेपाल सम्बंधो की झलक उचित विश्लेषणों एवं चरणों में आए बदलावों के आधार पर देख सकते हैं –

- 1947 से 1955 तक दोनों देशों के बीच मित्रतापूर्ण सम्बंधों का युग कहा जा सकता है। जिसमें यथास्थिति का समझौता, भारतीय सेना में गोरखा जाति के लोगों की भर्ती समझौता, भारत–नेपाल के बीच 'शांति व मित्रता' की संधि, नेपाल की उत्तरी सीमा पर भारत ने सैनिक चौकियां स्थापित की ताकि तिब्बत व भूटान की ओर के दर्रो से नेपाल की सुरक्षा व्यवस्थित की जा सके। 1950 में भारत ने नेपाल में राणाशाही का अन्त करने में सक्रिय भूमिका अदा की। भारत ने समय–समय पर नेपाल की संयुक्त राष्ट्र संघ की सदस्यता दिलाने का भी प्रयास किया तथा अन्तत: 1955 में नेपाल को स्वतंत्र राज्य के रुप में इस अन्तर्राष्ट्रीय संगठन में सम्मिलित कर लिया गया।
- 1956 से 1962 का काल परिवर्तन का युग कहा जा सकता है। इसमें नेपाल का झुकाव चीन की तरफ देखा गया था। भारत के अथक प्रयासों के बाद नेपाल से सम्बंधों में दरार की झलक स्पष्ट दिखाई देती है। मूलत: कारण स्पष्ट है –
- 1956 में नेपाल के प्रधानमंत्री ने चीन की यात्रा की।
- 20 सितम्बर, 1956 को चीन–नेपाल के बीच मैत्री संधि हुई।
- 1957 में चीन के प्रधानमंत्री चाउ–इन–लाई नेपाल आए।
- 5 अक्टूबर, 1961 को चीन–नेपाल के बीच सीमा सम्बंधी समझौता हुआ।
- 16 अक्टूबर, 1961 को चीन ने नेपाल को लहासा से काठमाण्डू तक की सड़क निर्माण करने हेतु आर्थिक सहायता प्रदान की।

इस दौर में जहां एक ओर नेपाल ने चीन से घनिष्ठता का रुख अपनाया वहां भारत ने नेपाल के साथ सहजता से काम लेते हुए भविष्य में अच्छे सम्बंध बनाने का प्रयास किया यद्यपि यह सत्य था कि भारत–नेपाल के इस परिवर्तित रुप से नाखुश अवश्य था।

- 1963 से 1971 का काल दोनों देशों के बीच एक **नए दृष्टिकोण का प्रारम्भ** का युग कहा जा सकता है। 1962 में भारत से चीन का युद्ध के उपरान्त नेपाल के रवैये को देखते हुए भारत अधिक चिन्तित हो उठा। अत: यहीं से भारत ने नेपाल के साथ नए दृष्टिकोण की शुरुआत की और भारत ने नेपाल के बारे में ज्यादा संवेदनशील दृष्टिकोण अपनाया। भारत और नेपाल के राजनेताओं व शासकों द्धारा एक दूसरे देशों में

* लेक्चरर (राजनीति विज्ञान) एस.एम.बी. राजकीय महाविद्यालय, नाथद्वारा (राज.) भारत

यात्राओं के ब्यौरे से सम्बंधों में नए दृष्टिकोण का आगाज दिखाई देता है।

भारत व नेपाल के राजनेताओं की यात्राओं का विवरण –

(क) भारत के राजनेताओं की यात्राऐं –

1.	लाल बहादुर शास्त्री	गृहमंत्री	4–6 मार्च, 1963
2.	डॉ. राधाकृष्णन	राष्ट्रपति	4–8 नवम्बर, 1963
3.	इंदिरा गांधी	प्रधानमंत्री	4–7 अक्टूबर, 1966
4.	दिनेश सिंह	विदेशमंत्री	जून 1969

(ख) नेपाल के राजनेताओं की यात्राएं –

1.	महाराजा महेन्द्र	सम्राट	27–31 अगस्त, 1963
2.	सूर्यबहादुर थापा	प्रधानमंत्री	मार्च, 1966
3.	महेन्द्र कुमार भण्डारी	विदेशमंत्री	मई, 1969

इस दृष्टिकोण के अन्तर्गत भारत ने नेपाल द्वारा किसी महत्वपूर्ण विषय पर मतभेद रखने पर भी ज्यादा आपत्ति नहीं की। 1965 के भारत–पाक युद्ध के दौरान नेपाल का रुख तटस्थता का रहा।

- **1972 से 1979** का काल सामान्य सम्बंधों का युग रहा। दोनों देशों में सम्बधों को सुधारने के लिए सिंचाई, विद्युत, उद्योग तथा कृषि के क्षेत्रों में सहयोग के समझोतों पर हस्ताक्षर हुए। इस काल का सबसे विवादास्पद विषय नेपाल को **'शांति क्षेत्र'** घोषित करना रहा है। यह विषय आज भी भारत–नेपाल सम्बंधों में शंका पैदा कर देता है।
- 1980 से 1999 का काल उतार–चढ़ाव, परन्तु सुखद सम्बंधों का काल रहा। 1970 के अंतिम वर्षों में दो महत्वपूर्ण घटनाएं घटी जिनका दक्षिण एशिया तथा भारत–नेपाल सम्बंधों पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा। सर्वप्रथम महाराजा वीरेन्द्र ने नेपाल में एक राष्ट्रीय जनमत संग्रह कराने की बात की जिसके आधार पर लोगों को अपने लिए प्रणाली चुनने का अवसर प्रदान किया जायेगा। इससे वहां प्रजातंत्र की बहाली की प्रक्रिया शुरु हुई जिसका भारत हमेशा पक्षधर रहा है। दूसरी 1979 में सोवियत संघ ने अफगानिस्तान में हस्तक्षेप किया। इस मामले पर भारत व नेपाल में पूर्ण एकमत था कि इस समस्या का हल राजनैतिक तरीकों द्वारा निकाला जाय, सैनिक तरीकों से नहीं।

1980 के दशक के अंतिम वर्षों में दोनों देशों के बीच मतभेद बढ़ने लगे। वे विवादास्पद विषय थे –

- नेपाल द्वारा हथियारों का आयात।
- परमिट व्यवस्था लागू करना।
- नागरिकता की समस्या।
- व्यापार तथा पारगमन संधि पर विवाद।

इस समय के 3 महत्वपूर्ण तत्व इनके सुखद सम्बंधों में सहायक हैं – एक तो भारत व चीन के मध्य सुधरते सम्बंध, दूसरा दक्षिण के माध्यम से दक्षिण एशिया के देशों मे बढ़ता सहयोग तथा 1997 से भारत द्वारा गुजराल सिद्धांत के अन्तर्गत पड़ौसी राज्यों से सम्बंध सुधार की प्रक्रिया। अत: जब तक इस प्रकार की प्रवृत्तियां सुचारु रहेंगी, दोनों देशों के मध्य अच्छे सम्बंधों की कामना की जा सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. एस.डी. मुनि, इंडिया एण्ड नेपाल : टूआर्डज दॉ नेक्सर सेंचुरी नई दिल्ली, 1998, पृ. 142।
2. ईयरबुक ऑन इंडियाज फॉरेन पॉलिसी, 1987–88 नई दिल्ली, 1988, पृ. 181–196।
3. जवाहरलाल नेहरु, इंडियाज फॉरिन पॉलिसी : स्लेक्टिड स्पीचज, सितम्बर 1946 से अप्रेल 1961, नई दिल्ली, पृ. 436।
4. एस.डी. मुनि, इंडिया–नेपाल : द चेन्जिग रिलेशनशिप, नई दिल्ली 1992, पृ. 40।
5. ए.अप्पादोराय एवं एम.एस. राजन, इंडियाज फॉरेन पालिसी एण्ड रिलेशंज, नई दिल्ली 1985, पृ. 166।
6. एल.एस. बराल, इंडिया एण्ड नेपाल इंटरनेशनल स्टडीज, वाल्यूम 17, अंक 3–4, जौलाई–दिसम्बर 1978 पृ. 547।

****

Impact of Goods and Services Tax (GST) on Retail and Consumer Spending Patterns in India

Dr. O.P Roonwal*

Abstract: The implementation of the Goods and Services Tax (GST) on July 1, 2017, marked a landmark reform in India's indirect tax structure. Envisioned as a unified tax regime replacing multiple cascading taxes, GST sought to create a seamless national market and enhance tax compliance. However, its immediate impact on the retail sector and consumer spending behaviour sparked widespread debate. This qualitative study explores how GST influenced pricing, consumer perception, and purchasing patterns within the first six months of its implementation. Through secondary data review and insights drawn from interviews with retailers and consumers, the paper concludes that while GST simplified taxation and reduced logistics costs, short-term disruptions led to cautious consumer spending. The reform's long-term success depends on consistent policy clarity, retailer adaptation, and consumer trust restoration.
Keywords: Goods and Services Tax, Retail Sector, Consumer Spending, Economic Reform, Taxation, Consumption Behavior, India.

1. Introduction: India's indirect taxation landscape underwent a historic transformation with the introduction of the Goods and Services Tax (GST) in 2017. Designed as a "One Nation, One Tax" reform, GST replaced a complex web of central and state levies such as excise duty, VAT, and service tax. Its core objective was to simplify taxation, enhance transparency, and reduce the cascading effect of multiple taxes (Kumar 2017).

For the **retail industry**, which contributes nearly 10% to India's GDP and employs over 40 million people (IBEF 2016), GST represented both opportunity and challenge. Retailers expected supply chain simplification and better inventory management, while also fearing initial compliance costs and price fluctuations.

From a consumer perspective, GST triggered uncertainty. Shoppers were unsure about product pricing, tax slabs, and potential price hikes. The transition period was marked by mixed sentiments — optimism about long-term efficiency but apprehension about short-term inflation.

This paper qualitatively examines how GST influenced retail pricing, consumer confidence, and spending behavior during its early phase.

2. Literature Review

2.1 Evolution and Purpose of GST in India : The GST framework was introduced through the 122nd Constitutional Amendment Bill of 2014 and implemented in 2017. According to the **Ministry of Finance (2017)**, GST aimed to remove interstate trade barriers, reduce tax evasion, and improve the ease of doing business.

Rao (2017) argued that India's fragmented tax system had previously discouraged organized retail growth and increased compliance costs. A unified GST promised efficiency gains across the supply chain, benefiting both producers and consumers.

However, **Singh and Choudhary (2017)** observed that the transition to GST required significant adaptation in accounting systems, IT infrastructure, and pricing strategies, especially for small and medium retailers.

2.2 Retail Sector and Taxation Complexity

Prior to GST, retail firms were subject to multiple taxes at different stages of distribution. Products often suffered a "tax-on-tax" burden, inflating end-consumer prices. **KPMG (2016)** reported that tax cascading could raise final product costs by up to 25%.

Under GST, tax rates were rationalized into slabs of **5%, 12%, 18%, and 28%**, based on product category. While essential goods fell under lower brackets, luxury items were taxed higher. This standardization simplified billing and compliance but temporarily disrupted retail pricing systems.

2.3 Consumer Behavior under Economic Reform

Economic reforms affect consumer psychology through price expectations, disposable income, and confidence in policy stability. According to **Kotler and Keller (2016)**, consumers adjust spending habits during uncertainty, favoring essential over discretionary purchases.

Deloitte (2017) found that Indian consumers exhibited conservative spending in Q3–Q4 2017, especially in non-essential goods. Confusion around new pricing structures,

* Lecturer, Dept. of BADM, SMB PG College Nathdwara (Raj.) INDIA

fluctuating stock availability, and communication gaps between retailers and buyers created short-term hesitation.

2.4 Theoretical Framework

This paper applies **Prospect Theory** (Kahneman and Tversky 1979) to explain consumer response to GST. According to the theory, individuals perceive losses more acutely than equivalent gains. Hence, even neutral price adjustments post-GST were perceived as "losses," leading to temporary spending restraint.

3. Research Methodology

3.1 Research Design: The study employs a **qualitative, exploratory approach** based on secondary research and primary insights through **semi-structured interviews**. This design is appropriate for understanding subjective perceptions of consumers and retailers in a transitionary policy context.

3.2 Data Sources

- **Secondary Data:** Government reports, white papers (KPMG, PwC, EY), and journal articles (2016–2017) related to GST and retail economics.
- **Primary Data:** Semi-structured interviews with:
- 10 retail store owners (organized and unorganized)
- 15 consumers from urban India (Delhi, Jaipur, Mumbai, Bengaluru)

The study period covers **July–December 2017**, representing the initial adaptation phase post-GST.

3.3 Data Analysis Technique: Responses were thematically analyzed to identify recurring patterns in:

- Price perception
- Purchasing frequency
- Retailer adjustments
- Consumer confidence

A narrative analysis method was used to interpret behavioral and emotional reactions to policy change.

4. Findings and Discussion

4.1 Retailer Adjustments Post-GST: Most retailers interviewed agreed that GST simplified long-term logistics but caused initial confusion. Small traders faced difficulties understanding filing procedures and software-based billing systems.

A Jaipur electronics dealer remarked: "The new GST portal was complex at first. We needed accountants and training sessions just to issue invoices correctly."

Organized retailers such as Big Bazaar and Reliance Fresh reported smoother adaptation due to pre-existing ERP systems. However, smaller unorganized retailers struggled with compliance and working capital management due to delayed tax credit refunds.

4.2 Pricing and Product Availability: Price revisions were inconsistent during the first three months. Products transitioned from old MRP labels (with pre-GST taxes) to new GST-inclusive MRPs. Some goods became cheaper due to reduced cascading taxes, while others—especially consumer durables and services—initially saw price hikes (EY 2017).

For example:

- **FMCG goods** (e.g., soaps, packaged foods) often saw marginal reductions (2–4%).
- **Electronics and branded apparel** temporarily rose by 3–6% due to reclassification into higher tax slabs.

This inconsistency generated uncertainty among consumers, delaying discretionary purchases.

4.3 Consumer Perception and Confidence: Consumers demonstrated a cautious spending approach. Many respondents perceived GST as beneficial "for the economy" but burdensome "for the pocket."

A Delhi respondent noted: "I support GST, but prices didn't really fall for daily essentials. I preferred to postpone purchases until things settled."

Such statements reflect **loss aversion**—even minimal price fluctuations were viewed negatively.

By late 2017, however, as billing systems stabilized and promotions resumed, consumer confidence gradually improved. Retail footfall in organized stores increased during the festive season (October–December 2017), signaling normalization.

4.4 Shift in Consumer Priorities

Interview Analysis: Key Behavioral Changes: The interview analysis conducted in 2017 revealed four major behavioral shifts among consumers following the introduction of the Goods and Services Tax (GST). The first shift, **Spending Caution**, reflected a noticeable reduction in **non-essential and impulsive buying**, as consumers became more conscious of their expenses and prioritized essential goods. The second change, **Brand Switching**, indicated that many consumers **moved toward value-for-money brands**, showing a preference for affordability and practicality over luxury or premium labels. The third trend, **Preference for Organized Retail**, emerged as consumers were increasingly drawn to **formal retail outlets offering transparency and proper GST billing**, enhancing their trust in standardized pricing and quality assurance. Lastly, **Awareness of Tax Structure** grew significantly, with shoppers becoming **more informed about pricing details and the breakdown of taxes** applied to their purchases. Collectively, these behavioral patterns point to a temporary rationalization phase in consumer behavior, where individuals reassessed their spending habits and became more financially aware within a transparent taxation framework.

4.5 Long-Term Economic Perspective: Experts predict that GST's positive effects—lower logistics costs, efficient inventory flow, and enhanced compliance—will outweigh its initial challenges (Rao 2017).

Deloitte's **India Economic Outlook (2017)** projected that retail inflation linked to GST would stabilize by mid-2018.

Furthermore, **organized retail** gained competitiveness, while **unorganized traders** faced consolidation pressures, nudging the sector toward formalization—a stated policy goal of GST.

5. Thematic Summary

The thematic analysis highlights four major themes that emerged in the post-GST retail landscape, each affecting both retailers and consumers in distinct ways. The first theme, **Price Transparency**, brought about **improved clarity for retailers through the implementation of a uniform tax rate**, enabling standardized pricing and easier compliance. For consumers, it led to **greater awareness of product pricing and taxation**, though many initially experienced **confusion during the transition period** as they adapted to the new system.

The second theme, **Technology Adoption**, saw **retailers increasingly shifting toward digital billing and electronic record systems**, ensuring accuracy and compliance with GST norms. On the consumer side, this technological shift resulted in **detailed, itemized bills**, allowing buyers to clearly see the tax components and overall cost breakdown for each purchase.

The third theme, **Spending Pattern**, reflected a **temporary slowdown in the sale of discretionary and luxury goods**, as consumers adjusted to revised pricing structures. However, **essential spending remained largely stable**, suggesting that while shoppers became cautious, basic consumption habits were unaffected.

Lastly, the **Market Structure** theme showed a significant **shift from unorganized to organized retail sectors**, as smaller, informal sellers struggled with compliance requirements. For consumers, this transformation **enhanced trust and preference for formal retail outlets**, which offered transparency, standardized billing, and greater reliability in the evolving post-GST environment.

6. Implications

6.1 Managerial Implications

- Retailers must invest in **digital accounting infrastructure** for compliance and efficiency.
- **Transparent communication** about GST pricing can rebuild consumer confidence.
- Marketing strategies should emphasize **value and clarity** over price discounts during policy transitions.

6.2 Policy Implications

- Simplifying **filing processes for SMEs** will sustain compliance momentum.
- Continuous consumer education regarding GST benefits can mitigate misinformation.
- Stable tax rates and clear classification guidelines are essential for predictability in consumer spending.

7. Conclusion: The introduction of GST in 2017 marked a fundamental reorganization of India's indirect tax system. While the reform created **initial uncertainty** in retail pricing and consumer confidence, it laid the groundwork for a **more integrated and transparent economy**.

Findings from this qualitative study suggest that Indian consumers temporarily reduced discretionary spending in response to perceived price volatility and confusion. However, as compliance systems stabilized and retailers adapted, spending behavior began to normalize by late 2017.

In the long term, GST's success depends on **policy consistency**, **retailer adaptation**, and **consumer trust restoration**. Its impact on the retail sector demonstrates that while economic reforms disrupt short-term behavior, they often catalyze structural efficiency and long-term market maturity.

References: -

1. Deloitte. *India Economic Outlook 2017.* Deloitte Touche Tohmatsu India LLP, 2017.
2. EY. *GST: Navigating the Transition.* Ernst & Young India, 2017.
3. IBEF. *Indian Retail Industry Report 2016.* India Brand Equity Foundation, 2016.
4. Kahneman, Daniel, and Amos Tversky. "Prospect Theory: An Analysis of Decision under Risk." *Econometrica*, vol. 47, no. 2, 1979, pp. 263–291.
5. Kotler, Philip, and Kevin Lane Keller. *Marketing Management.* 15th ed., Pearson Education, 2016.
6. KPMG. *Impact of GST on the Indian Economy.* KPMG India, 2016.
7. Kumar, A. "GST and Its Impact on the Indian Economy." *International Journal of Commerce and Management Research*, vol. 3, no. 7, 2017, pp. 53–59.
8. Ministry of Finance, Government of India. *Goods and Services Tax: An Overview.* 2017.
9. Rao, Govind. "India's Goods and Services Tax: A Work in Progress." *Economic and Political Weekly*, vol. 52, no. 34, 2017, pp. 12–16.
10. Singh, R., and A. Choudhary. "GST: A Boon or Bane for Indian Retail." *Journal of Business and Economic Policy*, vol. 4, no. 3, 2017, pp. 89–96.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) January to March 2017, Vol. I

Separation and characterization of active phytoconstituents of extracts of *Ziziphusnummularia* leaves and fruits by Maceration Process and Hot continuous extraction method by Soxhlet apparatus with chromatographic technique (TLC)

Dr. Pooja Bagdi* **Dr. Vinita Rathore****

Abstract: Diabetes mellitus is a complex set of metabolic disorders characterized by chronic hyperglycaemia and disturbances of carbohydrate, fat and protein metabolism 1 resulting from defects in insulin secretion, insulin action or both 2. Recent evidence suggests that oxidative stress may contribute to the pathogenesis of Type-2 Diabetes mellitus by increasing insulin resistance or impairing insulin secretion 3.

Elevated extra and intra cellular glucose concentrations results in oxidative stress 4 which was reported both in animals in experiment and in diabetic patients 5. The source of oxidative stress is a cascade of ROS leaking from the mitochondria. This process has been associated with the onset of type 1 diabetes (Type-1DM) via the apoptosis of pancreatic beta-cells, and the onset of type 2 diabetes (Type-2DM) via insulin resistance 6.

A possible benefit of vegetables and fruits is from their antioxidant components and thus a contribution to reduction of systemic oxidative stress 7. Vegetables and fruits have been shown to contain high concentrations of antioxidants, which might reduce the risk of diabetes especially Type-2 DM.

Extracts OF *Z. nummularia*were subjected to thin layer chromatographic studies, to find out the probable number of compounds (flavonoids and phenolic) present in them.
Keywords: *ZiziphusNummularia*, Antioxidants, Oxidative stress, Thin Layer Chromatography.

Introduction: Diabetes mellitus is a complex set of metabolic disorders characterized by chronic hyperglycaemia and disturbances of carbohydrate, fat, and protein metabolism resulting from defects in insulin secretion, insulin action, or both 8. Recent evidence suggests that oxidative stress may contribute to the pathogenesis of Type-2 Diabetes mellitus by increasing insulin resistance or impairing insulin secretion 9. Globally, the number of people suffering from diabetes is increasing at an alarming rate 10.

The long-term, relatively specific complications of diabetes mellitus are predominantly vascular and include the development of retinopathy, nephropathy and neuropathy. People with diabetes also have a significantly increased risk of cardiac, peripheral arterial and cerebro-vascular disease 8.

Herbal medicines have long been used for the treatment of diabetes mellitus. This is because such herbal plants have hypoglycaemic properties and other beneficial effects. Herbal medicines have the advantage of usually having no or less side-effects 11. Most of these plants have antioxidant activities 12 and hence, prevent or treat hard curable diseases, other than having the property of combating the toxicity of toxic 13 or other drugs 14.

Several studies examining dietary patterns and incidence of Type-2 diabetes have been also shown that vegetables and fruits are important components of the dietary patterns associated with a decreased risk of Type-2 diabetes 12, 16.

Characterization of *Ziziphusnummularia*

Ziziphusnummularia, also called Jharberi, is species of *Ziziphus*native to the western India and south-eastern Pakistan and south Iran 10. *Ziziphusnummularia* leaves and fruits are used for mental retardation, preventing frequent attacks of colds and influenza, treating diarrhoea, dysentery and colic, indigestion, inflammation of gums and tonic 1. The unripe fruits of the plant are prescribed in the management of vomiting, burning sensations and as tonic, while dried fruits are useful as an anticancer, sedative, stomach ache and in treatment of anaemia, bronchitis,

* Principal, Trinity Educational Institute, Ramgarh (Jharkhand) INDIA
** Associate Professor (Zoology) S.M.B. Government P.G. College, Nathdwara (Raj.) INDIA

burns, chronic fatigue, diarrhoea, hysteria, loss of appetite and pharyngitis 15.

Chemical constituents are present in leaves and fruits of *Ziziphusnummularia*are Glutamine synthetase, nitrate reductase and glutamine dehydrogenase, Ascorbic acid (vitamine C), nummularine-T, nummularine-M and N, Nummularine E, nummularine S, frangufoline, nummularine R, sterols and/or triterpenes, alkaloids, flavonoids, tannins and saponins 12, nummularine-P (I), mauritine-D, jubanine B, nummularine O (I), Jubanine-A, -B, and mauritine-C, N-desmethyl-jubanine-B (I) (Miana and Shah 1985), nummularogenin, (25S)-3 β-hydroxy-5 β-spirostane-2,12-dione (I), nummularine B, nummularine M (I), nummularine N (II), Zizynummin, sitosterol, stigmasterol, betulinic acid, oleanolic acid, ceanothic acid,β-D-glucosides of sitosterol and stigmasterol, n-octacosanol and quercetin-3-O-galactoside 17.

Plant Material and Authentication

The leaves and fruits of *Ziziphusnummularia* used in this study were obtained from cultivated plants grown in MohanlalSukhadia University Udaipur Rajasthan.

As the plant material was not collected from the wild, no special permissions or licences were required. All procedures adhered to institutional and national ethical guidelines for the use of plant materials in research.

Fresh leaves and fruits of *Ziziphusnummularia* (Burm. f.) Wight &Arn. were collected from the botanical garden of Government Science College, Udaipur, Rajasthan, India (approximate coordinates: 24.5854° N, 73.7125° E).

Thin Layer Chromatography (TLC):

Extracts OF *Z. nummularia*were subjected to thin layer chromatographic studies; to find out the probable number of compounds present in them19.

Each solvent extract was subjected to thin layer chromatography (TLC) as per conventional one-dimensional ascending method using silica gel 20. Plate markings were made with silica Gel G. Glass capillaries were used to spot the sample for TLC applied sample volume 1µl by using capillary at distance of 1 cm from the base. In the solvent chamber different solvent system 1 n-Hexane: Ethyl acetate: formic acid (10:5:1), solvent system 2 Benzene: Ethyl acetate (1:0.5) and solvent system 3 Methanol: HCl (9:1) were selected for analysis.

Solvent system was allowed to stand for 20 minutes for pre-saturation. After pre-saturation the sample loaded TLC plates were placed in-side the chamber. Solvent was allowed to run for 20 min. The developed TLC plates were air dried and observed under ultra violet light at both 254 nm and 366 nm. The movement of the active compound was expressed by its retention factor (Rf), Rf values were calculated for different samples.

$$Rf = \frac{\text{Distance Travelled by solute}}{\text{Distance Travelled by solvent}}$$

Where Rf = retention factor

Thin layer Chromatography consists of two phases: one mobile phase and one contiguous stationary phase. The stationary phase is a thin layer of silica or alumina coated on glass, plastic, or metal. And the mobile gas is a suitable solvent. The compound mixture moves along with the mobile phase through the stationary phase and separates depending on the different degree of adhesion (to the silica) of each component in the sample or the compound mixture 20.

Figure 1:Blank TLC plate

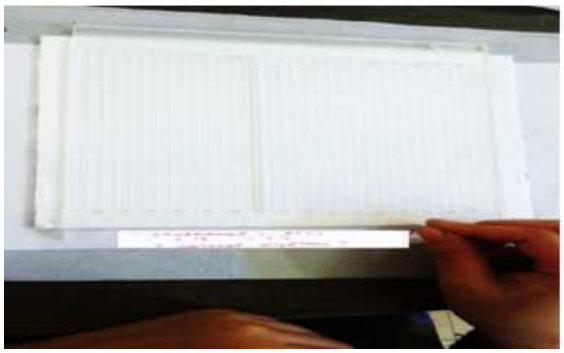

Figure 2:Spot inoculation with various extracts

Fig. 3: Saturation of Solvent chamber

In the present investigation TLC studies confirmed the presence of flavonoids (Rutin and Quercetin) in the different extracts of *Z. nummularia*.

Result and Discussion

Large number of solvent systems such as n-Hexane: Ethyl acetate: formic acid (10:5:1), Benzene: Ethyl acetate (1:0.5) and Methanol: HCl (9:1) were tried to achieve a good resolution (Table 4.20). Finally, the solvent system of Methanol: HCl (9:1) gave the best result. Many of other solvent system were investigated before developing the solvent systems but none of them gave the satisfactory results.

TLC of *Z. nummularia* fruits and leaves extract having

Rfvalues by Maceration process of 0.83 and 0.78 and by Soxhlet process is 0.83 and 0.84 respectively. These spots and Rf values are like the flavonoids (quercetin and rutin) and confirms the presence of flavonoids in leaves and fruits extracts of *Z.nummularia*.

Table 1.1 (see in next page)

Figure 4: TLC plates showing spot under visible or Sun light

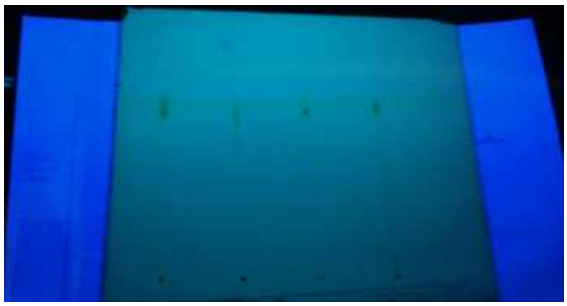

Figure 5: TLC plates showing spot under UV Cabinet at 254 nm

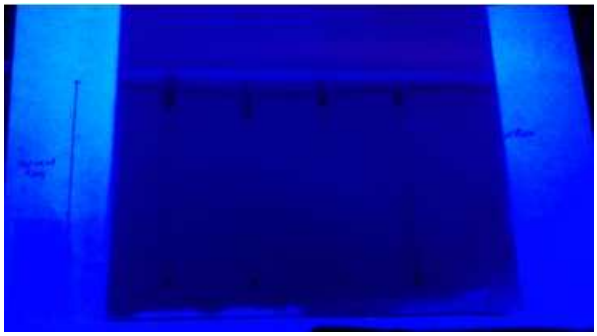

Figure 6: TLC plates showing spot under UV Cabinet at 366 nm

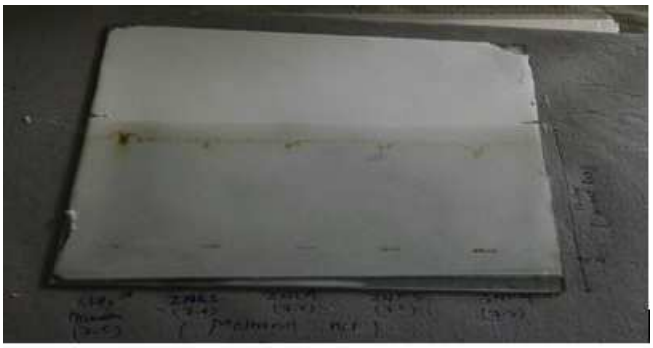

Figure 7: Calculation of Rf value of all extracts and standard Quercetin

Conclusion: TLC studies confirmed the presence of flavonoid which is known to be potent antioxidant present in the leaves and fruits of plant studied. Thin layer chromatography techniques were used to separate individual chemical constituents of leaf and fruit extracts of *Z. nummularia.* The eluted compounds from extracts are rutin, catechin, caffeic acid.

TLC analysis of leaves and fruits of *Z.nummularia*showed the presence of phenolic compounds and flavonoids which are responsible for various medicinal properties of the test plant.

References:-

1. Taverna, M. J. (2018). Epidemiology of Diabetes. In Dermatology and Diabetes (pp. 1-6). Springer, Cham.
2. World Health Organization (2006).The world health report: working together for health. World Health Organization.
3. Ceriello, A. and Motz, E. (2004). Is oxidative stress the pathogenic mechanism underlying insulin resistance, diabetes, and cardiovascular disease? The common soil hypothesis revisited. Arteriosclerosis, thrombosis, and vascular biology, 24(5), 816-823.
4. Giugliano, D., Ceriello, A. and Paolisso, G. (1995). Diabetes mellitus, hypertension, and cardiovascular disease: which role for oxidative stress? Metabolism-Clinical and Experimental, 44(3), 363-368.
5. Ferrannini, E., Muscelli, E., Frascerra, S., Baldi, S., Mari, A., Heise, T., Broedl, U. C. and Woerle, H. J. (2014). Metabolic response to sodium-glucose co transporter 2 inhibition in type 2 diabetic patients. The Journal of Clinical Investigation, 124(2), 499-508.
6. West, I. C. (2000). Radicals and oxidative stress in diabetes. Diabetic Medicine, 17(3), 171-180.
7. Mirhoseini, M., Baradaran, A. and Rafieian-Kopaei, M. (2013). Medicinal plants, diabetes mellitus and urgent needs. Journal of Herbal Medicine Pharmacology, 2(2), 11- 17.
8. World Health Organization. (1999). Definition, diagnosis and classification of diabetes mellitus and its complications: report of a WHO consultation. Part 1, Diagnosis and classification of diabetes mellitus.
9. Ceriello, A. and Motz, E. (2004). Is oxidative stress the pathogenic mechanism underlying insulin resistance, diabetes, and cardiovascular disease? The common soil hypothesis revisited. Arteriosclerosis, thrombosis, and vascular biology, 24(5), 816-823.
10. Montonen, J., Knekt, P., Järvinen, R. and Reunanen, A. (2004). Dietary antioxidant intake and risk of type 2 diabetes. Diabetes Care, 27(2), 362-366.
11. Nasri, H. and Shirzad, H. (2013). Toxicity and safety of medicinal plants. Journal of Herbal Medicine Pharmacology, 2 – 11.
12. Rafieian-Kopaei, M., Baradaran, A. and Rafieian, M. (2013). Plants antioxidants: From laboratory to

clinic. Journal of Nephropathology, 2(2), 152-153.
13. Mardani, S., Nasri, H., Hajian, S., Ahmadi, A., Kazemi, R. and Rafieian-Kopaei, M. (2014). Impact of Momordicacharantia extract on kidney function and structure in mice. Journal of Nephropathology, 3(1), 35 – 44.
14. Ardalan, M. R. and Rafieian-Kopaei, M. (2013). Is the safety of herbal medicines for kidneys under question? Journal of Nephropharmacology, 2(2), 11-14.
15. Roshan, B. and Stanton, R. C. (2013). A story of micro albuminuria and diabetic nephropathy. Journal of Nephropathology, 2(4), 234 – 251.
16. Hajivandi, A. and Amiri, M. (2014). World kidney day 2014: Kidney disease and elderly. Journal of Parathyroid Disease, 2(1), 1- 4.
17. Sharma S, Nasir A, Prabhu KM, Murthy PS, Dev G (2003): Hypoglycemic and hypolipidemic effect of ethanolic extract of seeds of *Eugenia jambolana* in alloxan induced diabetic rabbits. J. Ethnopharmacol 85: 201-206.
18. Shyam, T., &Ganapaty, S. (2013). Evaluation of antidiabetic activity of methanolic extracts from the aerial parts of Barleriamontana in streptozotocin induced diabetic rats. *Journal of Pharmacognosy and Phytochemistry*, *2*(1). 11 – 15.
19. Wagner, H., and Bladt, S. (1996). Plant Drug Analysis: A Thin Layer Chromatography Atlas. Springer, Berlin, Heidelberg, 2nd Edition, 355 - 357.
20. Belenkii B, Kurenbin O, Litvinova L and Gankina E (1990) A new approach to optimization in TLC. Journal of Chromatogram 3:340–347.

Table 1.1: Solvent system and Rf value of *Z. nummularia* Extracts

S.	Solvent System	Extraction Process	Extract	Distance travel by solvent (A)(cm)	Distance travel by solute (B)(cm)	Retention Factor (Rf)= B/A	Conclusion
1.	nHaxane: Ethyl acetate: formic acid(10:5:1)	Maceration	Leaves Extract	-	-	-	**Poor**
			Fruits Extract	-	-	-	**Poor**
		Soxhlet	Leaves Extract	-	-	-	**Poor**
			Fruits Extract	-	-	-	**Poor**
2.	Benzene: Ethyl acetate (1:0.5)	Maceration	Leaves Extract	-	-	-	**Poor**
			Fruits Extract	-	-	-	**Poor**
		Soxhlet	Leaves Extract	-	-	-	**Poor**
			Fruits Extract	-	-	-	**Poor**
3.	Methanol: HCl(9:1)	Maceration	Leaves Extract	13	10.9	0.83	**Very Good**
			Fruits Extract	13	10.2	0.78	**Very Good**
		Soxhlet	Leaves Extract	13	10.9	0.83	**Very Good**
			Fruits Extract	13	11	0.84	**Very Good**

****

महाराजा अजीत सिंह कालीन प्रशासनिक व्यवस्था

डॉ. फिरोज मोहम्मद शेख*

शोध सारांश – अजीतसिंह के समय में प्रशासन के सभी विभागों का समुचित प्रबन्ध था। यद्यपि यहाँ की शासन प्रणाली पर मुगल शासन–प्रणाली का प्रभाव बहुत बढ़ चुका था, तथापि स्थानीय परम्पराए पूरी तरह समाप्त नहीं हुई थीं, यहाँ के पदाधिकारियों के अधिकार व कर्तव्य स्थानीय आवश्यकताओं के अनुसार ही निश्चित किए जाते थे।अजीत सिंह के समय में जोधपुर में प्रशासन के सभी विभागों में प्रत्येक योग्य व्यक्तियों की नियुक्ति करके समुचित प्रबन्ध कर रखा था ।न्याय की सर्वोच्च शक्ति राजा के हाथों में हुआ करती थी। अन्य शासको में दीवान, खानेसामान, किलेदार, पोलरा नायक, चोबदार, सीकदार,सयरा रा दरोगा, मिरदा,'बख्शी', नामक पदाधिकारी, राजा के हाथ में न्याय की ही नहीं बल्कि हर तरह की सर्वोच्च शक्ति राजा के ही हाथों में थी राजपूताने के सभी राज्यों में सामन्त आजीवन राजा की सेवा में प्रस्तुत रहते थे। राजा जब जिस स्थान पर चाहे–देश अथवा विदेश– उनकी सेवा माँगने का अधिकार रखता था। राज्य की रक्षा व प्रतिष्ठा के लिए सामन्तों का एक समूह सदैव राजधानी में उपस्थित रहा करता था। थोड़े दिन उपरान्त जब इन सामन्तों को अपनी जागीर को लौटाने की अनुमति मिलती थी, तो उनके स्थान पर दूसरा समूह राजधानी में आ जाए करता था।

राजा जब कभी स्वयं सैन्य संचालन करता था तो सभी सामन्तों का एकत्र होना अनिवार्य था। सामन्त बिना अवकाश लिए दरबार से अनुपस्थित नहीं हो सकते थे। राजा के साथ वे शिकार पर जाया करते थे, और युद्धों में अथवा शाही दरबार में भी राजा अपनी इच्छानुसार उन्हें साथ ले जायो करता था। राजा की कन्या का विवाह अथवा शत्रु का आक्रमण होने पर सामन्तों को राजा को आर्थिक सहायता देनी पड़ती थी। इस प्रकार सामन्तों को पूर्णरूप से अपने अधीन रखने के साथ–साथ राजा समय–समय पर इनाम व जागीरें देकर उन्हें संतुष्ट भी रखा करते थे। प्रधानमंत्री, अन्य उच्चाधिकारियों, विभिन्न परगनों के हाकिम तथा राजा के नायब सूबेदार अथवा नायब फौजदार का चुनाव इन्हीं सामन्तों में से किया जाता था। न्याय की सर्वोच्च शक्ति राजा के हाथ में थी न्याय की ही नहीं बल्कि हर तरह की सर्वोच्च शक्ति राजा के ही हाथों में थी राजा को मंत्री परामर्श दे सकते थे उनकी बातों को मानना या न मानना राजा पर निर्भर करता था ।

जोधपुर राज्य में भी शासकीय कार्यों के लिए 'दीवान' हुआ करता था। दूसरा प्रमुख अधिकारी 'खानेसामान' था। मुगल–दरबार में भी इसी नाम का एक पदाधिकारी हुआ करता था जो बादशाह के गृह–प्रबन्ध के लिए उत्तरदायी होता था । जोधपुर राज्य में शान्ति और व्यवस्था बनाये रखने के लिए 'दफ्तर रा दारोगा' नामक अधिकारी हुआ करता था। वह सर्वसाधारण पर दृष्टि रखता था और राज्य की सभी घटनाओं को ठीक–ठीक सूचना राजा तक पहुँचाता था। राज्यकोश के प्रबंध के लिए 'खजांची' नामक अधिकारी था। किले की सुरक्षा का भार 'किलेदार' पर होता था। राज्य की सुरक्षा का पूरा दायित्व 'कोतवाल' अथवा 'सीकदार' नामक अधिकारी पर होता था। हत्या करने वाले व्यक्ति को मृत्युदण्ड दिया जाता था। राजा का विरोध करके शत्रु पक्ष से मिल जाने वाले व्यक्ति को कठोर दण्ड दिया जाता था। 'व्यास' तथा 'बारहठ' का भी उल्लेख मिलता है। सम्भवत: यह पदाधिकारी राज्य के धर्म सम्बन्धी कार्य किया करते थे। दस–दस कोस पर एक डाक–चौकी हुआ करती थी, जहाँ का अधिकारी 'मिरदा' कहलाता था। उसके अधीन बहुत से पत्रवाहक होते ।जोधपुर राज्य की सेना के संगठन व नियंत्रण के लिए 'बख्शी' नामक पदाधिकारी हुआ करता था। न्याय की सर्वोच्च शक्ति राजा के हाथ में थी।परगनों में न्याय का कार्य हाकिम किया करते थे। उन्हें दीवानी व फौजदारी दोनों अधिकार प्राप्त थे। हाकिम के निर्णय से असंतुष्ट होने पर प्रार्थी को 'अदालत रा दरोगा' नामक अधिकारी के पास अपील करने का पूरा अधिकार था। इसके निर्णय के विरूद्ध 'दीवान' के पास अपील की जा सकती थी। न्याय की सर्वोच्च शक्ति राजा के हाथ में थी।

प्रस्तावना – जिस प्रकार मुगल शासन–प्रणाली में शासकीय कार्यो का प्रधान 'दीवान' कहलाता था, उसी प्रकार जोधपुर राज्य में भी शासकीय कार्यों के लिए 'दीवान' हुआ करता था। जोधपुर राज्य के दीवान के कर्तव्य व अधिकार लगभग वहीं थे, जो शाही दीवान के। राज्य के समस्त शासन प्रबन्ध से सम्बन्धित सभी कार्यों के लिए वह उत्तरदायी था, और राज्य के जमा–खर्च का समस्त कार्य उसके अधीन हुआ करता था। विभिन्न परगनों से होने वाली पैदावार के जमा–खर्च का ब्यौरा, तथा जागीरदारों द्वारा दिए गए वार्षिक कर का विवरण उसी के पास रहता था। राज्य के सभी पदाधिकारी उसके अधीन थे और वह सब के कार्यों का पूरा–पूरा ध्यान रखता था। यदि कहीं कोई त्रुटि दिखाई पड़ती तो वह तुरंत महाराजा को सूचित करता और उसमें सुधार करवाता था। वह प्रतिदिन दरबार में जाता था और महाराजा को जमा खर्च की सूची सुनाता था। परगनों के हाकिमों को यद्यपि शासक स्वयं नियुक्त करता था, परन्तु दीवान का उन पर पूरा नियंत्रण रहा करता था।[1]

राज्य पर दूसरा प्रमुख अधिकारी 'खानेसामान' था। मुगल–दरबार में भी इसी नाम का एक पदाधिकारी हुआ करता था जो बादशाह के गृह–प्रबन्ध के लिए उत्तरदायी होता था और राजकीय भवन, मार्ग व बाग आदि का ध्यान रखता था। परन्तु जोधपुर राज्य में खानेसामान के अधिकार व कर्तव्य इतने विस्तृत नहीं थे, वह केवल राजकीय अन्न के भण्डार का अध्यक्ष होता था। पट्टों पर दी गई राजा की निजी भूमि से होने वाली समस्त पैदावार को वह पट्टेदारों से उचित दामों पर खरीद लेता था, और भण्डार में अन्य सभी

* व्याख्याता (इतिहास) हाडारानी राजकीय महाविद्यालय, सलूम्बर, जिला उदयपुर (राज.) भारत

आवश्यक वस्तुओं की देख-रेख किया करता था। जोधपुर में इस पदाधिकारी को 'अन्न रै कोठार का दरोगा' भी कहा जाता था।[2]

जोधपुर राज्य में शान्ति और व्यवस्था बनाए रखने के लिए 'दफ्तर रा दारोगा' नामक अधिकारी हुआ करता था वह सर्वसाधारण पर दृष्टि रखता था और राज्य की सभी घटनाओं को ठीक-ठीक सूचना राजा तक पहुँचाता था। राज्यकोश के प्रबंध के लिए 'खजांची' नामक अधिकारी था। वह कोश में जमा होने और निकाले जाने वाले धन का पूरा-पूरा हिसाब रखता था, और इस विवरण की एक सूची पर प्रतिदिन महाराजा के हस्ताक्षर भी करवाता था। किले की सुरक्षा का भार 'किलेदार' पर होता था। किले के सारे सामान की देख-रेख करना उसका प्रमुख कर्तव्य था। किले में तोपों व अन्य अस्त्र-शस्त्र का प्रबंध भी उसके हाथ में रहता था। वह किले की सुरक्षा के लिए स्वयं ही अन्य पदाधिकारियों को नियुक्त करता था, परन्तु इसके लिए राजा की अनुमति आवश्यक थी। किले के विभिन्न द्वारों पर एक-एक व्यक्ति नियुक्त किया जाता था, जिसे 'पोलांरा नायक' (द्वार का नायक) कहते थे। राजा के महल तथा रनिवास की ड्योढी पर 'ड्योढ़ीदार' अथवा 'चोबदार' रहा करते थे। राज्य की सुरक्षा का पूरा दायित्व 'कोतवाल' अथवा 'सीकदार' नामक अधिकारी पर होता था। रात्रि के समय शहर भर में पहरा लगा दिया जाता था और एक प्रहर रात्रि व्यतीत हो जाने के बाद कोई भी व्यक्ति एक स्थान से दूसरे स्थान पर नहीं जा सकता था। कुछ घोड़ों को शहर से बाहर सदैव तैयार रखा जाता था, ताकि आकस्मिक आवश्यकता उत्पन्न होने पर उनका उपयोग किया जा सके। शहर में यदि कोई नया व्यक्ति आता था तो कोतवाल को इसकी सूचना दे दी जाती थी, और जब तक कोई व्यक्ति उसका उत्तरदायित्व नहीं ले लेता था उसे शहर में प्रविष्ट नहीं होने दिया जाता था। चोरी व लूटमार उस समय के प्रचलित अपराध थे। कोतवाल ऐसे अपराधियों पर निगाह रखा करता था, और चोरों के पकड़े जाने पर उनसे उनकी सम्पत्ति व अस्त्र छीन लिए जाते थे। हत्या करने वाले व्यक्ति को मृत्युदण्ड दिया जाता था। राजा का विरोध करके शत्रु पक्ष से मिल जाने वाले व्यक्ति को कठोर दण्ड दिया जाता था। अपराध के अनुसार कभी उससे नकद दण्ड लिया जाता था और कभी उसकी भूमि छीन ली जाती थी। दण्ड राजा की इच्छा पर ही निर्भर हुआ करता था, परन्तु बहुधा ऐसे अपराधियों को क्षमा नहीं किया जाता था।[3]

व्यापारिक वस्तुओं पर कर वसूल करने के लिए सायरा रा दारोगा नामक अधिकारी था। वह सभी व्यापारियों से सम्बन्ध रखता था और उनसे कर वसूलता था।[4]

अजीतसिंह के समय में 'पुरोहित' भी होते थे, जो सम्भवत: राजगुरू होते थे। इसके अतिरिक्त 'व्यास' तथा 'बारहठ' का भी उल्लेख मिलता है। सम्भवत: यह पदाधिकारी राज्य के धर्म सम्बन्धी कार्य किया करते थे। जोधपुर राज्य में स्थान-स्थान पर संदेश भेजने का भी समुचित प्रबंध था। दस-दस कोस पर एक डाक-चौकी हुआ करती थी, जहाँ का अधिकारी 'मिरदा' कहलाता था। उसके अधीन बहुत से पत्रवाहक होते थे। सम्पूर्ण राज्य कई परगनों में विभक्त था। यहाँ का सर्वोच्च अधिकारी 'हाकिम' कहलाता था। हाकिम की नियुक्ति राजा स्वयं करता था, और यह दीवान के अधीन हुआ करता था। दीवान के माध्यम से ही राजा के आदेश उसके पास पहुँचते थे और उसकी प्रार्थना राजा के पास पहुँचती थी। अपने परगने की सुरक्षा का पूर्ण दायित्व उस पर रहता था। वह परगने के सरदारों से सम्पर्क रखता था, चोरी और लूटमार से व्यापारियों की रक्षा करता था, वस्तुओं के भाव का निरीक्षण करता और जनता से कर वसूल करता था।[5]

राज्य का सर्वोच्च सैन्य पदाधिकारी 'प्रधान' हुआ करता था। राजा की सम्पूर्ण सेना का नेतृत्व वही सम्भालता था।[6] मुगल शासक से जब जोधपुर के राजाओं का सम्बन्ध बहुत बढ़ गया, और यहाँ के शासक बहुधा बादशाह की सेवा में रहने लगे, तब 'तन-दीवान' नामक एक और पद की सृष्टि की गई। यह पदाधिकारी महाराजा के साथ बाहर रहा करता था। स्वदेश के बाहर रहते हुए राजा बादशाह, की आज्ञा से जहाँ और जब भी अपनी सेना भेजता था, तब 'तन-दीवान' ही उस सेना का संचालन करता था।जोधपुर राज्य की सेना के संगठन व नियंत्रण के लिए 'बख्शी' नामक पदाधिकारी हुआ करता था। उसके अधिकार व कर्तव्य लगभग वही थे जो मुगल सेना में 'मीर बख्शी' के थे। राजा की आय के विभिन्न साधन थे। उसकी निजी भूमि होती थी, जिसे वह पट्टे पर दिया करता था और इसके बदले में पट्टेदारों से निर्धारित राशि लेता था। भूमि-कर आय का अन्य साधन था। इसके अतिरिक्त उसके जागीरदार समय-समय पर राजा को भेंट व नजराना भी दिया करते थे।[7]

जिस प्रकार मुगल-दरबार में मनसब व जागीर मिलने पर लोग बादशाह को पेशकश नजर किया करते थे, उसी प्रकार जोधपुर राज्य में भी जब राजा किसी व्यक्ति को जागीर देता था तो वह उसे पेशकश देता था। जोधपुर राज्य में न्याय व्यवस्था का भी समुचित प्रबन्ध था। शासन की सबसे छोटी इकाई गाँव था जहाँ न्याय का अधिकार पंचायत को था। धन सम्बन्धी झगड़ों का निर्णय धर्मशास्त्रों के आधार पर होता था और अन्य झगड़े रीति-रिवाज के अनुसार निर्णित किए जाते थे। पारस्परिक लड़ाई-झगड़ों को व्यक्तिगत अपराध समझा जाता था और उन पर विशेष ध्यान नहीं दिया जाता था। लोग आपस में ही इसका फैसला कर लिया करते थे।[8]

परगनों में न्याय का कार्य हाकिम किया करते थे। उन्हें दीवानी व फौजदारी दोनों अधिकार प्राप्त थे। हाकिम के निर्णय से असंतुष्ट होने पर प्रार्थी को अदालत रा दरोगा नामक अधिकारी के पास अपील करने का पूरा अधिकार था। इसके निर्णय के विरूद्ध 'दीवान' के पास अपील की जा सकती थी। न्याय की सर्वोच्च शक्ति राजा के हाथ में थी। न्याय कार्य अधिकतर मौखिक होते थे और लिखा पढ़ी कम होती थी।[9]

मुगल शासकों के सम्पर्क में आने से पूर्व राजपूत शासक तथा उनके सामन्तों के बीच अधिकारी व अधीनस्थ का प्रश्न नहीं था। जिस प्रकार राजा का अधिकार एक निश्चित भू-प्रदेश पर था, उसी प्रकार सामन्तों के पास भी अपनी-अपनी जागीरें हुआ करती थी। अजीतसिंह द्वारा दिए गए पट्टों में न केवल सम्पूर्ण जागीर का ही विवरण मिलता है, वरन् जागीर के अन्तर्गत भिन्न-भिन्न गाँवों की आय का भी स्पष्ट उल्लेख मिलता है।[10]

मोटा राजा उदयसिंह के समय (सन् 1583-1595 ई0) में 'पेशकश' या 'नजराना' देने की प्रथा का चलन हुआ, जिसके अनुसार जागीरदार की मृत्यु हो जाने पर उसके पुत्र को कुछ धन-राशि राजा को भेंट करके जागीर का नया पट्टा प्राप्त करना पड़ता था। यह स्पष्टतया मुगल प्रभाव था। जोधपुर के राजा स्वयं भी राज्य का अधिकार पाने के लिए बादशाह को नजराना दिया करते थे। अजीतसिंह के राज्यत्व-काल में इसे पेशकश या नजराना के स्थान पर 'हुक्मनामा' कहा जाने लगा था।[11]

निष्कर्ष - मुगल शासकों के सम्पर्क में आने से पूर्व राजपूत शासक तथा उनके सामन्तों के बीच अधिकारी व अधीनस्थ का प्रश्न नहीं था। जिस प्रकार राजा का अधिकार एक निश्चित भू-प्रदेश पर था, उसी प्रकार सामन्तों के पास भी अपनी-अपनी जागीरें हुआ करती थी। राजा की ही भाँति अपनी जागीर पर सामन्त का वंशानुगत अधिकार होता था। चूँकि जागीर उनकी वैयक्तिक सम्पत्ति थी और उनकी शक्ति का आधार थी, राजा जागीरदारों से ऊँचा व्यक्ति नहीं समझा जाता था। वरन् शासक व सामन्त में परस्पर भ्रातृत्व

व समानता का सम्बन्ध था। अपने क्षेत्र में सामन्त पूर्ण स्वतंत्र थे। फलत: वे किसी के आश्रित रहना अपनी मर्यादा के विरूद्ध समझते थे। उनकी इस प्रवृत्ति के कारण जब भी उन्हें अवसर मिलता था, वे अपनी शक्ति बढ़ा लिया करते थे और कभी-कभी राजा को निर्बल पाकर उसकी उपेक्षा भी कर देते थे। परन्तु जब वे मुगल-बादशाह के सम्पर्क में आए, तो जिस प्रकार उनकी शासन प्रणाली मुगल शासन-पद्धति से प्रभावित हुई, उसी प्रकार शासक एवं सामन्त के पारस्परिक सम्बन्ध में भी क्रान्तिकारी परिवर्तन हुआ और राजपूत शासक भी मुगल-सम्राट की भाँति अपने जागीरदारों पर प्रभुत्व जमाने की चेष्टा करने लगे।अजीत सिंह के समय में जोधपुर में प्रशासन के सभी विभागों प्रत्येक योग्य व्यक्तियों की नियुक्ति करके समुचित प्रबन्ध कर रखा था।न्याय की सर्वोच्च शक्ति राजा के हाथों में हुआ करती थी। अन्य शासको में दीवान, खानेसामान ,किलेदार पोलरा नायक, चोबदार, सीकदार,सयरा रा दरोगा, मिरदा 'बख्शी' नामक पदाधिकारी, राजा के हाथ में थी न्याय की ही नहीं बल्कि हर तरह की सर्वोच्च शक्ति राजा के ही हाथों में थी।

परगनों में न्याय का कार्य हाकिम किया करते थे। उन्हें दीवानी व फौजदारी दोनों अधिकार प्राप्त थे। हाकिम के निर्णय से असंतुष्ट होने पर प्रार्थी को अदालत रा दरोगा नामक अधिकारी के पास अपील करने का पूरा अधिकार था जोधपुर के राजा इस विषय में विशेष सजग रहने लगे कि सामन्तों की शक्ति इतनी न बढ़ जाए कि वे विद्रोही हो जाए। इसी कारण जागीर देते समय उस जागीर से होने वाली आय पर भी ध्यान दिया जाने लगा और जागीरदारों को पट्टा देते समय इस आय का उल्लेख भी पट्टे में किया जाने लगा। शासक व सामन्तों के पारस्परिक सम्बन्ध में इस प्रकार का अन्तर आ जाने का स्वाभाविक परिणाम हुआ कि दोनों में सदियों से चली आ रही बन्धुत्व की भावना धीरे-धीरे समाप्त हो गई। अब शासक न केवल सामन्तों से, वरन् राजवंश के अन्य सदस्यों से भी ऊँचा माना जाने लगा था। धीरे-धीरे यह पारस्परिक दूरी बढ़ती गई और सामन्तों का एक अलग वर्ग पनपने लगा। जोधपुर के राजाओं ने इनकी शक्ति कम करने के लिए तथा इन्हें अपने प्रति स्वामिभक्त बनाए रखने के लिए जागीरदारों को कई भागों में विभाजित किया। प्रथम श्रेणी में वे सामन्त आते थे, जो शासक के निकट सम्बन्धी होने के कारण जागीरें प्राप्त करते थे। दूसरी श्रेणी के सामन्त वे थे, जिन्हें 'मुन्ड कटाई' (राजा के लिए युद्ध करना) के बदले में जागीरें दी जाती थीं। जिन्हें राजा प्रसन्न होकर जागीरें दिया करता था, वे सामन्त 'इनामदार' कहलाते थे। इन तीनों के अतिरिक्त 'भूमिया' नामक एक अन्य श्रेणी भी थी। इसमें वे व्यक्ति थे जिनके पूर्वजों को राजा ने किसी पद पर कार्य करने के बदले में भूमि दी थी, और वह पद वंशानुगत हो गया और साथ ही साथ दी हुई भूमि पर अधिकार भी वंशानुगत हो गया।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. ब्याव री वही नं. 1; हरदयालसिंह, मजमू ए हालात व इन्तिजाम राज मारवाड़, अध्याय 11; इब्न हसन, 205-6; शर्मा एडमिनिस्ट्रेशन, 40-2।
   टाड (भाग 1; 150) व शर्मा, (स्टडीज 200) ने भी लिखा है कि प्रशासकीय कार्यों का अधिकार 'प्रधान' को नहीं होता था। उसके लिए अलग कर्मचारी हुआ करता था।
2. ब्यावरी वही नं. 1, इब्न हसन 238-43; शर्मा; एडमिनिस्ट्रेशन, 47-8।
3. व्याव री वही नं. 1।
4. व्याव री वही नं. 1।
   जोधपुर राज्य के लगभग सभी पदाधिकारियों का विवरण व्याह वही नं. 1 (213-8) पर आधारित है। इस वही में अन्य विभागों के नाम इस प्रकार लिखे हुए हैं।
   1 कपड़ा रै कोठार 2 जरगरखाना 3 गऊखानी 4 घोड़ा, रैतेबलो 5 सुतर खानौ, 6 बागां रै कोठार, 7 जिनावर खानौ 8 रसोडो 9 जलखानौ।
5. ब्याव री वही नं. 1।
6. टाड भाग 1, 150; शर्मा स्टडीज, 200; जसवंतसिंह 154।
7. आईन, भाग 2, 273; सरन 126, 127 टि0, 130-1; एग्रेरियन सिस्टम आव मुस्लिम इंडिया, 119; शर्मा, स्टडीज, 201; टाड-भाग 1, 129-30, पूर्व, 67; जयसिंह, 18, 19-20; जसवंत सिंह 7।
8. शर्मा, स्टडीज,, 201; टाड-भाग 1, 119-20; जसवंतसिंह, 155।
   व्याव री बही नं0 1 में भी लिखा है कि दंड धर्मशास्त्र के अनुसार दिया जाता था।
9. हरदयालसिंह, मजमूए हालात व इन्तिजाम राज मारवाड़ 687; व्याव री बही नं0 1।
10. रा.पु.बी. में अजीतसिंह द्वारा दिये गये बहुत से पट्टों की नकलें हैं।
11. हरदयालसिंह, मजमूए हालात व इन्तिजाम राज मारवाड़ 439-40; हरदयालसिंह, तवारीख जागीरदारान राज मारवाड़; शर्मा स्टडीज, 199; जसवंतसिंह 157।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) January to March 2017, Vol. I

भारतीय कला के प्रतिबिम्ब – बंगाल शैली और बंगाली चित्रकार (मानवाकृति अंकन के परिपेक्ष्य में)

डॉ. रेखा पंचोली*

प्रस्तावना – उन्नीसवीं सदी के अंतिम चरण में भारत के अधिकांश चित्रकार जब विदेशी शैली को अपनी कलाकृति में आत्मसात करते जा रहे थे। तब ऐसे समय में भारतीय संस्कृति एवं परम्परा को कला क्षेत्र में जिंदा रखने के लिए कलकत्ता स्कूल ऑफ आर्टस के प्रधानाचार्य के पद पर कार्य करते हुए अवनीन्द्रनाथ ठाकुर ने भारतीय कला को विदेशी दास्ता से मुक्त कराने का भागीरथ प्रयास किया, और एक नवीनतम शैली को जन्म दिया, जिसे बंगाल शैली या पुर्नेरूत्थान शैली के नाम से पहचाना गया।

अवनीन्द्र नाथ ठाकुर ने अपने शिष्य तथा परिचय क्षेत्र के सभी कलाकार जो विदेशी शैली के पीछे भाग रहे थे, उनसे आग्रह किया कि वे हमारी परम्परागत भारतीय चित्र पद्धतियाँ जैसे अजंता, पहाड़ी, राजपूत आदि कला शैलियों तथा सिद्धांतों का अध्ययन करें, उनमें चित्रित मानवाकृतियों को ध्यानपूर्वक देखें, उन्हें समझे, उनमें व्याप्त भावनात्मक पक्ष एवं सौंदर्यात्मक पक्ष का अध्ययन कर अपने चित्रों में रचनात्मक शैली का प्रयोग करते हुए मानवाकृतियों को नया रूप प्रदान करें, जिससे वे कला क्षेत्र में पहचाने जा सके और साथ ही साथ भारतीयता की झलक भी उन मानवाकृतियों में दिखाई दे।

विदेशी कला के पीछे पागल चित्रकारों को अपनी कला, संस्कृति एवं परम्परा का पुन:बोध कराने का श्रेय अंग्रेजी कला समीक्षक ई.वी. हैवल को भी जाता है। इन्होंने अंग्रेज होने के बावजूद प्राचीन भारतीय चित्रकला एवं मूर्तिकला का कलात्मक अवलोकन किया। परिणामस्वरूप ई.वी.हैवल को अजंता, एलोरा, मुगल, राजस्थानी, पहाड़ी आदि भारतीय शैली में बनने वाली मानवाकृतियाँ उनका सरलीकरण, भाव अभिव्यंजना तथा सौंदर्यात्मकता जो भारतीय कला को जीवंत रूप प्रदान करती है अत्याधिक पसंद आई और वह प्राचीन भारतीय मानव आकृतियों के कायल हो गये। ई.वी. हैवल ने अवनीन्द्र बाबू के साथ इन विषयों पर गंभीरता से चर्चा कर भावी कलाकारों को यह संदेश पहुँचवाया कि वे विदेशी मानवाकृतियों का अंधानुकरण करना छोड़ अपनी संस्कृति एवं प्राचीन कला का अध्ययन करे एवं उनके सौंदर्यात्मक, भावनात्मक एवं सहजात्मकता को ग्रहण कर अपनी कलाकृतियों में ऐसी मानवाकृतियों को अंकित करें जिसमें भारतीय कला आईने जैसी प्रतिबिम्बित हो।

- स्वयं **अवनीन्द्र नाथ टैगोर** (1871 ई.) ने अपनी कलाकृतियों में भारतीय कला परम्परा को जीवित रखते हुए मानवाकृतियों की रचना की। अवनीन्द्र बाबू ने अनेक कला शैलियों में चित्रो की रचना की। उनके बहुत से चित्रों में जो मानवाकृतियाँ अंकित की गई हैं, उनमें मुगल एवं राजस्थानी शैली का प्रभाव दिखाई देता है। 'अवनीन्द्र बाबू द्वारा बनाई गई मानवाकृतियों में सदैव कल्पनाशीलता का मिश्रण रहा है। सौंदर्य तथा सत्य सादृश्य उनकी मानवाकृतियों में कभी लुप्त नहीं हुआ। ये यथार्थ से कभी भी बहुत दूर नहीं गये सूक्ष्म से सूक्ष्म (डिटेल्स) आकृतियों को चित्रित करने में इनकी कलम कमाल दिखाई थी। उनकी मानव आकृतियों की रेखायें स्वाभाविक घुमाव तथा रंगों में गति एवं ताजगी प्रदर्शित करती थी। वे दर्शक की आंखों को भाने वाले सुहाने तथा धुसर रंग तथा छाया–प्रकाश के माध्यम से आकृतियों को उभारते थे।'[1] इनका बनाया हुआ रेखाचित्र 'रवीन्द्र नाथ डोलती कुर्सी पर' श्रेष्ठ कृतियों में एक है। अवनीन्द्र बाबू ने जापानी कला एवं विदेशी शैली से समन्वय स्थापित कर एक नई शैली को जन्म दिया तथा जल रंग एवं वाश पद्धति के प्रयोग से मानवाकृतियों की सौंदर्यता में चार चाँद लगा दिये।

अवनीन्द्र नाथ टैगोर की मानव आकृतियों में जापानी प्रभाव भी दिखाई पड़ता हैं पेस्टल रंगों का प्रयोग भी बड़ी दक्षता के साथ किया है। मानव त्वचा पर पेस्टल रंगों का प्रभाव देखते ही बनता है। कलाकृतियों में जल रंगों के साथ–साथ पेस्टल रंगों का प्रयोग भी बड़ी सफलता से किया है। 'जमुना' नामक व्यक्ति चित्र भावाभिव्यक्ति से पूरिपूर्ण है ।

'इनके द्वारा बनाई गई श्रेष्ठतम मानव आकृतियाँ बुद्ध चरित्र, कृष्ण चरित्र श्रृंखलाओं के अंतर्गत बुद्ध का जन्म, बुद्ध और सुजाता, कवि कंकण, कृष्ण मंगल श्रृंखला में दिखाई देती है।'[2]

इनके अन्य चित्र जैसे – भारत माता, माँ–शिशु, शाहजहाँ के अंतिम दिन, स्वप्न लोक में रवीन्द्र, मामा का अंत, अली बाबा, एक वृद्ध महिला, जमुना देवी, अरेबियन नाइट्स आदि हैं। साथ ही बंगाल की लोक प्रचलित कथाओं, रीति–रिवाजों पर बनाये गये चित्रों में भी मानव आकृतियों की परिकल्पना की झलक दिखती है।

- 'मेरे जीवन का प्रभात गीतों भरा था, अब शाम रंग भरी हो जाये' **महाकवि रविन्द्रनाथ टैगोर** (1861) का यह कथन उन्हें अपने जीवन के अंतिम पड़ाव पर अपनी स्वाभाविक शैली में चित्र रचना करने वाले चित्रकार के रूप में सामने लाता है। रविन्द्र बाबू अपनी आयु के 67 वे साल के पश्चात् कविता लिखते–लिखते हाशिये में अपनी कलम से आड़ी–तेड़ी रेखायें खींचते। इसके पश्चात् शब्दों या पंक्तियों को रेखाओं से मिटाने पर अकल्पित आकृतियाँ अंकित हो जाती और इन्हीं अकल्पित आकृतियों ने रविन्द्र बाबू का ध्यान आकृष्ट किया, फलस्वरूप उन्हें उसमें अनेक आकृतियाँ दिखाई देने लगीं। इसी को आधार मानकर रविन्द्रनाथ ने अनेक अजीबो–गरीब एवं भद्दी मानवाकृतियों की रचना की। फलस्वरूप इन्हें अति यथार्थवादी कलाकार के रूप में भी स्थापित किया गया । अपनी इस चित्र रचना के संबंधा में

* * सह आचार्य (चित्रकला) सेठ मथुरा दास बिनानी राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नाथद्वारा, राजसमंद (राज.) भारत

इन्होंने कहा–'चित्रकला के क्षेत्र में मात्र रंग और रेखायें ही कोई संदेश नहीं देती अपितु उनमें ध्वनि होती है, लय होती है जिनका अंतिम उद्देश्य कलाकार की आंतरिक और बाह्य कल्पना का सम्प्रेषण एवं एक समानुपातिक समग्रता का विकास करना होता है।'[3]

रवीन्द्र बाबू ने अपनी कलाकृति में जिन मानव आकृतियों का अंकन किया है, वह मौलिक रूप में प्रदर्शित हैं। इन्होंने अपने आकृति अंकन में विदेशी कला की अनुकृति नहीं की, बल्कि ये आकृतियाँ इनकी अपनी आत्म अभिव्यक्ति है। 'उनकी आकृतियाँ चाहे ज्यामितीय हो अथवा किसी सर्प की भांति लयात्मक हो सभी में लय होता था। टैगोर ने जो व्यक्ति चित्र बनाये हैं, वे चित्रकला के सिद्धांतों पर भले ही खरे न उतरे हों किन्तु भाव प्रदर्शन में वे समालोचना के योग्य हैं। उनका बनाया एक चित्र 'फूल के साथ युवती' भाव प्रदर्शन में श्रेष्ठ है। उनके द्वारा बनाया माँ और बच्चा चित्र में एक बालक को समेटे एक स्त्री में ममता के समस्त भाव प्रदर्शित होते हैं।'[4]

अपने चित्रों के माध्यम से रविन्द्र बाबू ने एक नई शैली को जन्म दिया। चित्रांकन करने के लिए इन्होंने ऐसे माध्यम का प्रयोग किया जो उन्हें सरलता से उपलब्ध थे। यह माध्यम वही होता जो (स्याही) उनकी कविता लिखने हेतु प्रयोग होता, और तुलिका के रूप में कपड़े के टुकड़े को कलम में बांधकर या स्याही में अंगुलियों को डुबोकर प्रयोग करते थे। इन्होंने मानवाकृति अंकन में विकर्षक शरीर, बदसूरत मुख, अस्वस्थ ओर गंदगी भरे दृश्यों को चित्रित किया है। रवीन्द्र नाथ टैगोर के अधिकतर चित्र ऐसे प्रतीत होते हैं जैसे बिना सोचे समझे बनाये गये हों। उनमें परिवर्तन तथा उद्देश्यपूर्ण प्रतिपादन के प्रयत्न नहीं दिखाई देते। लेकिन उनकी मानवाकृतियों की भंगिमा, रूप, व रेखा अनोखी है तथा उनकी सौंदर्य चेतना के पैमाने अलग हैं। उन्होंने आम चेतना से ऊपर उठकर इन भयावह मानवाकृतियों एवं बदसूरत व्यक्ति चित्रों में सौंदर्य को तलाशा। चित्र रचना करते समय तूलिका को अपने मन तथा इच्छानुसार चलाया। अपने चित्रों के माध्यम से जितने व्यक्ति चित्र एवं मानवाकृतियाँ रवीन्द्र बाबू ने चित्रित किये, उनमें जीवन के गहन अनुभव तथा प्रत्यक्ष ज्ञान की झलक स्पष्ट दिखाई पड़ती है। इन मानवाकृतियों में जहाँ हम यथार्थवादी प्रभाव देखते हैं, वहीं इन्हें 'चाइल्ड आर्ट' के समीप भी पाते हैं। आनंद कुमार स्वामी ने इनके चित्रों को 'नॉट चाइल्ड बट् चाइल्ड लाइक' कहा है।

मानवाकृति अंकन के अंतर्गत रवीन्द्र बाबू का प्रमुख विषय 'भारतीय नारी' था। उन्होंने चित्रों में बड़े ही सरल एवं सहज भाव से नारी को चित्रित किया है। चेहरों में भावों का निरूपण दिखाई देता है। 'नारी चित्रण में एक ओर वे काली घनी केश राशि के मध्य दर्शित हैं तो दूसरी ओर अंग विहीन दग्ध हृदय का अंकन भी किया गया है। उनके चित्रों में नारी के विभिन्न रूपों में बसंत और प्रेम की भावनाओं का एक गहन जगत देखा जा सकता है।'[5] थके हुए यात्री, माँ और बच्चा, सफेद धागे जैसे चित्रों में मानव जीवन का व्यापक दार्शनिक विचार है, तो वहीं अण्डाकृति मानव शीर्षों में (अधिकतर स्त्रियों) जीवन की गहरी अनुभूतियों से निर्मित अंतर्मुखवृत्ति का दर्शन है। 'इन्होंने मानवाकृतियों की अपेक्षा व्यक्ति चित्रों का अंकन अधिक मात्रा में किया है। ये व्यक्ति चित्र स्त्री एवं पुरूष दोनों के हैं। रवीन्द्र नाथ की नारियाँ अधिकतर भारतीय नारी की भांति सिर ढांके, खोये हुए नेत्रों वाली और गंभीर भाव वाली दिखाई देती हैं, इसी प्रकार पुरूषाकृति भी। किन्तु वे उनकी नारियों की भांति अपने नेत्रों में अवसाद लिये हुए प्रदर्शित नहीं होते। उनकी नारियों में उत्सुकता की अपेक्षा गंभीरता अधिक दिखाई देती है।'[6]

सन् 1933 ई. में रवीन्द्र नाथ टैगोर के चित्रों की प्रदर्शनी मुंबई में लगाई गई। इस प्रदर्शनी में लगे चित्रों में रवीन्द्र बाबू के द्वारा बनाई गई मानवाकृतियों का नया रूप देख भारतीय जनता चकित रह गई। इन मानव आकृतियों के विभास, कुरूप चेहरे देखकर दर्शकों ने इन्हें अस्वीकार किया, क्योंकि ये आकृतियाँ समझ से परे थीं, उनमें सौंदर्यात्मक अनुभूति भी नहीं थी। इस पर रवीन्द्रनाथ टैगोर ने लिखा है कि 'लोग मुझ से मेरे चित्रों का अर्थ पूछते हैं, उद्देश्य पूछते हैं, उनके उत्तर में चित्रों की भांति 'मौन' से ही दे देता हूँ।'[7]

- अवनीन्द्र बाबू के परम शिष्य **नंदलाल बसु** (1882 ई.) पूर्व भारतीय कला को नवीन पद्धतियों से विकसित करने में सफल हुए। इन्हें आकृति मूलक चित्र–रचना करने का बड़ा शौक था। इन्होंने मानवाकृतियों को अपने चित्रों में प्रमुखता से चित्रित किया है। इनके द्वारा बनाई गई मानव आकृतियाँ रवीन्द्रनाथ टैगोर की मानव आकृतियों से बिल्कुल भिन्न थी। नंदलाल बसु की आकृतियों में रस, सौंदर्य एवं भाव–अभिव्यंजना कूट–कूट कर भरी हुई थी। अर्थात सामाजिक तौर पर जन–सामान्य को ध्यान में रखते हुए चित्रित की गई थी।

चूंकि बंगाल शैली के कोई विशेष नियम नहीं थे, न ही अवनीन्द्र नाथ ने अपने शिष्यों को किसी खास पद्धति में चित्रण करने हेतु बाध्य किया था। फलस्वरूप नंदलाल बोस ने आकृति मूलक चित्रण कार्य से ही अपनी भावनाओं को उजागर किया। दरअसल बचपन से ही उन्हें मानवाकृतियाँ बनाने का शौक था। अपने कम उम्र में ही उनके द्वारा बनाया गया चित्र 'सती' (1907) में बहुत प्रसिद्ध हुआ। जिसमें नारी आकृति को अग्नि की भेंट चढ़ते प्रदर्शित किया है। भावना प्रधान यह चित्र दिल को छू जाता है।

नंदलाल बसु ने अपनी मानवाकृतियों को प्रखरता प्रदान करने के लिए विदेशी एवं भारतीय कलाकारों के चित्रों की प्रतिकृतियाँ तैयार की। राजा रवि वर्मा की मानवाकृतियों ने भी उन्हें आकर्षित किया। इन्होंने विभिन्न शैलियों में कलाकृति का निर्माण कर अपनी मानवाकृतियों को साकार किया है। महात्मा गाँधी एवं जवाहरलाल नेहरू जैसी महान हस्तियाँ इनसे काफी प्रभावित थी। 'नंद बाबू ने गांधीजी के आग्रह पर हरिपुरा ग्राम पर पोस्टर भी तैयार कराया जैसे ग्रामीणवासियों, मोची, दर्जी, डुगडुगी बजाने वाला, वीणावादन, भोजन बनाती स्त्री आदि ग्रामीण परिवेश संबंधी विषयों पर सुंदर मानवाकृतियों का अंकन किया।'[8]

नंदलाल बसु ने अपनी मानवाकृतियों को भित्ति (दीवारों) पर भी उकेरा। इनका एक विशाल भित्ति चित्र 'हल-कृष्ण-उत्सव' शांति निकेतन में सन् 1928 में चित्रित है। इस चित्र की मानवाकृतियों में श्रद्धा उत्साह और भारतीय ग्रामीण संस्कृति की छाप स्पष्ट रूप से झलकती है। इसके अलावा उमा-प्रायश्चिते, वीणा वादनी आदि भित्ति-चित्रों में भाव-प्रधाान मानवाकृतियाँ देखने मिलती है। इनके आकृति मूलक प्रख्यात चित्रों में शिव-शक्ति, अर्धानारिश्वर, सन्थाल कन्या आदि प्रमुख हैं। नंद बाबू ने हास्य प्रधान मानव आकृतियों की भी रचना की है, जैसे एक रेखा चित्र में दो लड़कियों को मुड़कर देखते छात्र पेड़ से टकरा गये। रेखाचित्रों के माधयम से भी मानवाकृतियों को उभारा है। इन सजीव रेखांकनों में 'किसान एवं मछली वाला' विशेष है।

आधुनिक कला के क्षेत्र में अपनी मानवाकृतियों को नवीन पद्धतियों से विकसित करने के लिए नंदलाल बसु सदा अविस्मरणीय रहेंगे। आपके चित्रों में जलरंग और वाश पद्धति का सुंदर संगम परिलक्षित होता है, जिसके माध्यम से आपकी मानवाकृतियों की भाव अभिव्यंजना को विशेष बल मिला।

मैंने ऐसे कलाकारों की कला शैलियों पर प्रभाव डाला है। जिन्होंने अपनी कलाकृतियों में मानवाकृति अंकन को जीवित रखा। इन कलाकारों ने मानव आकृति अंकन में भारतीय परम्परा एवं परिवेश का भी ध्यान रखा और अपनी कला को शैलीबद्ध किया। समकालीन कलाकारों ने चित्रों को मानव आकृतियों के माध्यम से अपने समय एवं समाज के अनुरूप चित्रित किया है। समकालीन कलाकारों ने अपनी मानव आकृतियों में बाह्य सौंदर्य को ही नहीं, बल्कि आंतरिक सौंदर्य को भी प्रदर्शित कर प्राचीन भारतीय कला की विशेषताओं को बनाये रखा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. प्रेमचन्द्र गोस्वामी - आधुनिक भारतीय चित्रकला के आधार स्तम्भ, पृ. 15
2. डॉ. रीता प्रताप - भारतीय चित्रकला एवं मूर्तिकला का इतिहास, पृ. 320
3. डॉ. प्रेमचन्द्र गोस्वामी - आधुनिक भारतीय चित्रकला के आधार स्तम्भ, पृ. 38
4. डॉ. संध्या पाण्डे/ डॉ.आर.पी. पाण्डे - भारतीय कला, पुनर्जागरण एवं चित्रकार, पृ. 10
5. डॉ. रीता प्रताप - भारतीय चित्रकला एवं मूर्तिकला का इतिहास, पृ. 339
6. डॉ. संध्या पाण्डे/ डॉ.आर.पी. पाण्डे - भारतीय कला, पुनर्जागरण एवं चित्रकार, पृ. 52
7. डॉ. रीता प्रताप - भारतीय चित्रकला एवं मूर्तिकला का इतिहास, पृ. 339
8. डॉ. संध्या पाण्डे/ डॉ.आर.पी. पाण्डे - भारतीय कला, पुनर्जागरण एवं चित्रकार, पृ. 26

****